Vijaya™

# अर्थशास्त्र का शिक्षण शास्त्र

## (PEDAGOGY OF ECONOMICS)

- Dr. K. C. JAIN
- SHAIL JAIN



VIJAYA PUBLICATIONS
LUDHIANA

# UNIT—I

1. एक स्कूल विषय के रूप में अर्थशास्त्र का अर्थ, स्वरूप और इसका क्षेत्र
2. स्कूल स्तर पर शिक्षण अर्थशास्त्र के उद्देश्य और लक्ष्य
3. वर्तमान परिदृश्य में शिक्षण अर्थशास्त्र के मूल्य
4. अर्थशास्त्र में वर्गीकरण और व्यवहारिक उद्देश्य
5. सार्वजनिक वित्त, वाणिज्य, कानून, भूगोल, गणित, प्राकृतिक विज्ञान और समाजशास्त्र के साथ अर्थशास्त्र का सहसंबंध

# 1
## CHAPTER

# एक स्कूल विषय के रूप में अर्थशास्त्र का अर्थ, स्वरूप और इसका क्षेत्र

## (Meaning, Nature and Scope of Economics as a School Subject)

### अर्थशास्त्र का अर्थ

### [Meaning of Economics]

मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसका जन्म समाज में होता है और समाज के द्वारा ही उसका पालन-पोषण होता है। इसके जन्म के साथ ही उसकी भौतिक आवश्यकताएं भी जन्म ले लेती हैं। अर्थशास्त्र इन्हीं सामाजिक प्राणियों की आर्थिक एवं भौतिक आवश्यकताओं और इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किये गये आर्थिक प्रयासों का अध्ययन करता है। प्रत्येक सामाजिक प्राणी की कुछ न कुछ भौतिक आवश्यकताएं होती हैं। सभी सामाजिक प्राणी अपनी भूख को शान्त करने के लिये आर्थिक एवं शारीरिक प्रयत्न करते हैं। मनुष्य अपनी मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बौद्धिक क्रियाओं का सहारा लेता है। इसी प्रकार आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति धर्म ध्यान, आत्म मनन व चिन्तन और धार्मिक एवं नैतिक गतिविधियों द्वारा करता है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मानव प्रयत्नशील रहता है। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कई प्रकार के प्रयत्न किये जाते हैं। इन प्रयत्नों में आर्थिक प्रयत्नों या क्रियाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य के सभी प्रयत्न आर्थिक नहीं होते। कुछ प्रयत्न आर्थिक और कुछ अनार्थिक होते हैं। परन्तु अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रयत्नों का ही अध्ययन किया जाता है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु दो प्रकार के कार्य करता है-एक कार्य वे हैं जो धन कमाने से सम्बन्ध रखते हैं दूसरे वे जो कमाये हुए धन को आवश्यकता की पूर्ति के लिए व्यय करने से सम्बन्ध रखते हैं। अत: "अर्थशास्त्र उन कार्यों का अध्ययन करता है जिनके द्वारा आवश्यकताओं की पूर्ति करना सम्भव होता है।"

### अर्थशास्त्र की परिभाषाएं

### [Definition of Economics]

समय-समय पर अनेक अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की अनेक परिभाषाएं दी हैं। परन्तु कोई ऐसी परिभाषा नहीं है जो सर्वमान्य हो। **डॉ० जे०एन० कीन्स** (Dr. J.N. Keynes)

ने ठीक कहा है कि, "राज्य अर्थ व्यवस्था तो अपनी परिभाषाओं में जकड़ी हुई है।" (Political Economy is said to have strangled itself with definitions.)

अर्थशास्त्र की परिभाषाओं का अध्ययन हम निम्नलिखित वर्गों के अन्तर्गत कर सकते हैं :

1. प्राचीन अर्थशास्त्रियों का मत।
2. भौतिक कल्याण के विज्ञान के रूप में।
3. सीमित साधनों के शास्त्र के रूप में।
4. सीमित साधनों के शास्त्र के रूप में।

**1. प्राचीन अर्थशास्त्रियों का मत**-इनमें एडम स्मिथ, प्रो० वाकर तथा जे०बी० से नामक अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की परिभाषाएं लिखी हैं। वे परिभाषाएं निम्नलिखित हैं :

**एडम स्मिथ** (Adam Smith) के अनुसार, "अर्थशास्त्र राष्ट्रों की सम्पत्ति या धन की प्रकृति एवं कारणों का विश्लेषण है।" (Economics concerned with an enquiry into the nature and causes of wealth of Nations.)

**जे० बी० से** (J.B. Say) का कथन है, "अर्थशास्त्र वह शास्त्र है जो धन की विवेचना करता है।।" (Economics is that science which treats of wealth.)

**प्रो० वाकर** (Prof. Walker) के अनुसार, "अर्थशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसका सम्बन्ध धन से है।" (Economics is the body of knowledge which relates to wealth.)

इन सभी परिभाषाओं के अन्तर्गत धन को महत्त्व दिया गया है। इन परिभाषाओं को आधुनिक युग में महत्त्व नहीं दिया जाता है।

**2. भौतिक कल्याण के विज्ञान के रूप में**-प्रो० मार्शल, पीगू, प्रो० पेन्सन, चैपमैन आदि अर्थशास्त्रियों ने इस मत का समर्थन किया है। उनके द्वारा दी गई परिभाषाएं निम्नलिखित हैं :

**मार्शल** (Marshall) के अनुसार, "अर्थशास्त्र मानव के साधारण जीवन में व्यापार सम्बन्धी क्रियाओं का एक अध्ययन है। यह इस तथ्य की विवेचना करता है कि मानव किस प्रकार धन कमाता है तथा उसे किस भान्ति व्यय करता है।.....इस प्रकार यह एक ओर तो 'धन' का व्यय करता है तथा दूसरी ओर 'मानव' का जो कि अपेक्षाकृत प्रथम से अधिक महत्त्वपूर्ण है।" (Economics or Political Economy is the study of man's action in the ordinary business of life; it enquires how he gets his income and how he uses it. .....Thus, it is on one side a study of wealth and on the other hand more important side a study of man.)

मार्शल (Marshall) ने अपनी पुस्तक 'Principle of Economics' में अर्थशास्त्र को इस प्रकार परिभाषित किया है :



"जीवन की साधारण स्थितियों के बीच मानव का अध्ययन करना ही अर्थशास्त्र है। यह उन व्यक्तिगत एवं सामाजिक कार्यों का विश्लेषण करता है जिनका भौतिक सुखों के साधनों की प्राप्ति और उपभोग से अत्यन्त सामीप्य है।" (Economics is a study of mankind in the ordinary business of life; it examines that part of the individual and social action which is most closely connected with the attainment and with the use of material requisites of well-being.)

मार्शल की दृष्टि से धन केवल एक 'मात्र' है अर्थात् आदि या आरम्भ है, अन्त तो जनसाधारण का कल्याण है। यह धन को केवल साधन मानते हैं साध्य नहीं। साध्य तो जनसाधारण का भौतिक कल्याण है।

**पैन्सन** (Penson) का कथन है, "अर्थशास्त्र भौतिक कल्याण का विज्ञान है।" (Economics is the science of material welfare.)

**पीगू** (Piguo) के अनुसार, "अर्थशास्त्र आर्थिक कल्याण का अध्ययन है। इससे हमारा तात्पर्य सामाजिक कल्याण के उस भाग से है जिसको मुद्रा के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष मापदण्ड से सम्बन्धित किया जा सकता है।" (Economics is a study of material welfare, the range of enquiry becomes restricted to that part of social welfare that can be brought directly or indirectly into relation with the measuring rod of money.)

**ऐली** (Ely) का कथन है, "अर्थशास्त्र वह शास्त्र है, जिसमें उन सामाजिक दशाओं का अध्ययन किया जाता है-जो मनुष्य के धन अर्जित करने एवं व्यय करने की क्रियाओं या प्रयत्नों से उत्पन्न होती है।" (Economics is the science which treats of those social Phenomena that are due to wealth getting and wealth using activities of men.)

**चैपमैन** (Chapman) के अनुसार, "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो मानव की धन कमाने तथा व्यय करने की क्रियाओं का अध्ययन करता है।" (Economics is the science which studies the wealth earning and wealth spending activities of human being.)

**प्रो. रोबिन्स** (Prof. Robbins) के अनुसार, इन परिभाषाओं में केवल भौतिकता को महत्त्व दिया गया है। अत: ये पूर्ण नहीं है। यह शास्त्र भौतिकता और अभौतिकता से सम्बन्ध रखने वाली वस्तुओं का भी अध्ययन करता है।

**3. सीमित साधनों के शास्त्र के रूप में**-प्रो. रोबिन्स तथा स्टिगलर ने इस मत का समर्थन किया है। इनकी परिभाषाएं निम्नलिखित हैं :

**रोबिन्स** (Robbins) का कथन है, "अर्थशास्त्र वह शास्त्र है जो मानव व्यवहार का अध्ययन साध्यों तथा सीमित साधनों के आपसी सम्बन्ध के रूप में करता है, जिनके वैकल्पिक प्रयोग भी हो सकते हैं।" (Economics is the science that studies hu-

man behaviour as a relationship between ends and scarce means which have alternate use.)

रोबिन्स की परिभाषा में निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं :

1. मनुष्यों को आवश्यकताओं का अनुभव होता है परन्तु उनकी कोई सीमा नहीं है।
2. समय तथा इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साधन सीमित हैं।
3. इन सीमित साधनों का अनेक प्रकार से उपयोग किया जा सकता है।

**स्टिगलर** (Stigler) के अनुसार, "अर्थशास्त्र उन नियमों का अध्ययन है जो प्रतिस्पर्द्धा आवश्यकताओं की अधिकाधिक प्राप्ति के लिए सीमित साधनों और उनके वितरण को नियन्त्रित करता है।" (Economics is the study of the principles governing the allocation of scarce means among competing ends when the objective of allocation is to mascinise the attainment of ends.)

डरबिन, फ्रेजर, बुटिन आदि ने रोबिन्स एवं स्टिगलर की आलोचना की है। **प्रो० फ्रेजर** के मतानुसार, "अर्थशास्त्र मूल सिद्धान्तों या साम्य विश्लेषण से कहीं अधिक है।"

**बुटिन** का मत है, "अर्थशास्त्रियों के लिए बहुत ही कठिन है कि वे अपने विवेचन से अर्थशास्त्र के आदर्श के महत्त्व का पूर्ण अपहरण करें।"

**4. आवश्यकताहीन सम्बन्धी शास्त्र के रूप में**-इस विचारधारा के समर्थक भारतीय अर्थशास्त्री प्रो. जे.के. मेहता है। इनका मत भारतीय विचारों एवं संस्कृति का द्योतक है।

**प्रो. जे.के. मेहता** (Prof. J.K. Mehta) के अनुसार, "अर्थशास्त्र उन मानवीय क्रियाओं का शास्त्र है, जिसके द्वारा आवश्यकता विहीनता की अवस्था को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।" (Economics must, therefore, be defined as a science of human activities considered as an endeavour to reach the state of wantelessness.)

प्रो. मेहता ने अपनी पुस्तक 'Advanced Economic Theory' में एक स्थान पर लिखा है कि अर्थशास्त्र का सम्बन्ध इच्छाओं की सन्तुष्टि से नहीं, वरन् आवश्यकताओं को कम से कम करने से हैं जिससे मानव प्रसन्नता एवं सुख को प्राप्ति कर सके।

उपरोक्त परिभाषाओं को पढ़ने से पता चलता है कि अर्थशास्त्र की इन सभी परिभाषाओं में विद्वानों ने कुछ न कुछ आलोचना की है। कोई भी परिभाषा पूर्ण नहीं है। प्रो. जोशी के शब्दों में अर्थशास्त्र की परिभाषा में निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है :

(क) अर्थशास्त्र के अध्ययन का मुख्य लक्ष्य मानव हित है।

(ख) अर्थशास्त्र केवल उन्हीं मानवीय क्रियाओं का अध्ययन करता है जिनका सम्बन्ध धन की प्राप्ति एवं उसके उपयोग से है।

(ग) अर्थशास्त्र विज्ञान एवं कला दोनों हैं।



(घ) अर्थशास्त्र मानव की असीमित आवश्यकताओं एवं उनकी पूर्ति के सीमित साधनों का नियमित विश्लेषण करता है।

(ङ) अर्थशास्त्र में सामाजिक, वास्तविक एवं सामान्य व्यक्तियों का अध्ययन किया जाता है।

## अर्थशास्त्र का स्वरूप

## [Nature of Economics]

आंग्ल अर्थशास्त्रियों के अनुसार अर्थशास्त्र आर्थिक तत्त्वों की विवेचना करके उनके कारण एवं परिणामों के सम्बन्ध को स्पष्ट करता है। अन्त में इनके आधार पर कुछ आर्थिक नियमों का निरूपण करता है इसलिए अर्थशास्त्र को वे वास्तविक विज्ञान मानते थे। प्रो. रोबिन्स बी इस मत से सहमत है। उनका मत है कि अर्थशास्त्र उद्देश्यों के बीच तटस्थ हैं। इसके विपरीत फ्रेजर, बूटन, हाट्रे आदि अर्थशास्त्र को एक आदर्श विज्ञान मानते हैं। यदि सूक्ष्म रूप से अर्थशास्त्र के वास्तविक स्वरूप पर विचार किया जाए तो यह स्पष्ट होगा कि अर्थशास्त्र केवल शुद्ध वास्तविक विज्ञान नहीं है वरन् वह समाज शास्त्र का एक अंग है और इसलिए एक अर्थशास्त्री अपने को नीति निर्धारण के प्रश्न से बिल्कुल तटस्थ नहीं रख सकता। अधिकांश अर्थशास्त्रियों के अनुसार मानव कल्याण में वृद्धि करना अर्थशास्त्र के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य होता है।

समाज का अधिकतम कल्याण करने के लिए अर्थशास्त्री समाज की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करें और फिर ऐसे व्यावहारिक नियमों का आदर्शों पर बल दें जिससे समाज का हित हो।

**पीगू** ने कहा है, "अर्थशास्त्र के अध्ययन में यह फल की प्रतीक्षा है न कि प्रकाश की जो हमारे लिये प्रमुख है।" अत: अर्थशास्त्र केवल वास्तविक विज्ञान नहीं है वरन् नीति प्रधान अथवा आदर्शात्मक विज्ञान भी है। अर्थशास्त्र का सैद्धान्तिक पहलू तो वास्तविक विज्ञान है और व्यावहारिक पहलू आदर्श विज्ञान है।

अर्थशास्त्र एक विज्ञान ही नहीं बल्कि कला भी है। अर्थशास्त्री न केवल तथ्यों का वर्णन करता है बल्कि आदर्शों का निर्माण करके उन्हें बात करने का उपाय भी बताता है। **प्रो. चैपमैन** ने ठीक ही कहा है, "अर्थशास्त्र एक वास्तविक विज्ञान के रूप में आर्थिक तथ्यों का अध्ययन करता है, नीति प्रधान विज्ञान के रूप में तथ्य किस प्रकार का होना चाहिए, का अध्ययन करता है और एक कला के रूप में इच्छित उद्देश्यों की पूर्ति के साधन तथा जरिये का भी अध्ययन करता है।" (Economics is a positive science dealing with economic facts as they are, a Narmative science enquiring facts as they ought to be and an Artifinding outways and means by which desired end can be reached.)

चैपमेन के इन विचारों को पढ़कर दूसरे सभी अर्थशास्त्री इस बात से सहमत हैं कि अर्थशास्त्र विज्ञान के साथ-साथ नीति प्रधान विज्ञान एवं कला तीनों है। अर्थशास्त्र मनुष्य का

मार्ग दर्शन कर उसे व्यावहारिक दृष्टि से कार्य करने की प्रेरणा देता है। अर्थशास्त्र उन उपायों की खोज करता है जिससे हमारे लक्ष्य पूरे हो सकें।

## अर्थशास्त्र का क्षेत्र

## [Scope of Economics]

अर्थशास्त्र के क्षेत्र को लेकर विभिन्न अर्थशास्त्रियों में मतभेद है। जे.एन. कीन्स ने अर्थशास्त्र के क्षेत्र में मुख्य रूप से निम्न बातों को लिया है :

(क) अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु तथा सीमाएं (Subject matter and Limitations of Economics)

(ख) अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनों (Economics–A Science or an Art or both)

**(क) अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु** (Subject matter of Economics) : अर्थशास्त्र में मानव की सामाजिक, वास्तविक, धन सम्बन्धी क्रियाओं को लिया जाता है। मनुष्य की नैतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्रियाओं का अध्ययन नहीं किया जाता है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए आर्थिक क्रियाएं करता है। आर्थिक क्रियाएं करने में धन का उपयोग करता है। प्रश्न उठता है कि यह धन कहां से आता है? उत्तर यही है कि मनुष्य के प्रयत्नों द्वारा धन प्राप्त होता है। सभ्यता के शुरू में ही अपनी सभी जरूरतों की पूर्ति के लिए मनुष्य स्वयं ही सभी वस्तुओं का उत्पादन कर लिया करता परन्तु जैसे-जैसे वह सभ्य होता गया उसने यह अनुभव किया कि यदि व्यक्ति एक ही काम को अच्छी तरह करे तो उस कार्य में वह अधिक धन उत्पन्न कर सकेगा और उस कार्य का विशेषज्ञ बन जाएगा। इस प्रकार पेशों की विशिष्टता के कारण श्रम विभाजन की शुरूआत हुई। फिर व्यक्ति स्वयं द्वारा बनाई गई वस्तु का दूसरे से विनिमय करने लगा इस प्रकार धन का विनिमय होने लगा। फिर व्यक्ति ने अनुभव किया कि यदि कई व्यक्ति एकत्र होकर काम करे तो अधिक धन उत्पन्न हो सकता है। उदाहरण के लिए एक कारखाने में अनेक व्यक्ति मिलकर कार्य करते हैं जिससे अधिक धन उत्पन्न होता है। फिर यह समस्या आई कि धन किसका होगा? तो यह निर्णय लिया गया कि सभी कार्य करने वालों में धन वितरण किया जाए। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के अपने हिस्से का धन मिल जाता है जिसे वह अपनी आवश्यकता पूर्ति में लगाता है। ये चार प्रकार की आर्थिक क्रियाएं-उपभोग, उत्पत्ति, विनिमय एवं वितरण अर्थशास्त्र की विषय सामग्री हैं।

अर्थशास्त्र में मानव के अलावा किसी अन्य जीवों का अध्ययन नहीं होता है। इसकी विषय वस्तु सामान्य मानव तक ही सीमित है।

अर्थशास्त्र सम्पूर्ण मानव व्यवहारों का अध्ययन करता है जिनका सम्बन्ध सीमित आवश्यकताओं के सीमित साधनों से है। अर्थशास्त्र सामाजिक विज्ञान के साथ मानव विज्ञान भी है।



**अर्थशास्त्र की सीमाएं** (Limitations of Economics) : अर्थशास्त्र की सीमाओं से हमारा तात्पर्य यह है कि इस विषय में क्या-क्या आता है और क्या-क्या नहीं। प्रो. मार्शल तथा रोबिन्स ने अर्थशास्त्र की निम्नलिखित सीमाएं बताई हैं :

1. अर्थशास्त्र में सामाजिक तथा असामाजिक दोनों ही क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

2. इसमें धन से मापी जाने वाली और न मापी जाने वाली दोनों प्रकार की क्रियाओं को शामिल किया जाता है।

3. इसमें केवल व्यक्तियों की धन से सम्बन्धित क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।

4. अर्थशास्त्र में केवल वास्तविक व्यक्तियों की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। काल्पनिक व्यक्तियों का नहीं।

5. अर्थशास्त्र में केवल मानवीय क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है, पशु-पक्षियों तथा जीव-जन्तुओं की क्रियाओं का नहीं।

6. अर्थशास्त्र में उन्हीं व्यक्तियों की क्रियाओं को शामिल किया जाता है जो सामाजिक है। एकान्तवासी, काल्पनिक और असाधारण प्रकृति के मनुष्यों की क्रियाओं को नहीं सम्मिलित किया जाता है।

**(ख) अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनों** (Economics–A Science or an Art or both) : अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला इस बात को जानने से पहले यह जानना आवश्यक है कि विज्ञान क्या है और कला क्या है?

"प्रकृति के किसी विभाग के सम्बन्ध में ज्ञान को क्रमबद्ध संग्रह को विज्ञान कहते हैं।" (Science is systematised body of knowledge concerning the relationship between cause and effect of a particular phenomena.) इस प्रकार विज्ञान-ज्ञान का वह भंडार है जिसमें प्रकृति की दशाओं का अध्ययन निरीक्षण एवं प्रयोग द्वारा किया जाता है। विज्ञान के दो भागों, वास्तविक विज्ञान एवं आदर्शात्मक विज्ञान में बांटा जाता है। वास्तविक विज्ञान बताता है कि इसके अन्तर्गत क्या है और आदर्शात्मक विज्ञान बताता है कि क्या होना चाहिए?

विज्ञान के इस अर्थ को जानने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि अर्थशास्त्र एक विज्ञान है जो कि हमें वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्रदान करने के साथ आदर्श हमारे सामने प्रस्तुत करता है।

अर्थशास्त्र वास्तविक विज्ञान के रूप में आर्थिक व्यवहार के कारण तथा परिणाम के बीच क्रमबद्ध रीति से सम्बन्ध स्थापित करता है। अर्थशास्त्र एक आदर्श विज्ञान है क्योंकि अर्थशास्त्र में अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करने के आदर्श का पालन किया जाता है। आदर्श विज्ञान होने के कारण यह हमें अधिक कल्याण करने की चेष्टा को सिखाता है। अर्थशास्त्र

हमें बहुत से ऐसे आदर्श सिखाता है जिसको मानने से सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण हो सकता है। अर्थशास्त्र में वास्तविक और आदर्श विज्ञान दोनों के लक्षण पाये जाते हैं। वास्तविक विज्ञान तथा आदर्शात्मक विज्ञान अर्थशास्त्र के दो अलग-अलग भाग नहीं हैं बल्कि दो पृथक पहलू हैं। वास्तविक विज्ञान अर्थशास्त्र का सैद्धान्तिक पहलू हैं और आदर्श विज्ञान उसका व्यावहारिक पहलू है। एक अर्थशास्त्री का कार्य केवल व्याख्या और खोज करना ही नहीं गुण और दोष भी व्यक्त करना है।

कला का तात्पर्य किसी भी कार्य को सर्वोत्तम विधि से सम्पन्न करना।

**केन्स** के शब्दों में, "कला एक दिये हुए उद्देश्य की प्राप्ति के लिये नियमों की प्रणाली है।" कला आदर्श प्राप्ति का मार्ग बताती है। अर्थशास्त्र एक कला है। कला के रूप में यह शास्त्र हमें बतलाता है कि धन की उत्पत्ति एवं व्यय करने से समाज का कल्याण हो सकता है। इसके द्वारा व्यावहारिक समस्याओं के समाधान के लिए सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं।

**कोसा** के अनुसार, "विज्ञान को कला की आवश्यकता है और कला को विज्ञान की, दोनों एक-दूसरे से पूरक हैं।" कला हमें विज्ञान के वास्तविक पहलू से आदर्शात्मक पहलू की ओर ले जाती है।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट हो जाता है कि अर्थशास्त्र एक विज्ञान भी है और कला भी, इस प्रकार अर्थशास्त्र दोनों है। पीगू महोदय ने अर्थशास्त्र की वैज्ञानिकता एवं कलात्मक पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "Every science is both light-bearing and fruit-bearing but in some cases the light giving aspect is more important, and in economics latter is the case."

## एक स्कूल विषय के रूप में अर्थशास्त्र

## [Economics as a School Subject]

स्कूल पाठ्यक्रम में अर्थशास्त्र विषय को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। हमारे शिक्षाविदों ने स्कूल स्तर की शिक्षा को तीन भागों में विभाजित किया है जिसका आधार बालकों का मानसिक स्तर है। ये स्तर निम्न हैं :

(1) प्री-प्राईमरी स्तर में 1 से 5 साल तक के बालक

(2) प्राईमरी (प्राथमिक) स्तर में 5 से 14 साल तक के बालक

(3) माध्यमिक स्तर में 14 से 17 साल तक के बालक

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अर्थशास्त्र को नौवीं कक्षा से बारवीं कक्षा एक अलग विषय के रूप में पढ़ाने की सिफारिश की है। नई राष्ट्रीय नीति 1986 (New National Education Policy 1986) ने भी अर्थशास्त्र को स्कूल पाठ्यक्रम में विशेष स्थान देने की बात की है।

इस विषय को माध्यमिक स्तर पर पढ़ाने के मुख्य रूप से दो कारण हैं जो निम्नलिखित अनुसार हैं :



(क) मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अगर हम देखें तो इस स्तर पर छात्र-छात्राएं मानसिक रूप से इतने परिपक्व हो जाते हैं कि उनमें अर्थशास्त्र को क्रमबद्ध रूप से समझने की क्षमता का विकास हो जाता है।

(ख) दूसरे बहुत से छात्र-छात्राओं को दसवीं कक्षा के पास करने के उपरान्त व्यवसाय की दृष्टि से जीवन के अनेक क्षेत्रों में प्रवेश करना होता है। उन छात्र-छात्राओं में इस स्तर पर अर्थशास्त्र विषय की बुनियादी धारणाओं के बारे में ज्ञान हो जाता है जो आगे चलकर उनके वास्तविक जीवन की क्रियाओं में सहायक सिद्ध होता है।

अर्थशास्त्र का शिक्षण कक्षा नौवीं से आरम्भ होकर विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा तक रहता है। 'सामाजिक अध्ययन' के विषय में अर्थशास्त्र के कुछ तत्त्व शामिल होते हैं। परन्तु हमारे देश में सामाजिक अध्ययन का अर्थ इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र और सामाजिक शास्त्र तक ही सीमित है। लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि इस विषय में अर्थशास्त्र के मौलिक आधारभूत तत्त्वों को शामिल करना चाहिए जिससे आर्थिक दृष्टिकोण से मानवीय सम्बन्धों को गहनता एवं विस्तार से समझा जा सके। सामाजिक अध्ययन में इस विषय के शामिल करने का सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि इसके द्वारा कक्षा नौवीं में अर्थशास्त्र पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के लिए एक अच्छा आधार तैयार हो जाएगा।

## माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र

## [Economics at Secondary Stage]

उपर्युक्त स्तर के बालकों में निम्न योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास हो जाता है जिनको ध्यान में रखकर अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु का समावेश करना चाहिए।

1. मानसिक एवं बौद्धिक स्तर में परिपक्वता आ जाती है।
2. शब्द-ज्ञान का अर्जन पर्याप्त रूप से होने के कारण धारणाओं को सहज रूप से समझा जा सकता है।
3. सामान्यीकरण और धारणाओं के निर्माण की प्रक्रिया करने की क्षमता का विकास हो जाता है।
4. छात्र-छात्राएं इस स्तर पर व्यक्तित्व के प्रदर्शन में आस्था रखते हैं और समाज से अनुमोदन एवं स्वीकृति की आशा रखते हैं।

## माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र के उद्देश्य

## [Objectives of Economics at Secondary Stage]

1. छात्र-छात्राओं को आर्थिक जीवन के महत्त्व एवं विकास से परिचित कराना।
2. विद्यार्थियों में राष्ट्र एवं मानव समाज के प्रति निष्ठा का भाव विकसित करना।
3. सामाजिक निपुणता के साथ-साथ आर्थिक निपुणता का विकास करना।
4. राष्ट्र के लिए प्रभावशाली, सशक्त, सार्थक एवं उपयोगी नागरिक बनाना।

5. उनको सूझ-बूझ रखने वाले और सचेत उपभोक्ता बनाना।
6. मानव एवं समाज के व्यावहारिक जीवन की आर्थिक समस्याओं के समाधान करने के लिए योग्य बनाना।
7. अर्थशास्त्र के पदों, सिद्धान्तों, नियमों और प्रवृत्तियों आदि से अवगत कराना।
8. छात्र-छात्राओं में उदार एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना।
9. राष्ट्र के आर्थिक क्षेत्र के कार्यों में सक्रिय सहयोग के लिए प्रेरित करना।
10. समाज एवं राष्ट्र की सम्पत्ति का सदुपयोग करने की प्रेरणा देना।
11. छात्र-छात्राओं को भारतीय उत्पादन, वितरण, उपभोग एवं विनिमय की विधियों से परिचित कराना।
12. पारस्परिक रूप से एक-दूसरे पर आर्थिक निर्भरता के तथ्यों और उसकी आवश्यकता पर बल देना।
13. छात्र-छात्राओं को राष्ट्र के आर्थिक विकास करने में सक्रिय बाधाओं के बारे में पूर्ण रूप से जानकारी देना।
14. विद्यार्थियों को राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए भौतिक एवं मानवीय संसाधनों के योगदान के बारे में जानकारी देना।
15. छात्र-छात्राओं को राष्ट्र के नवनिर्माण हेतु सक्रिय व सहयोग के लिए प्रेरित करना।

माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु कुछ इस प्रकार होनी चाहिए :

- ❑ अर्थशास्त्र-अर्थ, आवश्यकता, महत्त्व और इसका क्षेत्र।
- ❑ अर्थशास्त्र से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण परिभाषाएं।
- ❑ उत्पादन के साधन-भूमि, श्रम, पूंजी, संगठन और साहस। इन साधनों का कृषि एवं उद्योगों में योगदान।
- ❑ आवश्यकताएं-अर्थ और उनका वर्गीकरण।
- ❑ अदल-बदल-क्रय-विक्रय, बाज़ार, बंटाई की प्रथा।
- ❑ कृषि की आय का वितरण।
- ❑ परिवारिक बजट।
- ❑ घरेलू उद्योग धन्धे।
- ❑ श्रम और श्रमिकों की समस्याएं।
- ❑ ग्रामीण समस्याएं-भूमि, भोजन, स्वास्थ्य, कृषि, सफाई, शिक्षा ऋण।
- ❑ सहकारी आन्दोलन।
- ❑ मजदूरी।



- ❑ व्यावहारिक कार्य कुछ इस प्रकार हैं :
  गांवों और गांव की पंचायतों का निरीक्षण, बाजारों और श्रमिकों की दशा का निरीक्षण और उनके सुधार के लिए रचनात्मक कार्य। घरेलू उद्योग-धन्धे और सहकारी क्रियाओं का स्कूल में संगठन एवं संचालन, छात्र बजट का निर्माण आदि।

उपरोक्त प्रकरणों के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकरण निम्न हैं :

- ❑ आर्थिक भूगोल-अर्थ, महत्त्व और क्षेत्र।
- ❑ मानव और उसका पर्यावरण-भौतिक वातावरण और उसका आर्थिक जीवन पर प्रभाव।
- ❑ सिंचाई के साधन और उनकी आवश्यकता।
- ❑ भारत की पशु सम्पत्ति।
- ❑ वन-सम्पत्ति।
- ❑ भारत की प्राकृतिक दशा-मिट्टी और उसकी बनावट और उसके प्रकार। जलवायु, वर्षा और उसका वितरण।
- ❑ भारत की प्रमुख फसलें-खाद्य-अखाद्य और पेय फसलें।
- ❑ भारत के खनिज पदार्थ।
- ❑ शक्ति के साधन-मानव, पशु, हवा, लकड़ी, गैस, कोयला, तेल और पानी।
- ❑ उद्योगों का स्थानीयकरण-अर्थ और निर्धारक तत्त्व।
- ❑ जनसंख्या का वितरण।
- ❑ यातायात और संचार साधन-सड़कें, रेलें, समुद्री यातायात, वायुयान, डाक, तार, टैलीफोन, मोबाईल फोन आदि।
- ❑ भारतीय व्यापार-राष्ट्रीय, विदेशी और अन्तर्राष्ट्रीय।
- ❑ भारत के आर्थिक दृष्टि से प्रसिद्ध नगर, बन्दरगाह और हवाई अड्डे-इनका रख-रखाव, विकास और महत्त्व।
- ❑ व्यावहारिक कार्य-उपरोक्त से सम्बन्धित व्यावहारिक गतिविधियां (कार्य) निम्न हैं-चार्टों, चित्रों, मानचित्रों, माडलों का निरीक्षण, यातायात और संचार के साधनों का छात्र-छात्राओं द्वारा सकारात्मक प्रयोग आदि।

माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र विषय के अध्ययन हेतु पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग बहुत उपयुक्त, सार्थक और लाभकारी है। इस, स्तर पर जिन पाठ्य-पुस्तकों की अध्ययन हेतु सिफारिश की जाए, वे पाठ्य-पुस्तकें रचना एवं चयन के सिद्धान्तों की कसौटी पर पूरी उतरनी चाहिए। दूसरे शब्दों में यह कहना उचित होगा कि ये पुस्तकें सिद्धान्तों के अनुकूल हों। इनमें अमूर्त विचारों की प्रधानता नहीं होनी चाहिए बल्कि मूर्त और अमूर्त विचारों का

समन्वय होना चाहिए। इस विषय के स्पष्टीकरण हेतु अधिकांश रूप से स्थूल सामग्री का आवश्यकतानुकूल अवश्य ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

### अभ्यास के प्रश्न

### (Study Questions)

1. अर्थशास्त्र की परिभाषा दीजिए और उसके क्षेत्र व सीमाओं की विवेचना कीजिए।
   Define Ecoomics and give its scope and limitations.
2. 'अर्थशास्त्र विज्ञान और कला दोनों है।' टिप्पणी कीजिए।
   'Economics is both a Science and Art.' Comment.
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी कीजिए :
   (1) अर्थशास्त्र धन का विज्ञान है।
   (2) अर्थशास्त्र भौतिक कल्याण का विज्ञान।
   Comment on the following :
   (1) Economics is the Science of Wealth.
   (2) Economics is the Science of Material Welfare.
4. अर्थशास्त्र का शिक्षण अलग से विषय के रूप में माध्यमिक स्तर पर ही क्यों होना चाहिए?
   Why should the teaching of Economics start at the secondary stage only?
5. अर्थशास्त्र की परिभाषा दीजिए और उसके क्षेत्र व सीमाओं की विवेचना कीजिए।
   Explain briefly the objectives of teaching of Economics at Secondary Stage.

* * *

# 2
## CHAPTER

# स्कूल स्तर पर शिक्षण अर्थशास्त्र के उद्देश्य और लक्ष्य

## (Aims and Objectives of Teaching Economics at Schoo! Leve!)

अर्थशास्त्र के अध्ययन का मूल रूप में उद्देश्य मानव का हित है क्योंकि किसी भी व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिए धन की आवश्यकता होती है। धन के द्वारा ही व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिए समुचित साधन उपलब्ध हो सकते हैं। अर्थशास्त्र का सम्बन्ध धन और आर्थिक क्रियाओं से है। इसके द्वारा व्यक्ति को उत्पत्ति के साधनों एवं वितरण सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है जिससे वह नागरिक के रूप में आर्थिक दृष्टि से सक्रिय भूमिका निभा सकता है। गरीबी के कारण व्यक्ति कई बार मानवता को भूल जाता है और मानव कर्त्तव्य से हट कर गलत कार्य करता है। जब मानव की भौतिक एवं मौलिक आवश्यकताएं (रोटी, कपड़ा एवं मकान) पूरी नहीं होतीं तो वह अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाता है। अर्थशास्त्र के अध्ययन से पता चलता है कि समाज की उन्नति एवं नागरिकता की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि समाज में उत्पादन के साधनों पर किसी एक वर्ग विशेष का अधिकार नहीं होना चाहिए, समस्त जनता के द्वारा जनता के कल्याण के लिए उनका उपयोग होना चाहिए। यदि राष्ट्र के नागरिकों का सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, धार्मिक, मानसिक एवं शारीरिक विकास होगा तो वह राष्ट्र उन्नति करेगा। राष्ट्र के विकास के लिए नागरिकों का सर्वांगीण विकास होना चाहिए। अर्थशास्त्र शिक्षा के द्वारा नागरिकों का सामाजिक, आर्थिक एवं बौद्धिक विकास हो सकता है। इस दृष्टि से अर्थशास्त्र की शिक्षा का बहुत महत्त्व है। जिन राष्ट्रों में अर्थशास्त्र की शिक्षा दी जाती है वह राष्ट्र उन्नत एवं समृद्ध होता है। उसके नागरिकों का सर्वांगीण विकास होता है। ऐसे कई उदाहरण हैं जिनसे यह पता चलता है कि अर्थशास्त्र शिक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है जैसे अमेरिका और रूस ने इसी शिक्षा के द्वारा विश्व में स्वयं को इतना अधिक उन्नतिशील एवं समृद्धशील बनाया। इंग्लैंड ने अर्थशास्त्र की शिक्षा द्वारा ही संसार में एक बड़े भू-भाग पर अपना अधिपत्य जमाया। इन बातों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि राष्ट्र की उन्नति एवं विकास के लिए अर्थशास्त्र की शिक्षा का महत्त्व है।

किसी भी विषय का अच्छी प्रकार शिक्षण करने के लिए यह ज़रूरी होता है कि अध्यापक उस विषय विशेष के लक्ष्य एवं महत्त्व से परिचित हो। विषय के महत्त्व के आधार

पर ही उसके उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। बिना लक्ष्य एवं उद्देश्य के कोई कार्य नहीं किया जा सकता है। लक्ष्य के आधार पर ही व्यक्ति सही दिशा में चल सकता है। इसलिए किसी विषय का अध्ययन करने से पहले उस विषय के लक्ष्य को जानना आवश्यक है, क्योंकि लक्ष्य एक चेतना-भूत तथा क्रियाशील अभिप्राय होता है जिसको प्राप्त करना हमारे उस विषय के अध्ययन का प्रमुख ध्येय होता है। लक्ष्यों तथा महत्त्वों के बिना किसी भी विषय का अध्ययन सार्थक नहीं होगा। यदि अर्थशास्त्र के लक्ष्यों को निर्धारित नहीं किया जाएगा तो उन्हें प्राप्त करने के लिये किसी योजना को लागू नहीं किया जा सकेगा। किसी कार्य को सही रूप में करने के लिये लक्ष्यों का निर्धारण आवश्यक है। अर्थशास्त्र के उद्देश्य जानने से पहले शिक्षा के उद्देश्यों को जानना जरूरी है। समाज की व्यवस्था के अनुसार शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं। अत: जैसा समाज होगा उसी के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य होगा। प्रत्येक विषय के लक्ष्य शिक्षा के उद्देश्यों के अनुसार निर्धारित किये जाते हैं।

प्रो. सी.ई.एम. जोड़ ने अपनी पुस्तक "About Education" में शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य बतलाये हैं :

1. प्रत्येक लड़का या लड़की को अपनी जीविका कमाने के लिए योग्य बनाना (To equip a boy or girl to earn his or her living)।
2. उसको लोकतन्त्र में एक सफल नागरिक का कार्य करने के लिए योग्य बनाना (To equip him to play his part as the citizen of a democracy)।
3. उसको इस योग्य बनाना जिससे वह अपनी प्राकृतिक एवं अन्तर्निहीत शक्तियों एवं सामर्थ्यों का विकास एवं अच्छा जीवन व्यतीत कर सके (To enable him to develop all the latent powers and faculties of his nature and so to enjoy a good life.)।

## अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य

## [Aims of Teaching Economics]

जैसा कि प्रो. सी.ई.एम. जोड़ ने कुछ उद्देश्य बताये हैं। इन उद्देश्यों को किसी एक विषय के शिक्षण द्वारा नहीं प्राप्त कर सकते, इसके लिए विभिन्न विषयों की शिक्षा प्रदान करनी होगी। इन उद्देश्यों की प्राप्ति में अर्थशास्त्र का शिक्षण बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। अर्थशास्त्र व्यक्ति को जीविका कमाने के योग्य बनाने में सहायक है अर्थशास्त्र के अध्ययन से व्यक्ति को इस बात का ज्ञान प्राप्त होता है कि नागरिक अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति होने पर ही अपने कर्त्तव्य और धर्म का सही रूप में पालन कर सकता है। अर्थशास्त्र नागरिक की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सहायक है। बालक का सम्पूर्ण विकास तभी होगा जब उसका आर्थिक पक्ष ठीक प्रकार से विकसित होगा।

उपरोक्त बातों से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक विषय के उद्देश्य शिक्षा के उद्देश्यों पर निर्धारित होते हैं।



प्रो. पीगू ने अपनी पुस्तक "The Economics of Welfare" में बतलाया है कि किसी विषय के अध्ययन के मुख्य दो उद्देश्य होते हैं वे निम्नलिखित हैं :

1. ज्ञान प्राप्त करना
2. व्यावहारिक जीवन की उपयोगिता

**1. ज्ञान प्राप्ति या ज्ञान उद्देश्य** (Knowledge Aim) : अर्थशास्त्र के द्वारा बालक में ज्ञान का विकास किया जाता है। इसके द्वारा उसे आर्थिक पदों-भूमि, पूंजी, धन आदि आर्थिक सिद्धान्तों, आर्थिक प्रक्रियाओं आदि का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इससे बालक के ज्ञान में वृद्धि होती है।

**2. व्यावहारिक उपयोगिता** (Practical Utility) : अर्थशास्त्र विषय के शिक्षण का उद्देश्य बालक में व्यावहारिक जीवन की अर्थ सम्बन्धी समस्याओं के समाधान की क्षमता उत्पन्न करना भी है। इस प्रकार अर्थशास्त्र के द्वारा ज्ञान की व्यावहारिकता पर बल दिया जाता है।

**प्रो. मार्शल** (Prof. Marshall) के अनुसार, "अर्थशास्त्र के अध्ययन का ध्येय प्रथमत: तो केवल ज्ञान के लिए ज्ञान प्राप्त करना है और दूसरे व्यावहारिक जीवन विशेषत: सामाजिक जीवन में मनुष्य के पथ को प्रशस्त करना है।" (The aims of study Economics are to gain knowledge for its own sake and to obtain guidance in the practical conduct of life and specially in social life.)

प्रो. बाइनिंग तथा बाइनिंग ने अर्थशास्त्र शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य बताए हैं :

1. माध्यमिक स्तर के लिए अर्थशास्त्र का उद्देश्य आधुनिक अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों का निरीक्षण एवं प्रचलित रीतियों के द्वारा अध्यापन करना, होना चाहिए।
2. छात्रों को अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग करने के लिए प्रशिक्षित करना।
3. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे व्यावहारिक जीवन की समस्याओं को सुलझा सके।
4. छात्रों में ऐसी सूझ उत्पन्न करना जिससे वे सामाजिक तथा आर्थिक वातावरण को समझ सकें।

(The aim of secondary school economics should be to teach modern economic principles by observation and through an understanding of current practices, economic theory to every day life, of the economic problems of the present day, those connected with industry, the tariff, taxation, the expense of government and cost of living are but a few of the many

1. Bining and Bining "Teaching the student studies in Secondary School." P-41.

that the citizen has to face continually. A through appreciation of these prbolems and a clear insight by the pupil into the social and economic environment are aims that when achieved, are worthwhile and contribute largely to the main aims of education.[1] - ***A.C. Bining and D.C. Bining)***

एम.पी. मुफात (M.P. Moffatt) ने अपनी पुस्तक "Social Studies Intructions" में अर्थशास्त्र के निम्नलिखित उद्देश्य लिखे हैं :

1. छात्रों में कुशल उपभोक्ता की भावना का विकास करना।
2. छात्रों में राष्ट्रीय रहन-सहन के स्तर को उच्च बनाने के लिए योग्यता उत्पन्न करना।
3. बालकों को उन आर्थिक दशाओं तथा लाभ के सम्भाव्य साधनों से अवगत कराना जिससे वे अपने व्यवसाय का चयन सफलतापूर्वक कर सके।
4. छात्रों को राष्ट्रीय आय में वृद्धि करने की क्षमता प्रदान करना।
5. छात्रों में बजट के व्यावहारिक महत्त्व को समझाने की क्षमता उत्पन्न करना।

Lipstreu ने अर्थशास्त्र शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं :

1. भोजन, वस्त्र, निवास तथा स्वास्थ्य के उपयोग एवं क्रय शक्ति में वृद्धि करना (To promote wiser purchasing and consumption of food, clothing, shelter and health.)।
2. नागरिक के उन गुणों का विकास करना जिससे वह कुशल उपभोक्ता बन सके (To develop intelligent consumer citizenship.)।
3. छात्रों को ऐसे अनुभव प्रदान करना जिससे उनमें तर्क संगत चयन करने की शक्ति का विकास करना (To provide experiences that will improve the ability of students to make rational choices.)।
4. छात्रों को उन साधनों एवं सूचनाओं के स्रोतों से परिचित कराना जो एक उपभोक्ता के लिए लाभदायक होते हैं। (To aquaint the student with agencies and sources of information that are helpful to the consumer.)।
5. छात्रों में आर्थिक समस्याओं के लिए व्यापक सामाजिक विवेक उत्पन्न करना (To develop a broad social intelligence in Economic problems.)।
6. उच्च स्तरीय मूल्यों एवं रुचियों को विकसित करना (To develop high standards of values and taste.)।
7. लाभ की अर्थ-व्यवस्था में उपभोक्ता के कार्यों की सराहना करने की शक्ति विकसित करना (To cultivate an appreciation of the role of consumer in a profit economy.)।



8. सहयोग की वृत्ति प्रोत्साहित करना जिससे आर्थिक कल्याण में वृद्धि हो (To promote Co-operative attitudes that tend to increase the Economic well-being.)।
9. प्रचार की रीतियों के मूल्यांकन के साधनों को प्रदान करना (To provide means of evaluating the techniques of advertising.)।
10. राजकीय व्ययों के महत्त्व को समझने की शक्ति उत्पन्न करना (To develop an understanding of the significance of public expenditures.)।
11. उपभोक्ता में अपने अवकाश के समय का उपभोग करने के लिए दर्शन उत्पन्न करना तथा इसके साथ ही साथ अच्छी क्रियाशीलता की भावना का विकास करना जिससे वह अपनी व्यावसायिक रुचियों की सन्तुष्टि कर सके। (To develop in the consumer a philosophy about his use of leisure time, as well as good "buymanship" in satisfying his vocational interests.)।

### प्राथमिकता के आधार पर अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य

### [Aims of Teaching Economics on the Basis of Priority]

प्राथमिकता के आधार पर अर्थशास्त्र शिक्षण के कुछ उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं, जो निम्नलिखित हैं :

**1. आर्थिक नागरिकता** (Economic Citizenship) : आर्थिक नागरिकता का विकास करना अर्थशास्त्र शिक्षण का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। आर्थिक नागरिकता से तात्पर्य है व्यक्ति को इस योग्य बनाना कि वह आर्थिक मामलों में अपने दायित्व को समझने तथा उनका पूर्ण से निर्वाह कर सके। अर्थशास्त्र शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह व्यक्ति में ऐसे गुणों का विकास करे जिससे उसमें अच्छी नागरिकता का विकास हो सके। इसके लिए शिक्षक को छात्र-छात्राओं में निम्नलिखित गुणों का विकास करना चाहिए :

**( क ) आर्थिक कुशलता** (Economic Efficiency) : आर्थिक कुशलता का विकास होने पर व्यक्ति स्वयं अपनी जीविका कमा सकता है अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है। ऐसा व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति या समाज पर बोझ नहीं होता। इसलिए छात्र-छात्राओं को अपने योग्य सामर्थ्यवान बनाने के लिए आर्थिक कुशलता के गुण का होना आवश्यक है।

**( ख ) कुशल उपभोक्ता** (Efficiency Consumer) : यदि व्यक्ति कुशल उपभोक्ता नहीं होगा तो वह आर्थिक नागरिकता के दायित्वों को अच्छी तरह नहीं निभा पाएगा। इसलिए छात्र-छात्राओं को कुशल उपभोक्ता बनाना बहुत आवश्यक है। उनको ऐसा शिक्षण दिया जाए कि वे वस्तुओं के क्रय-विक्रय, बजट-निर्माण को कुशलतापूर्वक कर सकें। छात्रों को मितव्ययी जीवन जीने की प्रेरणा देनी चाहिए।

**( ग ) आर्थिक समस्याओं की समझदारी** (Understanding of Economic Problems) : सफलतापूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति

अपने समाज देश की आर्थिक समस्याओं की जानकारी रखे। अपने देश की ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं की भी जानकारी होनी चाहिए।

**(घ) उत्तरदायित्व की भावना** (Sense of Responsibility) : छात्र-छात्राओं को इस प्रकार की आर्थिक क्रियाओं एवं योजनाओं का संचालन एवं संगठन करने का अवसर दिया जाए तो उनमें अपने उत्तरदायित्व को निभाने की भावना का विकास होगा। उत्तरदायित्व की भावना विकसित होने पर ही आर्थिक नागरिकता का विकास हो सकता है।

**(ङ) अनुशासित जीवन व्यतीत करने पर बल** (Emphasis on Disciplined Life) : शिक्षक छात्र-छात्राओं को अनुशासन का महत्त्व बता कर उन्हें अनुशासित जीवन जीने की प्रेरणा दे सकता है। अनुशासित जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देने के लिये शिक्षक उनसे कठिन श्रमदान् करा सकता है।

**(च) व्यक्तिगत हित की सार्वजनिक हित से निम्नता** (Subordination of Private Interest to General Interest) : छात्र-छात्राओं में ऐसी भावना का विकास करें कि वे व्यक्तिगत हित की अपेक्षा सार्वजनिक हितों को महत्त्व दें। अपने व्यक्तिगत हित की जगह समाज, देश तथा राष्ट्र के हित को श्रेष्ठ समझे।

**2. आर्थिक जीवन के सिद्धान्तों का ज्ञान** (Knowledge of Principles of Economic Life) : शिक्षक अर्थशास्त्र का शिक्षण करते समय छात्र-छात्राओं को आर्थिक जीवन के सिद्धान्तों का ज्ञान प्रदान करना है। भारत की आर्थिक व्यवस्था से छात्रों को परिचित कराया जाए। उन्हें भारतीय आर्थिक व्यवस्था के मूलाधार अर्थात् ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों प्रकार का ज्ञान प्रदान करना चाहिए।

**3. मानसिक शक्तियों का विकास** (Development of Mental Powers) : अर्थशास्त्र शिक्षण का उद्देश्य छात्र-छात्राओं का मानसिक विकास करना है जिससे वे अपने दायित्वों का सही ढंग से निर्वाह कर सकें। छात्र-छात्राओं के लिए यह भी ज़रूरी है कि वे सत्य-असत्य, ठीक और गलत की पहचान कर सकें।

## उद्देश्य और लक्ष्य में अन्तर
## [Difference between Aim and Objectives]

सभी छात्र-छात्राएं अपने दैनिक जीवन में उद्देश्य और लक्ष्य में अन्तर नहीं करते हैं और इनको एक-दूसरे का पर्याय मानकर प्रयोग करते हैं। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। इन दोनों में पूर्ण और अंश का अन्तर है। उद्देश्य अपने में पूर्ण होता है और जबकि लक्ष्य अंश होता है। उद्देश्य आदर्श और पूर्ण स्थिति की ओर संकेत करता है, जिसकी सीमा नहीं है और उसके विपरीत लक्ष्य की सीमा निश्चित होती है। लक्ष्य प्राप्त किये जा सकते हैं क्योंकि इनकी सीमा निश्चित है परन्तु उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अनेक लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं और व्यक्ति इन लक्ष्यों को प्राप्त करता हुआ उद्देश्य की ओर बढ़ता है। शिक्षा या किसी अन्य विषय के क्षेत्र में उद्देश्य और लक्ष्य में यही अन्तर स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है।



उदाहरणतया अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यों के अन्तर्गत बालकों में 'आर्थिक निपुणता का विकास करना' उद्देश्य है। इसके लिए छात्र-छात्राओं में बचत की आदत का होना, समय का पाबन्द होना, धन का सदुपयोग करना, प्राकृतिक संसाधनों और मानवीय संसाधनों की उपयोगिता को समझना, बजट बनाना सीखना आदि यथा उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए निर्धारित लक्ष्य हैं। यदि हम ध्यान से विचार करें तो इनमें से कुछ लक्ष्यों को अवश्य ही प्राप्त किया जा सकता है लेकिन यह कभी नहीं कहा जा सकता कि व्यक्ति विशेष में आर्थिक निपुर्णता का पूर्ण रूप से विकास हो गया है। उद्देश्य और लक्ष्य में यही प्रमुख रूप से अन्तर है।

## अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य
## [Objectives of Teaching Economics]

विश्व में भारत सबसे बड़ा प्रजातान्त्रिक देश है। भारत में लोकतन्त्र को राजनैतिक क्षेत्र में तो अपनाया हुआ है लेकिन अन्य क्षेत्रों में नहीं। परन्तु हमें यह बात ध्यान से समझ लेनी चाहिए कि लोकतन्त्र राजनैतिक क्षेत्र तक नहीं होता बल्कि यह जीवन की एक प्रणाली है। सच्चा लोकतन्त्र तब होता है जब उसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनाया जाए जैसे- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक आदि। लोकतन्त्र एक प्रकार से शासन का स्वरूप होता है उसमें समाज की व्यवस्था के साथ-साथ आर्थिक व्यवस्था भी होती है। जब हम लोकतन्त्र को इस प्रकार से अर्थ व्यवस्था भी मानकर चलते हैं तो इस देश में अर्थशास्त्र की शिक्षा की भी बहुत आवश्यकता है। जब हम इस बात को भली-भान्ति समझते हैं कि इस राष्ट्र के लिए अर्थशास्त्र के शिक्षण की अत्यन्त आवश्यकता है तो स्वतः ही यह प्रश्न भी सामने आता है कि भारत की वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अर्थशास्त्र शिक्षण के क्या लक्ष्य होने चाहिए? आधुनिक परिवेश में अर्थशास्त्र शिक्षण के निम्नलिखित लक्ष्यों को निर्धारित करना उपयुक्त होगा :

1. इस विषय के माध्यम से छात्र-छात्राओं को राष्ट्र की आर्थिक स्थितियों एवं समस्याओं के बारे में जानकारी देना ताकि वे सक्रिय रूप से समस्याओं के समाधान और राष्ट्र के आर्थिक विकास हेतु अपना योगदान दे सके।
2. विद्यार्थियों को अर्थशास्त्र के सामान्य नियमों का ज्ञान कराना जिनका प्रयोग करके वह अपनी निजी, समाज की आर्थिक समस्याओं का समाधान कर सके।
3. वे समस्याओं को भली-भान्ति समझ कर उनका विश्लेषण कर सकें और फिर इसके बाद उनका सामान्यीकरण भी कर सकें।
4. छात्रों में सामाजिक नागरिकता के साथ-साथ आर्थिक नागरिकता का विकास करना क्योंकि सामाजिक नागरिकता आर्थिक नागरिकता के बिना अधूरी होती है। यदि छात्र आर्थिक क्षेत्र में नागरिक के कर्त्तव्यों एवं अधिकारों से अवगत हो जाएंगे तो देश से आर्थिक विषमताओं को दूर किया जा सकेगा।

5. छात्र-छात्राओं को राज्य के कर विषयक नियमों का पूर्ण रूप से ज्ञान देना ताकि वे निष्पक्ष रूप से उनकी समीक्षा कर सकें।
6. उनकी राष्ट्र की औद्योगिक और व्यापारिक उन्नति के लिये कारगर उपायों की जानकारी देना।
7. उनमें बचत की भावना का विकास करना ताकि वे अपने व्यावहारिक जीवन में बजट के महत्त्व और धन के सदुपयोग के बारे में समझ सकें।
8. छात्र-छात्राओं में आर्थिक जागरुकता का विकास करना।
9. राष्ट्र के रहन-सहन और राष्ट्रीय आय की प्रगति के लिए उनको भागीदार बनाना।
10. उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना ताकि वे अन्धानुकरण न करें और धन का रीति-रिवाजों पर अपव्यय न करें।
11. छात्र-छात्राओं को देश के विभिन्न पहलुओं के क्षेत्र में उत्पादन, वितरण, विनिमय एवं उपभोग के नियमों से परिचित कराना।
12. राष्ट्रों के एक दूसरे पर आश्रित होने की आवश्यकता के बारे में जानकारी देना।
13. राष्ट्र के भौतिक संसाधनों और मानवीय संसाधनों की जानकारी देना और इस बात के लिए प्रेरित करना कि इनसे अधिक-से-अधिक लाभ कैसे उठाया जा सकता है?
14. छात्र-छात्राओं में मितव्ययिता, समय का सदुपयोग, सहयोग उदारता, सहनशीलता और एकता जैसे गुणों का विकास करना जिससे वे सामाजिक और आर्थिक उन्नति में सहयोग दे सकें।
15. उनको दूसरे राष्ट्रों की आर्थिक समस्याओं से अवगत कराना जिससे उनको सहानुभूति पूर्ण विचार करने का अवसर मिले और उनका दृष्टिकोण व्यापक हो।
16. आर्थिक आंकड़ों का ज्ञान देना ताकि वे उनका विश्लेषण करके भविष्य में आर्थिक योजनाओं में सहयोग दे सकें।
17. विद्यार्थियों को राष्ट्र की चल और अचल सम्पत्तियों से अवगत कराकर उनके द्वारा अधिक-से-अधिक लाभ उठाने की क्षमता को विकसित करना।
18. अर्थशास्त्र के शिक्षण से छात्र-छात्राओं का ज्ञानार्जन करना ताकि वे यथा आवश्यकता भूमि, लगान, पूंजी, धन, श्रम और मानवीय आवश्यकताओं का ज्ञान प्राप्त कर सकें।
19. उपरोक्त सभी लक्ष्यों के अतिरिक्त आर्थिक नियमों और प्रक्रियाओं का ज्ञान देना जैसे घटती हुई उपयोगिता का नियम, मांग और पूर्ति का नियम, माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त आदि।



## अभ्यास के प्रश्न

### (Study Questions)

1. उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में अर्थशास्त्र शिक्षण के क्या उद्देश्य हैं?

   What are the aims of Teaching Economics in Higher Secondary Schools?
2. स्कूल में अर्थशास्त्र शिक्षण के क्या उद्देश्य हैं? इनकी व्याख्या प्राथमिकता के आधार पर कीजिये।

   What are the aims of teaching economics? Discuss these according to Priority.
3. भारतीय परिस्थितियों के संदर्भ में अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्यों की व्याख्या कीजिए।

   Explain the objectives of teaching Economics with special reference to Indian Conditions.

* * *

# 3
CHAPTER

# वर्तमान परिदृश्य में शिक्षण अर्थशास्त्र के मूल्य

## (Values of Teaching Economics in Present Scenario)

### भूमिका

### [Introduction]

अर्थशास्त्र शिक्षण के मूल्यों की चर्चा करने से पहले हमें अर्थशास्त्र शिक्षा के उद्देश्यों और अर्थशास्त्र शिक्षण के मूल्यों के अन्तर को स्पष्ट रूप से समझना बहुत आवश्यक है। इन दोनों के अन्तर को स्पष्ट रूप से समझने के बाद ही हम अर्थशास्त्र शिक्षण के मूल्यों के स्वरूप को समझ सकते हैं।

प्राय: यह देखा गया है कि हमारे भावी शिक्षक उद्देश्यों और मूल्यों में अन्तर न करके इनका एक-दूसरे के स्थान पर प्रयोग कर लेते हैं अर्थात् इन दोनों को एक-दूसरे का पर्याय मानने की भूल करते हैं। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। इन दोनों में पर्याप्त रूप से अन्तर दिखाई देता है। निम्न बातों को हम पूरी तरह से समझने का प्रयास करें तो हमें उद्देश्य और मूल्य का अन्तर स्पष्ट हो जाएगा।

हम पहले भी इस बात की चर्चा कर चुके हैं कि उद्देश्य एक पहले से सोचा समझा अच्छाई और आदर्श स्थिति की ओर प्रेरित करता है अर्थात् संकेत करता है और यह सीमा हीन होता है। परन्तु मूल्य उद्देश्य प्राप्ति से पहले होने वाले प्रतिफल और लाभ हैं जिन्हें व्यक्ति उद्देश्य प्राप्ति के लिये किये गये प्रयासों के फलस्वरूप प्राप्त करता है। उद्देश्य सीमित न होकर असीमित होते हैं। इसलिए इनकी प्राप्ति पूर्ण रूप से सम्भव नहीं होती जबकि मूल्य की प्राप्ति सम्भव है क्योंकि इनका क्षेत्र सीमित है। उद्देश्यों का आधार दर्शन शास्त्र है और मूल्यों का आधार व्यक्ति द्वारा किये गये प्रयत्न और प्रयोग होते हैं। उद्देश्य आदर्श स्थिति से सम्बन्धित होने के कारण इसकी प्राप्ति बहुत कठिन होती है। इसके विपरीत मूल्य की प्राप्ति सम्भव है क्योंकि इसका सम्बन्ध शिक्षण के अन्तर्गत किये गये प्रयासों के परिणाम, प्रतिफल, लाभ या उपलब्धियों से होता है।





### अर्थशास्त्र शिक्षण के मूल्य

### [Values of Teaching Economics]

जे.एच. डॉड (J.H. Dodd) ने अर्थशास्त्र शिक्षण के निम्न मूल्यों पर प्रकाश डाला है :

1. अर्थशास्त्र व्यवसाय या पेशे के चयन करने में सहायक सिद्ध होता है।
2. छात्र-छात्राओं को धन का सदुपयोग कराना सिखाता है।
3. अपव्यय करने से सावधान करता है।
4. उद्योग एवं व्यवसाय के संगठन में सहायता करता है।
5. आर्थिक उत्तरदायित्वों को निभाने में पूर्ण रूप से सहायता करता है।
6. अर्थशास्त्र के ज्ञान से छात्र-छात्राएं तत्कालीन समस्याओं एवं सभ्यता को समझने में समर्थ होते हैं।
7. विद्यार्थी व्यक्तिगत एवं पारिवारिक वित्तीय सम्बन्धी मामलों को व्यवस्थित करना सीख जाते हैं।

साधारणतय: अर्थशास्त्र के मूल्यों को निम्न दो भागों में बांटा जा सकता है :

(1) सैद्धान्तिक मूल्य

(2) व्यावहारिक मूल्य

**(1) सैद्धान्तिक मूल्य :** सैद्धान्तिक मूल्यों को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है :

*(i)* मानसिक शक्तियों का विकास।

*(ii)* व्यापक (विस्तृत) दृष्टिकोण।

*(iii)* आर्थिक जीवन से जुड़ी विधि जटिलताओं का निवारण।

*(iv)* सैद्धान्ति रूप से ज्ञानोपार्जन एवं ज्ञान-वर्द्धन।

**(2) व्यावहारिक मूल्य :** अर्थशास्त्र शिक्षण के व्यावहारिक मूल्यों को मुख्य रूप से दो शीर्षकों के अन्तर्गत लिया जा सकता है :

*(i)* व्यक्तिगत मूल्य

*(ii)* सामाजिक मूल्य

***(i)* व्यक्तिगत मूल्य :** इन मूल्यों से व्यक्तिगत क्षेत्र में गृह-स्वामी, व्यापारी, नौकरी पेशा, श्रमिक और राजनीतिज्ञ आदि आ जाते हैं। अर्थशास्त्र के सही ज्ञान से सही दिशा में निम्न मूल्यों की प्राप्ति होती है :

- ❑ गृह स्वामी अपनी आमदनी को देखते हुए खर्च करता है।
- ❑ अर्थशास्त्र के ज्ञान से व्यापारी मुद्रा प्रसार और मुद्रा संकोच से होने वाले परिणामों से अवगत रहते हैं।

- इस विषय के ज्ञान से विद्यार्थियों को मजदूरों की समस्याओं एवं उनके समाधान हेतु ज्ञान हो जाता है।
- इसके अध्ययन के ज्ञान से समझदार श्रमिक पूंजीपतियों के शोषण से अपना बचाव करने में सफल होते हैं।
- व्यक्ति विशेष को इस विषय के ज्ञान से सीमित आय व्यय से अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करने के ढंग का पता चल जाता है।
- इस विषय का ज्ञान रखने वाले समाज सुधारक समाज से जुड़ी बहुत सी आर्थिक समस्याओं का हल ढूंढने में सफल होते हैं।
- व्यक्ति को अपने ढंग से नियोजित रूप से बचत करना आ जाता है।
- व्यक्ति इस विषय की ज्ञान प्राप्ति के बाद अपनी आय को वर्तमान एवं भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सुनिश्चित एवं सुनियोजित ढंग से व्यय करता है।
- इस विषय का ज्ञान होने पर प्रत्येक व्यक्ति पारिवारिक बजट सम्बन्धी नियम के ज्ञान से अपनी आय का अधिक-से-अधिक लाभ उठाने का प्रयास करता है।
- अर्थशास्त्र के ज्ञान से राष्ट्र के बजट, कर-नीति, मुद्रा-प्रसार एवं संकोचन, आयात-निर्यात आदि से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करने में पर्याप्त रूप से सहायता मिलती है।
- इस विषय के ज्ञान के द्वारा प्रबन्धक, बैंकर्स और संचालक वित्तीय संस्थाओं को सुचारु रूप से चलाने में लाभान्वित होते हैं।
- दैनिक जीवन की वस्तुओं के क्रय-विक्रय के बारे में समुचित रूप से जानकारी प्राप्त हो जाती है।

*(ii)* **सामाजिक मूल्य :** सामाजिक मूल्यों के अन्तर्गत किसी व्यक्ति विशेष की समस्या का अध्ययन नहीं किया जाता क्योंकि अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। इसमें व्यक्ति की समस्याओं एवं क्रियाओं का अध्ययन भी सामूहिक दृष्टि से किया जाता है। इसके अध्ययन की सहायता से समाज की विभिन्न कुरीतियों और समस्याओं पर पर्याप्त रूप से प्रकाश डाला जाता है। अर्थशास्त्र सदैव ही समाज से जुड़ी आर्थिक समस्याओं के निवारण में सहायता प्रदान करता है। समाजवादी व्यवस्था, आर्थिक विकास योजनाएं, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थान इस विषय की महत्त्वपूर्ण और सार्थक देन है। इससे आर्थिक विकास में पूर्ण रूप से सहायता मिलती है। इस विषय के द्वारा समाज की निम्न समस्याओं पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला गया है :

- जनसंख्या समस्या
- बेकारी (बेरोज़गारी)
- निर्धनता (गरीबी)



- धन का असमान वितरण
- मुक्त व्यापार नीति
- उत्पादन वृद्धि एवं उपभोग
- वर्ग संघर्ष की समस्या
- शोषण की समस्या

उपरोक्त चर्चा के आधार पर निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र का व्यक्तिगत, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में बहुत महत्त्व है। यह व्यक्ति के और राष्ट्र के आर्थिक विकास में बहुत सहायक है।

## अभ्यास के प्रश्न

## (Study Questions)

अर्थशास्त्र शिक्षण के मूल्यों को स्पष्ट कीजिए।

Discuss the values of teaching economics.

* * *

# 4

CHAPTER

# अर्थशास्त्र में वर्गीकरण और व्यवहारिक उद्देश्य

## (Taxonomy and Behavioural Objectives in Economics)

### व्यवहारपरक उद्देश्य

### [Instructional Objectives]

अभिक्रम के उद्देश्यों की परिभाषा देते हुये व्यवहारपरक तरीका अपनाया जाता है। यहां ध्यान देने की बात यह है कि व्यवहारपरक (behavioural) या संक्रियात्मक (Operational) शब्द पर्यायवाची है। इसलिये इनका प्रयोग एक-दूसरे के लिए किया जा सकता है। उद्देश्यों के सन्दर्भ में 'व्यवहारपरक' से अभिप्राय है। अनुदेशन के पश्चात् छात्र-छात्राओं में प्रगट होने वाले व्यवहार को वस्तुनिष्ठ होकर स्पष्ट ढंग से अभिव्यक्त करना। प्राय: ऐसा होता है कि शिक्षण एवं अनुदेशन प्रक्रिया में उद्देश्यों का निर्माण (प्रतिपादन) सामान्य रूप से ही करते हैं परन्तु व्यवहारपरक उद्देश्य के प्रतिपादन क्रिया को अधिक महत्त्वपूर्ण सार्थक, सशक्त और उपयोगिता को अधिक सकारात्मक माना जाता है।

संक्षेप में इससे यह पूर्ण रूप से यह स्पष्ट होता है कि अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए छात्र-छात्राओं में वांछनीय परिवर्तन होने की अपेक्षा रहती है। अत: वास्तविक रूप में ये परिवर्तन ही उद्देश्य पूर्ति के प्रतीक होते हैं। यहां पर ध्यान देने की विशेष बात यह है कि छात्र-छात्राओं में होने वाले परिवर्तन अर्थशास्त्र शिक्षण के एक या अनेक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किए गए प्रयासों के प्रतिफल लाभ या उनके सूचक होते हैं। क्योंकि उद्देश्यों की पूर्ण रूप से प्राप्ति कभी भी सम्भव नहीं होती। शिक्षक को हमेशा अपने छात्र-छात्राओं में होने वाले व्यवहार परिवर्तनों की ओर सजग और सचेत रहना चाहिए।

### व्यवहारपरक उद्देश्यों के तत्त्व

### [Elements of Behavioural]

व्यवहारपरक उद्देश्यों के मुख्य रूप से तीन तत्त्व होते हैं। जो निम्न हैं :

1. इसमें शिक्षण के परिणामस्वरूप अपेक्षित व्यवहार जिससे व्यवहार में कार्य कुशलता, अभिवृत्ति, नवीन ज्ञान या धारणा का स्पष्ट रूप से वर्णन होता है।





2. जिन दशाओं या सन्दर्भों में व्यवहार परिवर्तन हो सकेगा, उसका उचित रूप से उल्लेख।
3. जिस स्थिति में उत्पन्न या परिवर्तित व्यवहार (अभिव्यक्त व्यवहार) को मान्य कहा जाएगा। इसके लिए प्रयुक्त या प्रयोग में लाये जाने वाले निकष (criterion) या मापदण्ड का संकेत दिया जाता है।

### ब्लूम द्वारा उद्देश्यों का वर्गीकरण

### [Blooms Taxonomy of Objectives]

शिक्षण के अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के निर्धारण का प्रयोजन छात्र-छात्राओं के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाने से होता है। इसलिये कक्षा शिक्षण के परिवर्तनों से शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। उद्देश्य विशिष्ट, प्रत्यक्ष और व्यावहारिक हो सकते हैं। यही कारण है कि शिक्षक के लिये इनका बहुत अधिक महत्त्व होता है। शिक्षण-उद्देश्यों का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध सीखने के उद्देश्य से होता है। प्रोफैसर बी.एस. ब्लूम ने सीखने के उद्देश्यों को तीन पक्षों में विभाजित किया है। ये तीनों पक्ष सीखने वाले से सम्बन्धित है अर्थात् छात्र-छात्राओं से सम्बन्धित है। सीखने के उद्देश्यों का सम्बन्ध छात्र-छात्राओं के व्यवहार परिवर्तन से होता है। व्यवहार परिवर्तन तीन प्रकार से होता है :

(1) ज्ञानात्मक,
(2) भावात्मक और
(3) क्रियात्मक।

ब्लूम के कथनानुसार सीखने के उद्देश्य भी तीन प्रकार के होते हैं, जो निम्न हैं :

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive objectives)
2. भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)
3. क्रियात्मक उद्देश्य (Psychomotor objectives)

**1. ज्ञानात्मक उद्देश्य** (Cognitive objectives) : ज्ञानात्मक उद्देश्यों का मुख्य रूप से सम्बन्ध सूचनाओं, ज्ञान तथा तथ्यों का पर्याप्त जानकारी से होता है। अधिकांश शैक्षिक क्रियाओं द्वारा इसी उद्देश्य की प्राप्ति की जाती है।

**2. भावात्मक उद्देश्य** (Affective objectives) : भावात्मक उद्देश्य का सम्बन्ध रुचियों, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों के विकास से होता है। यह शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य होता है।

**3. क्रियात्मक उद्देश्य** (Psychomotor objectives) : क्रियात्मक उद्देश्य का सम्बन्ध छात्र-छात्राओं की शारीरिक क्रियाओं के प्रशिक्षण और उनमें कौशल के विकास करने से होता है। इसके अतिरिक्त इस उद्देश्य का सम्बन्ध औद्योगिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण से होता है।

ब्लूम तथा इसके सहयोगियो ने शिकागो विश्वविद्यालय में इन तीनों पक्षों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। ज्ञानात्मक पक्ष ब्लूम ने (1956) में भावात्मक पक्ष ब्लूम, करथवाल और मसीआ (1964) में और क्रियात्मक पक्ष का सिम्पसन ने (1969) में वर्गीकरण प्रस्तुत किया था। इस वर्गीकरण की सहायता से शिक्षक अपने शिक्षण और सीखने के उद्देश्यों को सुगमता से निर्धारित कर सकता है। इन शिक्षण उद्देश्यों को लिखने के लिए कई विधियों का प्रयोग किया जाता है। परन्तु सभी ने ब्लूम के वर्गीकरण की ही सहायता ली है। ब्लूम ने स्वयं भी इस वर्गीकरण का प्रयोग परीक्षण की रचना में यह जानने के लिए किया है कि विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में निर्णय लेने के प्रश्न को स्वरूप किस प्रकार का हो? उसने परीक्षण को उद्देश्य केन्द्रित बनाने का प्रयत्न किया है।

प्रत्येक पक्ष के विस्तार क्रम को प्रस्तुत करते हुए आगे चलकर तालिका की सहायता से समझाया गया है। जैसे ज्ञानात्मक पक्ष का विस्तार ज्ञान से लेकर मूल्यांकन तक है। मूल्यांकन तक पहुंचने के लिए ज्ञान से संश्लेषण तक की क्षमताओं का विकास होना आवश्यक होता है। यह वर्गीकरण क्रमबद्धता से होता है। जिसे चढ़ाव क्रम (Taxonomny) कहते हैं। इसके वर्गों से शैक्षिक उद्देश्यों के क्रम का ज्ञान होता है। शिक्षक अपने उद्देश्यों को निर्धारित करने के लिए इस क्रमबद्धता को ही अपनाता है। छात्र शिक्षक अपने शिक्षण नियोजन में ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों का विशेष रूप से प्रयोग करता है। इसलिए ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों, पाठ्य-सामग्री तथा सीखने की उपलब्धियों का वर्णन विस्तार से किया गया है क्योंकि ज्ञानात्मक पक्ष का महत्त्व छात्र शिक्षकों के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध होता है।

ब्लूम द्वारा सुझाए गए शिक्षण उद्देश्यों के वर्गीकरण में निम्नलिखित तालिका द्वारा दर्शाया गया है :

### शैक्षिक उद्देश्य का वर्गीकरण
### [Taxonomy of Educational Objectives]

| | ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain) | भावात्मक पक्ष (Affective Domain) | क्रियात्मक पक्ष (Psychomotor Domain) |
|---|---|---|---|
| 1. | ज्ञान Knowledge | ग्रहणता Receiving | उद्दीपन Impulsion |
| 2. | बोध Comprehension | अनुक्रिया Response | कार्य करना Manipulation |
| 3. | प्रयोग Application | अनुमूलन (अनुप्रयोग) Valuing (आंकलन) | नियन्त्रण Control |
| 4. | विश्लेषण Analysis | प्रत्ययीकरण Conceptualization | समायोजन Co-ordination |
| 5. | संश्लेषण Synthesis | व्यवस्थापन Organisation | स्वागीकरण Naturalization |
| 6. | मूल्यांकन Evaluation | चरित्रनिर्माण Characterization | आदत पड़ना और कौशल का निर्माण Habit formation |



ब्लूम के ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण से पहले हमारे लिए मुख्य रूप से उद्देश्यों के प्रकार के बारे में और उन दोनों उद्देश्यों के भेद के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। मुख्य रूप से उद्देश्यों के दो प्रकार हैं जो निम्न हैं :

1. शैक्षिक उद्देश्य (Educational objectives)
2. शिक्षण उद्देश्य (Teaching objectives)

### शैक्षिक उद्देश्यों तथा शिक्षण उद्देश्यों में अन्तर
### [Difference between Educational & Teaching Objectives]

उपरोक्त दोनों उद्देश्यों में मुख्य अन्तर क्षेत्र का होता है। शैक्षिक उद्देश्य के क्षेत्र अधिक व्यापक है और शिक्षण उद्देश्य सीमित और संकुचित है। शैक्षिक उद्देश्य का आधार दर्शन शास्त्र और सामाजिक शास्त्र होता है परन्तु शिक्षण उद्देश्यों का आधार मनोविज्ञान होता है। शैक्षिक उद्देश्य की अगर प्राप्ति होती है तो शिक्षण उद्देश्यों की भी प्राप्ति हो जाएगी क्योंकि शैक्षिक उद्देश्यों में शिक्षण उद्देश्य निहित होते हैं। दूसरी तरफ शिक्षण उद्देश्य साधन मात्र हैं जो शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं। शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की अवधि सीमित नहीं होती जबकि शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति 50 मिनट की अवधि (पीरियड) में भी सम्भव है। शैक्षिक उद्देश्य जैसे कि इसके नाम से पता चलता है कि ये समूची शिक्षा से सम्बन्धित होते हैं और शिक्षण उद्देश्यों का सम्बन्ध विषय विशेष के शिक्षण से होता है।

इसलिए यह कहना उचित रहेगा कि शैक्षिक उद्देश्यों का सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास होता है और शिक्षण उद्देश्यों का सम्बन्ध व्यक्ति के ज्ञान कौशल और उसकी अभिरुचियों से होता है।

### ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण
### [Taxonomy of Cognitive Education Objectives]

ब्लूम ने अपनी पुस्तक "ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण" (Taxonomy of Educational objectives of Cognitive Domain) में ज्ञानात्मक पक्ष को व्यापक रूप में छः वर्गों में विभाजित किया है :

(1) ज्ञान (Knowledge)
(2) बोध (Comprehension)
(3) प्रयोग (Application)
(4) विश्लेषण (Analysis)
(5) संश्लेषण (Synthesis) और
(6) मूल्यांकन (Evaluation)।

प्रत्येक वर्ग के सीखने की क्रियाओं को पहचानने का प्रयत्न भी किया गया है। जिनका व्यावहारिक रूप से अवलोकन और मूल्यांकन सम्भव है। इस पक्ष के सभी वर्गों की विशिष्ट सीखने की उपलब्धियों तथा पाठ्य-वस्तु की प्रकृति को निम्नलिखित चार्ट में दर्शाया गया है।

| वर्ग (Category) | सीखने की उपलब्धियां (Learning Outcome) |
|---|---|
| 1. ज्ञान (Knowledge) | विशिष्ट वस्तुओं का ज्ञान, साधनों का ज्ञान और सार्वभौम वस्तुओं का ज्ञान। |
| 2. बोध (Comprehension) | अनुवाद करना, व्याख्या देना और उल्लेख करना। |
| 3. प्रयोग (Application) | सामान्यीकरण करना, निदान करना और प्रयोग करना। |
| 4. विश्लेषण (Analysis) | विश्लेषण करना, सम्बन्ध स्थापित करना और सिद्धान्त का विश्लेषण करना। |
| 5. संश्लेषण (Synthesis) | अनोखा सम्प्रेषण करना, योजना का निर्माण करना और सम्बन्ध स्थापित करना। |
| 6. मूल्यांकन (Evaluation) | बाहरी एवं आन्तरिक निर्णय लेना। |

शिक्षण के अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के निर्धारण में इन्हीं ज्ञानात्मक पक्ष के वर्गों की सहायता ली जाती है। वर्गों के शिक्षण तथा सीखने के उद्देश्यों के निर्धारण के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। इन वर्गों का अथवा उद्देश्यों का संक्षिप्त विवरण निम्न हैं :

**1. ज्ञानात्मक उद्देश्य** (Cognitive Objectives) :

**( 1 ) ज्ञान** (Knowledge) : ज्ञान से छात्र-छात्राओं के प्रत्यास्मरण (Recall) और अभिज्ञान (Recognition) क्रियाओं को तथ्यों, शब्दों, नियमों तथा सिद्धान्तों की सहायता से विकसित किया जाता है। छात्र-छात्राओं के ज्ञान के लिए परम्पराओं, वर्गीकरण, मानदण्डों, नियमों तथा सिद्धान्तों के प्रत्यास्मरण तथा अभिज्ञान के लिये परिस्थितियां पैदा की जाती है। ज्ञान वर्ग के भी पाठ्य-सामग्री की दृष्टि से तीन स्तर होते हैं जो निम्न हैं :



(क) विशिष्ट बातों का ज्ञान देना (तथ्य, शब्द आदि)।
(ख) उपायों तथा साधनों का ज्ञान देना।
(ग) सामान्यीकरण, नियमों तथा सिद्धान्तों का ज्ञान देना।

**( 2 ) बोध** (Comprehension) : बोध के लिये ज्ञान का होना आवश्यक होता है। जिस पाठ्य-वस्तु (तथ्य, शब्द, उपाय, साधन, नियम तथा सिद्धान्तों) का ज्ञान प्राप्त किया है अर्थात् प्रत्यास्मरण और अभिज्ञान की क्षमताओं का विकास हो चुका है उन्हीं का अपने शब्दों में अनुवाद करना, व्याख्या करना तथा उल्लेख करना आदि क्रियाएं बोध उद्देश्य के स्तर पर की जाती हैं। बोध में सम्बन्ध स्थापित करने पर बल नहीं दिया जाता है। बोध उद्देश्यों की क्रिया के भी तीन स्तर होते हैं।

(क) तथ्यों, शब्दों, नियमों, साधनों और सिद्धान्तों को अनुवाद करके अपने शब्दों में अभिव्यक्त करना।
(ख) इसी पाठ्य वस्तु (सामग्री) की व्याख्या करना।
(ग) इसी पाठ्य सामग्री की बाहरी गणना और उल्लेख करना।

**( 3 ) प्रयोग** (Application) : प्रयोग के लिये ज्ञान तथा बोध होना आवश्यक है तभी छात्र प्रयोग स्तर की क्रियाओं समर्थ हो सकता है। पाठ्य-सामग्री को भी प्रयोग उद्देश्यों में तीन स्तर पर प्रस्तुत करते हैं :

(क) नियमों, साधनों, सिद्धान्तों में सामान्यीकरण करना (यह बाहरी गणना के निकट की क्रिया है)।
(ख) उनकी कमज़ोरियों को जानने के लिए निदान करना।
(ग) छात्र-छात्राओं द्वारा पाठ्य-सामग्री का प्रयोग करना (अर्थात् छात्र-छात्राएं इन शब्दों और नियमों को अपने कथनों में कर लेते हैं)।

**( 4 ) विश्लेषण** (Analysis) : इसके लिये तीनों ही उद्देश्यों की प्राप्ति का होना आवश्यक है। इसमें पाठ्य सामग्री के नियमों, सिद्धान्तों, तथ्यों और प्रत्ययों को तीन स्तरों पर प्रस्तुत किया जाता है :

(क) उनके तत्त्वों का विश्लेषण करना।
(ख) उनके सम्बन्धों का विश्लेषण करना।
(ग) उनका व्यवस्थित सिद्धान्तों के रूप में विश्लेषण करना।

बोध तथा प्रयोग उद्देश्यों की अपेक्षा विश्लेषण उच्च स्तर का उद्देश्य होता है। इसमें पाठ्य-सामग्री के बोध तथा प्रयोग के बजाए उसके तत्त्वों को अलग-अलग करना होता है।

**( 5 ) संश्लेषण** (Synthesis) : इसको सृजनात्मक या रचनात्मक उद्देश्य भी कहा जाता है क्योंकि इसमें विभिन्न तत्त्वों को एक नवीन रूप में व्यवस्थित किया जाता है। संश्लेषण के भी तीन स्तर होते हैं :

(क) विभिन्न तत्त्वों के संश्लेषण में सम्प्रेषण करना।

(ख) तत्त्वों के संश्लेषण से नवीन योजना प्रस्तावित करना।

(ग) तत्त्वों के अमूर्त सम्बन्धों का अवलोकन करना।

संश्लेषण में छात्रों को अनेक स्रोतों से तत्त्वों को निकालना होता है। विभिन्न तत्त्वों को मिलाकर 'नया ढांचा' तैयार करना होता है। इससे सृजनात्मक क्षमताओं का विकास होता है।

**( 6 ) मूल्यांकन** (Evaluation) : यह ज्ञानात्मक पक्ष का अन्तिम तथा सबसे उच्च उद्देश्य माना जाता है। इसमें पाठ्य वस्तु के नियमों, सिद्धान्तों तथा तथ्यो के सम्बन्ध में आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाता है। उनके सम्बन्ध में निर्णय लेने में आन्तरिक तथा बाह्य मानदण्डों को प्रयुक्त किया जाता है। वास्तव में मूल्यांकन को नियमों, तथ्यों, प्रत्ययों तथा सिद्धान्तों की कसौटी का स्तर माना जाता है।

स्कूल के शिक्षण विषयों की पाठ्य वस्तु में शब्दावली, तथ्य, नियम, उपाय, साधन, विधियां, प्रत्यय, सिद्धान्त तथा सामान्यीकरण ही होते हैं। इतिहास की पाठ्य वस्तु में तथ्य होते हैं। विज्ञान की पाठ्य वस्तु में नियम, विधियां तथा सिद्धान्त होते हैं। अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु में तथ्य, नियम और सिद्धान्त होते हैं। भाषा की पाठ्य वस्तु में शब्दावली, साधन, प्रत्यय, नियम होते हैं। इस प्रकार शिक्षण विषयों की सहायता से ज्ञान उद्देश्य से मूल्यांकन उद्देश्यों तक की प्राप्ति की जाती है और इस प्रकार ज्ञानात्मक पक्ष का विकास होता है।

**2. अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के सीखने की उपलब्धियां** (Outcomes of learning instructional objectives) : इन उद्देश्यों की प्राप्ति से सीखने की उपलब्धियां भी अलग-अलग होती हैं :

**( 1 ) तथ्यों की सूचना** : ज्ञान तथा बोध उद्देश्यों की प्राप्ति से होती है।

**( 2 ) प्रत्ययों की अनुभूति** : बोध उद्देश्य से विश्लेषण उद्देश्य तक की प्राप्ति से सम्भव होती है।

**( 3 ) सामान्यीकरण** : बोध उद्देश्य से संश्लेषण तक की प्राप्ति से होता है।

**( 4 ) समस्या समाधान** : प्रयोग उद्देश्य से मूल्यांकन उद्देश्य तक की प्राप्ति से होता है।

**( 5 )** सृजनात्मक चिन्तन का विकास विश्लेषण से मूल्यांकन उद्देश्यों तक की प्राप्ति से होता है।

**( 6 )** सिद्धान्तों तथा व्यवस्थित ज्ञान की क्षमताओं का विकास भी विश्लेषण से मूल्यांकन उद्देश्य की प्राप्ति से होता है।

सीखने की उपलब्धियों के भी स्तर होते हैं जो विभिन्न शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति से विकसित होते हैं। शिक्षण उद्देश्यों के दो प्रमुख आधार हैं :



(1) पाठ्य-वस्तु का स्वरूप,

(2) छात्रों की आवश्यकताओं एवं उनके स्तर को समझने के लिए सीखने की उपलब्धियों का विशेष महत्त्व होता है। छात्रों के स्तर का निर्धारण सीखने की उपलब्धियों से किया जाता है। जिसमें शिक्षण उद्देश्यों की जानकारी होना आवश्यक होता है। शिक्षक अपने शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण कर सकते हैं। अत: शिक्षण उद्देश्यों की जानकारी ज्ञात उद्देश्यों से लेकर संश्लेषण उद्देश्य तक होनी चाहिए।

## उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना
## (Statement of Objectives in Behavioural Terms)

किसी भी विषय की शिक्षण प्रक्रिया आरम्भ करने से पूर्व शैक्षिक उद्देश्यों का प्रतिपादन करना आवश्यक होता है। इन उद्देश्यों को सामान्य विशिष्ट एवं व्यवहारपरक ढंग से निरुपित किया जा सकता है। शिक्षण विधियों का अध्ययन करते समय प्राय: यह देखा जाता है कि इन विधियों में शिक्षा उद्देश्यों को स्पष्ट किया जाता है। वर्तमान में हम देखते हैं कि प्रशिक्षण, अनुदेशन (शिक्षण) और अधिगम के क्षेत्र में व्यवहारपरक उद्देश्यों को प्रतिपादन की परम्परा बहुत चर्चित है और इसको मान्यता भी दी जा रही है।

अनुदेशन के निर्माण का दूसरा सोपान अनुदेशात्मक उद्देश्यों का प्रतिपादन करके उनको फिर व्यावहारिक रूप में लिखना होता है। उद्देश्यों को निर्धारित करने हेतु 'ब्लूम ने शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण' (Bloom's Taxonomy of Educational objectives) की सहायता से ली जाती है। अभिक्रमित अनुदेशन से ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों की आसानी से प्राप्ति की जा सकती है। इसके लिये ब्लूम का ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण का अनुसरण बहुत सहायक है। ज्ञानात्मक शिक्षण के उद्देश्यों को ब्लूम ने ज्ञान, बोध प्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन की दृष्टि से विभाजित किया है। इन अनेशनात्मक उद्देश्यों को इन्हीं वर्गों के आधार पर निर्धारित किया जाता है। बाद में फिर इन उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखा जाता है।

उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में प्रभावशाली ढंग से लिखने के लिए राबर्ट मेगर ने एक सशक्त अर्थपूर्ण नियोजित विधि का प्रतिपादन किया है जो अनुदेशन के उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए अधिक कारगर मानी जाती है, क्योंकि अभिक्रमित अनुदेशन प्रत्यय (concept) और मेगर विधि व्यावहारवादी मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है। राबर्ट मेगर विधि की शुरुआत (1962) में हुई और (1963) से अभिक्रमित अनुदेशन के प्रत्यय में व्यावहारिक उद्देश्यों को पर्याप्त महत्त्व दिया गया। उद्देश्यों के सन्दर्भ में मेगर का कथन है :

"अनुदेशन-उद्देश्य के कथन होते हैं जिनमें उन शब्दों या संकेतों को सम्मिलित किया जाता है, जिनसे शैक्षिक लक्ष्यों का बोध होता है" ("A statement of instructional objectives is a collection of words or symbols describing one or more educational intents."- **Robert Mager**)

अन्तिम व्यवहारों को स्पष्टता से वर्णन करने के लिए तथा छात्रों की क्रियाओं का उल्लेख करने हेतु कथन तैयार किये जाते हैं। इसके लिये तीन निम्नलिखित कार्यों का होना आवश्यक है :

(क) व्यावहारिक कार्य की पहचान करना।

(ख) व्यवहार में होने वाली परिस्थितियों की परिभाषा करना।

(ग) अपेक्षित निष्पति के लिये मानदण्डों को परिभाषित करना।

मेगर ने उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिये कार्य सूचक क्रियाओं (Action verbs) को विशेष महत्त्व दिया है। इन्होंने प्रत्येक वर्ग के लिये क्रियाओं की सूची तैयार की है जिनका उल्लेख "शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण" (Taxonomy of Educational objectives) में किया गया है। उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिये तीन तत्त्वों की सहायता ली गई है। ये तत्त्व निम्न हैं :

(1) पाठ्य-सामग्री के तत्त्व (Elements of Content or Topic)

(2) टैक्सोनामी के वर्ग के रूप में उद्देश्य (Objectives in terms or Taxonomy Category)

(3) समुचित कार्य सूचक क्रिया (Appropriate Action verbs)

इन तत्त्वों की सहायता से उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखा जाता है।

इस विधि का दोष यह है कि इसके मानव-अधिगम में भी मानसिक क्रियाओं को महत्त्व नहीं दिया जाता। इसलिये अब क्षेत्रीय महाविद्यालय मेगर विधि को अपनाया जाने लगा है, क्योंकि इसमें मानसिक क्रियाओं को विशेष महत्त्व दिया जाता है।

अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण एवं चयन हेतु व्यावहारिक उद्देश्यों का प्रतिपादन किया जाता है :

(क) पूर्व व्यवहार (Entering Behaviour)

(ख) अन्तिम व्यवहार (Terminal Behaviour)

**( क ) पूर्व व्यवहार** (Entering Behaviour) : पूर्व व्यवहार में छात्र-छात्राओं के उन गुणों को सम्मिलित किया जाता है। जिनकी अभिक्रमित-अनुदेशन के लिये पूर्व आवश्यकता (Pre-requisities) होती है। इन गुणों में छात्र-छात्राओं की निम्नलिखित विशेषताओं को सम्मिलित किया जाता है :

(1) शिक्षण के प्रारम्भ करने के लिये जिस ज्ञान तथा कौशल की आवश्यकता होती है, उस ज्ञान और कौशल का स्पष्ट रूप से उल्लेख होना चाहिए।

(2) अनुदेशन (शिक्षण) के लिये प्रवीणता व गुणात्मक स्तर की व्याख्या भी स्पष्ट रूप से होनी चाहिए। प्रवीणता स्तर की व्याख्या प्रामाणिक प्रवीणता परीक्षण के रूप में करनी चाहिए।



(3) पूर्व आवश्यक योग्यताओं को परीक्षण के रूप में स्पष्ट करना चाहिए।

(4) पूर्व व्यवहारों के लिए छात्र-छात्राओं के प्रेरणा स्तर को भी महत्त्व देना चाहिए कि छात्र-छात्राओं को किस प्रकार की प्रेरणा की आवश्यकता है जिससे छात्र-छात्राएं शिक्षण की अध्ययन प्रक्रिया में रुचि ले सकें।

(5) छात्र-छात्राओं के सम्बन्ध में पूर्व सूचनायें जैसे-उनकी आयु, मानसिक स्तर, भाषा की जानकारी का स्तर आदि को एकत्रित कर लेना चाहिए।

(6) पूर्व व्यवहारों को लिखने हेतु उस जनसंख्या की परिभाषा करनी चाहिए जिसके लिए अनुदेशन का निर्माण किया जाएगा।

पूर्व-व्यवहारों को जानने हेतु पूर्व परीक्षण का निर्माण किया जाता है। इसके अतिरिक्त छात्र-छात्राओं को निदानात्मक परीक्षा संचयी आलेख, व्यक्तिगत अनुभव आदि पूर्व-व्यवहार के स्रोत माने जाते हैं।

**( ख ) अन्तिम व्यवहार** (Terminal Behaviour) : अन्तिम व्यवहार के अन्तर्गत छात्र-छात्राओं की उन सभी क्रियाओं एवं गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है जो उद्देश्य प्राप्ति हेतु सहायक होती है। अन्तिम व्यवहार के लिये ज्ञानात्मक उद्देश्य को ही महत्त्व दिया जाता है। इन्हें अनुदेशन का प्रदा (output) माना जाता है। पूर्व व्यवहार की क्रियाओं के लिये अदा (input) शब्द का प्रयोग किया जाता है। अन्तिम व्यवहारों को उद्देश्यों, पाठ्य वस्तु तथा कार्य सूचक क्रियाओं की सहायता से लिखा जाता है। इनके मूल्यांकन के लिये अन्तिम परीक्षा या मानदण्ड परीक्षा को निर्मित किया जाता है।

### अनुदेशनात्मक ( व्यवहारपरक ) उद्देश्यों की विशेषताएं

### [Characteristics of Instructional (behavioural) Objectives]

सामान्य उद्देश्यों और व्यवहारपरक उद्देश्यों में भिन्नता है। व्यवहारपरक उद्देश्य में अधिगम (सीखने) के व्यवहार से सम्बन्धित क्रियाओं की व्याख्या होती है। अनुदेशनात्मक उद्देश्यों (व्यवहारपरक उद्देश्यों) की मुख्य-मुख्य विशेषताएं निम्न हैं :

1. अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को ऐसे कथन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिसमें प्रत्यात्मक (धारणा) की दृष्टि से पूर्ण स्पष्टता हो।

2. इन उद्देश्यों द्वारा संदर्भित व्यवहार का स्वरूप अवलोकनीय (observable) और मापनीय होता है। इसीलिये इन्हें क्रियात्मक उद्देश्यों की संज्ञा भी दी जाती है।

3. इन उद्देश्यों के द्वारा छात्र-छात्राएं, शिक्षक और परीक्षक-तीनों को लाभ होता है। छात्र-छात्राओं को व्यवहार की परिधि, शिक्षक का पैरामीटर और परीक्षक को सीमाओं और उसके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जाता है।

4. अधिगम (सीखना) की परिस्थितियों को अपने ठोस रूप में गठित करने की दृष्टि से व्यवहारपरक उद्देश्य बहुत लाभदायक हैं। इनके द्वारा अधिगम अनुक्रम (learning sequence) उत्पन्न (जनित) करना सहज और सुगम हो जाता है।

5. अभिक्रम (प्रोग्राम) के आधार पर जनित (उत्पन्न) व्यवहार के मूल्यांकन के लिये अपेक्षित निकष परख (Critesion Test) बनाने में भी व्यवहारपरक उद्देश्यों से पर्याप्त सहायता मिल जाती है। इसीलिये अभिक्रम (प्रोग्राम) एवं उसके लिये उचित निकष परख का निर्माण से पूर्व व्यवहारपरक उद्देश्य का स्पष्ट विवरण (ब्यौरा) देना आवश्यक होता है।

6. इन उद्देश्यों के माध्यम से शिक्षण एवं परीक्षण सम्बन्धी प्रभावी रचना कौशलों (Strategies) का निर्धारण करना सहज और सरल हो जाता है। इसके साथ ही साथ शिक्षण, अधिगम तथा परीक्षण की परिस्थितियों में अपेक्षित तालमेल एवं सामंजस्य बनाए रखना सम्भव हो जाता है।

**स्केफील्ड** के अनुसार अनुदेशनात्मक (व्यावहारिक) उद्देश्यों की विशेषताएं निम्न हैं :

(1) इन उद्देश्यों से स्वरूप का विशिष्टीकरण हो जाता है।

(2) परीक्षण के प्रश्नों को बनाने में पर्याप्त रूप से सहायता मिलती है।

(3) शिक्षण और परीक्षण में समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप मे लिखने के निम्न लाभ हैं :

(1) इन उद्देश्यों से शिक्षण व व सीखने (Teaching learning) की क्रियाएं सीमित तथा सुनिश्चित हो जाती हैं।

(2) इससे समुचित शिक्षण युक्तियों का चयन करके अपेक्षित सीखने से सम्बन्धित परिस्थितियों को उत्पन्न किया जा सकता है।

(3) इससे उद्देश्य केन्द्रित मानदण्ड परीक्षा का निर्माण किया जा सकता है।

(4) इससे परीक्षण को शिक्षण पर आधारित किया जा सकता है और उद्देश्यों की परिमाण में गणना की जा सकती है।

## अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना
## (Writing Instructional Objectives in Behavioural Terms)

ब्लूम द्वारा प्रस्तुत उद्देश्यों के वर्गीकरण में शिक्षण क्रियाओं को विशिष्ट रूप में लिखने का संकेत नहीं है। शिक्षण या अनुदेशनात्मक उद्देश्यों से एक ही स्तर का बोध होता है। उद्देश्यों में कहीं भी यह स्पष्टता नहीं है कि अनुदेशन के पश्चात् छात्र किस प्रकार का कार्य करने में सक्षम हो जाएगा अर्थात् योग्यता प्राप्त कर लेगा। दूसरे अर्थों में छात्र-छात्राओं के अन्तिम व्यवहार (Terminal Behaviour) के बारे में कोई स्पष्टता नहीं है। इसलिये अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना आवश्यक है ताकि उद्देश्यों की विशिष्टता शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक सशक्त एवं सार्थक और उद्देश्यपूर्ण बना सके।

अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :

1. अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन (Expected Behaviour Modification)



2. व्यवहार में परिवर्तन लाने वाली पाठ्य सामग्री (Content by which the behaviour is to be modified)

अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप शब्दावली में लिखने के लिये मुख्य रूप से निम्न मूलभूत आधार हैं :

(1) अनुदेशात्मक उद्देश्य की प्रकृति जिसके अन्तर्गत ज्ञान बोध आदि की चर्चा।

(2) सीखने वाले (अधिगम कर्त्ता) के व्यवहार का पक्ष जिसके अन्तर्गत ज्ञानात्मक, क्रियात्मक और मनोपेशीय क्षेत्रों की चर्चा।

(3) विषय-वस्तु (पाठ्य-वस्तु) के विशिष्ट प्रकरण की चर्चा।

अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की व्यावहारिक रूप से चर्चा और व्यावहारिक रूप में लिखने हेतु कई विधियों को अपनाया जा सकता है परन्तु इनमें से निम्न प्रमुख हैं :

(क) राबर्ट मेगर विधि (Robert Mager's Method or Approach)

(ख) मिलर विधि (Miller Approach)

(ग) आर.सी.ई.एम. विधि (R.C.E.M. Approach)

### (क) राबर्ट मेगर विधि या उपागम
### (Robert Mager's Method or Approach)

राबर्ट मेगर ने उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए ब्लूम के उद्देश्य वर्गीकरण को ही आधार माना है। प्रत्येक उद्देश्य को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए कार्य सूचक (Action Verbs) क्रिया की सहायता ली गई है। प्रत्येक उद्देश्य के लिए 'कार्य सूचक क्रियाओं की सूची' तैयार की गई है जिसकी सहायता से अध्यापक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिख सकता है। इन उद्देश्यों को लिखने के लिए राबर्ट मेगर के तीन पदों का सुझाव दिया है :

1. सर्वप्रथम अन्तिम या अन्त्य व्यवहार (Terminal Behaviour), इनको पैदा करना शिक्षण का लक्ष्य है। इसका तात्पर्य यह है कि उद्देश्य से यह स्पष्ट होना चाहिए कि सफल अनुदेशन के पश्चात् अधिगमकर्त्ता में क्या करने की योग्यता होगी।

2. उन महत्त्वपूर्ण परिस्थितियों का निर्णय या वर्णन करना जिनके अन्तर्गत व्यवहार परिवर्तन की जा रही है।

3. उस मापदण्ड या स्तर का वर्णन न निर्धारण जहां तक अधिगमकर्त्ता की सफलता आशातित है।

मेगर ने केवल ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्ष के वर्गों के लिए ही विभिन्न कार्य सूचकों का वर्णन किया है तथा प्रत्येक उद्देश्य में अनेक क्रियाएं दी हैं जिनका पूर्ण विवरण नीचे दिया जा रहा है :

**ज्ञानात्मक पक्ष से सम्बन्धित कार्यसूचक क्रियाएं**

**( Action verbs for Cognitive Domain )**

| उद्देश्य ( Objectives ) | कार्य-सूचक क्रियाएं ( Action Verbs ) |
|---|---|
| 1. ज्ञान (Knowledge) | सूची देना (List), परिभाषा देना (Define), कथन देना (State), चयन करना (Select), पहचानना (Recognise), मापन करना (Measure), लिखना (Write), प्रत्यास्मरण करना (Recall), रेखांकित करना (Underline) आदि। |
| 2. बोध (Comprehension) | व्याख्या करना (Explain), उदाहरण देना (Illustrate), संकेत करना (Indicate), प्रस्तुत करना (Present), प्रतिपादन करना (Formulate), वर्गीकरण करना (Classify), अनुवाद करना (Translate)। |
| 3. प्रयोग (Application) | पूर्व कथन (Predict), जांच करना (Assess), पाना (Find), प्रयोग करना (Use), बनाना (Construct), प्रदर्शन करना (Demonstrate), उल्लेख करना (Explain)। |
| 4. विश्लेषण (Analysis) | विश्लेषण करना (Analysis), निष्कर्ष निकालना (Conclude), पुष्टि करना (Justify), तुलना करना (Compare), भेद करना (Distinguish), आलोचना करना (Criticize), अलग करना (Separate)। |
| 5. संश्लेषण (Synthesis) | तर्क करना (Argue), व्यवस्थित करना (Organize), सामान्यीकरण करना (Generalize), निष्कर्ष देना (Conclude), पुन: कथन करना (Predict), संक्षिप्त करना (Summarise)। |
| 6. मूल्यांकन (Evaluation) | निर्णय लेना (Judge), मूल्यांकन करना (Evaluate), पहचानना (Identify), दूर करना (Avoid), बचाव करना (Defind), आलोचना करना (Criticize)। |



राबर्ट मेगर ने भावात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए विभिन्न उद्देश्यों के व्यावहारिक रूप के लिये कार्य-सूचक क्रियाओं (Action Verbs) की सूची प्रस्तुत की है, जो निम्नलिखित है :

**भावात्मक उद्देश्यों के लिये कार्य सूचक क्रियाओं की सूची**

**( A list of Action Verbs of Affective Objectives )**

| उद्देश्य ( Objectives ) | कार्य-सूचक क्रियाएं ( Action Verbs ) |
|---|---|
| 1. आग्रहण या ध्यान आकर्षण (Responding) | सुनना (Listen), पसन्द करना (Prefer), आग्रहण (Receive), स्वीकार करना (Accept), चयन करना (Select), प्रत्यक्षीकरण करना (Perceive)। |
| 2. अनुक्रिया (Reacting) | उत्तर देना (Answer), कथन करना (State), सूची बनाना (List), विकास करना (Develolp), चयन करना (Select), लिखना (Write), आलेखन बनाना (Receive)। |
| 3. आंकलन (Valuing) | चुनना (Choose), पूरा करना (Complete), भाग लेना (Participate), पहचानना (Recognise), संकेत करना (Point), विभेद करना (Distinguish), वृद्धि करना (Increase), निश्चय करना (Decide)। |
| 4. संगठन (Organization) | पाना (Find), बनाना (Form), चयन करना (Select), व्यवस्थित करना (Organise), संश्लेषित करना (Synthesize), जोड़ना (Add), समन्वय करना (Co-ordinate), निश्चित करना (Develop)। |
| 5. मूल्य-विशिष्टीकरण या मूल्य चरित्रीकरण (Value specification or value characterization) | स्वीकार करना (Accept), बदलना (Change), चरित्रीकरण (Characterization), सामना करना (Face), सिद्ध करना (Prove), पुष्टि करना (Judge), जांच करना (Verify), हल करना (Solve) आदि। |

**राबर्ट मेगर विधि की सीमाएं**

**(Limitations of Robert Mager Method)**

मेगर अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दावली में लिखने की मेगर विधि की कुछ सीमाएं निम्नलिखित हैं :

(1) इस विधि में उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए मानसिक प्रक्रियाओं पर विचार करने के स्थान पर केवल कार्य-सूचक क्रियाओं को ही अधिक महत्त्व दिया गया है।

(2) मेगर ने उद्दीपन तथा अनुक्रिया से ही अधिगम को व्यक्त किया है। परन्तु समस्त मानवी-अधिगम की उद्दीपन तथा अनुक्रिया से व्यक्त नहीं किया जा सकता है।

(3) मेगर-विधि का प्रयोग क्रियात्मक-पक्ष के उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए नहीं किया जा सकता है।

(4) जैसा कि पूर्व वर्णित तालिका से स्पष्ट है, मेगर ने ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों के लिए जिन क्रियाओं का वर्गीकरण तथा निर्धारण किया है, उसमें कई क्रियाओं को कई उद्देश्य में सम्मिलित किया गया है। अत: एक-एक क्रिया को कई उद्देश्यों में प्रयोग करना उचित प्रतीत नहीं होता है। इतना ही नहीं क्रियाओं का प्रयोग ज्ञानात्मक तथा भावात्मक दोनों पक्षों के विभिन्न उद्देश्यों में किया गया है। इस प्रकार ज्ञानात्मक तथा भावात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए अन्तर स्पष्ट नहीं किया जा सकता है जबकि उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप अधिक विशिष्ट तथा सुनिश्चित माना जाता है।

**( ख ) मिलर विधि**

**(Miller Approach)**

**राबर्ट बी. मिलर** ने भी 1962 में इस विधि का विकास किया। मिलर ने क्रियात्मक पक्ष पर विशेष बल दिया है। मिलर के अनुसार एक स्पष्ट उद्देश्य निम्नलिखित रूप में लिखा जाना चाहिए।

(1) अध्यापक को सर्वप्रथम संकेतक (Indicator) का वर्णन करना चाहिए जिससे क्रिया का संकेत मिले।

(2) दूसरे संकेतक अथवा उद्दीपक का विशेष वर्णन करना चाहिये जिससे अनुक्रिया हो सके।

(3) इसके पश्चात् उस नियन्त्रण का वर्णन किया जाना चाहिए जिसको सक्रिय बनाना है।

(4) सम्पन्न करने वाली क्रिया को लिखना अथवा वर्णन करना होता है।

(5) अन्त में अध्यापक को चाहिए कि वह अनुक्रिया के संकेत की पर्याप्तता अथवा पृष्ठपोषण (Feed-back) को स्थान देना।

निम्नलिखित तालिका में क्रियात्मक उद्देश्यों से सम्बन्धित कार्य-सूचक क्रियाओं का वर्णन किया जा रहा है :



**मनोपेशीय या क्रियात्मक पक्ष**

**( Psychomotor Domain )**

| उद्देश्य ( Objectives ) | कार्य-सूचक क्रियाएं ( Action Verbs ) |
|---|---|
| 1. प्रत्यक्षीकरण (Perception) | चित्र बनाना (Sketch), निर्माण करना (Construct)। |
| 2. व्यवस्था (Set) | बनना (Make), प्रारूप तैयार करना (Design)। |
| 3. निर्देशात्य अनुक्रिया (Guided Response) | पहचानना (Recognize), व्यवस्थित करना (Fix)। |
| 4. कार्य-प्रणाली (Mechanism) | सुधार करना (Mend), अभ्यास (Drill)। |
| 5. जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया (Complex Overt Response) | मिलाना (Connect), सृजन करना (Create), लगाना (Locate)। |

| मनोपेशीय पक्ष के उद्देश्य ( Objectives of Psychomotor Domain ) | उद्देश्यों को व्याहारिक रूप में लिखना (Writing objectives in behavioural aspect) |
|---|---|
| 1. प्रत्यक्षीकरण | छात्र ए०टी०एम० (A.T.M.) 'मॉडल' का निर्माण कर सकते हैं। |
| 2. व्यवस्था | छात्र ए०टी०एम० (A.T.M.) 'मॉडल' का प्रारूप तैयार कर सकते हैं। |
| 3. निर्देशात्मक अनुक्रिया | छात्र ए०टी०एम० (A.T.M.) 'मॉडल' के विभिन्न अवयवों को व्यवस्थित कर सकते हैं। |
| 4. कार्य-प्रणाली | छात्र ए०टी०एम० (A.T.M.) 'मॉडल' में सुधार कर सकते हैं। |
| 5. जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया | छात्र ए०टी०एम० (A.T.M.) 'मॉडल' के सम्बन्धित अवयवों का पता लगाकर इनका सृजन कर सकते हैं। |

यहां 'मॉडल' का तात्पर्य किसी वस्तुगत प्रतिमान से है।

**( ग ) आर०सी०ई०एम० विधि**

**(R.C.E.M. Method)**

इस विधि का विकास क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, मैसूर (Regional College of Education, Mysore) द्वारा किया गया है और इसीलिए इसका यह नामकरण हुआ है।

इस विधि में मेगर विधि की कमियों को दूर करने का प्रयास किया गया है। इस विधि में ब्लूम की टैक्सॉनोमी को ही आधार माना है।

मेगर की विधि में प्रक्रिया (Process) के स्थान पर उत्पादन (Product) को अधिक महत्त्व दिया जाता है तथा सीखने की उपलब्धियों की अधिक चर्चा की जाती है, जबकि आर०सी०ई०एम० विधि में उत्पादन (Product) के स्थान पर प्रक्रिया (Process) को अधिक महत्त्व दिया जाता है। मेगर (Mager) ने अधिगम को उद्दीपन तथा अनुक्रिया से व्यक्त किया है जबकि मानव-अधिगम में मानव-प्रक्रिया महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। उद्दीपन तथा अनुक्रिया से समस्त मानव-अधिगम को व्यक्त नहीं किया जा सकता है। इस विधि में मानसिक क्रियाओं को भी महत्त्व दिया गया है तथा इनका प्रयोग उद्देश्यों को लिखने में भी किया गया है।

ब्लूम ने ज्ञानात्मक पक्ष के शैक्षिक उद्देश्यों को छः वर्गों में विभाजित किया है, लेकिन इस विधि में इन छः उद्देश्यों में से अन्तिम तीन उद्देश्यों-विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन को मिलाकर एक नाम दिया गया है-सृजनात्मकता। इस प्रकार ज्ञानात्मक पक्ष को छः वर्गों के स्थान पर चार वर्गों में विभाजित कर दिया गया है। इन चारों उद्देश्यों का मानसिक क्रियाओं के रूप में 17 भागों में वर्गीकरण किया गया है। इन्हीं मानसिक क्रियाओं को ज्ञानात्मक भावनात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने में प्रयुक्त किया जाता है। इसमें ज्ञान उद्देश्य में दो, बोध उद्देश्य में सात, प्रयोग उद्देश्य में पांच तथा सृजनात्मक उद्देश्य में तीन मानसिक क्रियाओं का वर्णन किया है जिसका विस्तृत विवरण नीचे दी गई तालिका में दिया गया है :

| उद्देश्य ( Objectives ) | मानसिक योग्यताएं ( Mental Abilities ) |
|---|---|
| 1. ज्ञान (Knowledge) | (i) प्रत्यास्मरण करना (Recall)<br>(ii) अभिज्ञान करना (Recognition) |
| 2. बोध (Comprehension) | (i) सम्बन्ध देखना (See Relationship)<br>(ii) उदाहरण देना (Cite Example)<br>(iii) भेद करना (Discriminate)<br>(iv) वर्गीकरण करना (Classify)<br>(v) व्याख्या करना (Interpret)<br>(vi) पुष्टि करना (Verify)<br>(vii) सामान्यीकरण (Generalize) |
| 3. प्रयोग (Application) | (i) तर्क करना (Reason)<br>(ii) परिकल्पना का प्रतिपादन करना (Formulate Hypotyhesis)<br>(iii) निष्कर्ष करना (Infer)<br>(iv) पूर्व कथन करना (Predict) |



| | |
|---|---|
| 4. सृजनात्मकता (Creativity) | (i) विश्लेषण करना (Analysis)<br>(ii) संश्लेषण करना (Synthesize)<br>(iii) मूल्यांकन करना (Evaluation) |

इस विधि में उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए पहले उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। तत्पश्चात् मानसिक क्रियाओं को पाठ्य-वस्तु के तत्त्वों के साथ प्रयुक्त करके व्यावहारिक रूप में लिखा जाता है।

आर०सी०ई०एम० विधि के अनुसार उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने की रूप-रेखा (An Outline for writing objectives according to R.C.E.M. Approach)

1. ज्ञान उद्देश्य-
   (i) छात्र में शब्द, प्रक्रिया, नियम, सिद्धान्त, परिभाषा को अभिज्ञान करने की क्षमता है।
   (ii) छात्र में शब्द प्रक्रिया, नियम सिद्धान्त परिभाषा आदि की प्रत्यास्मरण करने की क्षमता है।

उदाहरण रूप में अर्थशास्त्र विषय के अन्तर्गत श्रम विभाजन शीर्षक के लिये-

(1) छात्र-छात्राओं में श्रम विभाजन की परिभाषा के प्रत्य स्मरण करने की योग्यता है। -ज्ञान उद्देश्य

(2) छात्र-छात्राओं में उत्पाद आधारित श्रम-विभाजन और प्रक्रिया-आधारित श्रम विभाजन में अन्तर करने की क्षमता है। -बोध उद्देश्य

(3) छात्र-छात्राओं में श्रम विभाजन से सम्बन्धित निष्कर्ष निकालने की क्षमता है। -प्रयोग उद्देश्य

(4) छात्र-छात्राओं में श्रम विभाजन की प्रक्रिया के विश्लेषण करने की योग्यता है। -सृजनात्मक उद्देश्य

एक और उदाहरण अर्थशास्त्र में भौतिक संसाधनों के शिक्षण के लिये ज्ञान और बोध उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में निम्न ढंग से लिख सकते हैं :

**ज्ञान उद्देश्यों के लिए :**

- छात्र भौतिक संसाधन शब्दों की परिभाषा दे सकते हैं।

**बोध उद्देश्य के लिये :**

- छात्र संसाधन शब्द का उल्लेख कर सकते हैं।
- छात्र संसाधन का उदाहरण दे सकते हैं।
- भौतिक संसाधन और मानव संसाधन का अन्तर बता सकते हैं।

अर्थशास्त्र के जनसंख्या वृद्धि के शिक्षण के ज्ञानात्मक और भावात्मक उद्देश्य होते हैं-भावात्मक उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप इस प्रकार है :

**आग्रहण उद्देश्य के लिए :**

- छात्र-छात्राएं जनसंख्या वृद्धि को स्वीकारते हैं।

**प्रतिक्रिया उद्देश्यों के लिए :**

- छात्र-छात्राएं जनसंख्या वृद्धि के सम्बन्ध में लिख सकते हैं।

**व्यवस्थापन उद्देश्य के लिए :**

- छात्र-छात्राएं जनसंख्या वृद्धि और संसाधनों में सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।

इस प्रकार अर्थशास्त्र के अन्य शीर्षकों का शिक्षण-उद्देश्यों का निर्धारण करके और समुचित क्रियाओं का चयन करके व्यावहारिक रूप में लिख सकते हैं। जैसे कि अर्थशास्त्र विषय में 'मानवीय आवश्यकताएं' (Human Wants) विषय के लिए-

- छात्र-छात्राओं में मानवीय आवश्यकताओं को परिभाषित करने की क्षमता है।

**-ज्ञान उद्देश्य**

- छात्र-छात्राओं में इच्छा और आवश्यकता में अन्तर बताने की क्षमता है।

**-बोध प्रश्न**

- छात्र-छात्राओं में आवश्यकताओं में सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता है।

**-प्रयोग उद्देश्य**

- छात्र-छात्राओं में आवश्यकताओं के विश्लेषण करने की क्षमता है।

**-सृजनात्मक उद्देश्य**

### उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने की उपयोगिता
### (Utility of Writing Objectives in Behavioural Terms)

उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने की उपयोगिताएं निम्न हैं :

1. उद्देश्यों को उदारता (विस्तृत) रूप मिलता है।
2. शिक्षण और अधिगम में सन्तुलन बनाए रखना सहज हो जाता है।
3. शिक्षण क्रियाओं को सीमित और सुनिश्चित किया जा सकता है।
4. शिक्षण के अनुभवों की विशेषताओं को निर्धारित किया जा सकता है और उनका मापन सम्भव होता है।
5. अनुदेशनात्मक सामग्री का उपयुक्त ढंग से चयन और प्रयोग किया जा सकता है।
6. विद्यार्थी और शिक्षक दोनों ही विभिन्न प्रकार के व्यवहारों में अन्तर स्थापित कर सकते हैं। ऐसा होने से वे शिक्षण व्यूह-रचना एवं शिक्षण-युक्तियों का चयन सही ढंग से कर लेते हैं।
7. परीक्षण प्रश्नों का चयन भी सुगमता से किया जा सकता है।



### अभ्यास के प्रश्न
### (Study Questions)

1. 'व्यवहारपरक उद्देश्य' से क्या तात्पर्य है? इस प्रकार के उद्देश्यों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए मुख्य पक्षों की व्याख्या कीजिए।
   (What is meant by 'Instructional objectives'? Give an example of such objectives. Explain its main aspects.)
2. ब्लूम की 'वर्गकीय कोटियों' का विवरण दीजिए। इनकी उपयोगिता समझाइए।
   (Describe the taxonomic categories of Bloom. Explain their utility.)
3. ब्लूम और उसके सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत ज्ञानात्मक और भावात्मक पक्ष के उद्देश्यों के वर्गीकरण का वर्णन कीजिए।
   (Describe the taxonomies of educational objectives in Cognitive and affective domains as given by Bloom and his associates.)
4. उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप से लिखने से क्या तात्पर्य है? इसकी क्या आवश्यकता है? उद्देश्यों को इस प्रकार लिखने के कौन-कौन से मुख्य उपागम हैं?
   (What is meant by writing objectives in behavioural terms? What is its need? What are important approaches of writing objectives in such way?)
5. ब्लूम द्वारा निर्धारित अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
   (Explain the instructional objectives determined by Bloom.)
6. शैक्षिक उद्देश्यों और शिक्षण उद्देश्यों में क्या अन्तर है? ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण की व्याख्या कीजिए।
   (What is the difference between Educational objectives and Teaching objectives? Explain the taxonomy of Cognitive Educational objectives?)

* * *

# 5
## CHAPTER

# सार्वजनिक वित्त, वाणिज्य, कानून, भूगोल, गणित, प्राकृतिक विज्ञान और समाजशास्त्र के साथ अर्थशास्त्र का सहसंबंध

## (Correlation of Economics with Public Finance, Commerce, Law, Geography, Mathematics, Natural Science and Sociology)

### भूमिका
### (Introduction)

प्राचीन शिक्षा प्रणाली और वर्तमान शिक्षा प्रणाली में काफी सीमा तक अन्तर पाया जाता है। प्राचीनकाल में शिक्षा का उद्देश्य केवल तथ्यों को याद रखना होता था परन्तु आजकल शिक्षा का उद्देश्य और लक्ष्य समय की मांग अनुसार काफी व्यापक हो गया है। केवल तथ्यों को याद करना ही काफी नहीं अपितु उन पर तर्कपूर्ण विचार करके जीवन में उन्हीं तथ्यों का उपयोग करना है। ज्ञान की एक इकाई है, जिसे बांटा नहीं जा सकता। विषय भी सामाजिक मनुष्य की तरह एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं। किसी भी घटना का प्रभाव मन पर तब तक स्थाई नहीं हो सकता जबं तक उस घटना को पहले घटित हुई घटना के साथ या भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं के साथ संबंधित नहीं किया जाए। गुआन (Guyan) के अनुसार, "घटनाओं और विचारों का मानवीय मन पर स्थाई और उपयोगी प्रभाव तब ही पड़ता है जब मन उन नई घटनाओं और विचारों के साथ क्रमबद्ध तालमेल बनाता है।" ("Facts and Ideas have a real and useful influence over the mind only when the mind systematicles and coordinates them with other facts and ideas as they are produced.") यह सह-सम्बन्ध का मूल सिद्धान्त है। इस तरह सह-संबंध एक तकनीक है। जो विषय सामग्री को स्पष्ट रूप से समझने के लिए भिन्न-भिन्न विषयों से संबंध स्थापित करती है। उदाहरण के लिए, यदि किसी भी काल की अर्थव्यवस्था की आर्थिक उन्नति के बारे में जानना हो तो उसके साथ-साथ उसकी काल की सामाजिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक उन्नति के बारे में पता चलता है। इस प्रकार सह-सम्बन्ध विषयों में पाई जाने वाली आपसी सांझ है। एच० सी० बरनार्ड (H.C. Bernard) के अनुसार, "सह-सम्बन्ध स्कूल के अलग-अलग विषयों में जहां तक हो सके एक दूसरे से सम्बन्धित करने





का प्रयत्न है।" (Correlation tries to make the various schools objects release to one another as far as possible)

बी० डमफिल (B. Dumwille) के अनुसार, "एक विषय को दूसरे विषय के अधीन करने से सिद्धान्त या साधारण सह-सम्बन्ध के नाम का वर्णन किया जाता है।" (The Principle of subordinating one subject to another is usually referred to under the name of correlation.)

सह-सम्बन्ध शब्द का हबर्ट (Herbart) ने प्रयोग किया था और उसके अनुसार विद्यार्थियों को पढ़ाए जाने वाले विषयों में सह-सम्बन्ध स्थापित करके उनको अधिक उपयोगी और प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इस प्रकार शिक्षण प्रक्रिया में अधिक से अधिक सह-सम्बन्ध की आवश्यकता है। टी० रेमोंट (To Raymont) के कथन अनुसार, "किसी भी विषय को अच्छी तरह समझा या कला को योग्यता का पूण व्यावहारिक रूप नहीं दिया जा सकता, यदि दूसरे विषयों से आने वाली रोशनी को जो वह उसको दे सकते हैं, जानबूझ के बंद कर दिया जाए।" (No subjects is ever with understood and no art is intelligently practised it the light which other studies are able to throw upon, it, is deliberetely shut out").

हरबर्ट (Herbert) के शिष्य (Ziller) ने एकाग्रता का सिद्धान्त (Principle of Centralisation) पेश किया। उसके अनुसार, "भिन्न-भिन्न उचित विषयों में केवल सह-सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है। अपितु कोई ऐसा विषय भी लिया जा सकता है, जो एक केन्द्रीय धुरा बन सकता है। जिसके आसपास सारे विषय घूम सकते हैं।" (Not only appropriate subject can be corelated but there is probably one subject which can from the core, round which can all the other subjects can be hinged).

(Ziller) के अनुसार इतिहास (History) एक ऐसा धुरा जिसके आस-पास बाकी सब विषय घूम सकते हैं। सी० पारकर (C. Parkar) ने प्राकृतिक विज्ञान (Natural Science) को केन्द्रीय धुरा माना है। जॉन डीवी (John Dewey) शिक्षा में मानवीय जीवन की क्रिया से जोड़कर देखता है और इसको, Princples of Integration कहा है। महात्मा गाँधी (Mahatma Gandhi) ने 'हस्तकला' को सह-सम्बन्ध का आधार माना है।

### सह-सम्बन्ध की आवश्यकता तथा महत्त्व
### (Need and Importance of Correlation)

मानव की सभी क्रियाएं सम्बन्धित हैं कोई भी क्रिया स्वयं में पूर्ण नहीं है। सहसम्बन्ध व्यापक तथा अवश्यम्भावी है। सह-सम्बन्ध की आवश्यकता तथा महत्व निम्नलिखित कारणों से है :

1. इसकी सहायता से विद्यार्थियों के लिए कम समय में ज्ञान प्राप्त करना संभव हो सकता है। उदाहरण के लिए जनसंख्या विस्फोट, ग्राम पंचायत, सामाजिक तथा आर्थिक संगठनों जैसे प्रकरणों को अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र विषयों में एकीकृत रूप से पढ़ाया जा सकता है।

2. माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों में विभिन्न वस्तुओं के बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त करने की उत्सुकता बनी रहती है। एकीकरण से प्रकरणों में विद्यार्थियों की रूचियों को विकसित किया जा सकता है।
3. पाठ्यक्रम के भार को कम किया जा सकता है।
4. यह अधिगम के नियमों पर आधारित ज्ञान हो सकता है और ज्ञान प्राप्त करना सहज बन जाता है।
5. इससे अधिगम विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित हो जाता है।
6. इससे सहनशीलता, सहयोग, भाईचारा विस्तृत विचारधारा आदि मानवीय तथा सामाजिक गुणों का विकास होता है।
7. विद्यार्थियों के लिए ज्ञान को प्रयोग करना आसान हो जाता है।
8. विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान स्थायी बन जाता है।
9. इससे अच्छी नागरिकता का विकास होता है जो एक प्रजातंत्र की आवश्यकता है।
10. यह विद्यार्थियों को व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करता है।
11. अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और शिक्षण के द्वारा मानव सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक है कि इसे अन्य विषयों के साथ सह-सम्बन्धित किया जाए।
12. यह विस्तृत आधार पाठ्यक्रम की धारणा का विकास करता है।

## सह-सम्बन्ध के प्रकार
## (Types of Correlation)

थट एवं गारबेरिच (Thut and Garberich) के अनुसार सह-सम्बन्ध के तीन प्रकार हैं :

(i) एक ही विषय में सह-सम्बन्ध (Correlation with in a subject)
(ii) विद्यालय व विद्यालय से बाहर के अनुभवों का सह-सम्बन्ध (Correlation between School and out of school experiences)
(iii) विभिन्न विषयों में सह-सम्बन्ध (Correlation between different subjects)

### (i) एक ही विषय में सह-सम्बन्ध

इसमें एक ही विषय के विभिन्न भागों या तथ्यों में सह-सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। उदाहरण के लिए अर्थशास्त्र के विभिन्न भागों जैसे व्यष्टिगत अर्थशास्त्र का समष्टि गत अर्थशास्त्र के साथ, उपभोग का उत्पादन, विनिमय तथा वितरण के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। इसमें एक कक्षा की विषय वस्तु का उससे अगली कक्षा की विषय वस्तु के साथ भी सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इसे संकेन्द्रित सह-सम्बन्ध (Concentic correlation) या शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध (Vertical Correlation) भी कहा जाता है।



### (ii) विद्यालय व विद्यालय से बाहर के अनुभवों का सह-सम्बन्ध

इसमें कक्षा में अध्ययन किए जाने वाले विषयों का दैनिक जीवन के अनुभवों से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इस सम्बन्ध के दो लाभ होते हैं : (1) विभिन्न विषयों को वास्तविक जीवन में सम्बन्धित करने से विद्यार्थी उन्हें आसानी से समझ जाता है, (2) विद्यार्थी के सैद्धांतिक ज्ञान का वास्तविक जीवन से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप वह अपने भावी जीवन की समस्याओं का समाधान करने में सफल होता है इसके लिए अध्यापक विभिन्न स्थानीय स्थानों उद्योगों, कृषि क्षेत्रों के भ्रमण का प्रबंध कर सकता है। बैंक के विभिन्न क्रियाओं का ज्ञान, किसी नजदीकी बैंक की प्रत्यक्ष कार्यप्रणाली को दिखाकर करवाया जा सकता है। इस प्रकार विद्यार्थी वास्तविक अधिगम अनुभव प्राप्त करते हैं, जो उनके वर्तमान समय तथा भविष्य के लिए भी उपयोगी होते हैं।

### (iii) विभिन्न विषयों में सह-सम्बन्ध

इसमें विभिन्न विषयों में आपसी सह-सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। उदाहरण के लिए अर्थशास्त्र का इतिहास, भूगोल, गणित, जीवविज्ञान, भौतिक विज्ञान से सह-सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। इस सम्बन्ध को अनुप्रस्थीय या क्षैतिज सह-सम्बन्ध (Horizontal Correlation) के नाम से पुकारा जाता है। इसको दो प्रकार से स्थापित किया जा सकता है :

(क) **आकस्मिक सह-सम्बन्ध** (Incidental Correlation) : इसके लिए अध्यापक कोई पूर्व योजना नहीं बनाता बल्कि विषय सामग्री पढ़ाते समय किसी बिन्दु को व्यापक दृष्टि से अधिक सरल बनाने के लिए दूसरे विषयों की विषय सामग्री का प्रयोग कर लेता है। यह प्राकृतिक है। उदाहरण के लिए किसी भी आर्थिक समस्या का अध्ययन करते समय वह इसके उद्गम की व्याख्या के लिए इतिहास की विषय सामग्री का प्रयोग कर सकता है। जब हम कृषि की उत्पादकता के बारे में बताते हैं तो उसकी भोगोलिक परिस्थितियों के लिए भूगोल की सहायता लेनी पड़ती है।

(ख) **पूर्व-नियोजित सह-सम्बन्ध** (Pre-planned Correlation) : इसमें अध्यापक पहले से ही योजना बना लेता है कि विषय सामग्री को पढ़ाते समय उसे किस विषय के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करना है। इसके लिए उसे कभी-कभी दूसरे अध्यापकों से भी परामर्श करना पड़ता है। उदाहरण के लिए मांग का नियम पढ़ाते समय वह इसे गणित से सह-सम्बन्धित करता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में इसका प्रयोग अधिक उपयोगी माना जाता है। इसे 'व्यवस्थित सहसम्बन्ध' (Systematic correlation) भी कहा जाता है।

## अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध
## (Correlation of Economics with other subjects)

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम का बाकी अन्य विषयों से काफी गहरा सम्बन्ध है। यह अनिवार्य है कि अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु को इस प्रकार संगठित किया जाए जिससे इसका

बाकी पाठ्यक्रम के अन्य विषयों से सहसम्बन्ध हो सके। इससे अर्थशास्त्र का अध्ययन आसान और रोचक बनाने में सहायक सिद्ध होगा। मानवीय क्रियाएं जैसे कि सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक आदि एक-दूसरे से सम्बन्धित है, इनका अलग-अलग नहीं किया जा सकता। मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं का प्रभाव उस की अन्य क्रियाओं पर भी पड़ता है। अर्थशास्त्र का बाकी अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध निम्नलिखित अनुसार स्थापित किया जा सकता है :

## अर्थशास्त्र और सार्वजनिक वित्त
## (Economics and Public Finance)

"जनता" शब्द का अर्थ "सामान्य लोगों" से होता है और "वित्त" शब्द का अर्थ संसाधनों से होता है। इसलिए "सार्वजनिक वित्त" का अर्थ है, जनता के संसाधन-उन्हें कैसे एकत्र किया जाता है और उनका व्यय कैसे किया जाता है। इस प्रकार, सार्वजनिक वित्त का विषय अर्थशास्त्र की एक शाखा है जो सरकार के द्वारा लगाए गए करों और खर्चों की गतिविधियों, सरकारी सेवाओं, सब्सिडी और कल्याणकारी भुगतानों का वर्णन और विश्लेषण करता है, और सरकार ने उन उद्देश्यों के लिए किए गए व्यय को कराधान, उधार, विदेशी सहायता इत्यादि के माध्यम से कैसे एकत्रित किया है, इसका अध्ययन करता है।

सार्वजनिक वित्त अर्थशास्त्र की एक शाखा है, जो अर्थशास्त्र के निम्न विषयों का गहराई से अध्ययन करती है :

**1. सार्वजनिक राजस्व :** सार्वजनिक वित्त उन सभी स्रोतों या विधियों से संबंधित है जिनके माध्यम से एक सरकार राजस्व अर्जित करती है। यह कराधान के सिद्धांत, राजस्व जुटाने के तरीके, राजस्व का वर्गीकरण, घाटा वित्तपोषण आदि का अध्ययन करता है।

**2. सरकारी व्यय :** सार्वजनिक व्यय अध्ययन करता है कि सरकार विभिन्न खर्चों की पूर्ति के लिए संसाधनों का वितरण कैसे करती हैं। यह सिद्धांतों का भी अध्ययन करता है कि विभिन्न क्षेत्रों में संसाधनों को आवंटित करते हुए और इस तरह के खर्चों के प्रभावों को देखते हुए सरकार को किन-किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

**3. सार्वजनिक ऋण :** यह आंतरिक और बाहरी स्रोतों से सरकार द्वारा उधार लेने के साथ है। किसी भी समय सरकार अपने राजस्व से अधिक व्यय कर सकती है। घाटे को पूरा करने के लिए, सरकार ऋण उठाती है, सार्वजनिक वित्त का अध्ययन ऋण लेने की समस्याओं और ऋण के वापिस भुगतान के तरीकों पर केंद्रित है।

**4. वित्तीय/वित्तीय प्रशासन :** वित्तीय प्रशासन का दायरा व्यापक है। इसमें सरकार के सभी वित्तीय कार्यों को शामिल किया गया है। इसमें बजट का मसौदा तैयार करना और स्वीकृति शामिल है, बजट का लेखा-परीक्षा आदि शामिल है। वित्तीय प्रशासन राज्य सरकार के विभिन्न वित्तीय कार्य को पूरा करने के लिए जिम्मेदार सरकारी तंत्र के संगठन और कामकाज से संबंधित है। बजट सरकार की मास्टर वित्तीय योजना है।

**5. आर्थिक स्थिरीकरण और विकास :** वर्तमान समय में, सार्वजनिक वित्त मुख्य रूप से एक देश की आर्थिक स्थिरता और अन्य संबंधित समस्याओं से संबंधित है। इन



उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए, सरकार ने अपनी राजकोषीय नीति तैयार की है जिसमें देश के आर्थिक स्थिरता की दिशा में निर्देशित विभिन्न राजकोषीय साधन शामिल हैं।

**6. संघीय वित्त :** सरकार के संघीय प्रणाली में केंद्रीय और राज्य सरकारों के बीच आय और व्यय के स्रोतों का वितरण भी सार्वजनिक वित्त के विषय के रूप में किया जाता है। सार्वजनिक वित्त की इस शाखा को लोकप्रिय रूप से फेडरल फाइनेंस (संघीय वित्त) के रूप में जाना जाता है।

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि अर्थशास्त्र का सार्वजनिक वित्त के विषय से न केवल सह-संबंध है, बल्कि यह पूर्ण रूप से अर्थशास्त्र की ही एक शाखा है।

## अर्थशास्त्र तथा वाणिज्य शास्त्र
## (Economic and Commerce)

वाणिज्य शास्त्र उद्योग, व्यापार तथा संगठन के अध्ययन से सम्बन्धित है। इसमें विद्यार्थी उत्पादन तथा वितरण से सम्बन्धित क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। व्यापार, बैंकिंग, आयात तथा निर्यात, लेखा कार्य आदि वाणिज्य शास्त्र की विषय सामग्री का निर्माण करते हैं। परन्तु वास्तविक वाणिज्य शिक्षा आर्थिक शिक्षा है-आर्थिक शिक्षा एकेडैमिक प्रकार की नहीं जो सिद्धांतों में लंबी तथा तथ्यों में छोटी हो, परन्तु ऐसी आर्थिक शिक्षा जो विद्यार्थियों को व्यापारिक जीवन तथा सम्बन्धों की आधारभूत वास्तविकताओं का ज्ञान प्रदान करेगी। व्यापार का आधारभूत विज्ञान आर्थिक है और आर्थिक समस्याओं की पूर्ण रूप से भूमिका के बिना, माध्यमिक स्कूलों में वाणिज्य शिक्षा में सम्मिलित विषय सामग्री केवल बनावटी ही बनकर रह जाएगी। हम तकनीक तथा सामाजिक-व्यापारिक विषय को द्विआधार प्रदान नहीं कर सकते कि एक आधार हो और दूसरा पूरक हो। अर्थशास्त्र तथा वाणिज्यशास्त्र का पृथक-पृथक अध्ययन नहीं किया जा सकता।

एक देश के आर्थिक विकास के लिए वाणिज्य शास्त्र का ज्ञान बहुत लाभकारी है। वाणिज्य शास्त्र के अन्तर्गत ऐसी विषय सामग्री का ज्ञान प्रदान किया जाता है जिससे विद्यार्थी अपने व्यावहारिक जीवन में सफलतापूर्वक अपने राष्ट्र की उन्नति में सहयोग दे सके, क्योंकि राष्ट्र की आर्थिक स्थिति पर ही उनकी उन्नति निर्भर करती है। अर्थशास्त्र में आर्थिक नियमों व सिद्धांतों का अध्ययन सैद्धांतिक रूप से किया जाता है, जबकि वाणिज्य शास्त्र के अंतर्गत विद्यार्थियों को इनका व्यावहारिक जीवन में प्रयोग सिखाया जाता है। अर्थशास्त्र का अध्ययन करना चाहिए, जिससे विद्यार्थी यह निर्णय करने के योग्य हो सके कि ऐसी आर्थिक परिस्थितियों में किस उद्योग या व्यापार का सफलतापूर्वक संचालन हो सकता है।

इस प्रकार इन सम्बन्धों की व्याख्या के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अर्थशास्त्र का क्षेत्र बहुत व्यापक है, जब यह ज्ञान की अन्य शाखाओं से सम्बन्धित होता है। यह अर्थव्यवस्था की प्रचलित मांग भी है। प्रत्येक देश का विकास उसकी आर्थिक व्यवस्था पर ही निर्भर करता है।

## अर्थशास्त्र और कानून
## (Economics and Law)

अर्थशास्त्र और कानून कई पहलुओं पर एक दूसरे से सम्बंधित हैं। निजी कानून उन व्यक्तियों और समूहों को सहायता करता है जो एक स्वतंत्र बाजार में व्यापार करने के लिए प्रवेश करने को तैयार हैं। सार्वजनिक कानून आर्थिक और सामाजिक नियमन के माध्यम से एक मुक्त बाजार प्रणाली के परिणामों को ठीक करने का प्रयास करता है। अर्थशास्त्रियों को उस कानूनी माहौल के बारे में जानकारी होनी चाहिए जिसमें आर्थिक गतिविधियों का संचालन किया जाता है, जबकि वकीलों को मौजूदा कानूनी नियमों के आर्थिक प्रभावों और एक अलग कानूनी अर्थव्यवस्था के तहत अपेक्षित परिणाम के बारे में पता होना चाहिए। कानून और अर्थशास्त्र एक ही समाज के दो बुनियादी आधार हैं जो मिलकर काम करते हैं।

कानून और अर्थशास्त्र या "कानून का आर्थिक विश्लेषण" बड़े पैमाने पर व्यक्ति और समाज पर विभिन्न कानूनों के प्रभावों का विश्लेषण करने के लिए आर्थिक सिद्धांतों का प्रयोग करता है। दूसरे शब्दों में, आर्थिक अवधारणाओं (जैसे संसाधनों की कमी, आपूर्ति, मांग, बाजार दक्षता और सौदेबाजी की शक्ति) का उपयोग विभिन्न कानूनों के उद्देश्य और प्रभावों को समझने के लिए किया जाता है, यह निर्धारित करने के लिए कि कौन से कानूनी नियम आर्थिक रूप से कुशल हैं।

18वीं शताब्दी की शुरुआत के रूप में, प्रसिद्ध अर्थशास्त्री एडम स्मिथ ('वेल्थ ऑफ नेशंस' के लेखक और प्रसिद्ध 'जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति' के वाक्यांश के लिए प्रसिद्ध) ने व्यापारिक कानूनों के आर्थिक प्रभावों पर चर्चा की। कई अन्य राजनीतिक दार्शनिकों ने भी अर्थशास्त्र और कानून के बीच एक परस्पर क्रिया को देखा और इसके बारे में विस्तृत रूप में लिखा, जिसमें कम्युनिज्म के जन्म दाता कार्ल मार्क्स भी शामिल थे। कानून का सकारात्मक विश्लेषण आर्थिक विश्लेषण का उपयोग करता है ताकि विभिन्न कानूनी नियमों के प्रभाव का अनुमान लगाया जा सके, जो कि अक्सर उनके आर्थिक दक्षता के मामले में कानूनों के विकास को समझाते हैं।

## अर्थशास्त्र तथा भूगोल
## (Economics and Geography)

अर्थशास्त्र तथा भूगोल के बीच सम्बन्ध शरीर तथा आत्मा के बीच सम्बन्ध की भांति है। भूगोल मनुष्यों तथा प्राकृतिक संसाधनों के बीच सम्बन्धों है और इस विषय को 'मानवीय भूगोल' के नाम से जाना जाता है। अर्थशास्त्र, एक शाखा के अन्तर्गत जिसे 'आर्थिक भूगोल' कहा जाता है, अर्थव्यवस्था पर प्राकृतिक संसाधनों के प्रभाव का अध्ययन करता है। दोनों का ध्येय मानव समाज की गति का स्पष्टीकरण करना है। मैकनी (Macnee) के शब्दों में, "भूगोल मानव के घर के रूप में पृथ्वी का अध्ययन है या अन्य शब्दों में भूगोल भौतिक, सामाजिक तथा विशेष रूप से मानवीय क्रियाओं के सम्बन्ध में मनुष्य का अध्ययन है।"

बी.डी. घाटे के विचारानुसार, "मानव को अपनी भूमिका का निर्वाह करने के लिए भूगोल रंगमंच प्रस्तुत करता है।" प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था उसकी भौगोलिक परिस्थितियों



से प्रभावित होती है। विभिन्न देशों में मनुष्य जो भी क्रियाएं करता है वह उसके भौतिक तथा प्राकृतिक वातावरण पर निर्भर करती है। मानव पर उसकी बाह्य परिस्थितियों तथा वातावरण का प्रभाव पड़ता है। मानव ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा जीवन की पूर्णता प्रदान करने के लिए इस पृथ्वी पर उपयोग किया है तथा उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया है। अच्छी जलवायु, उपजाऊ भूमि, पर्वत, जंगल तथा खनिज पदार्थ होने के कारण भारत एक समृद्ध देश है, परन्तु इन प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग उचित ढंग से नहीं किया जाता है इसलिए यहां पर रहने वाले लोग निर्धन हैं।

भूगोल एक विज्ञान है जिसके अन्तर्गत भूमि, जलवायु, खनिज पदार्थ, उत्पादन, लोग, पशु तथा नदियों आदि का अध्ययन किया जाता है। ये सभी कारक मनुष्य के आर्थिक जीवन को प्रभावित करते हैं। आर्थिक प्रगति प्राकृतिक संसाधनों की समृद्धता पर निर्भर करती है। अर्थशास्त्र में मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। किसी भी क्षेत्र में कृषि, उद्योग तथा अन्य आर्थिक क्रियाएं वहां की भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है। प्राय: यह देखा जाता है कि औद्योगिक इकाई उसी क्षेत्र में स्थापित की जाती है जहां कच्चा माल अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है। प्राचीन समय में सभ्यताओं का विकास अधिकतर नदियों के किनारों पर ही हुआ है। नदियों, पहाड़ों, मरूस्थलों, समुद्रों तथा मैदानों ने किसी देश-विदेश की अर्थव्यवस्था को बहुत प्रभावित किया है। भारत को एक कृषि प्रदान देश भी इसीलिए कहा जाता है क्योंकि यहां उपजाऊ भूमि अधिक मात्रा में उपलब्ध है। इंग्लैंड को उसकी भौगोलिक परिस्थितियों ने ही एक व्यापारिक राष्ट्र बनाया। एक उत्पादक कच्चे माल की उपलब्धता के साथ-साथ यातायात तथा संचार के साधनों की जानकारी भी भूगोल से प्राप्त करता है। मनुष्य की आर्थिक क्रियाएं दूसरी ओर प्रत्येक देश की भौगोलिक परिस्थितियों को भी प्रभावित करती है। जैसा कि आज वातावरण के प्रदूषण की समस्या एक ज्वलंत समस्या है और यह समस्या मानव की आर्थिक क्रियाओं का ही परिणाम है। इस प्रकार भूगोल तथा अर्थशास्त्र की विषय वस्तु में पर्याप्त समन्वय पाया जाता है।

## अर्थशास्त्र तथा गणित
## (Economics and Mathematics)

अर्थशास्त्र के अधिगम के लिए विद्यार्थी गणित के ज्ञान तथा भाषा का प्रयोग करते हैं। वस्तुओं का उत्पादन, उपभोग, क्रय, विक्रय और वितरण को गणित की सहायता से ही नियमित और नियंत्रित रखा जा सकता है। विभिन्न देशों की मुद्रा की विनिमय दर गणित की सहायता से ही निश्चित की जाती है। चाहे हम आयात या निर्यात या मुद्रा के मूल्य और किसी भी देश के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक सम्बन्धों की बात करें हम किसी देश के बजट निर्माण; योजना निर्माण और कर संग्रह के रूप में उसकी आंतरिक आर्थिक संरचना की बात करें, हमें अर्थशास्त्र अध्ययन में प्रयोग किए जाने वाले शब्दों जैसे मुद्रा का अवमूल्यन, दीर्घावधि बचत योजना आदि की सहायता लेनी पड़ती है। श्रम तथा पूंजी के सम्बन्ध को गणित की सहायता से समझा जा सकता है। सम्पूर्ण व्यावसायिक प्रणाली, बैंकिंग, बीमा आदि पूर्ण रूप से गणित से प्रभावित होते हैं। प्रत्येक आर्थिक योजना के लिए विभिन्न प्रकार

से आंकड़ें एकत्रित किए जाते हैं। सारणी तथा ग्राफ के विभिन्न प्रकारों के रूप में अर्थशास्त्र की भाषा गणितीय भाषा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

अर्थशास्त्र गणितीय विज्ञान बन चुका है। अर्थशास्त्र आर्थिक तथ्यों के संख्यात्मक पक्ष की खोज करता है। इस संख्यात्मक पक्ष के लिए गणित की विभिन्न शाखाओं की सहायता लेनी पड़ती है। बेकन के शब्दों में, "गणित सभी विज्ञानों का दरवाजा तथा कुंजी है।"

अर्थशास्त्र में विभिन्न नियमों की व्याख्या के लिए गणितीय संख्याओं, चित्रों और सारणियों, रेखाचित्रों तथा संकेतों का प्रयोग किया जाता है। बीजगणित संकेतों का प्रयोग प्राय: आर्थिक विश्लेषण के लिए किया जाता है। ये संकेत शीघ्र तथा स्पष्ट रूप से लिखने में सहायक होते हैं। रेखागणित का प्रयोग भी दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। अर्थशास्त्र की विभिन्न जटिल तथा कठिन शाखाओं का रेखागणित की सहायता से सरलता से विश्लेषण किया जा सकता है। ग्राफ का प्रयोग अधिक से अधिक मात्रा में किया जाता है। दो चरों के बीच सह-सम्बन्धों को वक्रों की सहायता से प्रस्तुत किया जाता है। अर्थशास्त्र में गणित का प्रयोग समय तथा शक्ति की बचत करता है। तथ्यों को आसानी से याद किया जा सकता है। मांग तथा पूर्ति के नियमों की व्याख्या के लिए प्रतिशत, अनुपात अधिक प्रयोग किया जाता है। अर्थशास्त्र के अनेक सिद्धांतों जैसे रोज़गार का सिद्धांत, मुद्रा का परिणामात्मक सिद्धांत आदि का व्यावहारिक ज्ञान गणित के प्रयोग पर ही आधारित है। कैल्कुल्स का प्रयोग भी अर्थशास्त्र में किया जाता है। अर्थशास्त्र की एक शाखा को गणितीय अर्थशास्त्र या इकोनोमिट्रिक्स भी कहा जाता है। इसमें इन्टैगरल कैल्कुल्स और मूर्त बीजगणित का प्रयोग किया जाता है। परन्तु एक बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि गणित का अधिक प्रयोग अर्थशास्त्र को जटिल, मूर्त तथा शुष्क बना देता है। गणित का प्रयोग केवल आंकड़ों के विश्लेषण तथा व्याख्या के लिए ही किया जाना चाहिए।

### अर्थशास्त्र और प्राकृतिक विज्ञान
### (Economics and Natural Science)

प्राकृतिक विज्ञान एक ऐसा विषय है जो पृथ्वी के प्राकृतिक वातावरण से संबंधित है। अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जो अर्थव्यवस्था के बारे में और इसके प्रभाव और समाज पर प्रभाव का विवरण देता है। बाज़ार में जहां व्यापार और वाणिज्य होता है, वहां प्रकृति की कोई पूर्वपक्षी स्थिति नहीं होती है। यह ब्रह्मांडीय या प्राकृतिक नहीं है इस प्रक्रिया को लोगों द्वारा नियंत्रित किया जाता है और मुख्य उद्देश्य विशिष्ट उद्देश्यों को पूरा करने के लिए हेरफेर किया जाता है। जहां धन है, वहां अर्थशास्त्र है, इस प्रकार, अर्थशास्त्र समाज और उसके लोगों से संबंधित है।

एक आधुनिक समाज अर्थशास्त्र हस्तक्षेप के बिना जीवित नहीं रह सकता है। बैंकिंग जैसे तत्व, फर्म का व्यवसाय, मशीन प्रदर्शन, उत्पादन स्तर, बेरोजगारी सभी अर्थशास्त्र के अंतर्गत आते हैं इसके विपरीत, प्राकृतिक विज्ञान शब्द उस अनुशासन को संदर्भित करता है जो प्रकृति के अध्ययन से संबंधित है और इसका मानव जाति या एक दूसरे के साथ संबंध है। यह अनुसंधान का विशाल क्षेत्र है।



बाज़ार को अक्सर प्रकृति की एक शाखा के रूप में पहचाना जाता है जिसे विभिन्न प्राकृतिक घटनाओं द्वारा नियंत्रित किया जाता है। किसी भी गतिविधि जो एक मौद्रिक लेन-देन द्वारा नियंत्रित होती है, उसे आर्थिक गतिविधि के रूप में पहचाना जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र समाज की आर्थिक गतिविधियों से पूरी तरह से चिंतित है।

अर्थशास्त्र और प्राकृतिक विज्ञान के बीच "सैद्धांतिक संबंध" मनुष्य का व्यावहारिक संबंध है। मनुष्य स्वयं प्रकृति का एक हिस्सा है। अर्थशास्त्र, प्राकृतिक विज्ञान, की नींव पर तैयार किया गया एक भवन है जोकि मनुष्य की वास्तविक शक्तियों को दर्शाता है और प्राकृतिक विज्ञान ऐसी "वास्तविक शक्ति", "उत्पादन की क्षमता" है।

प्राकृतिक विज्ञान के विषय के अंतर्गत एक सैद्धांतिक संबंध में मनुष्य पूरी तरह से अस्थिर प्रकृति से जुड़ा हुआ नहीं है, किन्तु अर्थशास्त्र के अंतर्गत अपने स्थाई आर्थिक विकास के लिए बहुत सी सामग्री प्रकृति से ही प्राप्त करता है।

### अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्र
### (Economics and Sociology)

अर्थशास्त्र समाजशास्त्र का एक भाग है। यह भी अनुभव किया जाता है कि समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र के बीच पिता-पुत्र जैसे सम्बन्ध है क्योंकि समाजशास्त्र एक पेड़ की भांति है और अर्थशास्त्र, राजनीतिक विज्ञान, आचरण शास्त्र आदि इसकी शाखाएं हैं। समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन है। यह मानव की क्रियाओं के अध्ययन से सम्बन्धित है। यह समाज का विस्तृत अध्ययन करता है। यह कुछ ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने की कोशिश करता है समाज क्या है? इसका निर्माण कैसे हुआ? इसका विकास कैसे हुआ? समाज की कमजोरियों क्या हैं? इन्हें कैसे दूर किया जा सकता है? समाज के अध्ययन के लिए आर्थिक पक्ष अति आवश्यक है। सामाजिक विज्ञान सभी विज्ञानों का प्रमुक स्रोत है जो समाज से सम्बन्धित है। दूसरी ओर समाज शास्त्र सभी सामाजिक विज्ञानों का पिता है। नियम, रीति रिवाज, संस्थाएं तथा लोगों के जीवन की विधियों का अध्ययन समाज शास्त्र में किया जाता है।

जैसे आर्थिक आधार के बिना समाज कार्य नहीं कर सकता, उसी प्रकार अर्थशास्त्र का ज्ञान सामाजिक संरचना के ज्ञान के बिना अपूर्ण है। समाज के सदस्यों को भोजन, आवास तथा कपड़ों की आवश्यकता होती है। उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न क्रियाएं करनी पड़ती हैं। इन क्रियाओं को मुख्य रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है : आर्थिक क्रियाएं तथा अनार्थिक क्रियाएं। मार्शल के अनुसार, अर्थशास्त्र जीवन के सामान व्यवसाय में मनुष्य की क्रियाओं का अध्ययन है। इसका सम्बन्ध इस तथ्य से है कि वह अपनी आय कैसे प्राप्त करता है और कैसे उसका प्रयोग करता है। अत: एक तरफा यह धन का अध्ययन है और दूसरी ओर तथा अधिक महत्वपूर्ण यह मानव के अध्ययन के भाग हैं। अर्थशास्त्र की सहायता से समाज के सभी सदस्यों को आर्थिक क्रियएं उचित ढंग से करने का ज्ञान प्राप्त होता है, जिससे वे समाज के अच्छे सदस्य के रूप में व्यवहार कर सके।

समाजशास्त्र अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए सहायक है। आर्थिक नीतियों के निर्माण में सामाजिक परंपराएं तथा रीति रिवाजों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस ज्ञान के बिना अच्छी आर्थिक नीतियों का निर्माण नहीं किया जा सकता। सामाजिक संरचना, पारिवारिक संरचना, धार्मिक अवस्थाएं आदि आर्थिक स्थितियों को प्रभावित करती है। अर्थशास्त्र के अध्यापक को समाज की विभिन्न सामाजिक समस्याओं का ज्ञान होना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप वह इन समस्याओं को सुलझाने में आर्थिक नीतियों, सिद्धांतों तथा नियमों को आसानी से सह-सम्बन्धित कर सके तथा प्रयोग कर सके।

दोनों विषयों का प्रमुख उद्देश्य समाज का कल्याण करना है और मनुष्य को जीवन के लिए तैयार करना है। समाजशास्त्र सामाजिक कल्याण लाता है, जबकि अर्थशास्त्र आर्थिक कल्याण के लिए प्रयत्न करता है। समाज की समस्या में सामाजिक तथा आर्थिक दोनों पक्षों का समावेश होता है। अर्थशास्त्र को समाजशास्त्र से सम्बन्धित करते हुए अध्यापक विभिन्न समस्याओं जैसे बेरोजगारी, खाद्यान्न संकट, जनसंख्या विस्फोट आदि पर प्रकाश डाल सकता है। इस प्रकार अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्र दोनों में गहरा सम्बन्ध है।

### अभ्यास के प्रश्न
### (Study Questions)

1. अर्थशास्त्र के गणित और प्राकृतिक विज्ञान से सम्बन्धों की व्याख्या करें।
   (Explain the relationship of Economics with Mathematics and Natural Science.)
2. अर्थशास्त्र का निम्नलिखित विषयों से सह-सम्बन्ध स्थापित करें :
   (i) सार्वजनिक वित्त (Public Finance)
   (ii) वाणिज्य शास्त्र (Commerce)
   (iii) कानून (Law)
   (iv) भूगोल (Geography)
3. सह-संबंध से आप क्या समझते हैं? अर्थशास्त्र को अन्य विषयों के साथ कैसे सह-संबंधित किया जा सकता है?
   (What do you understand by correlation? How can Economics be correlated with the other subjects?)
4. अर्थशास्त्र का अन्य विषयों के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करने की क्या उपयोगिता है? उचित उदाहरण देकर चर्चा करें।
   (What is the utility of correlating economics with the other subjects? Discuss by giving suitable examples.)
5. सह-संबंध अर्थशास्त्र शिक्षण का एक प्रभावी तरीका है। वर्णन करें।
   (Correlation is an effective method of teaching Economics. Discuss it.)

* * *

# UNIT—II

## सामग्री और इसका शैक्षणिक विश्लेषण और पाठ योजना
## (Contents and its Pedagogical Analysis and Lesson Planning)

1. अर्थशास्त्र की शब्दावली को समझना : सूक्ष्म अर्थशास्त्र, समष्टि अर्थशास्त्र, बाजार, उत्पादन, व्यापारिक अर्थशास्त्र और बजट
2. शैक्षणिक विश्लेषण का अर्थ, महत्व और इसके चरण
3. अर्थशास्त्र में पाठ योजना : आवश्यकता और महत्त्व, मूल तत्त्व और इसकी तैयारी

# 1
## CHAPTER

# अर्थशास्त्र की शब्दावली को समझना : सूक्ष्म अर्थशास्त्र, समष्टि अर्थशास्त्र, बाजार, उत्पादन, व्यापारिक अर्थशास्त्र और बजट

## (Understanding Terminology of Economics : Micro Economics, Macro Economics, Market, Production, Business Economics and Budgeting)

### सूक्ष्म अर्थशास्त्र
### (Micro Economics)

अर्थशास्त्र को दो भागों में बांटा गया है :

- व्यष्टि अर्थशास्त्र (Micro Economics)
- समष्टि अर्थशास्त्र (Macro Economics)

व्यष्टि अर्थशास्त्र का पिता Ragnar Frisch को कहा जाता है। Micro के अन्तर्गत हम बहुत छोटे स्तर पर बात करते हैं। व्यष्टि अर्थशास्त्र के कुछ उदाहरण :

- प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income)
- मांग एवम् आपूर्ति (Demand And Supply)
- राजस्व (Revenue)
- उपयोगिता (Utility)
- कीमत सिद्धान्त (Price Theory)
- मांग सिद्धान्त (Demand Theory)

'Micro' शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'Micros' (व्यष्टि) से हुई है, जिसका अर्थ है सूक्ष्म। इस प्रकार सूक्ष्म अर्थशास्त्र - अर्थशास्त्र की एक शाखा है जो आर्थिक मुद्दों का सूक्ष्मता से अध्ययन करती है, व्यक्तियों और व्यवसायों के व्यवहार का अध्ययन करती है और हमें बताती है कि सीमित संसाधनों के आवंटन के आधार पर निर्णय कैसे किया जाता

है। सीधे शब्दों में कहें, यह इस बात का अध्ययन है कि हम निर्णय कैसे करते हैं। सूक्ष्म अर्थशास्त्र इस बात की जांच करता है कि ये निर्णय और व्यवहार माल और सेवाओं की आपूर्ति और मांग को कैसे प्रभावित करते हैं। सूक्ष्म अर्थशास्त्र ऐसे मुद्दों की पड़ताल करता है जैसे कि परिवार कैसे खरीदने के लिए निर्णय लेते हैं और कितना बचत करते हैं।

सूक्ष्म अर्थशास्त्र व्यक्तियों, परिवारों और निर्णय लेने और संसाधनों के आवंटन में कंपनियों के व्यवहार का अध्ययन है। यह आम तौर पर माल और सेवाओं के बाजारों और व्यक्तिगत और आर्थिक मुद्दों के साथ सौदों पर लागू होता है। सूक्ष्म आर्थिक अध्ययन उन विकल्पों से संबंधित होता है जो लोग पसंद करते हैं, कौन से कारक उनकी पसंदों पर प्रभाव डालते हैं और कीमतों, आपूर्ति और मांग को प्रभावित करके माल के बाजारों पर उनके फैसले कैसे प्रभावित करते हैं।

## समष्टि अर्थशास्त्र
## (Macro Economics)

समष्टि अर्थशास्त्र का पिता जॉन कीन्स (John Keynes) को माना जाता है। इसके अन्तर्गत हम बहुत बड़े स्तर पर बात करते हैं। यह व्यष्टि का विपरीत है। कुछ उदाहरण :

- राष्ट्रीय आय (National Income)
- योजना (Planning)
- कर (Tax)
- बजट (Budget)
- बैंकिंग (Banking)।

मान कर चलिये अगर हम केवल एक व्यक्ति की आय के बारे में आंकलन कर रहे हैं तो बहुत छोटे स्तर पर बात कर रहे हैं अत: यह Micro होगा। लेकिन जब पूरे देश की आय अर्थात् राष्ट्रीय आय का आंकलन कर रहे हैं तो व्यापक स्तर हो गया। अत: यह Macro होगा।

अंग्रेजी भाषा का Macro शब्द ग्रीक भाषा के Makros से लिया गया है, जिसका अर्थ है 'बड़ा' (Large)। इस प्रकार समष्टि अर्थशास्त्र में आर्थिक समस्याओं का सारी अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाता है, जैसे कि कुल उपभोग, कुल रोजगार, राष्ट्रीय आय, कीमत स्तर आदि।

**प्रोफेसर बोल्डिंग** के अनुसार, "समष्टि आर्थिक सिद्धांत अर्थशास्त्र का वह हिस्सा है, जो अर्थशास्त्र के समय औसत और इस प्रणाली के कुल समूहों का अध्ययन करता है।"

(Macro Economic Theory is that part of economics which studies the overall averages and aggregates of the system - **Professor Boulding**)



## बाज़ार
## (Market)

जनसाधारण की भाषा में बाज़ार का अर्थ उस स्थान से लिया जाता है जहाँ वस्तुओं के क्रेता और विक्रेता एक साथ एकत्रित होकर वस्तुओं और सेवाओं का क्रय-विक्रय करते हैं।

दूसरे शब्दों में, एक ऐसा स्थान जहाँ वस्तु के क्रेता एवं विक्रेता भौतिक रूप में उपस्थित होकर वस्तुओं का आदान-प्रदान करते हैं, बाज़ार कहलाता है किन्तु अर्थशास्त्र में बाज़ार की परिभाषा में क्रेताओं और विक्रेताओं का भौतिक रूप से एक स्थान पर उपस्थित होना अनिवार्य नहीं।

विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने बाज़ार को भिन्न-भिन्न रूप में परिभाषित किया है :

1. **प्रो. जेवन्स** के अनुसार, "बाज़ार शब्द का इस प्रकार सामान्यीकरण किया गया है कि इसका आशय व्यक्तियों के उस समूह से लिया जाता है जिसका परस्पर व्यापारिक घनिष्ठ सम्बन्ध हो और जो वस्तु के बहुत से सौदे करे।"

2. **प्रो. कूर्नो** के अनुसार, "बाजार शब्द से अर्थशास्त्रियों का तात्पर्य किसी विशेष स्थान से नहीं होता जहाँ वस्तुएँ खरीदी व बेची जाती हैं बल्कि यह सम्पूर्ण क्षेत्र जिसमें क्रेताओं और विक्रेताओं के बीच स्वतन्त्र प्रतियोगिता इस प्रकार हो कि समान वस्तुओं की कीमतें सम्पूर्ण क्षेत्र में समान होने की प्रवृत्ति रखती हो।"

3. **प्रो. जे के मेहता** के अनुसार, "बाज़ार शब्द का अर्थ उस स्थिति से लिया जाता है जिसमें एक वस्तु की माँग उस स्थान पर हो जहाँ उसे बेचने के लिए प्रस्तुत किया जाये।"

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं से एक बात स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र में बाज़ार शब्द का अर्थ साधारण रूप से प्रयुक्त बाज़ार के अर्थ से सर्वथा भिन्न है।

आधुनिक युग में वस्तुओं और सेवाओं का क्रय-विक्रय टेलीफोन अथवा अन्य संचार माध्यमों से भी सम्पन्न किया जाता है। इस प्रकार बाज़ार का सम्बन्ध किसी स्थान विशेष से होना अनिवार्य नहीं।

सामान्यत: वस्तु के क्रय-विक्रय में क्रेता और विक्रेता के मध्य सौदेबाजी का एक संघर्ष जारी रहता है और वस्तुओं का आदान-प्रदान तब तक सम्भव नहीं हो पाता जब तक क्रेता और विक्रेता दोनों एक कीमत स्वीकार करने को तैयार नहीं हो जाते।

## उत्पादन
## (Production)

**उत्पादन का अर्थ :** अर्थशास्त्र में उत्पादन औद्योगिक प्रतिष्ठानों द्वारा वस्तुओं, सामानों या सेवाओं को निर्मित करने की प्रक्रिया को कहते हैं। उत्पादन का कार्य ऐसी वस्तुएँ और सेवाएँ बनाना है जिनकी मनुष्यों को बेहतर जीवनयापन के लिए आवश्यकता होती है।

**उत्पादन के आधारभूत कारक :** उत्पादन के लिए चार मूल आवश्यकताएं होती हैं :

1. भूमि तथा अन्य प्राकृतिक संसाधन जैसे जल, वन, खनिज।

2. श्रम।

3. भौतिक पूँजी अर्थात् उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर आई लागत।

4. मानव पूँजी।

**उत्पादन से संबंधित समस्याएं :**

क. क्या उत्पादन करें?

ख. कैसे उत्पादन करें?

ग. किस के लिए उत्पादन करें?

**उत्पादन सम्भावना वक्र :** उत्पादन सम्भावना वक्र, वह वक्र है जो दो वस्तुओं के उन सभी संभव संयोजनों को प्रकट करता है जिन का उत्पादन एक अर्थव्यवस्था उपलब्ध तकनीक और दिए हुए संसाधनों के पूर्ण प्रयोग से कर सकती है।

**उत्पादन के सिद्धांत क्या हैं?**

उत्पादन के सिद्धांत के अंतर्गत अर्थशास्त्र के कुछ मौलिक सिद्धांतों को शामिल किया जाता है। इस सिद्धांत की व्याख्या के सन्दर्भ में किसी उत्पादक या फर्म के द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि किसी भी वस्तु की कितनी संख्या का उत्पादन किया जाये और उसके उत्पादन के लिए किन-किन सामानों की आवश्यकता है, कितनी मात्रा में पूंजी की आवश्यकता है और कितने श्रम की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत वस्तुओं की कीमतों और उनके रख-रखाव पर खर्च को भी जोड़ा जाता है। इस सन्दर्भ में एक तरफ किसी वस्तु की कीमत और उत्पादनकारी कारकों के मध्य के संबंध की व्याख्या की जाती है। साथ ही दूसरी तरफ वस्तु की मात्रा और उत्पादनकारी कारकों के मध्य भी संबंधों की भी व्याख्या की जाती है। कोई भी आर्थिक इकाई जोकि किसी एक वस्तु या अनेक वस्तुओं के उत्पादन में संलिप्त रहती है उसे व्यापारिक फर्म कहते हैं। इसके अंतर्गत आर्थिक स्रोत, उत्पादन के कारक आदि तथ्य वस्तु या वस्तुओं के उत्पादन में शामिल रहते हैं और लाभ की स्थिति पैदा करते हैं।

**उत्पादन और लागत की सापेक्षता :** एक व्यावसायिक फर्म विभिन्न आर्थिक संसाधनों को खरीदता है जिसे इनपुट कहा जाता है जबकि वह जब उन्हें बेचता है तो उसे उस फर्म के उत्पादन कहा जाता है। उत्पादन के कारक जोकि किसी व्यावसायिक फर्म के द्वारा किसी वस्तु या सेवा के उत्पादनकारी कार्यों में इस्तेमाल किये जाते हैं इनपुट कहे जाते हैं। कोई भी फर्म इन इनपुटों के लिए पूंजी इस्तेमाल करती है। इनपुट किसी भी वस्तु के लिए मूल्य पैदा करते हैं और अंततः उत्पादन को उत्पन्न करते हैं।

## व्यावसायिक अर्थशास्त्र
## (Business Economics)

### व्यावसायिक अर्थशास्त्र का अर्थ एवं परिभाषा
### (Meaning and Definition of Business Economics)

**अर्थ (Meaning) :** व्यावसायिक अर्थशास्त्र परम्परागत अर्थशास्त्र का ही एक भाग है। इसमें व्यावसायिक फर्म की समस्याओं का अध्ययन होता है। अर्थशास्त्र निरपेक्ष आर्थिक



सिद्धान्तों (Abstract Economic Theories) से सम्बन्धित है। व्यावसायिक अर्थशास्त्र उन आर्थिक सिद्धान्तों का अध्ययन है जिनका उपयोग व्यवसाय की व्यावहारिक समस्याओं के समाधान के लिए होता है।

सरल शब्दों में, व्यावसायिक अर्थशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें हम यह अध्ययन करते हैं कि वास्तविक परिस्थितियों में अर्थशास्त्र के सिद्धान्त का प्रयोग किस प्रकार होता है और ये किस प्रकार प्रबन्ध को निर्णय लेने और भावी नियोजन में सहायता प्रदान करते हैं।

व्यावसायिक अर्थशास्त्र सामान्य अर्थशास्त्र का ही एक भाग है। सामान्य या परम्परागत अर्थशास्त्र में आर्थिक घटनाओं के केवल सैद्धान्तिक पहलू का ही अध्ययन होता है और इसके सिद्धान्तों का आधार बहुत-सी अवास्तविक मान्यतायें होती हैं। अतः व्यावसाय प्रबन्धक के लिए इन सिद्धान्तों का बहुत ही सीमित महत्व होता है।

एक व्यवसाय प्रबन्धक आर्थिक घटनाओं के व्यावहारिक पहलू से सम्बन्धित होता है और इसके लिए केवल व्यवसाय के क्रिया-कलापों से सम्बन्धित घटनाएँ ही महत्वपूर्ण होती हैं अतः एक व्यवसाय प्रबन्धक को व्यवसाय जगत की वास्तविकताओं पर आधारित एक ऐसे अर्थशास्त्र की आवश्यकता होती है जो उसके व्यवसाय या फर्म की आर्थिक समस्याओं के समाधान में सहायक होता है।

व्यावसायिक या प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र ही इन आकांक्षाओं की पूर्ति में सहायक है।

### परिभाषाएँ
### (Definitions)

1. **मैकनेयर व मेरीयम** के अनुसार, "व्यावसायिक अर्थशास्त्र में व्यावसायिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने के लिए अर्थशास्त्रीय विचार पद्धति का उपयोग किया जाता है।"
2. **स्पेन्सर व सीगिलमैन** के अनुसार, "व्यावसायिक अर्थशास्त्र आर्थिक सिद्धान्तों तथा व्यावसायिक व्यवहारों का उस उद्देश्य से किया गया समन्वय है कि प्रबन्धकों को निर्णय लेने और आगे के लिए नियोजन करने में सुविधा हो।"
3. **हेन्स तथा अन्य** के अनुसार, "प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र व्यावसायिक निर्णयों में प्रयुक्य किया जाने वाला अर्थशास्त्र है। यह अर्थशास्त्र की वह विशिष्ट शाखा है जो विशुद्ध सिद्धान्तों एवं प्रबन्धकीय व्यवहार के बीच सेतु का काम करती है।"
4. **जोयल डीन** के अनुसार, "प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का यह आशय है कि किस तरह से आर्थिक विश्लेषण का उपभोग व्यावसायिक नीति निर्धारण में किया जाता है।"

उपयुक्त परिभाषाओं में केवल बाह्य अभिव्यक्ति में अन्तर है जबकि आन्तरिक स्वर एक ही है। इसका कारण यह है कि प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र ज्ञान की अपेक्षाकृत एक नवीन शाखा है तथा वह अपने विकास के प्रारम्भिक स्तर पर है और यह अभी अपना अन्तिम आकार नहीं ग्रहण कर सकी है।

अत: अभी तक ऐसी परिभाषा प्रस्तुत नहीं की जा सकी है जो इस विषय की प्रकृति, अध्ययन-क्षेत्र तथा सीमाओं को स्पष्ट करती हो। एक ऐसी परिपूर्ण परिभाषा के निर्माण में प्रो. बामोल की साम्यीकरण (Optimization) की धारणा काफी सहायक है।

बामोल ने व्यावसायिक अर्थशास्त्र की कोई निश्चित परिभाषा तो नहीं दी है परन्तु अपनी पुस्तक 'Economic Theory and Operations Analysis' में साम्यीकरण की धारणा को विस्तारपूर्वक समझाया है। वस्तुत: यही धारणा व्यावसायिक अर्थशास्त्र का आधार है।

बामोल की साम्यीकरण की धारणा के आधार पर व्यावसायिक अर्थशास्त्र को इस प्रकार से परिभाषित किया जाता है :

"व्यावसायिक अर्थशास्त्र, विशिष्ट अर्थशास्त्र का वह भाग है जिसमें एक फर्म के आचरण का विश्लेषण आर्थिक सिद्धान्तों, मान्यताओं व धारणाओं के आधार पर कार्यात्मक अनुसन्धान में प्रयुक्त विभिन्न साधनों की सहायता से किया जाता है, ताकि सम्यक् निष्कर्ष प्राप्त हों।"

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह निश्चित होता है कि व्यावसायिक अर्थशास्त्र के अन्तर्गत व्यावसायिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में परम्परागत अर्थशास्त्र और निर्णयन-विज्ञान के बीच एक सेतु का काम करता है।

## बजट
## (Budgeting)

आम तौर बजट शब्द आते ही आमदनी और खर्चे का ख्याल आ जाता है। बजट शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच भाषा के 'बूजट' से हुई बताई जाती है। 'बूजट' का अर्थ होता है 'चमड़े की थैली' इसे आप बैग समझ सकते हैं। बजट के वर्तमान स्वरूप का यदि इतिहास में सबसे पहले उल्लेख देखा जाए तो यह सबसे पहले 1773 में मिलता है। इस समय ब्रिटिश वित्तमंत्री रॉबर्ट वालपोल ने अपने वित्तीय प्रस्ताव को चमड़े के बैग से निकाला था और तब से 'बजट' शब्द का प्रयोग सरकारी लेखा-जोखा के तौर पर होने लगा।

इंग्लैंड के वित्त मंत्री जिस ब्रीफकेस में बजट पेश करते हैं, उसे 'बजट बॉक्स' कहा जाता था और आज भी यह परंपरा जारी है। यह लाल रंग का होता है। 1860 में इंग्लैंड के तत्कालीन वित्त मंत्री विलियम इवर्ट ग्लैडस्टोन ने इस परंपरा की शुरुआत की थी। बताया जाता है कि सिर्फ दो बार छोड़कर 2010 तक इसी अटैची से बजट पेश किया गया है। यह बैग काफी पुराना हो चुका है इसलिए इसे संग्रहालय में रख दिया गया और नया ब्रीफकेस तैयार किया गया है।

**बजट का अर्थ एवं महत्व :**

.बजट एक निश्चित वर्ष के लिए सरकार की अनुमानित आय-व्यय का विवरण है। बजट उपलब्ध संसाधनों के आंकलन करने की प्रक्रिया है, तथा पूर्व निर्धारित प्राथमिकताओं



के आधार पर संगठन के विभिन्न गतिविधियों के लिए आवंटित करने की प्रक्रिया भी है। यह सार्वजनिक जरूरतों तथा दुलर्भ संसाधनों को संतुलित करने का प्रयास भी है। परंतु बजट केवल आर्थिक गतिविधियां नहीं है, अपनी वित्तीय भूमिकाओं को छोड़कर बजट द्वारा निम्नलिखित कार्य किए जाते हैं :

1. बजट नियंत्रण के रूप में कार्य करता है। यह विभिन्न विभागों में कार्यों के मूल्यांकन का माध्यम है। यदि कोई विभाग लक्ष्य से दूर है तो इसे बजटीय प्रस्तावों में सूचित किया जा सकता है, और सुधारात्मक कार्यवाही की जा सकती है।
2. बजट प्रक्रिया में विभिन्न विभाग सम्मिलित होते हैं। विभिन्न विभागों के मध्य विवादों का समाधान किया जाता है। बजटीय योजना तथा कार्यान्वयन विभिन्न विभागों को एक साथ लाने में मदद करते हैं तथा उनमें समन्वय स्थापित करते हैं।
3. कम प्रदर्शन करने वाले विभागों को दंडात्मक कार्यवाही के रूप में बजट में कटौती की जाती है। इसीलिए यह विभिन्न विभागों के काम काज में दक्षता बनाए रखने में सहायक है।
4. बजट प्रशासकीय जरूरतों के अनुसार संस्थात्मक परिवर्तन लाने में सहायक हो सकते हैं। यदि सरकार अपने कर्मचारियों के उत्पादकता में सुधार चाहती है तो प्रोत्साहन के रूप में बोनस दे सकती है।
5. बजट संसाधनों के वितरण के लिए एक मंच भी प्रदान करता है। यह धन का सार्वजनिक उत्तरदायित्व तय करता है।
6. यह सरकारी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक योजनाबद्ध दृष्टिकोण है, जो वृहद् संसाधनों को संगठित करने की मांग करता है। विगत वर्षों में सरकार के बारे में जनता की राय बदलने के लिए बजटी प्रक्रिया में बदलाव को अच्छी तरह समझा जा सकता है।

**कुल प्राप्तियों तथा व्यय का अनुमान :** आम बजट में सभी मंत्रालयों के कुल प्राप्तियों तथा व्यय का अनुमान होता है, इसमें निम्नलिखित तीन आंकड़े सम्मिलित होते हैं :

1. विगत वर्ष कि कुल वास्तविक आय तथा व्यय।
2. चाल वर्ष से संशोधित आंकड़े।
3. आगामी वर्ष के लिए बजट अनुमान।

सरकार की प्राप्तियों को संविधान के तीन खातों में रखा जाता है :

1. संचित निधि
2. लोक लेखा निधि
3. आकस्मिकता निधि

**1. संचित निधि :** यह ऐसी निधि है जिसमें सभी प्राप्तियां जमा की जाती हैं तथा सभी व्यय निकाले जाते हैं अर्थात् सरकार द्वारा प्राप्त सभी राजस्व सरकार द्वारा लिए गए सभी ऋण, ट्रेजरी बिल तथा अन्य माध्यम ऋण के रूप में प्राप्त आय तथा अन्य सभी प्रकार के पुनर्भुगतान। सरकार द्वारा सभी प्रकार का भुगतान विधिक रूप से इसी फण्ड से किया जाता है। इस निधि से संसद की अनुमति के बिना किसी भी प्रकार से धन विनियोजित नहीं किया जा सकता। विधि द्वारा अधिकृत विनियोजन से ही धन निकाला जा सकता है।

निम्नलिखित प्रकार के व्यय संचित निधि में सम्मिलित हैं :

1. सष्ट्रपति के वेतन और भत्ते।
2. राज्य सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष एवं लोक सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के वेतन व भत्ते।
3. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन व भत्ते।
4. उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के पेंशन।
5. भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के वेतन भत्ते एवं पेंशन।
6. संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों के वेतन भत्ते एवं पेंशन।
7. ऐसे ऋण जिनके लिए भारत सरकार उत्तरदायी है जैसे - ऋण, भुगतान व वसूली से सम्बंधित अन्य खर्च (सिंकिंग फण्ड)
8. अदालय या न्यायधिकरण के फैसले से प्राप्त पुरस्कार या धन।
9. अन्य कोई ऐसा खर्च जिसे संसद कानून द्वारा घोषित करे।

**2. लोक लेखा निधि :** भारत सरकार की ओर से अन्य सार्वजनिक धन (संचित निधि से सम्बंधित धन को छोड़कर) लोक लेखा निधि में जमा किए जाएंगे जो इस प्रकार हैं :

1. सरकार द्वारा भविष्य निधि, बचत, सड़क विकास, शिक्षा जैसे अन्य विशेष खर्च सम्मिलित होंगे।
2. यह निधि कार्यपालिका द्वारा संचालित की जाती है, इसमें किसी भी प्रकार के भुगतान के लिए संसद की अनुमति आवश्यक नहीं है।
3. लोक निधि सरकार से सम्बंधित नहीं होती तथा अंततः उसी प्राधिकारी या व्यक्ति को भुगतान किया जाता है जिसने जमा किया है।
4. ऐसे धन के लिए संसद की स्वीकृति आवश्यक नहीं है, सिवाय इसके जिसमें विशेष उद्देश्यों के लिए संसद ने धन की अनुमति प्रदान की है। ऐसी स्थिति में विशेष उद्देश्य के लिए वास्तविक खर्चों को संसद की अनुमति के आधार पर ही निकाला जा सकता है।

**3. आकस्मिकता निधि :** संविधान के अनुच्छे. .67 के अनुसार संसद आकस्मिकता निधि के गठन के लिए अधिकृत हैं, जिसमें विधि द्वारा समय-समय पर धन जमा किया



जाएगा। संसद ने आकस्मिकता निधि अधिनियम 1950 के अनुसार आकस्मिकता निधि का गठन किया है। यह निधि राष्ट्रपति के अधीन है। इससे किसी आकस्मिक खर्च के लिए धन का विनियोजन संसद द्वारा समय-समय पर किया जाता है। यह राष्ट्रपति के नाम पर वित्त सचिव द्वारा संचालित किया जाता है। भारत में लोकनिधि की तरह यह कार्यपालिका द्वारा संचालित किया जाता है।

ऐसे आकस्मिक खर्चों के लिए संसद भविष्य के समस्याओं के आधार पर निधि तय करती है और इतनी ही राशि संचित निधि से आकस्मित निधि में जमा की जाती है। इस निधि के लिए संसद द्वारा अधिकृत न्यूनतम राशि 50 करोड़ है।

संविधान के अनुसार वार्षिक वित्तीय विवरण राजस्व खातों पर खर्च तथा अन्य खर्चों में अंतर करता है। सरकारी बजट, राजस्व बजट तथा पूंजी बजट से मिलकर बनता है। वार्षिक वित्तीय विवरण में सम्मिलित आय व्यय के अनुमान कुल खर्चों, पुनर्प्राप्ति एवं पुनर्भरण को निधि में प्रदर्शित करेगा।

**सरकारी बजट के घटक :**

भारत में प्रत्येक वित्तीय वर्ष, सरकार की अनुमानित प्राप्तियों और व्ययों का विवरण सांसद के समक्ष प्रस्तुत करना एक संवैधानिक अनिवार्यता है। इस वार्षिक वित्तीय विवरण से मुख्य बजट दस्तावेज बनता है। इसके अतिरिक्त बजट में राजस्व लेखा पर व्यय और अन्य प्रकार के व्यय में अवश्य ही अंतर होना चाहिए। अतः बजट दो प्रकार के होते हैं : (i) राजस्व बजट (ii) पूंजीगत बजट।

**राजस्व बजट :** राजस्व बजट में सरकार की चालू प्राप्तियां और उन प्राप्तियों से किए जाने वाले व्यय के विवरण को दर्शाया जाता है।

**राजस्व प्राप्तियां :** राजस्व प्राप्तियां सरकार की वह प्राप्तियां हैं जो ग़ैर-प्रतिदेय हैं अर्थात् इसे पाने के लिए सरकार से पुनः दावा नहीं किया जा सकता है। इसे कर और ग़ैर कर राजस्व में विभक्त किया जाता है।

**कर राजस्व :** कर राजस्व में कर की प्राप्तियां और सरकार द्वारा लगाए गए अन्य शुल्क शामिल होते हैं। कर राजस्व जो की राजस्व प्राप्तियों का एक महत्वपूर्ण घटक है, में मुख्य रूप से प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष कर होते हैं।

**गैर-कर राजस्व :** केंद्र सरकार के गैर-कर राजस्व के अन्तर्गत मुख्य रूप से आते हैं :

**ब्याज प्राप्तियां :** यह केंद्र सरकार के द्वारा राज्य सरकार एवं अन्य सरकारी संस्थान को दिए गए ऋण से प्राप्त ब्याज है। गैर कर राजस्व से सबसे ज्यादा आय राजस्व प्राप्ति से होता है।

**सरकार के निवेश से प्राप्त लाभांश और लाभ :** यह केंद्र सरकार के, सरकारी, अर्धसरकारी एवं निजी कंपनियों में निवेश से प्राप्त आय है। जब अर्धसरकारी एवं निजी कंपनियों के शेयर से आय होता है तो इसे लाभांश (Dividend) कहते हैं, और जब सरकारी कंपनियों के शेयर से आय होता है तो इसे लाभ (Profit) कहते हैं।

**नकद सहायता अनुदान :** इसके अन्तर्गत विदेशों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा प्रदान किए जाने वाले नकद सहायता अनुदान को शामिल किया जाता है।

**राजस्व व्यय :** राजस्व व्यय केंद्र सरकार का भौतिक या वित्तीय परिसम्पतियों के सृजन के अतिरिक्त अन्य उद्देश्यों के लिए किया जाता है। राजस्व व्यय का सम्बन्ध सरकारी विभागों के सामान्य कार्यों तथा विविध सेवाओं, सरकार द्वारा उपगत ऋण ब्याज अदायगी, राज्य सरकारों और अन्य दलों से प्रदत्त अनुदान (यद्यपि कुछ अनुदानों से परिसम्पतियों का सृजन भी हो सकता है) आदि पर किए गए व्यय होता है। बजटीय दस्तावेज में कुल राजस्व व्यय के आगे दो भाग हैं :

**योजनागत राजस्व व्यय :** योजनागत राजस्व व्यय का सम्बन्ध केंद्रीय योजनाओं (पंचवर्षीय योजनाओं) और राज्यों और संघ शासित प्रदेशों की योजना के लिए केंद्रीय सहायता है।

**गैर योजनागत व्यय :** गैर योजनागत व्यय के मुख्य मदों में ब्याज अदायगी, प्रतिरक्षा सेवाएं, उपदान, वेतन और पेंशन आते हैं। बाज़ार ऋणों, बाह्य ऋणों और विभिन्न आरक्षित निधियों पर ब्याज अदायगी गैर योजनागत राजस्व व्यय का एक सबसे बड़ा घटक होता है। प्रतिरक्षा व्यय गैर योजनागत व्यय का दूसरा सबसे बड़ा घटक है और इस अर्थ में यह एक प्रतिबद्ध व्यय है कि राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित इस मद में अधिक कटौती का क्षेत्र अत्यल्प है। उत्पादन एक महत्वपूर्ण नीतिगत उपकरण है, जिसका उद्देश्य कल्याण में वृद्धि करना है। सार्वजनिक वस्तुओं और शिक्षा तथा स्वास्थ्य जैसी सेवाओं का अल्पमूल्यन के माध्यम अव्यक्त उपदान प्रदान करने के अतिरिक्त सरकार निर्यात, ऋण पर ब्याज, खाद्य पदार्थ और उर्वरक जैसे मदों पर व्यक्त रूप उपदान प्रदान करती है।

**पूंजीगत लेखा :** पूंजीगत बजट केंद्रीय सरकार की परिसंपत्तियों के साथ-साथ दायित्वों से संबंधित राशियों का वह लेखा है, जो पूंजी में होने वाले परिवर्तनों का ध्यान रखता है। इसके अन्तर्गत सरकार की पूंजीगत प्राप्तियां एवं पूंजीगत व्यय शामिल होती है। यह सरकार की वित्तीय आवश्यकताओं तथा उनके वित्तीय प्रबंधन को दर्शाते हैं।

**पूंजीगत प्राप्तियां :** सरकार की वे सभी प्राप्तियां जो दायित्वों का सृजन या वित्तीय परिसंपत्तियों को काम करती हैं पूंजीगत प्राप्तियां कहलाती हैं।

- ऋण पूंजी प्राप्तियां : यह मुख्य रूप से उधार और अन्य देनदारियों को शामिल करता है।
- सार्वजनिक कर्ज़ : पूंजीगत प्राप्तियों की मुख्य मदें सार्वजनिक कर्ज़ हैं, जिसे सरकार द्वारा जनता से लिए जाता है। इसे बाज़ार ऋण कहते हैं। इसके अन्तर्गत ट्रेजरी बिल की बिक्री के द्वारा रिज़र्व बैंक और व्यवसायिक बैंकों तथा अन्य वित्तीय संस्थानों से सरकार द्वारा ऋण ग्रहण, विदेशी सरकारों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों से प्राप्त कर्ज और केन्द्र सरकार द्वारा प्रदत्त ऋणों की वसूली आदि शामिल है।



- गैर-ऋण पूंजी प्राप्तियां : इसके अन्तर्गत लघु बचतें (डाकघर बचत खाता, राष्ट्रीय बचत प्रमाण पत्र आदि शामिल हैं), भविष्य निधि और सार्वजनिक उपक्रम (पीएसयू) के शेयरों की बिक्री से प्राप्त निवल प्राप्तियां शामिल हैं। इसे सार्वजनिक क्षेत्रक उपक्रम या विनिवेश कहा जाता है।

**पूंजीगत व्यय :** ये सरकार के वे व्यय हैं जिसके परिणामस्वरूप भौतिक या वित्तीय परिसम्पतियों का सृजन या वित्तीय दायित्वों में कमी होती है। पूंजीगत व्यय के अन्तर्गत भूमि अधिग्रहण, भवन निर्माण, मशीनरी, उपकरण शेयरों में निवेश और केंद्र सरकार के द्वारा राज्य सरकारों एवं संघ शासित प्रदेशों, सार्वजनिक उपक्रमों तथा अन्य पक्षों को प्रदान किए गए ऋण और अग्रिम संबंधी व्ययों को शामिल किया जाता है। पूंजीगत व्यय को भी बजट दस्तावेज में योजना और गैर योजनागत व्यय के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। वित्त व्यय के अन्तर्गत योजना एवं गैर-योजना में अंतर स्थापित किया जाता है। इस वर्गीकरण के अनुसार, योजनागत पूंजीगत व्यय का सम्बन्ध राजस्व व्यय के समान, केंद्रीय योजना और राज्य तथा संघ शासित प्रदेशों की योजनाओं के लिए केंद्रीय सहायता से होता है। गैर योजनागत पूंजीगत व्यय में सरकार द्वारा प्रदत्त विविध सामान्य, सामाजिक और आर्थिक सेवाओं पर व्यय शामिल होते हैं।

**भारतीय बजट का इतिहास :** भारत में बजट का इतिहास आज़ादी से पहले का है। 9 अक्टूबर 1946 से 14 अगस्त 1947 तक का बजट उस समय की अंतरिम सरकार के वित्तमंत्री लियाकत अली खां ने पेश किया था। फिर जब भारत आज़ाद हुआ तब आज़ाद भारत का पहला बजट आर के शनमुखम चेट्टी ने 26 नवंबर 1947 में पेश किया था।

**भारतीय संविधान में कहीं भी नहीं है बजट शब्द का उल्लेख :** अगर हम भारतीय संविधान में बजट शब्द को ढूंढेंगे तो हमें ये शब्द कहीं नहीं मिलेगा क्योंकि भारतीय संविधान में बजट शब्द का उल्लेख कहीं भी नहीं किया गया है। बजट के बदले संविधान के अनुच्छेद 112 में सरकार हर साल आय-व्यय का एक लेखा-जोखा प्रस्तुत करेगी जिसमें यह उल्लेख रहेगा कि 'सरकार आगामी वित्तीय वर्ष में किस मद में कितना व्यय करेगी साथ ही इस व्यय को पूरा करने के लिए सरकार आय कहां से प्राप्त करेगी' का उल्लेख किया गया है।

अगर ब्रिटिश भारत में बजट की शुरुआत को देखें तो 18 फरवरी 1860 को वायसराय की परिषद् में जेम्स विल्सन ने भारत का पहला बजट पेश किया था। जेम्स विल्सन को ही भारतीय बजट के संस्थापक के रूप में जाना जाता है।

## अभ्यास के प्रश्न
## (Study Questions)

1. सूक्ष्म अर्थशास्त्र पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।
   (Write a brief note on Micro economics.)
2. समष्टि अर्थशास्त्र पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।
   (Write a short notes on Macro economics.)

3. अर्थशास्त्र की शब्दावली के अनुसार 'बाज़ार' शब्द का क्या अर्थ है? विस्तार से लिखें।
(What is the meaning of the word "Market" according to the terminology of Economics? Write in detail.)

4. अर्थशास्त्र की शब्दावली के अनुसार "उत्पादन" शब्द का क्या अर्थ है? विस्तार से लिखें।
(What is the meaning of the word "Production" according to the terminology of Economics? Write in detail.)

5. व्यावसायिक अर्थशास्त्र का अर्थ और परिभाषाएं लिखें।
(Write the meaning and definitions of Business Economics.)

6. बजट पर एक विस्तृत निबंध लिखें।
(Write a detailed essay on Budgeting.)

* * *

# 2
## CHAPTER

# शैक्षणिक विश्लेषण का अर्थ, महत्व और इसके चरण
## (Meaning, Importance and Steps of Pedagogical Analysis)

निम्नलिखित विषयों पर शैक्षणिक विश्लेषण :

- भारत की चुनौती के रूप में गरीबी ( Poverty as Challenge Facing India )
- भारतीय अर्थव्यवस्था ( Indian Economy )
- वैश्वीकरण ( Globalization )
- मुद्रास्फीति और अपस्फीति ( Inflation & Deflation )
- रोज़गार ( Employment )

## भारत की चुनौती के रूप में गरीबी
## (Poverty as Challenge Facing India)

### 1. गरीबी की समस्या
### (Problem of Poverty)

**1. गरीबी का अर्थ** (Meaning of poverty) : "गरीबी से भाव है, जीवन, सेहत और निपुणता के लिए न्यूनतम उपभोग आवश्यकताओं की प्राप्ति की अयोग्यता।" (Poverty is the inability to get the minimum consumption requirement for life, health and efficiency.)

इन न्यूनतम ज़रूरतों में भोजन, कपड़े, मकान, शिक्षा संबंधी न्यूनतम मानवीय ज़रूरतें शामिल होती हैं। इन न्यूनतम मानवीय ज़रूरतों के पूरा न होने पर मनुष्य को दुःख होता है। सेहत और कार्यकुशलता की हानि होती है। इसके फलस्वरूप उत्पादन में बढ़ौतरी करना और भविष्य में गरीबी से छुटकारा पाना कठिन हो जाता है। इसी प्रकार गरीबी और उत्पादन में होने वाली कमी आपस में निर्भर बन जाती है। गरीबी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है : 1. निरपेक्ष गरीबी (Absolute poverty) 2. सापेक्ष गरीबी (Relative poverty)

**1. निरपेक्ष गरीबी** (Absolute Poverty) : निरपेक्ष गरीबी से भाव देश की आर्थिक हालत को ध्यान में रखते हुए गरीबी के माप से ज्यादा है। अधिकतर देशों में प्रति व्यक्ति उपभोग की जाने वाली कैलोरी या न्यूनतम उपभोग स्तर के द्वारा गरीबी को मापने की कोशिश की गई है। भारत की निरपेक्ष गरीबी का अध्ययन इन दोनों विचारधाराओं के अनुसार किया जा सकता है।

**(i) कैलोरी मापदंड** (Calorie criteria) : एक मनुष्य एक दिन में जितना भोजन खाता है उससे प्राप्त शक्ति (Energy) को कैलोरी के द्वारा मापा जाता है। इस विचारधारा का प्रतिपादन सबसे पहले World food and agriculture organisation के पहले डायरेक्टर जनरल लार्ड बायोडर (Lord Boydorr) ने किया था। उनके अनुसार एक मनुष्य को कम से कम 2,300 कैलोरी प्रति दिन मिलनी चाहिए। इससे कम कैलोरी मिलने वाले 'भूख रेखा' (Starvation line) से नीचे माने जाएंगे। योजना आयोग के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में प्रति मनुष्य 2400 कैलोरी प्रतिदिन, शहरी क्षेत्र में 2100 कैलोरी प्रति दिन प्राप्त होनी चाहिए।

**(ii) न्यूनतम उपभोग मापदंड** (Minimum consumption criteria) : योजना आयोग के द्वारा नियुक्त कुशल सम्मत्ति (Expert commitee) ने गरीबी रेखा अपनाने के लिए 'न्यूनतम उपभोग मापदंड' (Minimum consumption criteria) अपनाया है। यह कमेटी के अनुसार गरीबी रेखा से नीचे वह मनुष्य माने जाएंगे जिनका प्रति महीना उपभोग खर्च ग्रामीण क्षेत्र में 368 रुपए से कम है, जबकि शहरी क्षेत्र में 559 रुपए प्रति महीने से कम है। राष्ट्रीय सैंपल सर्वे (NSSO) के अनुसार 2004 में निर्धारित किए गए थे। NSSO के अनुसार द्वारा 2004-05 में लगाए एक अनुमान अनुसार भारत का 22% जनसंख्या अभी भी गरीबी रेखा से नीचे रह रही है।

**2. सापेक्ष गरीबी** (Relative poverty) : सापेक्ष गरीबी से भाव, विभिन्न देशों की प्रति व्यक्ति आमदनी की तुलना के आधार पर गरीबी से है, जिस देश की प्रति व्यक्ति आमदनी दूसरे देशों की प्रति व्यक्ति आमदनी की तुलना से काफी कम है, वह देश सापेक्ष रूप के साथ गरीबी देशों में जनसंख्या का वह हिस्सा, जो बिल्कुल नीचे स्तर पर रह रहा है (जिनकी आमदनी बहुत कम है) वह जीवन की आधारभूत ज़रूरतों को भी पूरा करने में बिल्कुल असमर्थ होते हैं। भारत और देशों की तुलना में एक गरीब देश है। प्रति व्यक्ति आमदनी के आधार से भारत का विश्व में 102 वां स्थान है।

**2. गरीबी रेखा क्या है?** (What is poverty line?) : गरीबी रेखा वह रेखा है जो खरीद शक्ति को प्रकट करती है जिसके द्वारा लोग अपनी न्यूनतम स्तर पर संतुष्ट कर सकते खरीद शक्ति को प्रति व्यक्ति औसत महीने का खर्च (precapita average expenditure) के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। अगर हमें यह पता लग जाए कि एक व्यक्ति का जीवन स्तर न्यूनतम बनाए रखने के लिए खरीद शक्ति का स्तर का होना चाहिए कि उस स्तर से थोड़ा नीचे जीवन बिताने वालों को गरीब माना जा सकता है। इस प्रकार गरीबी रेखा से नीचे (Blow the poverty line-BPL) लोग वह रेखा है जिनके पास न्यूनतम खरीद



शक्ति भाव न्यूनतम महीने का खर्च भी नहीं है। ऐसे लोगों को गरीब माना जाता है। इसके विपरीत इतनी या इससे ज्यादा खरीद शक्ति (महीने का खर्च) वाला प्रत्येक व्यक्ति गरीबी रेखा से ऊपर (Above the poverty line-APL) है और वह व्यक्ति अनुसार गरीब नहीं है। इस प्रकार गरीबी रेखा जनसंख्या को दो भागों में बांटती है : 1. एक वह जिसके पास न्यूनतम खरीद शक्ति या उससे ज्यादा है। इस भाग को गरीब नहीं माना जाता। 2. दूसरी वह जिसके पास न्यूनतम खरीद शक्ति नहीं है। इस दूसरे वर्ग को गरीब कहा जा सकता है।

आजकल भारत में गरीबी रेखा को नैशनल सैंपल सर्वे (NSSO) (National Sample Survey Organization) के द्वारा परिभाषित किया जाता है। प्रत्येक पांच वर्षों में NSSO में एक बार गरीबी साधन का सर्वेक्षण करता है। 2004-05 में NSSO रिपोर्ट अनुसार गरीबी रेखा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिदिन 2,400 कैलोरी और शहरी क्षेत्र के लिए 2,100 कैलोरी लेने के लिए उपभोग खर्च है। यह खर्च ग्रामीण क्षेत्रों के लिए कीमतों के 368 रुपए महीना और शहरी क्षेत्रों के लिए 559 रुपए प्रति महीना निर्धारित किया गया। NSSO के अनुसार साल 2004-05 में भारत की लगभग 22% गरीबी रेखा से नीचे रह रही है। अगर अंतराष्ट्रीय गरीबी रेखा एक US डॉलर प्रति व्यक्ति को आधार माना जाए। तो वर्ष (2004-05) में भारत में 34.7% जनसंख्या गरीबी से नीचे रह रही है। चाहे भारत में पिछले कुछ वर्षों में गरीबी रेखा से नीचे रह रही प्रतिशत जनसंख्या में कमी हुई है। फिर भी जनसंख्या का 22% हिस्सा अभी तक गरीबी रेखा से नीचे रह रहा है। अगर अंतरराष्ट्रीय गरीबी रेखा के आधार पर (प्रति व्यक्ति प्रतिदिन का उपभोग खर्च एक डॉलर से कम) गरीबी को मापा जाए तो भारत की 34.9% जनसंख्या गरीबी से नीचे रह रही है।

## गरीबी के कारण
## (Causes of Poverty)

भारत में गरीबी के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं :

**1. जनसंख्या का अधिक दबाव** (Heavy pressure of population) : भारत में जनसंख्या बहुत तेजी के साथ बढ़ रही है। वर्ष 2007-08 में हमारी जनसंख्या 113.8 करोड़ थी और इसकी बढ़ौतरी पर 1.34% थी। जनसंख्या का यह दबाव विकास के रास्ते में रूकावट हो जाता है। कुल उत्पादन बढ़ने से प्रत्येक मनुष्य के हिस्से में धन नहीं आ सकता, जिसके साथ जीवन स्तर ऊँचा नहीं हो सकता। जनसंख्या के बढ़ने से प्रति व्यक्ति आमदनी, प्रति व्यक्ति भूमि, प्रति व्यक्ति सामाजिक सेवाओं, प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की कमी हो जाती है। भारत में गरीबी का मुख्य कारण जनसंख्या है।

**2. कीमतों में बढ़ौतरी** (Increase in prices) : भारत में दूसरी योजना के आरम्भ से ही कीमतों में जो बढ़ने की प्रवृत्ति शुरू हुई है वो अब तक जारी है। 2007-08 में भी कीमतों की वृद्धि दर 6.7% रही है। इस तेज़ गति के साथ होने वाले कीमत बढ़ौतरी का देश की गरीब जनता पर बहुत असर पड़ा है। इसके परिणामस्वरूप गरीबी का प्रभाव बढ़ता जा रहा है।

**3. कम राष्ट्रीय आय और कम आर्थिक विकास** (Less national Income and slow economic growth) : भारत का कुल राष्ट्रीय उत्पादन जनसंख्या की तुलना में काफी कम है। इसलिए भी प्रति व्यक्ति आमदनी कम रही है। भारत का शुद्ध राष्ट्रीय उत्पादन 2006-07 में 1999-2000 की कीमतों के आधार पर 2530494 करोड़ रुपए था। जबकि जनसंख्या 112.4 करोड़ थी। इसलिए प्रति व्यक्ति आय केवल 22,553 रुपए थी। भारत में पंचवर्षीय योजनाएं में शुद्ध घरेलू उत्पादन (NDP) की बढ़ौतरी दर बहुत कम रही है। योजनावाद की अवधि में विकास की दर 4.8% रही है। इसलिए जनसंख्या की बढ़ौतरी को ध्यान में रखते हुए यह विकास दर काफी नहीं है। विकास की दर में कमी होने के फलस्वरूप गरीबी को दूर नहीं किया जा सकता है।

**4. लगातार रहने वाली बेरोज़गारी या अल्प बेरोज़गारी** (Chronic unemployment and under employment) : जनसंख्या के लगातार बढ़ने के साथ यहां लम्बे समय और अर्थ बेरोज़गारी की स्थिति पैदा हो गई है। भारत में पढ़ी-लिखी बेरोज़गारी से बढ़कर कृषि में छुपी हुई बेरोज़गारी (Disguised unemployment) की समस्या है। बेरोज़गारी की समस्या गरीबी का मुख्य कारण है। भारत में वर्ष 2004-05 में लगभग 347 लाख मनुष्य बेरोज़गार थे। वर्ष 2006-07 में लगभग 405 लाख हो गया।

**5. ग्रामीण अर्थव्यवस्था** (Rural economy) : भारत की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से एक ग्रामीण अर्थव्यवस्था है। भारत की कृषि पिछड़ी हुई है। इस पर जनसंख्या का बहुत अधिक भार है। कृषि क्षेत्र में लोगों की आमदनी बहुत कम है। छुपी हुई बेरोज़गारी पाई जाती है। भारत में 52% जनसंख्या कृषि पर निर्भर है जबकि विकसित देशों में यह प्रतिशत बहुत कम है। जैसे इंग्लैंड और अमेरिका में 1% है। भारत की कृषि पिछड़ी होने के कारण यह 52% जनसंख्या की आय कम है और गरीबी का मुख्य कारण है।

**6. पूंजी की कमी** (Capital Deficiency) : उद्योग, यातायात, सिंचाई और विकास के दूसरे साधनों की स्थापना में पूंजी का विशेष स्थान है। इसलिए किसी देश की आर्थिक पृष्ठभूमि का मुख्य कारण पूंजी की कमी हुआ करती है। यह स्थिति भारत की है। यहां लोगों की पूंजी बचाने की शक्ति बहुत कम है।

**7. योग्य और निपुण उद्यमकर्ताओं की कमी** (Lack of able and efficient Enterpreneurs) : किसी भी देश में औद्योगिक विकास की आरंभिक दशा साहस और कल्पना शक्ति (Initiative and imagination) रखने वाले, काम में निपुण और चतुर उद्यम कर्ताओं की ज़रूरत होती है। परन्तु बदकिस्मती से हमारे देश में ऐसे उद्यम कर्ताओं की बहुत कमी है। फलस्वरूप देश में खास कर उन उद्योगों का विकास हो सका है जिनमें बहुत कम जोखिम है।

**8. उचित औद्योगिकीकरण की कमी** (Lack of proper industrialisation) : औद्योगिक दृष्टि के साथ भारत आज बहुत पिछड़ा हुआ है। भारत उपभोक्ता वस्तु उद्योगों (Consumer goods industries) जैसे साबुन, कपड़ा, चीनी, चमड़ा, तेल आदि का तो



देश में पूरी तरह विकास हो सका है। परन्तु पूंजीगत और उत्पादकों की वस्तुओं के उद्योगों (capital and producer's goods industries) का विकास अभी ठीक तरह से नहीं हो सका है। इसके लिए आज भी हमें विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है।

**9. भ्रष्टाचार** (Corruption) : भ्रष्टाचार के कारण आर्थिक योजनाओं, समाज-कल्याण आदि का लाभ गरीब लोगों तक नहीं पहुंचता। इनका कार्यक्रमों और योजनाओं का धन भ्रष्ट अधिकारी ही खा लेते हैं। इसके अतिरिक्त सरकारी नियुक्तियों के समय भी उन अधिकारियों को रिश्वत देने में असमर्थ होते हैं जिसके कारण सरकारी नौकरियां नहीं मिलतीं और वो गरीब ही रहते हैं।

**10. प्राकृतिक साधनों का उचित प्रयोग न होना** (No proper use of natural resources) : भारत कुदरत की तरफ बहुत खुशहाल देश है। यहां लोहा, कोयला, मैंगनीज़, अभ्रक जैसे बहुमुल्य खनिज पदार्थ बहुत मात्रा में प्राप्त हैं और सारा वर्ष चलने (बहने) वाली नदियां बिजली शक्ति और सिंचाई के साधन हैं। कई प्रकार की मिट्टियां पाई जाती हैं। जो भिन्न-भिन्न प्रकार की फसलों को उपजा सकती हैं और मानवीय शक्ति भी दूसरे देश में ठीक प्रकार के साथ प्रयोग नहीं हुआ।

**11. तकनीकी शिक्षा की कमी** (Lack of technical education) : भारत में स्कूलों, कॉलेजों में विद्यार्थियों को साधारण ज्ञान ही दिया जाता है। तकनीकी शिक्षा और व्यावहारिक काम (Practical Work) करने के विकास को बहुत कम ध्यान दिया जाता है। शिक्षा खत्म करने के बाद विद्यार्थी नौकरी की खोज में भटकते रहते हैं। उनमें योग्यता और कुशलता नहीं होती कि वह स्व:-रोज़गार (Self-employment) के साथ अपना काम शुरू कर सके।

### गरीबी हटाने के लिए सुझाव
### (Suggestions for the removal of poverty)

भारत में गरीबी को हटाने के लिए निम्नलिखित सुझाव हैं :

**1. विकास की दर में वृद्धि** (Increase in the rate of growth) : भारत में गरीबी का एक मुख्य कारण विकास की धीमी दर है। गरीबी को दूर करने के लिए विकास की दर को बढ़ाना ज़रूरी है।

**2. कृषि का विकास** (Development of agriculture) : गरीबी को दूर करने के लिए कृषि का विकास करने की खास कोशिशें की जानी चाहिए। कृषि उत्पादन की तेज़ विकास दर ग्रामीण क्षेत्र की गरीबों के साथ-साथ शहरी गरीबों को दूर करने में सहायक होगी। कृषि का यंत्रीकरण और आधुनीकरण किया जाना चाहिए। उन्नत बीज सिंचाई के साधनों और रासायनिक और कंपोस्ट खाद का खास प्रयोग किया जाना चाहिए। छोटे किसानों को ठीक प्रकार की आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए। भूमिहीन किसानों को भूमि दी जानी चाहिए।

**3. साधारण उपभोग वाली वस्तुओं के उत्पादन में बढ़ौतरी** (Increase in the production of goods for mass consumption) : अगर उपभोग में बढ़ौतरी से शहरी और गरीबों को लाभ दिलवाती है तो आम उपभोग की वस्तुओं जैसे कपड़ा, वनस्पति साबुन, तेल, चीनी का उत्पादन करने वाले उद्योगों का विकास ज़रूरी है। इन उद्योगों को सार्वजनिक और सरकारी क्षेत्र में भी स्थापित किया जाना चाहिए। इनके साथ वस्तुओं की पूर्ति बढ़ेगी और कीमतें कम होंगी। इस कारण लोग इन वस्तुओं का अधिक उपयोग कर सकेंगे।

**4. कीमत स्तर में स्थिरता** (Stability in price level) : भारत में गरीबी कम करने के लिए स्थिरता होना ज़रूरी है। जो कीमतों में तेज़ी के साथ बढ़ावा होता रहेगा तो गरीब लोगों का जीवन और भी निम्न होता जाएगा। कीमत स्थिरता लाने के लिए खास और आम वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाना चाहिए। इसलिए यह ज़रूरी है कि देश के उद्योग पूरी शक्ति के साथ काम करते रहें। उद्योगों में हड़तालें और तालाबंदियां नहीं होनी चाहिए। बिजली और कच्चे माल की पूर्ति को उद्योगों की ज़रूरत अनुसार नियमित किया जाना चाहिए। कीमत स्तर को स्थिर रखने के लिए चोर बाज़ारी (Black market) आदि असामाजिक कामों पर कंट्रोल लगाया जाना चाहिए। "आम उपभोग वस्तुओं" पर टैक्स नहीं लगाने चाहिए और उनका बंटवारे का 'राशन की दुकान' (Fair prices shopes) और सहकारी स्टोरों के द्वारा प्रबंध होना चाहिए।

**5. जनसंख्या की बढ़ौतरी पर रोक** (Check on increase in population) : भारत में विशेष रूप के साथ गरीबी की जनसंख्या बहुत तेजी के साथ बढ़ती जा रही है। जनसंख्या की वार्षिक बढ़ावा दर 1.34% है। गरीबी को दूर करने के लिए जनसंख्या में होने वाले बढ़ावे को कम करना बहुत ज़रूरी है। इसलिए परिवार नियोजन के विषय में ज्यादा प्रचार किया जाना चाहिए।

**6. रोज़गार में बढ़ौतरी** (Increase in employment) : गरीबी दूर करने के लिए रोज़गार और छुपी हुई बेरोज़गारी को दूर करने के लिए विशेष कोशिशें की जानी चाहिए। भगवती कमेटी ने इस संबंध में कई सुझाव दिए हैं। ग्रामीण क्षेत्र में रोज़गार बढ़ाने के ज्यादा अवसर हैं, उनका पूरा लाभ उठाना चाहिए। कृषि का विकास करके ज़मीन पर एक से ज्यादा फसलें उगाने के फलस्वरूप अर्थ बेरोज़गारी और छिपी हुई बेरोज़गारी कम होगी। ग्रामीण क्षेत्र में कुटीर उद्योग निर्माण आदि के कामों का विकास किया जाना चाहिए। शहरों में छोटे उद्योग यातायात आदि का अधिक विकास किया जाना चाहिए। शिक्षा की प्रणाली में परिवर्तन करके पढ़े-लिखे बेरोज़गारों को काम देना चाहिए। सरकार को गरीब व्यक्तियों को आत्म-रोज़गार के अवसर प्रदान करने चाहिए।

**7. उत्पादन की तकनीक में परिवर्तन** (Change in technique of production) : भारत के लिए पूंजी प्रधान (Capital Intensive) अपनाई जानी चाहिए। हमें अपनी अर्थव्यवस्था इस प्रकार तकनीकी (Technical) विकास करना चाहिए जिसके साथ मेहनत का पूरा उपयोग हो सके। वास्तव में भारत के लिए (Intermediate technology) जो



मेहनत प्रधान और पूँजी प्रधान तकनीक के बीच का रास्ता है, को अपनाया जा सकता है। इसके फलस्वरूप रोज़गार की मात्रा बढ़ेगी और गरीबी को दूर किया जा सकेगा।

**8. आय का समान बंटवारा** (Equal distribution of income) : भारत में केवल उत्पादन बढ़ाने और जनसंख्या में कमी के साथ ही गरीबी दूर नहीं की जा सकती। इसलिए यह ज़रूरी है कि आमदनी के बंटवारे की असमानता दूर हो और धन के केन्द्रीयकरण को रोका जा सके। सरकार टैक्स प्रणाली, लाईसैंस प्रणाली और ठीक मौद्रिक और कीमत नीति के द्वारा आमदनी को रोकने की कोशिश कर सकती है।

**9. बचत और निवेश में वृद्धि** (Increase in savings and investment) : सरकार को आकर्षक बचत योजनाएँ चलानी चाहिए। इस बचत को उत्पादक क्षेत्रों में निवेश किया जाना चाहिए। इसके साथ पूँजी निर्माण को प्रोत्साहन मिलेगा, रोज़गार के मौके मिलेंगे, राष्ट्रीय आमदनी के अवसर पैदा होंगे। राष्ट्रीय आमदनी और प्रति व्यक्ति आमदनी में वृद्धि होगी और गरीबी की समस्या का हल होगा।

**10. ग्रामीण विकास के लिए विशेष योजना** (Special scheme for rural development) : गांवों में गरीबों की बढ़ती दर को ध्यान में रखते हुए गांवों के विकास के लिए खास योजनाएं चलाई जानी चाहिए। गांवों में जनसंख्या का दबाव ज्यादा है। साक्षरता-दर कम है और रोज़गार के अवसर कम हैं। इसलिए गांवों में गरीबी को दूर करने के लिए ज्यादा यत्न किए जाने चाहिए। जैसे सड़क निर्माण, ऊर्जा निर्माण, सिंचाई योजनाएं, पुल निर्माण आदि के कार्यक्रम शुरू किए जाने चाहिए। इसके साथ गांवों के लोगों को इन कार्यक्रमों में रोज़गार मिलेगा, गांवों का विकास भी होगा और ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी भी दूर होगी।

## सरकार के द्वारा गरीबी को दूर करने के उपाय
## (Measures undertaken by the Government for Poverty Alleviation)

गरीबी की समस्या के समाधान के लिए सरकार ने जो उपाय अपनाएं हैं वो निम्नलिखित हैं :

**1. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वै-रोज़गार योजना** (Swaran Jayanti Gram Swarozgar Yojna) : देश के ग्रामीण क्षेत्रों से गरीबी और बेरोज़गारी को खत्म करने के लिए 1999 में स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वैरोज़गार योजना शुरू की गई है। इस योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र में छोटे-छोटे उद्यम स्थापित किए जाएंगे। इस योजना में व्यक्तिगत तोर पर रोज़गार की व्यवस्था करने के साथ-साथ सामूहिक रूप के साथ उद्यम स्थापित करने के लिए आत्म सहायता समूह (Self help group) दी जाएगी। इस योजना के अंतर्गत छूट व्यक्तिगत उद्यम की लागत की 30% और आत्म सहायता समूहों के लिए 50% है। इस योजना का खर्च केन्द्रीय और राज्य सरकारों 75 : 25 के अनुपात में करती है। इस योजना का उद्देश्य गरीबी रेखा के नीचे से ऊपर उठाने में मदद देना है। इस योजना में मार्च 2006-07 तक

12 : 36 लाख स्वै-रोज़गार को 1,141 करोड़ रुपए की बैंक साख सहूलतें उपलब्ध करवाई गईं।

**2. संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना** (Sampoorna gramin rozgar yojna-SGRY) : संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना सितम्बर 2011 में शुरू की गई थी। इसके अंतर्गत वह सारे ग्रामीण लोगों को जिसकी रोज़गार की ज़रूरत है और जो अकुशल शारीरिक काम गांवों के नज़दीक करने के लिए तैयार है उनको काम दिया जाएगा। इस कार्यक्रम के अंतर्गत पंचायतों राज्य संस्था के द्वारा पूरा किया जाएगा। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों (i) अधिक मज़दूरी के मौके प्रदान करना (ii) अनाज सुरक्षा (iii) स्थायी सम्पत्ति सामाजिक और आर्थिक परिसम्पत्ति का सृजन और (iv) बुनियादी ढांचे (Basic infra-structure) का विकास करके रोज़गार के अवसरों को पैदा करना।

**3. प्रधानमंत्री रोज़गार योजना** (Prime-minister's Rozgar Yojna-PMRY) : यह योजना शिक्षित बेरोज़गार नौजवानों को रोज़गार देने के लिए बनाई गई है। वर्ष 2006-07 में 2.32 लाख पढ़े-लिखे नौजवानों को 1,405 करोड़ रुपए की राशि उपलब्ध करवाई गई।

**4. स्वर्ण जयन्ती शहरी रोज़गार योजना** (The Swaran Jayanti Shahri Rozgar Yojana) : इस योजना की शुरूआत दिसम्बर 1997 से हुई है। इस योजना का उद्देश्य शहरी बेरोज़गारी नौजवानों को रोज़गार देने के लिए बनाई गई है। इसके अतिरिक्त अपूर्ण रोज़गार वाले लोगों को स्वै-रोज़गार प्रदान करवाना है। इसके अंतर्गत दो योजनाएं शामिल हैं :

(i) शहरी स्वै-रोज़गार प्रोग्राम (Urban Self Employemnt Programme-USEP)

(ii) शहरी वेतन रोज़गार प्रोग्राम (Urban Wage Employment Programme-UWEP)

शहरी स्वै-रोज़गार प्रोग्राम में एक व्यक्ति अपना काम या व्यापार चलाकर लाभ कमाता है जबकि शहरी वेतन रोज़गार प्रोग्राम में एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति या संस्था के पास कर्मचारी की तरह काम करता है और अपने काम के बदले मजदूरी/वेतन प्राप्त करता है।

इस योजना का 87.5% खर्च केन्द्रीय सरकार और 12.5% खर्च राज्य सरकार देगी। 2003-04 में इस योजना पर 103 करोड़ रुपए खर्च किया गया है और 30 हज़ार लोगों को UMEP के अंतर्गत रोज़गार दिया गया है।

**5. राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना** (National Rural Employment Guarantee Scheme) : दिसम्बर 2004 में सरकार ने संसद में राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी बिल पेश किया। इस रोज़गार गारंटी योजना को फरवरी 2006 में देश के 200 ज़िलों में लागू किया गया। इस योजना में कम-से-कम मजदूरी 60 रुपए प्रतिदिन तय की गई है।



यह योजना प्रत्येक वित्तिय साल में गांवों में रह रहे गरीबों को कम-से-कम 100 दिनों का वेतन रोज़गार प्राप्त करवाने की गारंटी देती है। 2007-08 में इस योजना में 2.57 करोड़ लोगों को रोज़गार उपलब्ध करवाया जाएगा। वर्ष 2008-09 में इस योजना को देश के सारे 596 ज़िलों में लागू किया जाएगा।

**6. बीस सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम** (Twenty Point Programme) : आम जनता को खुशहाल बनाने के लिए गरीबी के बंधन से 1982 मुक्त करवाने के लिए नया बीस सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम शुरू किया गया है। इस कार्यक्रम के 20 सूत्र हैं : (1) सिंचाई सर्मथा में वृद्धि (2) दालों और तिलहन के उत्पादन में बढ़ौतरी (3) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम का विस्तार (4) भूमि की अधिकतम सीमा का निर्धारण (5) कृषि मजदूर को न्यूनतम मजदूरी (6) बंधुआ मजदूरों का पुनर्वास (7) अनुसूचित जातियों और जन-जातियों के कार्यक्रमों का विकास (8) गांवों में पीने के साफ पानी की व्यवस्था (9) ग्रामीण क्षेत्रों में मकानों की व्यवस्था (10) गंदी बस्तियों का सुधार (11) वनों और गोबर गैस का विकास (12) बिजली की सर्मथा का विकास (13) परिवार नियोजन (14) प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना (15) औरतों और बच्चों के लिए कल्याण कार्यक्रम (17) उचित कीमतों दुकानों और सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विकास (18) सरल औद्योगिक नीति (19) काले धन की रोकथाम (20) सार्वजनिक उद्योगों का कुशल प्रबंध।

**7. सार्वजनिक उद्योगों वाली सार्वजनिक बंटवारा प्रणाली** (Targeted public distribution system) : गरीबी रेखा से नीचे रह रहे ऐसे परिवार जो निश्चित और योजना में लाभ प्राप्त नहीं कर रहे, उनको इस प्रणाली में शामिल किया गया है। इस प्रणाली में प्रत्येक परिवार को 35 किलो ग्राम खाद्य पदार्थ सस्ती दरों पर उपलब्ध करवाया जाता है। गेहूँ की हालत में यह 4.15 रुपए प्रति किलो ग्राम और चावल की कीमत 5.65 रु. प्रति किलोग्राम निर्धारित की गई है।

**8. आम आदमी बीमा योजना** (Aam Admi Bima Yojna-AABY) : वर्ष 2007 में सरकार द्वारा ग्रामीण भूमिहीन परिवारों के लिए यह योजना शुरू की गई है। इस योजना के अंतर्गत परिवार का मुखिया या एक कमाऊ मैंबर का बीमा किया जाएगा। इस बीमा पॉलिसी का प्रिमियम 200 रुपए प्रति वर्ष होगा। जिसका 50% केन्द्रीय सरकार और बाकी 50% सरकार देगी।

**9. और योजनाएं** (Other Schemes) : (i) अकाल पीड़ित और प्राकृतिक आपदाओं के साथ प्रभावित क्षेत्रों के लिए विशेष कार्यक्रम चलाए गए हैं।

(ii) गरीब परिवारों के बच्चों को स्कूल में आकृषित करने के लिए दोपहर के मुफ्त खाने (Mid-day-meal) की योजना चलाई गई। इस योजना में प्रति बच्चा प्रतिदिन 100 ग्राम मुफ्त खाद्य पदार्थ दिया जाता है। कुछ स्कूलों में भोजन पका कर दिया जाता है। इस प्रकार गरीबों के बच्चे शिक्षा ग्रहण करके भविष्य में आय आमदनी को बढ़ा सकेंगे।

गरीबी समाप्त करने के लिए काफी मात्रा में चाहे धन खर्च करके कई प्रकार की योजनाएं बनाई गई है परन्तु अगर हम देखें तो 70 वर्षों के बाद भी गरीबी की समस्या काफी है।

## भारतीय अर्थव्यवस्था
## (Indian Economy)

भारतीय अर्थव्यवस्था दो शब्दों भारतीय और अर्थव्यवस्था से मिलकर बना है। "भारतीय" शब्द से भाव है, भारत के साथ संबंधित समस्याएं, अर्थव्यवस्था (Economy) शब्द से भाव उन सारी क्रियाओं और प्रबंधों से है, जिसके साथ किसी देश के नागरिक भिन्न-भिन्न और सामूहिक रूप में अपनी आर्थिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करते हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था से भाव उस ढांचे से है जिसके अधीन भारत की सारी आर्थिक क्रियाओं और आर्थिक समस्याओं का वर्णन किया जा सकता है। यह क्रियाएं कृषि, उद्योग, सेवाओं या दूसरी प्रकार की हो सकती है। क्रियाओं का उत्पादन के साधनों की सहायता के साथ लागू किया जाता है। उत्पादन के साधन वो ज़रूरी तत्व हैं जो उत्पादन क्रिया में आपसी सहयोग करते हैं। इन साधनों का भूमि, मजदूर, पूँजी और उद्यम के रूप में वर्गीकरण किया जाता है। अर्थशास्त्र में इन धारणाओं का प्रयोग विशेष अर्थों में किया जाता है। जो निम्न प्रकार हैं :

1. **भूमि** (Land) : भूमि उत्पादन का वह साधन है जो प्रकृति द्वारा मुफ्त में प्राप्त होता है। जैसे-वन, धरती, खनिज, धरती की उपजाऊ शक्ति, जल आदि।

2. **मज़दूर** (Labour) : मज़दूर से भाव मनुष्य के उन सारे मानसिक और शारीरिक कामों से है जो धन की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं।

3. **पूँजी** (Capital) : पूँजी मनुष्य द्वारा निर्मित वह भौतिक साधन है जिसका प्रयोग और अधिक उत्पादन के लिए किया जाता है।

4. **उद्यमी** (Entrepreneur) : उद्यमी उत्पादन का वह साधन है जो आर्थिक निर्णय लेता है और जोखिम उठाता है।

इन सारे साधनों के सहयोग के साथ उत्पादन होता है। भारत के गांवों में अभी भी कुछ सीमा तक छोटे पैमाने पर सरल प्रकार का उत्पादन किया जाता है। एक छोटा किसान अपने और अपने परिवार के सदस्यों की मेहनत, अपनी भूमि पूँजी और उद्यम की सहायता के साथ फसल का उत्पादन उस प्रकार के साथ करने की कोशिश करता है। जिसकी वो सबसे लाभदायिक समझते हैं। परन्तु भारत में उत्पादन सरल तरीके के साथ-साथ जटिल तरीके के साथ भी किया जाता है। बड़े और अमीर किसान बाहरी मजदूरों को काम पर लगाकर पूँजी उधार लेकर, मशीनों और खेती की वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करके बड़े पैमाने पर खेती करते हैं। इस प्रकार बड़े पैमानों के उद्योगों का विकास होने से अब उद्योगों का स्वामित्व दस्तकारों के पास नहीं रह गया। उद्योगों में उत्पादन के जटिल साधनों का प्रयोग काफी सीमा



तक किया जाने लग पड़ा है। इसलिए आधुनिक युग में उत्पादन से भाव उत्पादन करने के लिए ज़रूरी साधन प्रदान करने वाले लोगों के संयुक्त प्रयोजनों से है। इनके संयुक्त प्रयोजनों के नतीजों से किसी अर्थव्यवस्था में जो उत्पादन होता है उसका बंटवारा उन्हीं साधनों में उनकी सेवाओं के बदले कर दिया जाता है। मजदूर के हिस्से की मजदूरी, भू-स्वामी के हिस्से को लगान, पूंजीपति के हिस्से को ब्याज और उद्यमी को लाभ कहा जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में जो कुछ भी उत्पादन होता है वह अर्थव्यवस्था में व्यक्तिगत उत्पादकों और उद्यमियों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं का कुल जोड़ होता है। इसको घरेलू-उत्पादन कहा जाता है। असल में इस संबंध में अर्थशास्त्री निम्नलिखित धारणाओं का प्रयोग करते हैं :

### कुल घरेलू उत्पादन
### (Gross Domestic Product)

कुल घरेलू उत्पादन से भाव एक लेखा साल दौरान एक देश की घरेलू सीमा के अंदर उत्पन्न हुआ अन्तिम वस्तुओं और सेवाओं के बाजार मूल्य का जोड़ है। घरेलू उत्पादन का अनुमान लगाते समय जिस वस्तु का किसी दूसरी वस्तु के उत्पादन में प्रयोग किया गया हो उस वस्तु भाव मध्यवर्ती वस्तु के मूल्य की दोबारा गणना नहीं करनी चाहिए।

**शुद्ध घरेलू उत्पादन** (Net Domestic Product) : शुद्ध घरेलू उत्पादन, कुछ घरेलू उत्पादन और मूल्य घिसावट का अंतर है।

**शुद्ध घरेलू उत्पादन कुल घरेलू उत्पादन-मूल्य घिसावट**

**शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद** (Net National Product) : शुद्ध राष्ट्रीय उत्पादन शुद्ध घरेलू उत्पादन और विदेशी से प्राप्त शुद्ध आमदन का जोड़ है। इसको राष्ट्रीय आमदनी भी कहा जाता है। क्योंकि यह एक साल के दौरान देश के लोगों को प्राप्त लगान, लाभ, मज़दूरी और ब्याज के रूप में प्राप्त आय के जोड़ के बराबर होती है। भारत की राष्ट्रीय आय में मज़दूर और वेतन का हिस्सा 42%, ब्याज का 8.6%, लगान का 3.5%, लाभ का 6.2% और मिश्रित आमदनी का 39.7% है। किसी राष्ट्र की राष्ट्रीय आमदनी की जनसंख्या के साथ भागफल देने से प्रतिव्यक्ति आय ज्ञात की जा सकती है। इसलिए प्रतिव्यक्ति आमदनी से भाव है एक वर्ष में किसी देश के लोगों को प्राप्त होने वाली औसत आमदनी अर्थात्

$$\text{प्रति व्यक्ति आमदनी} = \frac{\text{राष्ट्रीय आमदनी}}{\text{जनसंख्या}}$$

### भारतीय अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताएं
### (Main Basic Features of Indian Economy)

भारतीय अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताओं को निम्न चार्ट द्वारा दर्शाया गया है :

**मुख्य विशेषताएं**

| I. आर्थिक आधार पर | II. सामाजिक आधार पर | III. राजनीतिक आधार पर |
|---|---|---|
| 1. मिश्रित अर्थ व्यवस्था के रूप में | 1. जनसंख्या विस्फोट रूप | 1. संघीय रूप में |
| 2. विकासशील रूप | 2. बेरोज़गारी और अर्थ बेरोज़गारी | 2. नयी आर्थिक नीति |
| 3. नियोजित अर्थ-व्यवस्था | 3. अर्थ-बेरोज़गारी | |
| | 4. सामाजिक सुविधाएं | |
| | संयुक्त परिवार प्रणाली | |

## I. आर्थिक आधार पर विशेषताएं

**1. मिश्रित अर्थव्यवस्था के रूप में :** भारतीय अर्थव्यवस्था एक मिश्रित अर्थव्यवस्था है। भारतीय अर्थव्यवस्था कम से कम दो अर्थों में मिश्रित है।

(क) भारत में व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों क्षेत्र ही साथ-साथ क्रियाशील हैं।

(ख) भारत में दोहरी अर्थव्यवस्था है अर्थात् एक तरफ आधुनिक उद्योग क्षेत्र है और दूसरी तरफ पिछड़ा हुआ खेती और परंपरागत लघु और कुटीर औद्योगिक क्षेत्र।

मिश्रित अर्थव्यवस्था की नीति के फलस्वरूप देश के आर्थिक विकास के लिए बहुत सारे प्राथमिक उद्योग जैसे कि इस्पात, मशीनों, रसायन आदि की स्थापना में जनतक क्षेत्र ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। सन् 1951 में जनतक क्षेत्र में केवल 29 करोड़ रुपए की पूंजी लगाई गई थी। जबकि सन् 2006-07 में बढ़कर 6,65,124 करोड़ रुपए की है। भारतीय अर्थव्यवस्था में अब भी सार्वजनिक क्षेत्र का महत्त्व निजी क्षेत्र की तुलना में कम है। 1991 के बाद लागू की गई उदारवादी आर्थिक नीति के परिणामस्वरूप निजी क्षेत्र का महत्त्व और अधिक हो गया है। इसके लक्षण अभी तक एक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के साथ ज्यादा मिलते हैं।

**2. विकासशील अर्थव्यवस्था :** भारतीय अर्थव्यवस्था अब एक विकासशील अर्थव्यवस्था है जो भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में लगातार विकास के मार्ग पर बढ़ती जा रही है।

भारत में परंपरागत ग्रामीण क्षेत्र पाया जाता है। जिसकी प्रधान आर्थिक क्रिया खेतीबाड़ी है। एक छोटा सा आधुनिक क्षेत्र शहरों में पाया जाता है। जिसकी प्रधान आर्थिक क्रिया उद्योग और वित्तिय सेवाएं हैं। यह क्षेत्र धीरे-धीरे विकसित हो रहा है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के रूप में भारत की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं :

(i) राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में लगभग 5% प्रति वर्ष की विकास दर और प्रति व्यक्ति आय में भी 15% की विकास दर (ii) पूंजी निर्माण में वृद्धि (iii) खेती उत्पादन में तीन गुणा वृद्धि (iv) संसार का 10वां सबसे अधिक औद्योगिक देश (v) आधारभूत संरचना का



विकास (vi) विदेशी व्यापार का विकास।

संक्षेप में, भारतीय अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास की दृष्टि से एक विकासशील अर्थव्यवस्था है।

**3. नियोजित अर्थव्यवस्था**—स्वर्गवासी प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के मार्गदर्शन में भारत सरकार ने देश के आर्थिक विकास के उद्देश्य की तेज गति के साथ प्राप्त करने के लिए आर्थिक योजनाओं का रास्ता अपनाया है। 11वीं योजना 1 अप्रैल, 2007 में लागू की गई है। यह योजना 31 मार्च, 2012 को समाप्त होगी।

पंचवर्षीय योजनाओं के फलस्वरूप भारत की अर्थव्यवस्था में पहले के मुकाबले सुधार हुआ है। इसलिए भारत की अर्थव्यवस्था को विकासशील अर्थव्यवस्था (Developing Economy) कहा जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था की एक नियोजित विकासशील अर्थव्यवस्था के रूप में मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं :

**1. राष्ट्रीय आय या आर्थिक विकास में बढ़ावा (Increase in national income or economic development)**—राष्ट्रीय आय में बढ़ावा आर्थिक विकास का प्रतीक है। भारत में आर्थिक नियोजन से पहले राष्ट्रीय आय में केवल 0.5% प्रतिवर्ष की वृद्धि दर थी। इस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था एक गतिहीन अर्थव्यवस्था (Stagnant economy) थी। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान सन् 1950-51 से सन् 2006-07 तक राष्ट्रीय आय की औसत बढ़ावा दर 4.8% प्रतिवर्ष रही है। जबकि राष्ट्रीय आय की वास्तविक दर उसके उद्देश्य 7.6 से कम रही है। परन्तु इसके फलस्वरूप अर्थव्यवस्था की गतिहीनता टूटने में काफी सफलता मिली है। 11वीं योजना के दौरान राष्ट्रीय आय की दर 9% प्राप्त करने का उद्देश्य निर्धारित किया गया है।

**2. प्रति व्यक्ति आय में बढ़ावा (Increase in per capital income)**—आजादी से पहले लगभग 50 वर्षों से समय (1950-51) में भारत की प्रति व्यक्ति आमदनी में केवल 1% वार्षिक से भी कम की बढ़ौतरी हुई है। आज़ादी के बाद चाहे अर्थव्यवस्था की योजनाओं से गति मिली है परन्तु प्रति व्यक्ति आय में बढ़ौतरी की दर लगभग असंतोषजनक रही। वर्ष 1950-51 से 2006-07 के समय में प्रति व्यक्ति वार्षिक बढ़ावा दर 2.5% रही।

**3. पूंजी निर्माण की दर में बढ़ावा (Increase in the rate of capital)**—प्रत्येक देश के आर्थिक विकास में पूंजी निर्माण का बहुत महत्त्व होता है। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान पूंजी निर्माण की दर में बहुत वृद्धि हुई है। पूंजी निर्माण की दर बचत और निवेश की दर पर निर्भर करती है। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान बचत और निवेश की दर में काफी वृद्धि हुई है। वर्ष 1950-51 में पूंजी निर्माण दर कुल घरेलू उत्पाद का 8.7% थी। वर्ष 2005-07 में पूंजी निर्माण की दर बढ़कर कुल घरेलू उत्पादन का 35.9% हो गई है।

**4. कृषि में संस्थागत सुधार और हरित क्रान्ति (Institutional reforms in agriculture and green revolution)**—खेती के विकास के लिए भूमि सुधार किए

गए हैं। चाहे यह भूमि सुधार पूर्ण रूप से लागू नहीं किए गए हैं, परन्तु इस बात को मानना पड़ेगा कि सीमित भूमि सुधारों ने भी उन्नत कृषि के लिए वातावरण तैयार किया है। वर्ष 1966 से खेती के तकनीकी विकास पर जोर दिया गया है। इसके फलस्वरूप हरित क्रान्ति हो सकी है। योजनाओं के दौरान खाद्य पदार्थों का उत्पादन तीन गुणा बढ़ गया है। योजनाओं के दौरान कृषि क्षेत्र में काफी विकास हुआ है। अनाज का उत्पादन बढ़कर 2,161 लाख टन हो गया। 1950-51 में सिंचाई क्षेत्र बढ़कर 42.6% हो गया है। योजनाओं में कृषि उत्पादन में औसतन 2.6% प्रतिवर्ष बढ़ावा हुआ है। अच्छे बीजों, कीटनाशकों और खादों की प्राप्ति बढ़ी है।

**5. उद्योगों का विकास (Development of industries)**—योजनाओं के फलस्वरूप औद्योगिक क्षेत्र में काफी सफलता मिली है। देश के आधारभूत और पूंजीगत उद्योगों जैसे कि लोहा, इस्पात, मशीनरी, खाद, रसायन आदि उद्योगों का काफी विकास हुआ है। सार्वजनिक क्षेत्र में भी उद्योगों का विस्तार किया गया है। उपभोग के संबंध में देश लगभग आत्म निर्भर हो चुका है। उद्योगों का विविधिकरण और आधुनिकीकरण किया गया है। उपभोग उद्योगों के संबंध में देश लगभग आत्मनिर्भर किया गया है। औद्योगिक उत्पादन की समर्था में काफी बढ़ावा हुआ है। योजनाओं के फलस्वरूप भारत में औद्योगिक क्षेत्र में काफी अधिक विकास हुआ है। वर्ष 2007-08 में औद्योगिक उत्पादन की बढ़ावा दर 9.4% रही।

**6. सामाजिक सुविधाएं (Social facilities)**—देश की सामाजिक सुविधाएं जैसे कि शिक्षा, चिकित्सा, सेहत, परिवार नियोजन आदि का काफी विकास हुआ है।

**(i) मृत्यु दर**—1951 में 40.8 प्रति हजार की तुलना में 2006 में कम होकर 7.5 प्रति हजार ही रह गई।

**(ii) औसत आयु**—1960 में 32 वर्ष से अधिक होकर 2006-07 में 65.4 वर्ष हो गई।

**(iii)** मलेरिया, पोलियो जैसी कई भयानक बिमारियां को अब सामान्यत: पर समाप्त कर दिया गया है।

**(iv) अनुसंधान (Research)**—राष्ट्रीय प्रयोगशाला और अनुसंधान केन्द्रों की लड़ी स्थापित हो गई है।

**(v) शिक्षा**—1951 ई० की तुलना में स्कूलों में विद्यार्थियों की तुलना 3 गुणा बढ़ गई है। मैडीकल कालेजों, इंजीनयरिंग कालेजों, यूनिवर्सिटियों की संख्या और प्रबंध संस्थाओं की संख्या में बहुत वृद्धि हुई है।

**(vi) स्वास्थ्य**—अस्पतालों, डाक्टरों, विस्तारों, नर्सों की संख्या भी काफी बढ़ी है। परिवार नियोजन संबंधी भी काफी विधियां हैं।

**7. धन और आय के बंटवारे में असमानता (Unequal distribution of income and wealth)**—भारत में एक तरफ तो प्रति व्यक्ति आय कम है और दूसरी तरफ धन और



जायदाद के बंटवारे में बड़ी असमानता मिलती है। **वर्ल्ड डिवलपमैंट रिपोर्ट** (World development report) 2008-09 के अनुसार भारत की जनसंख्या के सबसे अधिक गरीब 20% लोगों को राष्ट्रीय आय का केवल 8.1% हिस्सा मिलता है। जबकि सबसे ज्यादा अमीर 20% लोगों को राष्ट्रीय आय का 45.3% हिस्सा मिलता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि संसार के कई देशों जैसे कि जापान, अमरीका, इंग्लैंड आदि में आमदनी और धन की आय बंटवारे के फलस्वरूप व्यक्तियों ने आमदनी के बहुत सारे हिस्से को बचाकर पूंजी निर्माण में निवेश किया है। इसके फलस्वरूप आर्थिक विकास की दर में बढ़ावा हुआ है। परन्तु भारत में धन और आय बंटवारे करके पूंजीनिर्माण को विशेष मदद नहीं मिली। इसका मुख्य कारण यह है कि भारत में अमीर आदमी अपनी जायदाद को शान-शौकत की चीजें, हीरे, जवाहरात, सोने, चांदी आदि खरीदने में खर्च कर देते हैं। इनके फलस्वरूप पूंजी निर्माण के लिए बहुत कम पैसा बचता है।

भारत में योजनाओं के समय में आय और धन के बंटवारे न बराबरी में कमी होने की जगह बढ़ौत्तरी हुई है।

**8. निर्यात प्रोत्साहन, विविधिकरण और आयात प्रतिस्थापन (Export promotion, diversification and import substitution)**—योजनाकाल में न केवल निर्यातों में बढ़ावा हुआ है। बल्कि निर्यात मदों में विविधिकरण भी हुआ है। अब केवल प्राथमिक उत्पादों (Primary products) का हो निर्यात नहीं किया जाता, बल्कि निर्यात उत्पादों, इंजीनयरिंग उत्पादन, वस्त्रों, साफ्टवेयर सेवाओं आदि का भी निर्यात किया जाता है। आयात प्रतिस्थापन का आर्थिक योजनाओं की एक प्राप्ति है। लोहा-इस्पात, मशीनरी, रासायनिक खादों उच्च क्वालिटी के बीजों आदि का उत्पादन अब घरेलू अर्थव्यवस्था में ही किया जाता है। इसके साथ आयातों में अब निर्भरता कम हुई है। इसके साथ भुगतान संतुलन में भी सुधार आया है। 1950-51 में विदेशी व्यापार की मात्रा 1,250 करोड़ थी। 2006-07 में बढ़कर 14,12,285 करोड़ रुपए हो गई। 1950-51 में कुल आयात 650 करोड़ रुपए था। साथ ही 2006-07 में बढ़कर 8,40,506 करोड़ रुपए था। इस प्रकार आयात लगभग 1,293 गुणा बढ़ा। 1950-51 में भारत का निर्यात 600 करोड़ रुपए था। 2006-07 में बढ़कर 5,71,799 करोड़ रुपए हो गया। इस प्रकार निर्यात में 953 गुणा वृद्धि हुई।

**9. सार्वजनिक उद्यम (Public enterprises)**—भारतीय अर्थव्यवस्था एक मिश्रित अर्थव्यवस्था है। इस मिश्रित अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्र का बहुत महत्त्व होता है। भारत सरकार की औद्योगिक नीति का उद्देश्य देश में समाजवादी ढांचे के समाज की स्थापना करनी है। इस उद्देश्य की प्राप्ति और तेज़ गति के साथ देश का औद्योगिक विकास करने के लिए भारतीय सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तार को महत्त्व दिया। 1991 की नई औद्योगिक नीति में सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के क्षेत्र में सीमित किया गया है। देश के कुल उत्पादन में सार्वजनिक क्षेत्र का भाग वर्ष 2005-06 में 25% था। वर्ष 2006-07 में 217 सार्वजनिक उद्यम काम कर रहे हैं। 2006-07 में सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग का शुद्ध लाभ बढ़कर

81,850 करोड़ रुपए हो गया। पर फिर भी निजी क्षेत्रों की इकाइयों की तुलना में सार्वजनिक उपकरणों की लाभ दर कम है।

**10. निजी क्षेत्र का योगदान (Contribution of Private sector)**–1991 ई० की औद्योगिक नीति में निजी क्षेत्र की भूमिका को बढ़ावा दिया गया है। वर्ष 1971 में लगभग 30461 हज़ार निजी कंपनियां थी। वर्ष 2006 में इनकी संख्या बढ़कर 7,30,817 हो गई। 2005-06 में कुल घरेलू उत्पादन में सार्वजनिक क्षेत्र का 23% भाग था जबकि निजी क्षेत्र का हिस्सा 77% था। 2007-08 में कुल पूंजी निर्माण में सार्वजनिक क्षेत्र का 22% हिस्सा था। जबकि निजी क्षेत्र का हिस्सा 78% था।

## II. समाजिक आधार और विशेषताएं

सामाजिक आधार पर भारतीय अर्थव्यवस्था की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

**1. जनसंख्या का दबाव (Pressure of population)**–भारत में संसार की लगभग 17% जनसंख्या रहती है। जबकि भारत का क्षेत्रफल संसार के क्षेत्रफल का केवल 2.4% है। इस प्रकार भारत में प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धि कम है। भारत में एक तरफ तो प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धि कम है और दूसरी तरफ कृषि पर जनसंख्या का दबाव बहुत ज्यादा है। 1981 की जनगणना के अनुसार, भारत की जनसंख्या 68.33% था। 1991 में यह बढ़कर 84.63 करोड़ हो गई। 2001 में जनसंख्या 102.37 करोड़ हो गई। हर वर्ष जनसंख्या में लगभग 1.80 करोड़ व्यक्तियों का बढ़ावा हुआ है। 2007-08 में भारत की जनसंख्या बढ़कर 113.80 करोड़ हो गई है। आबादी के बढ़ावे की दर अधिक होने से देश में अन्न और रोज़गार की समस्याएँ पैदा होती रहती हैं। आबादी के यह दबाव आर्थिक विकास के रास्ते में एक बड़ी रूकावट हैं।

**2. बेरोज़गारी (Unemployment)**–भारत में बेरोज़गारी और अर्धरोज़गार की समस्या में एक बहुत जटिल और गंभीर समस्या है। भारत में 2004-05 में बेरोज़गारी की संख्या 3.47 करोड़ था। दिसंबर 2006 में भारत में 947 रोज़गार दफ्तरों में 4.20 करोड़ रजिस्टर्ड थे। यह अनुमान है कि वर्ष 2006-07 के अंत तक अर्थव्यवस्था में बेरोज़गारी की दर और कृषि उत्पादन में विकास की एक ऐसी नींव स्थापित करने में सफलता मिली जिसके ऊपर गरीब जनता के सुख और खुशहाली की इमारत अधिक आसान विधि के साथ बढ़ाई जा सकती है।

## भारतीय अर्थव्यवस्था के मुख्य क्षेत्र
## (Main sectors of Indian economy)

*किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को सही ढंग से जानने के लिए इसके प्रमुख क्षेत्रों का अध्ययन बहुत ज़रूरी होता है। क्षेत्रों का वर्गीकरण कई मापदंडों के आधार पर किया जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था को भिन्न-भिन्न आधारों पर निम्नलिखित क्षेत्रों में बांटा जा सकता है :*



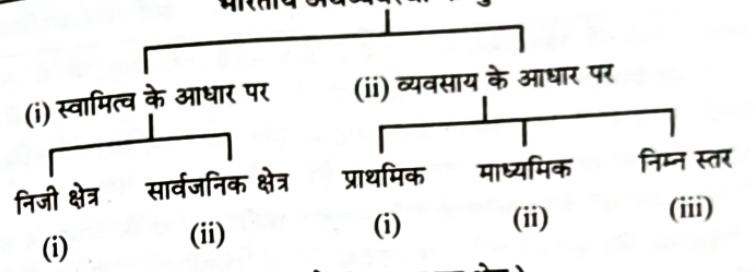


### स्वामित्व के ( आधार पर क्षेत्र )
### (Sectors on the basis of ownership - Private and public sectors)

भारतीय अर्थव्यवस्था को **स्वामित्व** के आधार पर दो क्षेत्रों में बांटा जा सकता है :

**(i) निजी क्षेत्र (Private Sector)**–निजी क्षेत्र वह क्षेत्र है। जिसके ऊपर निजी व्यक्तियों और संस्थाओं का स्वामित्व होता है। जिनकी स्वामित्व और प्रबन्ध निजी व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य के साथ किया जाता है।

"निजी क्षेत्र से भाव उन व्यक्तिगत इकाइयों और व्यापारिक निगमों से है जो उत्पादन क्रियाओं के साथ संबंधित होते हैं और जिनकी स्वामित्व और प्रबंध निजी मनुष्य लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य के साथ करते हैं।"

(Private sector refers to all these individuals units or corporations engaged in production which are owned by private individual and managed by them for profit motive)

निजी क्षेत्र व्यक्ति उद्यमी, सांझेदारी और संयुक्त पूँजी कंपनियों के रूप में विकसित हुआ है।

भारत में निजी क्षेत्र में चार प्रकार की उत्पादित संस्थाएं शामिल की जाती हैं। 1. ग़ैर संगठित उद्यमी जैसे कि किसान, जुलाहे, दस्तकार, सुनार, कारीगर, प्रचून और थोक विक्रेता आदि। 2. **लघु उद्योग**–भारत में लघु उद्योग उनको कहते हैं जिन उद्योगों में 60 लाख रुपए तक के मूल्य की स्थिर पूँजी का प्रयोग किया जाता है। 3. **सहायक उद्योग (Ancilitary industries)**–उनको कहा जाता है कि जिनमें 74 लाख रुपए तक की स्थिर पूंजी का निवेश होता है। 4. **बड़े पैमाने के उद्योग**–जैसे टाटा इस्पात, दिल्ली क्लाथ मिल आदि। भारत में कृषि, कुटीर और लघु उद्योग लगभग पूरी तरह निजी क्षेत्र में है।

1956 की औद्योगिक नीति के अनुसार, भारत में उद्योगों को तीन हिस्सों में बांटा गया था–(क) अनुसूची 'ए' (schedule 'A') में 17 प्राथमिक उद्योगों जैसे इस्पात, पैट्रोलियम, रेलवे हवाई जहाज यातायात आदि को रखा गया। ऐसे उद्योगों की स्थापना केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही की जा सकती है। (ख) अनुसूची 'बी' (schedule 'B') में 12 उद्योगों जैसे– खाद, सड़क, यातायात, मशीनरी, औजार आदि रखे गए हैं। इस क्षेत्र की नई इकाइयों को

स्थापना निजी और सार्वजनिक क्षेत्र दोनों में ही हो सकती है। (ग) अनुसूची 'सी' (sched 'C') ऊपरलिखित 29 उद्योगों को छोड़कर बाकी सारे उद्योगों को पूरी तरह निजी उद्योगों लिए छोड़ दिया गया। पहली दो अनुसूचियों के पुराने उद्यम जैसे टाटा स्टील जिनको नि क्षेत्र में आरम्भ किया गया था उनको निजी क्षेत्र में ही रहने दिया गया।

1991 की नई औद्योगिक नीति अनुसार राष्ट्रीय महत्त्व के केवल 8 उद्योगों सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सुरक्षित रखकर बाकी सारे उद्योगों को निजी क्षेत्र के लिए खो दिया गया। 1971 में लगभग 30461 हज़ार कंपनियां थी परन्तु वर्ष 2006 में इनकी संख बढ़कर 7,30,817 हो गई है। टाटा, बिरला, रिलांयस, थापर, सिंघानिया, लारस्क, ट्रे मोदी, बजाज, ओसवाल, ऐगरो आदि ने काफी उन्नति की है और इनकी सम्पत्ति में बढ़ा बढ़ावा हुआ है।

**(ii) सार्वजनिक क्षेत्र (Public sector)**—सार्वजनिक क्षेत्र से भाव उस क्षेत्र से जिसके ऊपर सरकार का स्वामित्व होता है। जिसकी व्यवस्था और प्रबंध सरकार के द्वा होता है। 1951 में सार्वजनिक क्षेत्र के केवल 5 उद्योग थे जिनमें 29 करोड़ रुपए की पूंज निवेश की गई थी। 1994-95 में इनकी संख्या बढ़कर 240 हो गई है। जिनमें 1,60,00 करोड़ रुपए की पूंजी निवेश की गई थी। आजादी के बाद भारत में सार्वजनिक क्षेत्र का काफ विकास हुआ है। कई महत्त्वपूर्ण उद्योग जैसे–भिलाई इस्पात कारखाना, नंगल खाद कारखान हिंदोस्तान मशीन टूल आदि। कई वित्तिय संस्थाओं जैसे भारतीय रिज़र्व बैंक, भारतीय जीव बीमा निगम, इंडियन ऐयर लाईनज़, भारतीय रेलवे, भारतीय खाद निगम, स्टेट ट्रेडिंग निगम, यूनिट ट्रस्ट आदि की स्थापना सार्वजनिक क्षेत्र में की गई है। 1994-95 में घरेलू उत्पादन में सार्वजनिक क्षेत्र का भाग 24% और पूंजी निर्माण में 46% थी।

निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों के अतिरिक्त भारत में दो प्रकार के और क्षेत्र पाए जाते हैं।

**1. सहकारी क्षेत्र (Co-operative sector)**—इस क्षेत्र में सहकारी समितियों और उपकरणों को शामिल किया जाता है। भारत में सहकारी बैंक, सहकारी चीनी मिलों, सहकारी उपभोक्ता भंडार आदि स्थापित किए गए हैं। इस क्षेत्र में लोग समानता और आपसी सहयोग के आधार पर काम करते हैं।

**2. संयुक्त क्षेत्र (Joint sector)**—संयुक्त क्षेत्र वह क्षेत्र है जो सार्वजनिक और निजी क्षेत्र दोनों के सहयोग के साथ स्थापित किया जाता है। भारत में उद्यम संयुक्त क्षेत्र में स्थापित किए गए हैं।

भारत की आर्थिक उन्नति में सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। 2007-08 में कुल पूंजी निर्माण में सार्वजनिक क्षेत्र का हिस्सा 22% था और निजी क्षेत्र का हिस्सा 78% था। सातवीं पंचवर्षीय योजना के बाद से निजी क्षेत्र का योगदान सार्वजनिक क्षेत्र से बढ़कर हो गया है।



## व्यवसाय के आधार के क्षेत्र–प्राथमिक, माध्यमिक और निम्न
## (Sectors on the Basis of Occupations-Primary, Secondary and Tertiary)

केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन ने भारत की आर्थिक क्रियाओं को निम्नलिखित हिस्सों में बांटा है–

**1. प्राथमिक क्षेत्र (Primary sector)**—प्राथमिक क्षेत्र वह क्षेत्र है जिसमें प्राकृतिक साधनों का प्रयोग करके वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। इस क्षेत्र में कृषि और संबंधित क्रियाओं, मछली उद्योग, खनिज और खादान (Quarrying) आदि शामिल किए जाते हैं। यह सारे उपक्षेत्र प्राकृतिक साधनों जैसे भूमि, पानी, जंगल, खानों आदि का प्रयोग करके वस्तुओं का उत्पादन करते हैं।

**2. माध्यमिक क्षेत्र (Secondary sector)**—माध्यमिक क्षेत्र वो क्षेत्र है जिसमें उद्यम से एक अच्छी प्रकार की वस्तुओं को दूसरी प्रकार में परिवर्तन करते हैं। इस क्षेत्र को निर्माण क्षेत्र (manufacturing) भी कहते हैं। इस क्षेत्र के उद्यमी एक प्रकार की वस्तु को दूसरी प्रकार में बदल देते हैं जैसे कपास से कपड़ा बनाना या गन्ने से चीनी बनाना। इस क्षेत्र में उद्योग, निर्माण, यातायात आदि शामिल किए जाते हैं।

**3. निम्न क्षेत्र (Tertiary sector)**—वह क्षेत्र है जो सेवाओं का उत्पादन करता है। इसको सेवा क्षेत्र (Service sector) कहा जाता है। इस क्षेत्र के उद्यमी केवल सेवाओं का उत्पादन करते हैं जैसे बैंकिंग उत्पादन-क्रिया में सहयोग प्रदान करती है। उदाहरण के तौर पर मूल्य के क्षेत्र में कच्चा माल भिन्न-भिन्न कारखानों में पहुंचाने के लिए ट्रकों और गाड़ियों की जरूरत पड़ती है। इसके अतिरिक्त वस्तुओं के आदान-प्रदान के लिए हमें बातचीत करने के लिए संचार साधनों जैसे कि टैलीफोन, पत्र, अखबारों आदि की ज़रूरत पड़ती है। या फिर बैंकों से कर्जा लेने की जरूरत होती है। संचार के साधन बैंक सेवाएं, यातायात के साधन आदि सेवा क्षेत्रों की उदाहरणें हैं। यह क्रियाएं इनको सेवा क्षेत्र भी कहा जाता है।

विकसित देशों में सेवा क्षेत्र का उनकी राष्ट्रीय आमदनी में योगदान औसतन 65% माध्यमिक क्षेत्र का 30% और प्राथमिक क्षेत्र का योगदान लगभग 5% होता है। पहले भारत में प्राथमिक क्षेत्र का राष्ट्रीय आमदनी में योगदान अधिक था। वर्ष 1950-51 में प्राथमिक क्षेत्र का राष्ट्रीय आमदनी में 61% योगदान था। प्राथमिक क्षेत्र पर इतनी निर्भरता अर्थव्यवस्था की अल्पविकसिता की तरफ संकेत करती है। अब भारत में तीसरे क्षेत्र का राष्ट्रीय आमदनी में योगदान बढ़ रहा है। वर्ष 2007-08 में तीसरे क्षेत्र का राष्ट्रीय आमदनी में योगदान 56% माध्यमिक क्षेत्र का 26.8% और प्राथमिक क्षेत्र का योगदान 17.2% था। राष्ट्रीय आमदनी के संरचनात्मक ढांचे में प्राथमिक क्षेत्र का कम होता है। योगदान और सेवा क्षेत्र का बढ़ता हुआ योगदान एक साकारात्मक परिवर्तन है। अब हमारी राष्ट्रीय आमदनी में बदलाव का अधिक योगदान विकसित सेवा क्षेत्र को जाता है।

### भारतीय अर्थव्यवस्था के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों का महत्त्व और आपसी निर्भ
### (Significance of the various sectors and their interdependenc

भारतीय अर्थव्यवस्था के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के आपसी संबंध और आपसी नि निम्नलिखित दिए हुए कारणों के लिए महत्त्वपूर्ण है–

**1. अर्थव्यवस्था की प्रकृति का ज्ञान (Knowledge of the nature of economy)**–अर्थव्यवस्था के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में बांट के साथ उसकी प्रकृति की प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए, भारतीय अर्थव्यवस्था के सार्वजनिक और निजी बांट करने के साथ यह पता चलता है कि यह एक मिश्रित अर्थव्यवस्था है। इसी प्र पेशावर बांट के अनुसार यह पता चलता है कि यह एक विकासशील अर्थव्यवस्था है यहां प्राथमिक क्षेत्र में उत्पादन की परम्परागत विधियों का प्रयोग होता है। जबकि माध्य क्षेत्र में आधुनिक विधियों का प्रयोग होता है। तीसरे क्षेत्र में दोनों विधियों का प्रयोग होत भारतीय अर्थव्यवस्था में एक तरफ बैंकिंग और हवाई यातायात जैसे आधुनिक तत्व हैं, तरफ महाजन और बैल-गाड़ियों जैसे परंपरागत तत्त्व भी मौजूद हैं।

**2. आर्थिक साधनों के स्वामित्व का ज्ञान (Knowledge ownership economic resources)**–भारतीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक साधनों पर निजी क्षेत्र का ही स्वामित्व है। अभिप्राय भारतीय अर्थव्यवस्था में पूंजीवाद और समाजवाद दोनों विशेषताएं पाई जाती हैं। निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में आपसी निर्भरता पाई जाती है। निजी क्षेत्र की जैसे कंपनी जैसे–दिल्ली क्लाथ मिल, कपड़े का उत्पादन करती है। उ वित्त के लिए बैंकों पर, यातायात के लिए रेलवे और सड़कों पर, बिजली के लिए बि बोर्ड पर निर्भर रहना पड़ता है। यह सारे उपक्रम सार्वजनिक क्षेत्र में आते हैं। इसी प्रकार अगर सार्वजनिक क्षेत्रों की कंपनियां जैसे–नैशनल टैक्सटाईल कार्पोरेशन कपड़े का उत्प करती है। उसको कपास के लिए किसानों और मशीनों के लिए कपड़ा मशीन उद्योगों निर्भर रहना पड़ता है। यह सारे उपक्रम निजी क्षेत्र के उद्यम हैं। इसी प्रकार सार्वजनिक और निजी क्षेत्र आपस में संबंध और आपसी निर्भरता पाई जाती है।

**3. विकास के स्तर का ज्ञान (Knowledge of the level of development)**–अर्थव्यवस्था की आर्थिक क्रियाओं के रूप में बांट करने के साथ आर्थिक विकास के स्तर ज्ञान प्राप्त होता है। भारत में और तीसरे क्षेत्र की क्रियाओं का बढ़ता हुआ महत्त्व विकास तरफ बढ़ रही अर्थव्यवस्था का प्रतीक है। अर्थव्यवस्था की आपसी आर्थिक क्रियाओं निर्भरता पाई जाती है। प्राथमिक क्षेत्र कच्चा माल–जैसे कपास, गन्ना, लोहा, कोयला आ का उत्पादन करता है जिनका प्रयोग माध्यमिक क्षेत्र के उद्योगों में तैयार माल जैसे–कपड़ चीनी आदि का उत्पादन करने के लिए किया जाता है। इसी प्रकार ही माध्यमिक क्षेत्र खाद मशीनरी कीटनाशक दवाईयों आदि का उत्पादन करता है जो प्राथमिक क्षेत्र के उत्पादन लिए जरूरी है। तीसरे क्षेत्र के द्वारा एक तरफ प्राथमिक और माध्यमिक दोनों क्षेत्रों को सेवाएं दी जाती है। दूसरी तरफ इन दोनों क्षेत्रों के उत्पादन जैसे प्राथमिक क्षेत्र के उत्पाद



खाद पदार्थ और माध्यमिक क्षेत्र के उत्पादन इमारतों और मशीनरी का प्रयोग तीसरे क्षेत्र के द्वारा किया जाता है। इस प्रकार यह क्षेत्र एक दूसरे पर निर्भर है और एक ही उत्पादकता दूसरे क्षेत्र की उत्पादकता को प्रभावित करती है।

**4. जीवन स्तर का ज्ञान (Knowledge of standard or living)**–अर्थव्यवस्था के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में बांट करने के साथ जीवन स्तर का ज्ञान प्राप्त होता है। साधारणतौर पर शहरी क्षेत्र का जीवन स्तर ग्रामीण क्षेत्र में अनाज और कच्चे माल का उत्पादन करने वाले गाँव और शहरी क्षेत्र में तैयार माल का उत्पादन करने वाले कस्बे आपस में निर्भर रहते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी देश का आर्थिक विकास सारे क्षेत्रों के विकास पर निर्भर रहता है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक क्षेत्र का उत्पादन दूसरे क्षेत्रों में उनकी क्षेत्र की प्रगति में रूकावट बन जाएगा। उसकी उत्पदकता और प्रति व्यक्ति आय कम है इसके परिणामस्वरूप अनाज और कच्चे माल का उत्पादन कम होता है और तैयार माल की मांग कम होती है। इसका नतीजा यह हुआ कि शहरों को उचित कीमतों और मात्रा में अनाज और कच्चा माल नहीं मिलता। इसी प्रकार उनके तैयार माल की बिक्री नहीं होती। इसलिए शहरी क्षेत्र का तेज़ गति के साथ विकास नहीं होता। इस प्रकार सारी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए सारे क्षेत्रों का संतुलित विकास आवश्यक है।

## वैश्वीकरण
## (Globalization)

### वैश्वीकरण एक सामान्य परिचय
### (Globalization–A General Introduction)

आज वैश्वीकरण का युग है। इस युग में देश-देश के बीच की सीमा गायब हो रही है और पूरा संसार एक गाँव सा प्रतीत हो रहा है। 'Globalization' शब्द हिंदी भाषा में भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, ग्लोबीकरण और जगतीकरण आदि नामों से जाना जाता है। आज समाज में होने वाली सारी गतिविधियों को वैश्वीकरण के सन्दर्भ में देखा जाता है। समाज, संस्कृति और राष्ट्रों के बीच जो दूरी थी, उसे कम करना वैश्वीकरण का लक्ष्य है। संसार को विश्व ग्राम और विश्व परिवार में बदलना इसका उद्देश्य हो गया है। चाहे यह वैश्वीकरण नाम नया हो, लेकिन इसकी शुरुआत पुराने ज़माने में हुई थी। मानव नागरिकता के समान वैश्वीकरण भी बहुत प्राचीन है। मानव समाज के बीच की दूरी को कम करने का प्रयास बहुत पहले ही हुआ था।

### वैस्वीकरण का अर्थ
### (Meaning of Globalization)

आधुनिक काल में पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था जिस तरह आपस में जुड़ी हुई है उसे वैश्वीकरण या ग्लोबलाइजेशन् कहते हैं। उदाहरण के लिये माइक्रोसॉफ्ट को लीजिए।

माइक्रोसॉफ्ट का हेडक्वार्टर अमेरिका में है। इस कंपनी के सॉफ्टवेअर के कुछ अंश भारत और अन्य कई देशों में बनते हैं। माइक्रोसॉफ्ट के सॉफ्टवेअर पूरी दुनिया में इस्तेमाल किये जाते हैं। अमेरिका का फोर्ड मोटर एक अन्य उदाहरण हो सकता है। फोर्ड की कारें चेन्नई में बनती हैं और चेन्नई में बनी कारें बिक्री के लिये कई देशों तक जाती हैं। इसके अलावा इस कंपनी के गियर बॉक्स किसी अन्य देश में बनते होंगे, सीट बेल्ट किसी और देश में, लाइट, रियर व्यू मिरर किसी अन्य देश में बनते होंगे। कार के लगभग सभी पार्ट अलग-अलग वेंडर द्वारा फोर्ड मोटर को सप्लाई किये जाते हैं जिन्हें एक साथ जोड़कर कार बनाई जाती है।

इन सभी क्रियाकलापों से पूरी दुनिया में रोजगार के अवसर पैदा होते हैं। इससे पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था प्रभावित होती है। आप भी किसी अन्य उत्पाद या सेवा के बारे में सोच सकते हैं जिसका उत्पादन दुनिया के विभिन्न भागों में होता है। इससे विश्व भर की अर्थव्यवस्थाओं में परस्पर निर्भरता का जन्म होता है।

## वैश्वीकरण का विकास
## (Development of Globalization)

प्राचीन समय से ही विश्व व्यापार ने कई तरीकों से लोगों को जोड़ने का काम किया है। आपने प्राचीन सिल्क रूट का नाम सुना होगा। सिल्क रूट ने एशिया को दुनिया के अन्य भागों से जोड़ने का काम किया था। इस ट्रेड रूट ने न केवल सामान की आवाजाही में मदद की बल्कि लोगों और विचारों को भी एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाया था। यदि भारत से शून्य दुनिया के अन्य भागों तक पहुँचा तो पाश्चात्य पोशाकें भारत में आईं। आज हम जिस तरह से पिज्जा और नूडल खाना पसंद करते हैं उसी तरह विदेशों के लोग चिकन टिक्का और करी खाना पसंद करते हैं।

वैश्वीकरण के शुरुआती दौर में एशिया से कच्चा माल निर्यात होता था और यूरोप से उत्पादों का आयात होता था। लेकिन उन्नीसवीं सदी के मध्य से चीजें बदलने लगीं थी।

बीसवीं सदी के मध्य से आखिर तक के दौर में कई कंपनियों ने विश्व के विभिन्न भागों में अपने पैर फैला लिये और इस तरह वे बहुराष्ट्रीय कंपनियां बन गईं।

## वैश्वीकरण के तीन मुख्य कारण
## (Three Main Causes of Globalization)

**1. खर्च कम करने की आवश्यकता (Need to Reduce Spending)**—मान लीजिए कि किसी कंपनी को कोई काम करवाना है। उसके लिये पहला विकल्प होगा कि अपने देश में ही काम करवाया जाये जहाँ इसकी लागत अधिक आयेगी। अगला विकल्प होगा कि उस काम को किसी ऐसे देश में करवाया जाये जहाँ इसकी लागत कम आयेगी। यह साफ है कि कोई भी कम्पनी दूसरे विकल्प को चुनेगी। भारत, मलेशिया, चीन और ताइवान में कच्चे माल कम कीमत पर उपलब्ध हैं और इन देशों में मजदूर भी सस्ते में मिल जाते हैं। इससे उत्पादन की लगत कम हो जाती है और कम्पनी को बेहतर मुनाफा होता है। इसलिये



जब आप कोई कम्प्यूटर खरीदते हैं तो उसके कुछ पार्ट मलेशिया या ताइवान में बने होते हैं, प्रोसेसर भारत में बना होता है और सॉफ्टवेयर अमेरिका से आता है। अंतिम उत्पाद उस देश में बनता है जहाँ इसे बेचा जाना है।

**2. नये बाजार की तलाश (Seeking New Market)**—यदि घरेलू बाजार के ज्यादातर ग्राहकों ने किसी उत्पाद को खरीद लिया है और वहाँ अब न के बराबर खपत होने की संभावना हो तो कम्पनी को अपना बिजनेस बढ़ाने के लिये कोई न कोई योजना बनानी पड़ेगी। किसी नये बाजार में नये ग्राहकों को तैयार करके बिक्री बढ़ाई जा सकती है। आज के दौर में विश्व की कुल आबादी का एक चौथाई हिस्सा चीन और भारत में रहता है। ऐसे में जो भी कम्पनी अधिक बिक्री चाहती है। वह इन दो महत्त्वपूर्ण बाजारों को नजर अंदाज नहीं कर सकती। इसे समझने के लिये किसी गाँव का उदाहरण लेते हैं। यदि किसी गाँव में पैदा हुई सारी सब्जियों को केवल उसी गाँव में बेचना संभव हो तो बहुत ज्यादा ग्राहक नहीं मिलेंगे। ऐसे में सब्जियाँ बहुत सस्ते दर पर बिकेंगी और बरबाद भी होंगी। अच्छी कीमत के लिये उस गाँव के सब्जी वालों को अधिक ग्राहक की तलाश में शहर की और जाने की जरूरत पड़ेगी।

**3. ग्राहकों को कई विकल्प उपलब्ध करवाना (To Provide Multiple Options to Customers)**—कुछ वर्षों पहले तक ज्यादातर देश स्थानीय उद्योग धंधे को बढ़ावा देने के लिये भारी आयात शुल्क लगाते थे ताकि बाहर का सामान कम से कम आ पाये। वैसी नीतियां ट्रेड बैरियर का उदाहरण थी जिन्हें जानबूझ कर लगाया जाता था। लेकिन वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन ने सभी सदस्य देशों को ट्रेड बैरियर घटाने के लिये सहमत कर लिया। डब्ल्यू टी ओ का मानना है कि पूरी दुनिया में बेरोकटोक आर्थिक अवसर मिलने चाहिये। भारत में 1991 में उदारवादी नीतियों की शुरुआत होने से कई बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने भारत में अपना काम शुरू किया। उसके परिणाम आज सबके सामने हैं। पहले एक कार खरीदने का मतलब होता था एंबेसडर या प्रीमियर पद्मिनी और एक दोपहिया वाहन का मतलब होता था बजाज स्कूटर या राजदूत मोटरसाइकिल। आज लोगों के पास कार या बाइक खरीदने के लिये कई विकल्प हैं।

## वैश्वीकरण के प्रभाव
## (Effects of Globalization)

वैश्वीकरण के दोनों सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव हैं एक व्यक्ति के स्तर पर, वैश्वीकरण जीवन के स्तर और जीवन की गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करता है। व्यावसायिक स्तर पर, वैश्वीकरण एक संगठन के उत्पाद जीवन चक्र और एक संगठन की बैलेंस शीट को प्रभावित करता है। वैश्वीकरण यह भी प्रभावित करता है कि दुनिया भर में सरकारें मौद्रिक विनियमन और व्यापार जैसे क्षेत्रों को प्रभावित करने वाली नीतियां कैसे बनाती हैं।

**1. व्यक्तिगत प्रभाव (Individual Effects)**—एक व्यक्ति के स्तर पर, वैश्वीकरण ने दुनिया भर के व्यक्तियों और परिवारों के जीवन की गुणवत्ता और जीवन के स्तर को

प्रभावित किया है। विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र में एक विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक वर्ग के लिए उपलब्ध जीवन स्तर, स्तर की संपत्ति, आराम, भौतिक वस्तुओं और आवश्यकताएं हैं। जीवन की गुणवत्ता वह डिग्री है जिसके लिए एक व्यक्ति को अपने जीवन की महत्त्वपूर्ण संभावनाओं का आनंद मिलता है। कई उदाहरणों में, विकासशील देशों में रहने वाले लोगों के लिए जीवन की गुणवत्ता में सुधार हुआ है। कई विकासशील देशों के लिए, वैश्वीकरण ने निगमों के वैश्विक विस्तार के कारण बेहतर सड़कों और परिवहन, बेहतर स्वास्थ्य देखभाल और बेहतर शिक्षा के माध्यम से जीवन स्तर के सुधार में सुधार किया है। हालांकि, वैश्वीकरण का विकास उन देशों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है जो विकसित देशों में रहते हैं। यह इस तथ्य के कारण है कि निगमों के पास अब उन देशों में विनिर्माण संचालन स्थापित करने का विकल्प है जहां उत्पादन और उत्पादन लागत कम महंगे हैं।

**2. कॉर्पोरेट प्रभाव (Corporate Effects)**—कार्पोरेट स्तर पर, वैश्वीकरण का संगठन उत्पाद या सेवा जीवन चक्र पर प्रभाव पड़ा है। उत्पाद जीवन चक्र उस समय की अवधि है, जिस पर एक आइटम विकसित किया जाता है, बाजार में लाया जाता है और अंतत: विश्व बाजार से निकाल दिया जाता है।

कार्पोरेशन की बैलेंस शीट पर वैश्वीकरण का नकारात्मक प्रभाव हो सकता है। एक निगम की बैलेंस शीट पर नकारात्मक प्रभाव पड़ने वाले वैश्वीकरण का एक उदाहरण संयुक्त राज्य इस्पात उद्योग में पाया जा सकता है। साल के लिए, एशियाई देशों से स्टील संयुक्त राज्य अमेरिका में आ गई है। संयुक्त राज्य अमेरिका में निर्मित इस्पात की तुलना में एशियाई राष्ट्रों का यह स्टील सस्ता है। नतीजतन, कई निगमों और संगठनों को स्टील की आवश्यकता होती है, जो कि उनके सामान्य का निर्माण करती है, अमेरिकी स्टील पर एशियन स्टील को अपनी उत्पादन लागत कम करने के लिए खरीदती है। अमेरिकी स्टील कंपनियों के बैलेंस शीट्स पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

**3. सरकारी प्रभाव (Government Effects)**—वैश्वीकरण यह भी प्रभावित करता है कि सरकारें अपने राष्ट्र की मौद्रिक नीतियां कैसे तैयार करती हैं। मौद्रिक नीति एक केंद्रीय बैंक, मुद्रा बोर्ड या अन्य नियामक समिति की कार्रवाइयां होती हैं जो मुद्रा आपूर्ति की वृद्धि और आकार की दर निर्धारित करती है, जो बदले में ब्याज दरों को प्रभावित करती है। वैश्वीकरण यह भी प्रभावित करता है कि सरकारें अपनी व्यापार नीतियों का निर्धारण कैसे करती हैं—व्यापार नीतियां मानकों, लक्ष्यों, नियमों और नियम हैं जो देशों के बीच व्यापार संबंधों से संबंधित हैं। ऐसी नीतियों को डिजाइन करते समय सरकारों को सही संतुलन मिलना चाहिए।

***निष्कर्ष* (Conclusion)**—वैश्वीकरण एक ऐसी वास्तविकता है जिसे हम नकार नहीं सकते। वैश्वीकरण से नुकसान की तुलना में फायदे अधिक हुए हैं। विश्व के अर्थशास्त्रियों और नीति-निर्धारकों को अपनी नीतियों में सुधार करने की जरूरत है ताकि वैश्वीकरण के लाभ जनमानस तक पहुँच सकें। जब वैश्वीकरण से विकास के हर पैमाने की प्राप्ति हो



जायेगी तभी वैश्वीकरण को सफल माना जायेगा। ये पैमाने न केवल धन कमाने को लेकर हैं, बल्कि सबके लिये अच्छी स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, सुरक्षा और जीवन स्तर के बारे में भी हैं।

## मुद्रास्फीति और अपस्फीति (Inflation & Deflation)

### मुद्रास्फीति

### (Inflation)

भारत की एक और गंभीर समस्या कीमत-वृद्धि या मुद्रा-स्फीति की समस्या है। कीमत के लगातार बढ़ने की प्रवृत्ति को मुद्रा-स्फीती (Inflation) कहा जाता है। भारत में 1960 से 1995 तक कीमतों में 12 गुणा बढ़ावा है। इसका अर्थ यह है कि 1960 में एक रुपए के साथ जितना सामान खरीदा जा सकता था। अब वह 1995 में 12 रुपए के साथ खरीदा जा सकता था। भारत में औसतन प्रति वर्ष कीमतें 9% की दर से बढ़ती हैं। कीमत बढ़ावा इंसाफ रहित होता है। क्योंकि इसके परिणामस्वरूप समाज के गरीब वर्ग को अमीर वर्ग की तुलना में अधिक मुश्किलें उठानी पड़ती हैं। जब कीमतों में बढ़ौतरी होती है तो लाभ में भी बढ़ौतरी होती है परन्तु बढ़ी आमदनी वाले वर्ग (Fixed income group) के लोगों की आमदनी नहीं बढ़ती और मजबूरी में भी कीमतों की तुलना में कम बढ़ौतरी होती है। वह अपनी आमदनी के साथ पहले से कम वस्तुएं खरीद सकते हैं। उनका जीवन स्तर निम्न हो जाता है और उनकी मुश्किलें बढ़ जाती हैं। इसलिए कीमतों में बढ़ौत्तरी के कारण देश में बेरोज़गारी और गरीबी जैसी समस्याएं और भी बढ़ जाती हैं। कीमत बढ़ौत्तरी मुख्य रूप से दो प्रकार की होती हैं : (i) मांग प्रेरित और (ii) लागत प्रेरित मांग प्रेरित कीमत बढ़ावे में उत्पादों की मांग बढ़ने के कई कारण हो सकते हैं जैसे-जनसंख्या में वृद्धि, बढ़ती मौद्रिक आमदनी, बढ़ता काला धन, मुद्रा पूर्ति में वृद्धि, घाटे की वित्त व्यवस्था आदि। लागत प्रेरित कीमत वृद्धि में उत्पादन लागत बढ़ने के साथ कीमत में वृद्धि होती है। वृद्धि में उत्पादन लागत बढ़ने के कई कारण हो सकते हैं जैसे-आगत की लागत में वृद्धि (Hipe in prices of inputs) अप्रत्यक्ष करों में वृद्धि, पुरानी तकनीक का इस्तेमाल आदि। कीमत-वृद्धि दर के आधार पर मुद्रा-स्फीति तीन तरह की हो सकती है। (i) रेंगती हुई स्फीति (creeping inflation), चलती हुई स्फीति (Walking inflation), सरपट दौड़ती हुई स्फीति (Galloping inflation)

अगर कीमतों में वृद्धि दर 5 से 7 प्रतिशत वार्षिक हो तो उसकी रेंगती हुई स्फीती (Creeping inflation) कहा जाता है। अगर कीमत में बढ़ावा दर 8 से 15% है तो इसको चलती हुई स्फीती (Walking ifnlation) कहा जाता है। आज भी हमारा देश रेंगती हुई स्फीती की अवस्थी से गुजर रहा है। कीमतों में अधिक वृद्धि निम्न और मध्यम आमदनी स्तर के लोगों को बुरी तरह प्रभावित करता है। जनता के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए और दूसरे सार्थक उद्देश्यों को पाने के लिए सरकार कीमत वृद्धि में नियंत्रण रखने के लिए कोशिशें

करती है। सरकार मौद्रिक स्फीती को भी बढ़ावा देती है। मुद्रा स्फीती की समस्या भी जटिल समस्या है। भारत जैसे देश के लिए विकास के साथ-साथ कीमत स्थिरता का उद्देश्य प्राप्त करना जरूरी हो जाता है।

## कीमत वृद्धि के प्रभाव
## (Effects of price-rise)

भारत में कीमत वृद्धि काफी हानिकारक सिद्ध हुई है। कीमत वृद्धि के मुख्य प्रतिकूल प्रभाव निम्नलिखित हैं–

**1. आर्थिक विकास पर प्रभाव (Effect on economic development)**–कीमतों का बहुत तेजी के साथ बढ़ना भारत के आर्थिक विकास के लिए उचित नहीं है। इसका निवेश और बचत पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

**2. विदेशी निवेश के प्रभाव (Effect on foreign investment)**–कीमत में वृद्धि का विदेशी निवेश पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। विदेशी निवेशकर्ता उस देश में निवेश नहीं करते जिसमें मुद्रा की कीमत कम होती है। कीमत में वृद्धि के कारण मुद्रा की कीमत कम हो जाती है और निवेशकर्त्ता को नुक्सान होता है।

**3. मजदूरी का कुचक्र (Wage spirol)**–कीमत वृद्धि के फलस्वरूप मजदूर अधिक मजदूरी की मांग करते हैं। इसके परिणामस्वरूप कीमतों में और वृद्धि होती है। कीमतों में वृद्धि होने के कारण मजदूर मं वृद्धि होती है। इस प्रकार मजदूरी और कीमत वृद्धि में कुचक्र शुरू हो जाता है।

**4. लागत में वृद्धि (Increase in costs)**–कीमत वृद्धि के कारण सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की परियोजनाओं का लागत मूल्य बढ़ जाता है। इसके फलस्वरूप लगभग प्रत्येक योजना का खर्चा उसके उद्देश्य से बढ़ जाता है परंतु भौतिक उद्देश्यों की प्राप्ति कम हो जाती है।

**5. धन का असमान बंटवारा (Unequal distribution of wealth)**–कीमतों में वृद्धि का लाभ उत्पादकों और व्यापारियों को होता है। इसके फलस्वरूप धनी ज्यादा धनी और गरीब ज्यादा गरीब हो जाता है। देश में धन का केन्द्रीयकरण बढ़ता जा रहा है और धन के वितरण की असमानता कम होने की जगह पर बढ़ जाती है।

**6. प्रतिकूल भुगतान संतुलन (Adverse distribution of wealth)**–भारत में वस्तुओं को कीमत में वृद्धि होने के कारण निर्यात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। आयात और निर्यात का अंतर बढ़ गया है। इसके फलस्वरूप भुगतान संतुलन प्रतिकूल हो जाता है। कीमत वृद्धि के कारण निर्यात महंगे हो जाते हैं और वह दूसरे देशों की सस्ती वस्तुओं की प्रतियोगिता नहीं कर सकते। इसका निर्यात पर बुरा प्रभाव पड़ता है। निर्यात में जरूरत अनुसार वृद्धि न होने के कारण भुगतान संतुलन की प्रतिकूलता बढ़ती जाती है।



**7. भ्रष्टाचार और नैतिक पतन (Corruption and moral downfall)**– भारत में कीमत वृद्धि ने भ्रष्टाचार और नैतिक पतन को बढ़ावा मिलता है। कीमत वृद्धि के कारण नौकरी पेशा लोग विशेष रूप से सरकारी नौकरशाही जरूरतें पूरी नहीं कर पाते। वह रिश्वत और अनैतिक क्रियाओं के साथ अपनी आमदनी बढ़ाते हैं। फलस्वरूप भ्रष्टाचार पैदा होता है और नैतिक मूल्यों का अंत होता है।

## कीमत वृद्धि के कारण
## (Causes of price-rise)

किसी भी वस्तु की कीमत को निर्धारित करने वाले दो प्रमुख तत्व होते हैं। मांग और पूर्ति। अर्थशास्त्र का नियम है कि कीमत वृद्धि मांग और पूर्ति के असंतुलन का नतीजा है। भारत में कई कारणों से वस्तुओं की मांग पूर्ति की तुलना अधिक रही है। कीमत वृद्धि के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं–

**1. मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि (Increase in money supply)**–भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के कारण कुल घरेलू उत्पाद (GDP) में होने वाले वृद्धि के मुकाबले में मुद्रा की पूर्ति में अधिक हुआ है। इस कारण कीमतों में बढ़ौतरी हुई है।

**2. घाटे की वित्त व्यवस्था (Deficit financing)**–वित्त व्यवस्था का अर्थ होता है कि नये नोट छापकर सरकार के बजट में होने वाले घाटे को पूरा करना। इन नोटों की संख्या बढ़ जाने के कारण मुद्रा की पूर्ति बढ़ जाती है। अगर उत्पादन तेजी के साथ नहीं बढ़ता तो इसके फलस्वरूप कीमतें बढ़ती हैं।

**3. जनसंख्या में होने वाली वृद्धि (Increase in population)**–भारत में जनसंख्या के वृद्धि की दर 2.1% है। 1951 में जनसंख्या 34.5 करोड़ थी। इसलिए 1921 से बढ़ रही है। 1951 से जनसंख्या बहुत बढ़ गई है। 2007-08 में बढ़कर 113.8 करोड़ हो गई। जनसंख्या में बढ़ौत्तरी हो जाने के फलस्वरूप वस्तुओं की मांग काफी बढ़ जाती है। इस प्रकार जनसंख्या का कीमतों पर बुरा असर पड़ता है।

**4. रुपए का अवमूलन (Devaluation of rupee)**–अवमूलन से भाव है कि सरकार की तरफ से रुपए के मूल्य को और देशों की तुलना से कम करना। रुपए के अवमूलन के कारण भी घरेलू कीमत स्तर में वृद्धि हुई है। आजादी के बाद पहले 1949 में इसके बाद 1966 में रुपए का अवमूलन किया गया। इसके परिणामस्वरूप आयात और निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की कीमतों का बढ़ना जारी रहा। इसका यह प्रभाव पड़ा कि उन वस्तुओं की कीमतें बढ़ गई जिनका उत्पादन आयात किए गए औजारों और कच्चे माल के साथ किया जाता है। इस रुपए का अवमूलन भी कीमत वृद्धि का कारण बना।

**5. काला धन (Balck money)**–देश की महंगाई बढ़ाने में काले धन काकाफी महत्त्व है। इस धन के कारण हमारे देश में एक समानातर अर्थव्यवस्था चल रही है। जिस पर सरकार का कोई काबू नहीं है। 2006-07 में काला धन 25,00,000 करोड़ रुपए से अधिक

होने का अनुमान है। काले धन के कारण लोग विलासिता और दिखावे की वस्तुओं पर बहुत धन खर्च करते हैं। यह कीमत वृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण कारण बन जाता है।

**6. उत्पादन की कमी (Less production)**—कीमतों में वृद्धि का ठीक होने का मुख्य कारण उत्पादन की कमी है। उत्पादन कम होने से कीमतों में वृद्धि होती है। भारत में कृषि का एक बड़ा हिस्सा बारिश पर निर्भर होता है। कई बार सूखा पड़ने या फिर बाढ़ आ जाने से उत्पादन पर असर पड़ता है।

**7. तेल की कीमतों में वृद्धि (Hipe in oil prices)**—तेल की कीमतों में वृद्धि होने से सारे देशों के आयातों और निर्यातों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। संसार के लगभग सारे देशों में ही कीमतें बढ़ रही हैं। तेल की कीमतें बढ़ने से कच्चे माल की कीमतों में वृद्धि होती है। जिससे कीमतें बढ़ती हैं।

**8. कर नीति (Tax policy)**—भारत में अप्रत्यक्ष कर जैसे-बिक्री, कर, उत्पादन कर, आयात-निर्यात कर आदि के अधिकतर मात्रा में लगाए जाने से सारा भार उपभोक्ताओं पर पड़ता है और कीमतों में वृद्धि होती है।

इन कारणों से अतिरिक्त और कारण जैसे कि आय में वृद्धि होना, शहरीकरण होना या फिर रुपए का अवमूलन (Devaluation of rupee) के कारण भी कीमतों के बीच वृद्धि होती है।

### सरकार की मूल्य नीति/सरकार के द्वारा कीमतों को काबू करने के उपाय
### (Price policy of the government/government efforts to control price rise)

भारत में वर्ष 1956 के बाद कीमतें लगभग लगातार बढ़ रही हैं। सरकार ने योजनाओं में कीमतों को स्थिर रखने के लिए समय-समय पर जो उपाय अपनाए, वह निम्नलिखित हैं-

**1. मौद्रिक उपाय (Monetary measures)**—रिज़र्व बैंक ने कीमत स्थिरता के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मुद्रा की पूर्ति को नियमित किया है। मुद्रा काबू के संख्यात्मक और गुणात्मक दोनों ही उपायों को अपनाया है। बैंक दर में समय-समय पर वृद्धि की गई है। रिज़र्व बैंक अपनी मौद्रिक नीति में कीमतों को नियंत्रित करने के लिए तकनीकें इस्तेमाल करता है। जैसे बैंक दर नगद कोष अनुपात, व्यापारिक तरलता अनुपात (Statuary liquidity ratio) आदि।

उत्पादन कामों के लिए अधिक राशि दी जाती है। जबकि उत्पादन कामों के लिए दी जाने वाली राशि पर कई प्रकार के प्रतिबंध लगा दिए गए हैं।

**2. राजकोषीय उपाय (Fiscal measures)**—सरकार ने मुद्रा स्फीती को रोकने के लिए कई प्रकार के राज्यकोषी उपाय अपनाए हैं जैसे-

(i) गैर जरूरी सार्वजनिक निवेश में कमी

(ii) जनता की खरीद शक्ति कम करने के अतिरिक्त टैक्स

(iii) घाटे की वित्त व्यवस्था को कम करने का फैसला



(iv) उत्पादन बढ़ाने के लिए टैक्सी में छूट और वित्तीय सहायता

(v) अधिक विकास के लिए साधन इकट्ठे करना

(vi) गैर-जरूरी उपभोग और गैर जरूरी खर्चों को रोकना

(vii) बचत को बढ़ाने के लिए योजनाएं लागू की गई हैं। परन्तु सरकार के द्वारा अपनाए गए वह उपाय अधिक सफल सिद्ध नहीं हो सके। जब भी सरकार ने सार्वजनिक निवेश में कमी का यत्न किया है, देश में मंदी की स्थिति पैदा हो गई और बेरोज़गारी बढ़ने लगी इसके साथ ही जब भी कर अधिक मात्रा में लगाए गए, कीमतें काफी तेज़ी के साथ बढ़ी।

**3. खेती और औद्योगिक उत्पादन में बढ़ावा (Increase in agriculture and industrial production)**—सरकार ने कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए सिंचाई सुविधाओं को बढ़ाया गया है। रासायनिक खादों और उत्तम बीजों के प्रयोग में बढ़ावा किया गया है। कृषि के क्षेत्र और उत्पादकता दोनों में वृद्धि हुई है। इन कोशिशों के फलस्वरूप 2006-07 में ही अनाज का उत्पादन बढ़कर 2.161 लाख टन हो गया जबकि 1951 में केवल 550 लाख टन का उत्पादन हुआ है। उद्योगों का विकास किया है। देश में लोहे, इस्पात, मशीनरी, सीमेंट, बिजली के सामान आदि के बहुत सारे नए कारखाने लगाए हैं। उपभोग और पूंजीगत दोनों प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन में काफी बढ़ावा किया गया है। सरकार ने छोटे और कुटीर उद्योगों के विकास के लिए भी काफी सहायता प्रदान की है। परन्तु कृषि और उद्योगों के उत्पादन की दर में होने वाला बढ़ावा मांग की तुलना में कम रहा है।

**4. जरूरी उपभोग वस्तुओं के निर्यात पर रोक (Restrictions on exports of essential consumption goods)**—सरकार ने कई जरूरी वस्तुओं के निर्यात पर कर लगाए हैं और कई वस्तुओं के निर्यात पर रोक लगा दी है जिसके साथ देश के उपभोग के लिए उनकी पूर्ति में बढ़ावा हो सके। अप्रैल 2008 ने सरकार ने गैर बासमती चावल, खाद्य तेलों, दालों, सीमेंट, इस्पात आदि पर भी निर्यात पर रोक लगा दी है। सरकार ने सब्जियों और फलों के निर्यात पर भी रोक लगा दी है, दालों के निर्यात पर भी रोक लगाई है।

**5. आवश्यक उपभोग वस्तुओं का आयात (Import of essential consumption goods)**—सरकार ने देश में उपभोग की जाने वाली दालों का काफी मात्रा में आयात किया है। खाने के तेल, गेहूं, चीनी और दालों का काफी मात्रा में आयात किया गया। सरकार में तिलहन के संबंध में राष्ट्रीय खान योग्य तिलहन नीति (National edible oil policy) बनाई है। वर्ष 2008 में सरकार ने कनक, दालों, चीनी और मक्की के आयात शुल्क को कम कर दिया है।

**6. सार्वजनिक आबंटन व्यवस्था (Public distribution system)**—सरकार ने सार्वजनिक बंटवारे व्यवस्था को अधिक विशाल बनाने का यत्न किया है। व्यवस्था के अंतर्गत 4 लाख 78 हजार उचित राशन की दुकानों (Fair price shop) के द्वारा जरूरी

वस्तुओं के बंटवारे की व्यवस्था की गई है जैसे वनस्पति घी, बच्चों के दूध, मिट्टी के तेल, मोटे कपड़े के बंटवारे की व्यवस्था की गई है।

**7. जमाखोरी पर रोकथाम (Check on boarding)**—सरकार में जमाखोरी पर रोकथाम लगाने के लिए Essential commodities act के अंतर्गत कई चीजों के स्टॉक की ज्यादातर सीमा निर्धारित कर दी है। जिसके साथ जमाखोरी के विरुद्ध कठोर कदम उठाए जा सके।

**8. संस्थागत उपाय (Institutional measures)**—सरकार ने अनाज, कपास, जूट आदि की कीमतें स्थिर करने के लिए कई संस्थाओं जैसे फूड कार्पोरेशन ऑफ इंडिया (Food corporation of India), कॉटन कार्पोरेशन (cotton corporation), जूट कार्पोरेशन (Jute corporation) आदि की स्थापना की है। यह संस्थाएं अनाज और कच्चे माल की मांग और पूर्ति में तालमेल कायम रखकर कीमत स्थिरता के उद्देश्य को प्राप्त करने की कोशिश करती है।

**9. जनसंख्या नीति (Population policy)**—कीमत वृद्धि रोकने के सारे प्रयत्न असफल हो जाएंगे जनसंख्या की वृद्धि दर को नहीं रोका गया। जनसंख्या वृद्धि को नियमित करने के लिए सरकार जन्मदर को कम करने के लिए काफी प्रयत्नशील है। सरकार परिवार नियोजन को विशेष महत्त्व दे रही है।

**10. सहकारी उपभोगी स्टोरों को प्रोत्साहन (Promoting consumer stores)**-सरकार ने सहकारी उपभोगी स्टोरों की प्रोत्साहित किया है। यह स्टोर जरूरी वस्तुओं को कम कीमतों पर उपलब्ध करवाते हैं। यह स्टोर जरूरी वस्तुओं की पूर्ति में कमी को दूर इनकी नियमित पूर्ति करवाने का काम भी करते हैं। इनकी नियमित पूर्ति के साथ कीमत बढ़ावे को नियंत्रित करने में सहायता मिलती है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि सरकार के लगातार यत्नों के बावजूद भी मुद्रा स्फीती भयानक रूप धारण करके समक्ष खड़ी है। देश में राजनैतिक परिवर्तन भी इसके मार्ग में एक बड़ी रूकावट है। पिछले कुछ सालों से केन्द्र में कोई भी स्थिर सरकार नहीं आ सकी है। केवल चुनावों का ही ताना-बाना चलता रहा है। इसलिए कोई भी सही आर्थिक नीति नहीं बन सकी है।

## अपस्फीति
## (Deflation)

अर्थशास्त्र में, अपस्फीति वस्तुओं और सेवाओं के सामान्य मूल्य के स्तर में गिरावट है। अपस्फीति तभी होती है जब वार्षिक मुद्रास्फीति की दर शून्य प्रतिशत की दर से भी नीचे गिर जाती है (नकारात्मक मुद्रास्फीति दर), जिसके फलस्वरूप मुद्रा के असली मूल्य में वृद्धि हो जाती है-इससे एक क्रेता उसी राशि से अधिक माल खरीदने की सुविधा पा जाता है। इसे अवस्फीति, मुद्रास्फीति के दर में कमी (अर्थात मुद्रास्फीति की दर घट तो जाती है, लेकिन फिर भी सकारात्मक ही बनी रहती है), समझने की भूल नहीं की जानी चाहिए।



समय के साथ-साथ जैसे-जैसे मुद्रास्फीति मुद्रा के असली मूल्य में गिरावट लाती है, इसके ठीक विपरीत, अपस्फीति मुद्रा के वास्तविक मूल्य में-कार्यात्मक मुद्रा (एवं लेखा की मौद्रिक इकाई में) राष्ट्रीय अथवा क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में वृद्धि लाती है।

वर्तमान समय में, मुख्यधारा के अर्थशास्त्रियों का आमतौर पर मानना है कि अपस्फीतिकारी जटिलताओं के खतरों के कारण आधुनिक अर्थव्यवस्था में अपस्फीति एक समस्या है। अपस्फीति को आर्थिक मंदी और विश्वव्यापी मंदी से भी जोड़ा जाता है। इसके अतिरिक्त, अर्थव्यवस्था के स्थिरीकरण में अपस्फीति मौद्रिक नीति निर्धारण में एक ऐसी प्रक्रिया के तहत रूकावट पैदा करती है जिससे लिक्विडिटी ट्रैप कहते हैं। हालांकि, ऐतिहासिक रूप से अपस्फीति की सभी घटनाएं, कमजोर आर्थिक विकास के दौरे से जुड़ी नहीं हैं।

## पारंपरिक शब्दावली
## (Traditional Terminology)

पारंपरिक अर्थशास्त्रियों के द्वारा अपस्फीति शब्द का प्रयोग मुद्रा की आपूर्ति एवं ऋण में गिरावट को सन्दर्भित करने के लिए वैकल्पिक अर्थ में किया जाता था, कुछ अर्थशास्त्रियों ने जिनमें ऑस्ट्रियाई विचारधारा के अर्थशास्त्री शामिल हैं, अभी भी इस शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में करते हैं। ये दोनों अर्थ एक दूसरे के साथ संबंधित हैं, क्योंकि मुद्रा की आपूर्ति (मुद्रा की गति के अपरिवर्तित बने रहने के पूर्वानुमान के साथ) सामान्य मूल्य स्तर में गिरावट का संभावित कारण बन जाती है।

## अपस्फीति के प्रभाव
## (Effects of Deflation)

माल और ब्याज के लिए आपूर्ति और मांग वक्र रेखा में परिवर्तन, विशेषकर मांग के स्तर में कुल गिरावट के कारण अपस्फीति आती है। अर्थात् पूरी अर्थव्यवस्था में कितना क्रय करने की इच्छा में कितनी गिरावट आई है और माल की कीमतों में कितनी वृद्धि होने जा रही है। माल की कीमतें गिर रही हैं इस कारण, उपभोगताओं को खरीदारी में तब तक के लिए विलम्ब का प्रोत्साहन प्राप्त होता है जब तक कि कीमतों में और गिरावट न आए, बदले में यह समग्र आर्थिक गतिविधि को अपस्फीतिकर घुमाव देते हुए कम कर देता है।

चूंकि इस निष्क्रिय क्षमता से निवेश में भी गिरावट आती है, फलस्वरूप आगे चलकर भी कुल मांग में कटौती का कारण बन जाती है। यह अपस्फीतिकारक घुमाव है। कुल मांग की गिरावट का प्रत्युत्तर उत्साहवर्धक है या तो मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि के मार्फत केंद्रीय बैंक से हों, या फिर राजकोषीय प्राधिकारी के द्वारा मांग में वृद्धि कर निजी कंपनियों के लिए उपलब्ध ब्याज दर पर ऋण लेकर हो।

मुद्रास्फीति का विपरीत प्रभाव पड़ता है और इस प्रकार पहले ही व्यापारिक मंदी आ जाती है। उदाहरण के लिए, आवश्यक वस्तुओं की कीमतें 2008 साल की व्यापारिक मंदी से पहले ही आसमान छूने लगीं।

हाल फिलहाल की आर्थिक विचारधारा में, अपस्फीति जोखिम से जुड़ी हुई है : जब परिसंपत्तियों पर जोखिम-समायोजित प्रतिलाभ नीचे उतर कर नकारात्मक हो जाते हैं, निवेशक और क्रेता निवेश करने यहां तक कि सबसे ठोस प्रतिभूतियों में भी निवेश करने की बजाय मुद्रा बटोरेंगे और जमा करेंगे। एक केंद्रीय बैंक, सामान्यतया मुद्रा के लिए ऋणात्मक ब्याज नहीं कर सकता है और यहां तक कि शून्य ब्याज के प्रभाव से अक्सर थोड़े ऊंचे ब्याज दरों की तुलना में कम उत्साहवर्धक प्रभाव पैदा हो जाते हैं। आतंरिक अर्थव्यवस्था प्रणाली में ऐसा इसलिए होता है कि शून्य ब्याज करने का अर्थ सरकारी प्रतिभूतियों पर शून्य रिटर्न पाना होगा, अथवा अल्पावधि की परिपक्वता पर ऋणात्मक रिटर्न, खुली अर्थव्यवस्था में, यह चल व्यापार को जन्म देती है और आयात के लिए ऊंची कीमतें निर्धारित कर निर्यात को उसी दर्जे तक बढ़ावा दिये बिना मुद्रा का अवमूल्यन करती हैं।

मुद्रावादी सिद्धांत में, अपस्फीति का संबंध निरंतर घटते हुए मुद्रा वेग अथवा लेन-देन की संख्या से है। इसके लिए मुद्रा की आपूर्ति के नाटकीय संकुचन को जिम्मेदार ठहराया गया है, शायद घटती हुई विनिमय दर के प्रत्युत्तर में, अथवा स्वर्णमानक या अन्य बाह्य मौद्रिक आधारभूत आवश्यकताओं के प्रत्युत्तर में।

अपस्फीति को आमतौर पर ऋणात्मक समझा जाता है। इस अर्थ में यह मुद्रास्फीति के ठीक विपरीत है (अथवा चरम, उच्च स्फीति की दशा में), जो मुद्रा धारकों एवं उधारदाताओं (संचयकर्त्ताओं) के लिए उधारकर्त्ताओं तथा अल्पावधि खपत के पक्ष में कर लगाने के समान है। *आधुनिक* अर्थव्यवस्था में, मांग में गिरावट (जो अक्सर ऊंची ब्याज दर के कारण आती है) के कारण अपस्फीति आती है और यह मंदी से जुड़ी होती है और (शायद ही कभी) दीर्घकालिक आर्थिक मंदी से जुड़ी हो।

आधुनिक अर्थव्वस्था में, ऋण की शर्तें दीर्घायित हो गई हैं और ऋण के लिए वित्तपोषण सभी प्रकार के निवेशों के लिए आम है, अब तो अपस्फीति से जुड़े अर्थदंड भी काफी बढ़ गए हैं। चूंकि अपस्फीति निवेश को निरुत्साहित करती हैं, क्योंकि भविष्य में होने वाले लाभ पर जोखिम उठाने का कोई संगत कारण नहीं है जबकि लाभ की प्रत्याशा ही नकारात्मक है और भविष्य की कीमतों की अपेक्षा करना उम्मीद से कम है, इस कारण ही अक्सर कुल मांग में अचानक गिरावट आ जाती है। मुद्रास्फीति के 'छिपे जोखिम बिना' मुद्रा को बस पकड़े रहना, इसे न तो खर्च करना और न निवेश करना, विवेकपूर्ण हो सकता है।

बहरहाल, अपस्फीति दुर्लभ मुद्रा की अर्थव्यवस्था में स्वाभाविक दशा है जब मुद्रा की आपूर्ति की दर में वृद्धि सकारात्मक जनसंख्या की वृद्धि की दर के अनुरूप व्यवस्थित रखी जाती है। जब ऐसा घटता है, तब प्रति व्यक्ति पर दुर्लभ मुद्रा की उपलब्ध राशि घट जाती है, नतीजतन मुद्रा और भी दुष्प्राप्य हो जाती है; और इस कारण मुद्रा की प्रत्येक इकाई की क्रय करने की क्षमता बढ़ जाती है। 19वीं सदी का अंतिम भाग इन परिस्थितियों में आर्थिक विकास के साथ-साथ अनवरत आती हुई अपस्फीति का उदाहरण पेश करता है।



आमतौर पर उत्पादन की क्षमता में सुधार का कारण यह होता है कि वस्तुओं और सेवाओं के आर्थिक निर्माता उत्पादन में सुधार के फलस्वरूप मुनाफे की मार्जिन की बढ़ोत्तरी के वायदे से अभिप्रेरित होते हैं। बाजार में प्रतियोगिता अक्सर उन उत्पादकों को उनके मालों की मुंहमांगी कीमत को कम करने के लिए प्रेरित करती है जो इनमें से लागत बचत के भाग का कम से कम कुछ अंश उसमें लगाएं। जब ऐसा होता है, उपभोक्ता उन वस्तुओं के लिए कम भुगतान करते हैं और इसके फलस्वरूप अपस्फीति हो जाती है, क्योंकि क्रय करने की क्षमता बढ़ चुकी होती है।

जब किसी की मुद्रा की क्रय करने की क्षमता में वृद्धि लाभप्रद लगती है, यह वास्तव में कठिनाई पैदा कर सकता है। यह कर्ज के बोझ को भी बढ़ावा देता है चूंकि-अपस्फीति की कुछ महत्त्वपूर्ण अवधि के पश्चात-कोई करज की सेवा के लिए भुगतान करता है तो यह क्रय करने की एक बड़ी राशि को दर्शाता है न कि कर्ज जब पहली बार उद्भूत हुआ था। नतीजतन, अपस्फीति को किसी ऋण ब्याज दर की छाया के प्रवर्धन के रूप में भी माना जा सकता है। अगर संयुक्त राज्य अमेरिका की भयावह मंदी (ग्रेट डिप्रेशन) के दौरान, अपस्फीति का औसत 10% प्रतिवर्ष हो ता है, तो 0% पर ऋण भी अनाकर्षक हो जाता है क्योंकि इसे 10% के अधिक लागत मूल्य पर प्रतिवर्ष चुकाया जाना आवश्यक हो जाता है। जब अल्पकालिक ब्याज दर शून्य पर पहुंच जाती है, केंद्रीय बैंक अपनी सामान्य ब्याज दर को घटाकर अपनी नीति में लचीलापन नहीं ला सकते हैं।

मुद्रा की आपूर्ति के विनियमन की सामान्य पद्धतियां अप्रभावी हो सकती हैं, यहां तक कि अल्पावधिक ब्याज तर को शून्य कर देने पर भी परिणामस्वरूप "वास्तविक" ब्याज दर अधिक ही रहेगी; अतः मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि के लिए अन्य युक्तियों, जैसे कि परिसंपत्तियों की खरीद अथवा मात्रात्मक सहजता (मुद्रा का मुद्रण), को कारगार बनाना होगा।

नकद धन के समर्थकों का तर्क है कि अगर किसी अर्थव्यवस्था में "सख्तियां" न हो तो, अपस्फीति के स्वागत योग्य प्रभाव पड़ने चाहिए, क्योंकि कीमतों में कमी करने से अर्थव्यवस्था के प्रयास को अन्य गतिविधि वाले क्षेत्रों में स्थानांतरित किया जा सकता है, इस प्रकार अर्थव्यवस्था के कुल उत्पाद में वृद्धि हो सकती है। इस सिद्धांत की कुछ अर्थशास्त्रियों ने आलोचना की है, जो यह मानते हैं कि अगर सख्तियां नहीं होंगी तो न ही मुद्रास्फीति का और न ही अपस्फीति का उल्लेखनीय प्रभाव पड़ेगा।

### अपस्फीतिकर चक्र
### (Deflation Cycle)

*अपस्फीतिकर चक्र* एक ऐसी अवस्था है जब कीमतों में गिरावट उत्पाद को घटा देती है, जो बदले में वेतन और मांग को भी कम कर देती है जिससे आगे चलकर भी मूल्य में गिरावट आती है। चूंकि सामान्य मूल्य-स्तर में कटौतियां अपस्फीति कहलाती हैं, अतः अपस्फीतिकर चक्र तभी पैदा होता है जब कीमतों में कटौती खतरनाक चक्र को जन्म देती है जहां समस्या स्वयं ही अपने आपको बढ़ाने का कारण बन जाती है। कुछ लोग अपस्फीतिकर

क्र को ही महान मंदी की वजह मानते हैं। अपस्फीतिकर चक्र सचमुच ही विवादास्पद रूप घटित होते हैं।

### अति-मुद्रास्फीति के प्रति प्रतिक्रिया
### (Reaction towards Hyper-Inflation)

अगर अति मुद्रा-स्फीति मुद्रा को नष्ट करती है, तो लोग अन्य मुद्राओं में अपनी बचत ो बचाने की ओर अविलंब अग्रसर हो जाएंगे जिस कारण उन अन्य मुद्राओं में भी पस्फीति आ जाएगी। वैकल्पिक रूप से, अति मुद्रा-स्फीति लाने वाली नीतियों को अगर चानक उलट दिया जाये, तो संक्षिप्त समय के लिए अपस्फीति आ सकती है क्योंकि तब क लोगों में उस मुद्रा के प्रति आस्था उत्पन्न हो जाएगी।

### अपस्फीति के कारण
### (Causes of Deflation)

अर्थशास्त्र की मुख्यधारा में माल की मांग और आपूर्ति तथा मुद्रा की मांग और आपूर्ति तथा मुद्रा की मांग और आपूर्ति के संयोजन से अपस्फीति उत्पन्न हो सकती है, विशेषरूप से तब जब मुद्रा की आपूर्ति घटती जाती है और माल की आपूर्ति बढ़ती जाती है। अपस्फीति के ऐतिहासिक प्रकरण मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि के बिना ही अक्सर माल की बढ़ती हुई आपूर्ति से संबंधित हैं या माल की मांग में गिरावट के साथ मुद्रा की आपूर्ति में कमी के संयोजन से संबंधित हैं।

### अपस्फीति के आधारभूत प्रकार
### (Basic Types of Deflation)

अपस्फीति के चार प्रकार के भेद बतलाए गए हैं। दो मांग के पक्ष में हैं और दो आपूर्ति के पक्ष में–

- विकास अपस्फीति (माल की आपूर्ति में वृद्धि)
- नकदी निर्माण (जमाखोरी) अपस्फीति (नकदी की अधिक बचत, मुद्रावेग में कमी, मुद्रा की मांग में वृद्धि)
- बैंक ऋण अपस्फीति (दिवालियापन अथवा केंद्रीय बैंक के द्वारा मुद्रा की आपूर्ति में संकुचन के कारण बैंक ऋण की आपूर्ति में कमी)
- समपहारी अपस्फीति (समपहरण अथवा बैंक में जमा राशियों पर रोक लगाना) मुद्रा की आपूर्ति में कमी)

### मुद्रा की आपूर्ति के पक्ष के प्रकार की अपस्फीति
### (Deflation of the Type of Aspect of Currency Supply)

मुद्रावादी (वित्तवादी) परिप्रेक्ष्य में अपस्फीति मुख्यत: मुद्रा वेग में कमी के कारण आती है और/अथवा मुद्रा की रकम प्रति व्यक्ति मुद्रा की आपूर्ति पर निर्धारित होती है।



### ऋण अपस्फीति
### (Debt Deflation)

ऋण पर निर्भर आधुनिक अर्थव्यवस्था में, (केंद्रीय बैंक) द्वारा उच्च ब्याज दरों की शुरुआत कर अपस्फीतिकर उच्चक्र (अर्थात मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए) उत्पन्न हो सकते हैं, जिससे संभवत: परिसंपत्ति के बुलबुले झटपट टूट जाएं अथवा नियंत्रित अर्थव्यवस्था चरमरा जाए जो वास्तव में जितना सहयोग दे सकती थी उस तुलना में उत्पादन के उच्च स्तर पर काम कर रही थी। ऋण पर निर्भरशील अर्थव्यवस्था में, मुद्रा की आपूर्ति में गिरावट उल्लेखनीय रूप से उधार देने को कम करती है, जिससे आगे चलकर मांग में भी तेजी से गिरावट आ जाती है। मांग में गिरावट आती है और मांग की गिरावट के साथ-साथ, कीमतें घट जाती हैं क्योंकि आपूर्ति की प्रचुरता विकसित होती है। जब कीमतें वित्तपोषण उत्पादन की लागत से भी नीचे उतर जाती हैं तो ये अपस्फीतिकार उच्चक्र बन जाता है। व्यापार पर्याप्त लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है, अत: वे तब परिसमाप्त हो जाते हैं। जब से बंधक ऋण प्रदान किया गया बैंकों को ऐसी परिसंपत्तियां प्राप्त होती हैं जिनकी कीमत बंधक ऋण दिए जाने के बाद से नाटकीय रूप से नीचे गिर चुकी हैं और अगर वे उन परिसंपत्तियों को बेच भी दें तो वे पुन: आपूर्ति को और आगे बाधा देते हैं, जो परिस्थिति को केवल बिगाड़ ही देते हैं। अपस्फीतिकर उच्चक्र के वेग को कम करने अथवा रोग देने के लिए, बैंक अक्सर अनिष्पादित ऋणों की अदायगी रोक देते हैं। यह अक्सर अंतर को पाटने का एक उपाय है क्योंकि उन्हें तब उधार देने पर अवश्य ही अंकुश लगाना चाहिए, क्योंकि ऋण देने के लिए उनके पास मुद्रा ही नहीं रह जाती, जिनसे आगे फिर मांग में कमी आती है और इसी प्रकार सिलसिला जारी रहता है।

### 'सरकारी' मुद्रा में कमी के प्रभाव
### (Effects in Reduction of "Government" Currency)

अस्थिर मुद्रा अर्थव्यवस्था में, जब सरकारी मुद्रा कम हो जाती है, तब भी वाणिज्य (व्यापारिक लेन-देन) जारी रह सकता है, चूंकि ऐसी अर्थव्यवस्था में केंद्रीय सरकार अक्सर असमर्थ हो जाया करती है। वास्तव में, वस्तु-विनिमय ऐसी अर्थव्यवस्था में सुरक्षा शुल्क के रूप में काम करता है जो स्थानीय उत्पादन की स्थानीय खपत की प्रोत्साहित करता है। यह खनन और खोज के उत्साहवर्धन के रूप में भी काम करता है; क्योंकि ऐसी अर्थव्यवस्था में पैसे कमाने का आसान तरीका जमीन खोदकर इसे बाहर निकालना है।

### विशेष व्यवस्थाएं
### (Special Arrangements)

जब केंद्रीय बैंक ने नाममात्र ब्याज की दर क्रमश: शून्य तक नीचे उतार दी है, तो अब आगे की ब्याज की दरों को कम कर मांग को उत्साहित कर बढ़ावा नहीं दे सकते हैं। यह प्रसिद्ध चलनिधि जाल है। जब अपस्फीति पकड़ जमा लेती है, इससे "विशेष व्यवस्था" की

आवश्यकता होती है ताकि शून्य के नाममात्र के ब्याज दर पर "उधार दे" सके (जो अब भी ऋणात्मक अपस्फीति दर के कारण बहुत ऊंची वास्तविक ब्याज दर है)।

### ऋण अपस्फीति के उदाहरण
### (Examples of Debt Deflattion)

महान मंदी के दौरान इस चक्र की पहचान बड़े पैमाने पर की गई है। भयावह रूप से वस्तुओं की मांग में की कमी करते हुए अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तेजी से अनुबंधित होने लगे, अतः एक बड़ी क्षमता निष्क्रिय होने लगी और बैंक की विफलताओं का सिलसिला जारी हो गया। ऐसी ही स्थिति जापान में, शेयर और रियल एस्टेट बाजार के पतन के साथ 1990 की शुरुआत में आरम्भ हुई, जिसे जापानी सरकार के द्वारा अधिकतर बैंकों पर कब्जा कर उन्हें पतन से रोकते हुए और उनमें से अनेक, जो बुरी हालत में थीं, उनके सीधे नियंत्रण को अपने अधिकार में लेते हुए काबू पाया गया।

### अपस्फीति का प्रतिकार करना
### (Resisting Deflation)

1930 के दशक तक, अर्थशास्त्रियों का आमतौर पर यह मानना था कि अपस्फीति अपना इलाज खुद करेगी। जैसे ही कीमतें कम होंगी, मांग में स्वाभाविक रूप से वृद्धि आ जायेगी और आर्थिक प्रणाली बिना बाहरी हस्तक्षेप के अपना सुधार स्वयं कर लेगी।

1930 के दशकों में महान मंदी के दौरान इस दृष्टिकोण को चुनौती का सामना करना पड़ा था। केनेसियाई अर्थशास्त्रियों का तर्क था कि आर्थिक प्रणाली अपस्फीति के सन्दर्भ में स्वयं सुधरने वाली नहीं थी और इसीलिए सरकारों एवं केन्द्रीय बैंकों को मांग को बढ़ावा देने के लिए करों में कटौती अथवा सरकारी खर्चों में वृद्धि के जरिए सक्रिय कदम उठाने पड़े थे। केंद्रीय बैंक से आरक्षित आवश्यकताएं काफी बड़ी थीं और तब "खुले" बाजार के परिचालन के जरिए ऋण में गिरावट के कारण, निजी क्षेत्रों में मुद्रा की आपूर्ति को कम करने के लिए केंद्रीय बैंक केवल आरक्षित आवश्यकताओं में कमी लाकर मुद्री की आपूर्ति में प्रभावी वृद्धि कर सकते थे।

मुद्रावादी विचारों के उत्थान के साथ, अपस्फीति से लड़ने के लिए ब्याज की दरों में कमी लाकर मांग को प्रसारित करने पर ध्यान केन्द्रित किया गया। जापान तथा संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों में ही मांग को प्रोत्साहित करने के लिए उदारवादी नीतियों की विफलता के परिपेक्षय में इस सोच को झटका लगा जब 1990 में आरंभिक दशकों और 2000-2002 के मध्य शेयर बाजार को एक के बाद एक झटके लगे। अर्थशास्त्रियों को अब परिसंपत्तियों के मूल्यों के बारे में मौद्रिक नीतियों के (स्फीतिकारी) प्रभाव को लेकर चिंता होने लगी।

### निष्कर्ष
### (Conclusion)

निरंतर कम होती वास्तविक दर परिसंपत्तियों के ऊंचे मूल्य और अत्यधिक ऋण के संचयन का सीधा कारण हो सकती है। इसलिए घटती हुई दरें अस्थायी उपशामक प्रमाणित



हो सकती हैं, जिससे संभावित भविष्य ऋण का अपस्फीति संकट गंभीरता से उभर सकता है।

## रोज़गार
## (Employment)

*"भारत को युवाओं की महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए एक रोजगार क्रांति की आवश्यकता है। हम 35 वर्ष से कम उम्र की हमारी जनसंख्या के 65 प्रतिशत के साथ सबसे युवा देश हैं। हम दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र हैं और हमारे पास पालने के लिए एक विशाल घरेलू बाजार है। किसी भी देश के पास भारत की तरह मानव पूंजी और प्रचुर प्राकृतिक संसाधन केसाथ रोजगार पैदा करने के ऐसे अवसर नहीं हैं।"* —नरेंद्र मोदी

### भारत में रोजगार की वर्तमान स्थिति
### (Current Status of Employment in India)

- भारत में रोजगार की वर्तमान स्थिति बहुत अच्छी नहीं है।
- अलग-अलग संस्थानों और सरकारी सर्वेक्षणों में भी यह बात सामने आ रही है।
- अगर हम आठ श्रमिक आधारित उद्योगों में किए गए श्रमिक ब्यूरो के सर्वेक्षण को सही माने; तो 2011 में जहां नौ लाख रोजगार थे, उसमें 2013 में 1.9 लाख और 2015 में मात्र 1.35 लाख रोजगार रह गये हैं।
- जबकि आंकड़े दिखाते हैं कि हर महीने लगभग दस लाख नए लोग रोजगार की तलाश में जुड़ जाते हैं।
- भारतीय अर्थव्यवस्था को अगले दस वर्षों में लगभग 5 करोड़ रोज़गार के अवसर बढ़ाने होंगे।
- 2011 की जनगणना से पता चलता है कि अर्थव्यवस्था में 7 प्रतिशत की प्रतिवर्ष की औसत बढ़ोत्तरी हुई, रोजगार की वृद्धि दर केवल 1.8 प्रतिशत ही रही।

आज भारत एक नाजुक परन्तु निर्णायक स्तर पर खड़ा है। समय के इस मोड़ पर किये गए उपायों का असर भविष्य पर पड़ेगा। यदि हमारे देश को प्रगति करनी है और यदि हम अपने युवाओं की महत्वकांक्षाओं को पंख देना चाहते हैं तो हमें कार्यबल में शामिल होने के लिए हर एक नौजवान को रोजगार के लिए पर्याप्त रोजगार के अवसर या नौकरियों का सृजन करने की आवश्यकता है।

यहां तक कि चंडीगढ़ में श्रम ब्यूरो द्वारा प्रकाशित "द्वितीय वार्षिक रोजगार एवं बेरोजगारी सर्वेक्षण (2011-12) पर रिपोर्ट" ने उल्लेख किया है कि अखिल भारतीय स्तर पर बेरोजगारी की दर 38 (प्रति 1000 व्यक्तियों पर) होने का अनुमान है।

अब जब हम रोजगार के मोर्चे पर संकट का सामना कर रहे हैं, तो यह आवश्यक है कि हम सही विकल्प चुनें ताकि युवाओं को रोजगार मिल सके, वे सपने बुन सकें और दर्द

में भटकते रहने के बजाय उन सपनों को पूरा कर सकें।

हमारे सामने विकल्प स्पष्ट हैं, एक वो जो हमारे युवाओं के लिए बिना किसी के साथ हमें एक सर्वनाश तक ले जाता है। दूसरा विकल्प, जो कौशल विकास और के लिए रोजगार के महत्व को समझता है।

## समस्या के कारण

## (Causes of he Problem)

- प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के बाद ही पढ़ाई छोड़ देने वाले विद्यार्थियों संख्या बहुत ज्यादा है। 2015 का आर्थिक सर्वेक्षण बताता है कि 15 वर्ष की आयु बच्चों की संख्या मात्र 8 प्रतिशत है, जो व्यावसायिक प्रशिक्षण ले रहे हैं या ले चुके हैं। के विकास के लिए सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली का विकसित एवं सुदृढ़ होना जरूरी है। 2015-16 के बजट में शिक्षा के क्षेत्र में 3 प्रतिशत से 3.1 प्रतिशत की ही बढ़ौत्तरी की

- मेक इन इंडिया के तहत आई कंपनियां भारत में अपने उद्योग अपने उत्पाद बेचने के उद्देश्य से लगाएंगी। ये उस तुलना में रोजगार के साधन उपलब्ध नहीं कराएंगी। जबकि लघु और मध्यम दर्जे के उद्योग लगभग 40 प्रतिशत लोगों को रोजगार देते हैं। साथ ही भारतीय निर्मित सामान में 45 प्रतिशत तथा कुल निर्यात में 40 प्रतिशत का योगदान देते हैं। चूंकि इन उद्योगों के लिए सरकारी नीति बहुत सहायक नहीं है, इसलिए इन्हें बढ़ावा नहीं मिल पा रहा है।

- एक सर्वे के अनुसार लगभग 95 प्रतिशत उद्योगों को बैंक के दायरे में लाने की जरूरत है। लघु उद्योग बैंकों से बहुत कम लाभ ले पा रहे हैं। सार्वजनिक बैंक इन लघु उद्योगों को ऋण देने की बजाए बड़ी कंपनियों को ऋण देते हैं।

- सरकारी की वित्तीय नीति का लाभ बड़ी कंपनियों को भी अधिक मिलता है। वर्ष 2016-2017 के बजट में कर की लगभग साढे पाँच लाख करोड़ रुपये की छूट दी गई, इसका ज्यादा लाभ बड़ी कंपनियों को ही मिला।

## रोजगार में वृद्धि के लिए कौशल विकास को बढ़ावा

## (Promotion of Skill Development for Growth in Employment)

किसी भी क्षेत्र में आगे बढ़ना है, तो कौशल विकास ही एकमात्र माध्यम है। जिस तरह शिक्षा को महत्त्व दिया गया है, उसी तरह कौशल विकास को बढ़ावा दिया जाए तो रोजगार जरूर मिलेगा। कौशल विकास में देश कम से कम 50-55 साल पीछे चल रहा है। कई विकासशील एवं विकसित अर्थव्यवस्थाओं के मुकाबले भारत में महज दो फीसदी हुनरमंद लोग हैं। सरकार का केंद्रीय कौशल विकास व उद्यमिता मंत्रालय खस्ताहाल इंजीनियरिंग कॉलेजों और पॉलिटेक्निक संस्थानों को उबारने में मदद कर रहा है। सरकार लगातार इंजीनियरिंग वर्कशॉप का आयोजन कर रही है, जिसका लक्ष्य इन संस्थानों को मौजूदा क्षमता का फायदा उठाना है। इन संस्थानों में रिक्तियों को भरा जा रहा है।



देश के इतिहास में पहली बार इंजीनियरिंग सीटों के मुकाबले आईटीआई की सीटों की संख्या बढ़ी है। सीटें बढ़ाने के साथ-साथ गुणवत्ता पर भी फोकस किया जा रहा है। दूसरे देशों में इंजीनियरिंगों के मुकाबले पांच गुणा टेक्नीशियन होते हैं। सरकार का लक्ष्य है कि अगले पांच वर्षों में 25 लाख छात्रों को प्रशिक्षित किया जाए। केंद्र सरकार ने पिछले दो सालों में रि-स्ट्रक्चरल की योजना औद्योगिक विकास की ओर बढ़ने की कवायद की है। दुनिया के पैंतालिस फीसदी देशों में कौशल है। जापान, कोरिया, अमेरिका की तरह ही देश में कौशल विकास को बढ़ावा देने की जरूरत है। भारत कई वर्षों तक मुख्यत: शिक्षा पर अपना ध्यान केंद्रित करता रहा है और अब उसे लोगों की काबिलियत बढ़ाने एवं रोजगार सृजन पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है, ताकि बड़ी संख्या में युवाओं को रोजगार दिया जा सके। विभिन्न राष्ट्रों के बीच भारत को एक महान शक्ति के तौर पर उभारने की चुनौती को ध्यान में रखते हुए अगले पांच साल से दस साल काफी महत्त्वपूर्ण है।

देश में कौशल विकास को बढ़ाने के लिए सार्वजनिक-निजी भागीदारी आवश्यक है। कॉरपोरेट जगत और पीएसयू अगर मंत्रालय की पहल से जुड़ जाएं, तो यह एक ऐसे संस्थान का स्वरूप धारण कर लेगा, जिससे लोगों को हुनरमंद बनाने और भारत को विश्व की स्किल कैपिटल बनाने में आसानी होगी। अपनी तरह की पहली भागीदारी के तहत कौशल विकास एवं उद्यमिता मंत्रालय के अधीनस्थ राष्ट्रीय कौशल विकास कोष और राष्ट्रीय कौशल विकास निगम तथा पावर ग्रिड कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया ने एक त्रिपक्षीय समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं।

दरअसल, इस सदी की जरूरत आईआईटी नहीं, बल्कि आईटीआई है। वर्ल्ड यूथ स्किल्स डे 15 जुलाई को मनाया जाने लगा है। जब उद्योग के लिए बनाए गए कुशल लोग ही उस क्षेत्र में काम करेंगे, तो गुणवत्ता में अपने आप वृद्धि होगी। पुराने जमाने में हमारे कौशल को पूरी दुनिया में जाना जाता था। चीन की पहचान दुनिया की मैन्यूफैक्चरिंग फैक्ट्री की बन गई है, तो हमारी पहचान दुनिया के ह्यूमन रिसोर्स उपलब्ध कराने की हो सकती है।

राष्ट्रीय कौशल विकास निगम अपने 1012 साझीदारों के साथ मिलकर योजना का कार्यान्वयन कर रहा है। इस योजना का कार्यान्वयन देश के सभी 29 राज्यों और छह केंद्र शासित प्रदेशों में किया जा रहा है। यह योजना 596 जिलों और 531 निर्वाचन क्षेत्रों को कवर कर रहा है। कौशल विकास के 29 क्षेत्रों को रेखांकित कर 566 रोजगार के क्षेत्रों की पहचान की गई है। सरकार की योजना है कि अगले पांच वर्षों में एक सौ दो मिलियन युवाओं को प्रशिक्षित करें और इसके लिए प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के तहत आईटीआईटीजके तहत और नेशनल डेवलपमेंट स्किल डेवलपमेंट कॉरपोरेशन के तहत, सेक्टर स्किल कौंसिल के तहत योजनाएं तैयार हो चुकी हैं, पर योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए वैसे प्रशिक्षण केंद्र भी होने चाहिएं इसके लिए खाका तैयार किया गया है। रेवले और सेना में भी इस बात का खास ध्यान रखा गया है कि वहां भी कौशल विकास हो इसके लिए अलग से रणनीति पर कार्य हो रहा है। खास बात यह है कि रेल बजट में

प्रशिक्षित कार्यबल बढ़ाने पर जोर दिया गया है। बजट में स्किल्ड वर्कफोर्स के तहत 2017-18 तक नौ करोड़ और 2018-19 तक 14 करोड़ रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे। बहरहाल जिस तरह से सरकार कौशल विकास पर जोर दे रही है इसके दूरगामी परिणाम आएंगे और भारत विश्व में प्रशिक्षित मानव संसाधन का अगुआ राष्ट्र होगा।

### समाधान की ओर सराहनीय कदम

### (Commendable Steps towards Solution)

- 2016-17 के बजट में पहली बार रोजगार की वृद्धि के लिए 'स्टैण्ड अप' और 'स्टार्ट अप' जैसे कार्यक्रम शुरू किये गये हैं। स्टार्ट अप इंडिया सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अवसर देगा, जबकि स्टैण्ड अप स्थानीय कारीगरों को अपना उद्योग बढ़ाने में सहायता देगा।

- निर्यात करने वाले उद्योगों, लघु एवं मध्यम दर्जे के उद्योगों तथा कृषि उत्पाद को प्रोसेसिंग करने वाले उद्योगों को बढ़ावा देने की जरूरत है। इससे गाँवों और कस्बाई क्षेत्रों के युवाओं को लाभ मिलेगा।

* * *

# 3
## CHAPTER

# अर्थशास्त्र में पाठ योजना : आवश्यकता और महत्त्व, मूल तत्त्व और इसकी तैयारी

## (Lesson Planning in Economics : Need & Importance, Basic Elements & Its Preparation)

शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जो रूप-रेखा मौखिक या लिखित रूप में निर्मित की जाए और जिसे शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावपूर्ण, सशक्त और सार्थक बनाने हेतु लागू किया जाए अर्थात् प्रयोग में लाया जाए, उसे पाठ योजना का नाम दिया जाता है। यह पाठ योजना लिखित रूप में होती है और शिक्षक इसका अनुसरण कक्षा-शिक्षण में करता है। शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु पाठ-योजना एक निर्देशन का कार्य करती है क्योंकि इसमें इन सब बातों का संकेत होता है कि शिक्षण क्रियाएं कैसे और किस रूप में क्रियान्वित की जाए ? शिक्षण और शिक्षण कौशलों के विकास हेतु पाठ योजना का विशेष महत्त्व होता है।

**पाठ योजना का विकास (Development of Lesson Plan)**—पाठ योजना का प्रारम्भ गैस्टालट के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आधार पर हुआ। मनुष्य का सीखना गैस्टालट के सीखने के सिद्धान्त (Gestalt Theory of Learning) से पूरी तरह मेल खाता है।

इस सिद्धान्त के अन्तर्गत प्रत्यक्षीकरण (Perception) में सम्पूर्णता की अनुभूति अंशों की सहायता से होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति सीखने के लिए इकाई का सहारा लेता है और फिर सम्पूर्ण की ओर बढ़ता है। इकाई के अन्तर्गत सार्थक क्रियाओं में सम्बन्ध स्थापित होता है और फिर इन क्रियाओं की सहायता से छात्र-छात्राओं को सीखने के अवसर प्रदान किए जाते हैं। ऐसा करने से छात्र-छात्राओं में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन किया जा सकता है। यह सिद्धान्त इकाई पाठ योजना को व्यावहारिकता का रूप प्रदान करता है अर्थात् व्यावहारिक बनाता है।

**पाठ योजना से तात्पर्य (Meaning of Lesson Plan)**—पाठ योजना शिक्षण से पूर्व की तैयारी अवस्था में किए गए नियोजन का स्वाभाविक प्रतिफल है। एन०एल०

बासिंग (N.L. Bossing) के अनुसार, "शिक्षण के उद्देश्यों की सिद्धि हेतु शिक्षक क्रियाओं का सहारा लेता है उसके आलेख को पाठ योजना कहा जाता है।" (Lesson plan is the title given to statement of the achievement to be realized and the specific means by which these are attained as a result of activities engaged during the period.)

आई० के० डेविड ने अपने प्रथम सोपान में पाठ योजना की रचना को विशेष महत्व दिया है।

पाठ योजना के सम्बन्ध में डेविड महोदय का विचार है कि कक्षा में जाने से पूर्व शिक्षक को पूरी तैयारी कर लेनी चाहिए क्योंकि शिक्षक की प्रगति के लिए कोई बात इतनी बाधक नहीं है जितनी की शिक्षण की अपूर्ण तैयारी (According to David Lesson must be prepared for there is nothing so fatal to teacher as progress as unpreparedness.)

**बिनिंग और बिनिंग (Bining and Bining)** के अनुसार, "दैनिक पाठ योजना के निर्माण में उद्देश्यों को परिभाषित करना, पाठय-वस्तु का चयन करना तथा उसे क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित करना और प्रस्तुतीकरण की विधियों तथा प्रक्रिया का निर्धारण करना है।" (Daily lesson planning involves defining the objectives selecting and arranging the subject matter and determining the method and procedure.)

## पाठ योजना की आवश्यकता

## (Need of Lesson Plan)

शिक्षा भावी शिक्षकों को कक्षा शिक्षण की क्रियाओं को सफल बनाने हेतु और पूर्व निर्धारित शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पाठ का नियोजन करना जरूरी है क्योंकि इसकी विशेष कारणों से आवश्यकता है वे कारण निम्न हैं–

1. पाठ योजना से शिक्षण सम्बन्धित क्रियाओं और उनके उद्देश्यों की शिक्षण से पूर्व जानकारी हो जाती है।

2. विषय-वस्तु को क्रमबद्धता से निश्चित कर लिया जाता है।

3. विषय-वस्तु के तत्त्वों के क्रम, चिन्तन एवं विकास में भी क्रमबद्धता स्थापित हो जाती है।

4. शिक्षण करते समय विषय-वस्तु के भूलने की सम्भावना नहीं होती और निर्धारित विषय-वस्तु के तत्त्वों का विवेचन सहज ढंग से हो जाता है।

5. सहायक सामग्री के प्रयोग और शिक्षण विधियों के बारे में स्पष्टीकरण हो जाता है।

6. शिक्षण क्रियाओं को जीवन के सामान्य अनुभवों से जोड़ा जा सकता है।

7. छात्र-छात्राओं की क्रियाओं के नियन्त्रण और पुनर्बलन की तकनीकी के प्रयोग को निश्चित किया जा सकता है।



8. परीक्षण परिस्थितियों को भी निर्धारित कर लिया जाता है।

9. भावी शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए पाठ योजना कक्षा की क्रियाओं के लिए रूप-रेखा तैयार करती है।

10. व्यक्तिगत विभिन्नता को देखते हुए पाठ योजना क्रियाओं की व्यवस्था करने में सहायक सिद्ध होती है।

## पाठ योजना का महत्त्व

## (Importace of Lesson Plan)

पाठ योजना की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए इसके महत्त्व को सरलतापूर्वक दर्शाया जा सकता है। व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों-हरबार्ट, मॉरिसन, जॉन डिवी, किलपैट्रिक ने पाठ योजना के महत्त्व को स्वीकार किया और पाठ योजना के विभिन्न सोपानों का भी वर्णन किया है। जैसे कि पहले चर्चा की जा चुकी है कि पाठ योजना का महत्त्व एक प्रस्तावित नीति एवं रूप-रेखा के रूप में अधिक है। निम्न दिये गये तर्कों के आधार पर पाठ योजना का महत्त्व स्पष्ट किया गया है–

1. शिक्षण-अधिगम (सीखना-सीखाना) अर्थात् (Teaching and Learning) प्रक्रिया की व्यवस्था के नियोजन, आयोजन, अग्रसरण एवं नियन्त्रण सम्बन्धी निर्णयों को प्रभावपूर्ण, सशक्त, सार्थक एवं उपयोगी बनाने की दृष्टि से पाठ योजना का शिक्षकों के लिए बहुत अधिक अहत्त्व है।

2. शिक्षक को पाठ योजना बनाने से पाठ के उद्देश्यों और उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोग में आने वाले सभी साधनों का ज्ञान हो जाता है। ऐसा हो जाने से शिक्षण प्रक्रिया सहज एवं सरल हो जाती है।

3. शिक्षण की प्रासंगिकता, तर्कबद्धता, क्रमबद्धता पूर्वनिर्मित पाठ योजना के पढ़ने मात्र से सम्भव हो जाती है। इसीलिए शिक्षक अपने विषय से हटकर शिक्षण नहीं करता और विसंगत चर्चा का निवारण हो जाता है।

4. शिक्षण के लिए पाठ योजना एक ऐसा आधार है जिससे उसमें आत्म-विश्वास एवं धैर्य और कर्त्तव्य परायणता जैसे गुणों का विकास होता है।

5. पाठ योजना का सही मूल्यांकन करने की दृष्टि से भी बहुत महत्त्व है। यह देखना आसान हो जाता है कि कक्षा में जितना कुछ पढ़ाया गया है उसमें से छात्र-छात्राएं कितना कुछ सीख पाए हैं।

6. पाठ योजना का सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से शिक्षण प्रक्रिया से होता है। इसके द्वारा शिक्षक में शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावपूर्ण और सार्थक बनाने हेतु आन्तरिक सूझ-बूझ का विकास होता है।

7. पाठ योजना से शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों ही लाभान्वित होते हैं। अन्तर केवल इतना है कि शिक्षक को प्रत्यक्ष रूप से लाभ होता है और शिक्षार्थी को अप्रत्यक्ष रूप से लाभ

होता है। शिक्षक को पाठ्य-वस्तु का पढ़ाना सहज लगता है और शिक्षार्थी को सीखना सहज लगता है।

8. पाठ के सम्बन्ध में पैदा होने वाली समस्याओं तथा कठिनाइयों को पाठ योजना के द्वारा हल किया जा सकता है।

9. किसी भी पाठ की निरन्तरता बनाए रखने के लिए पाठ योजना बनाना आवश्यक होता है। इससे छात्रों के पूर्व ज्ञान का पता लगाना भी आसान होता है।

10. पाठ योजना से शिक्षण सहज एवं सरल होता है और उसमें नवीनता भी आ जाती है। पहले से ही पाठ्य-वस्तु से सम्बन्धित क्रियाओं के बारे में कक्षा स्तर के अनुसार निर्णय ले लिया जाता है। छात्र-छात्राओं को उनके पूर्व ज्ञान के आधार पर नया ज्ञान दिया जा सकता है। इससे छात्रों की पाठ में रुचि बढ़ती है।

11. अगर शिक्षक पाठ योजना को मौखिक एवं लिखित रूप में तैयार नहीं करता तो इससे स्पष्ट है कि उसका शिक्षण कदापि भी रुचिकर नहीं हो सकता है और इससे कक्षा में अनुशासन हीनता बने रहने की आशंका रहती है। इस प्रकार की समस्या के समाधान हेतु पाठ योजना बहुत आवश्यक होती है।

उपरोक्त विवरण एवं चर्चा से यह स्पष्ट होता है कि पाठ योजना का शिक्षक और विद्यार्थी के लिए बहुत महत्त्व है। कक्षा में एक अच्छे मित्र की तरह पाठ योजना शिक्षक को नैतिक बल प्रदान करती है। इसलिए एक अच्छे शिक्षक के लिए कक्षा में जाने से पूर्व पाठ योजना अत्यन्त आवश्यक है।

## शिक्षण की इकाई का स्वरूप

## (Nature of a Teaching Unit)

शिक्षण इकाई पूरे विषय विशेष का अंग होती है। इसका सम्बन्ध पाठ के प्रस्तुतीकरण की विधियों एवं साधनों से होता है। शिक्षण इकाई की प्रमुख रूप से दो विशेषताएं हैं जो निम्न हैं–

1. पूरे वर्ष के समस्त कोर्स को छात्र-छात्राओं की सुविधा को ध्यान में रखते हुए छोटी-छोटी इकाइयों में विभाजित किया जाता है जिससे वे आसानी से बोध गम्य कर सकते हैं और एकाग्रचित होकर विषय-वस्तु को समझने का प्रयत्न करते हैं।

2. शिक्षण इकाई की सहायता से शिक्षण प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप प्रदान किया जा सकता है। प्रस्तावना के सोपान के अन्तर्गत छात्र-छात्राओं को शिक्षण उद्देश्यों से अवगत कराने की व्यवस्था होती है। इसके पश्चात् ही नवीन विषय-वस्तु को प्रस्तुत किया जाता है। अन्तिम सोपान छात्रों की उपलब्धियों एवं बोध का मूल्यांकन करने में सहायक होता है।

## पाठ योजना बनाने हेतु आवश्यक निर्देशन

## (Necessary Instructions for making Lesson Plan)

जीवन में हम किसी भी कार्य को करते हैं और उसमें पूर्व सफलता चाहते हैं तो उस कार्य को पूरी लगन एवं कुशलता के साथ करना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसलिए शिक्षण



कार्य में भी शिक्षक को कुशल एवं दक्ष होना चाहिए। शिक्षक की पढ़ाने में दक्षता एवं कुशलता बहुत कुछ पाठ योजना पर निर्भर करती है। इसलिए पाठ योजना का निर्माण करते हुए शिक्षक को निम्न बातों पर अवश्यक ही ध्यान देना चाहिए–

1. जिस विषय-वस्तु की पाठ योजना बनानी हो उस विषय सामग्री को पहले ध्यान से पढ़ लेना चाहिए। अर्थशास्त्र विषय में सम्बन्धित प्रकरण पढ़ाने के लिए अध्ययन की विशेष आवश्यकता होती है, क्योंकि इसके विस्तृत ज्ञान के लिए एक पुस्तक पर्याप्त नहीं होती। प्रकरण की पूरी जानकारी के पश्चात् ही पाठ योजना को लिखित रूप देना चाहिए।

2. पाठ योजना बनाते समय पूरे प्रकरण को भागों में विभाजित कर लें। इससे पढ़ाने में सुविधा रहती है।

3. पाठ योजना बनाते समय छात्राध्यापक को पूर्व ज्ञान को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। इससे पाठ के प्रारम्भ करने में सुविधा रहती है।

4. पाठ योजना में उन विधियों, उदाहरणों और सहायक सामग्री का उल्लेख होना चाहिए। जिनकी सहायता से शिक्षक शिक्षण करेगा।

5. इसका निर्माण करते हुए कक्षा के स्तर व छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तर का ध्यान रखना भी जरूरी है।

6. पाठ योजना बनाने के पश्चात् उसे ध्यान से पढ़ लेना चाहिए ताकि त्रुटियों में सुधार हो जाए।

7. पाठ योजना बनाने का अर्थ यह नहीं लेना चाहिए कि शिक्षक शिक्षण करते समय पाठ योजना से बंध कर रहेगा बल्कि उसमें परिस्थितियों के अनुसार लचकीलेपन की व्यवस्था हो।

8. सहायक सामग्री का प्रयोग परिस्थितियों और आवश्यकतानुकूल होना चाहिए।

## अच्छी पाठ योजना के गुण

## (Merits of Good Lesson Plan)

एक अच्छी पाठ योजना में निम्न गुणों का होना आवश्यक है–

1. पाठ योजना पूरी तैयारी और रोचक ढंग से बनाई हुई हो।

2. प्रत्येक प्रकरण का विशेष उद्देश्य होता है जिसका उल्लेख पाठ योजना में किया जाना चाहिए।

3. पाठ योजना कठिन भाषा में लिखी हुई नहीं होनी चाहिए।

4. पाठ योजना सुन्दर और स्पष्टता के साथ लिखी हुई हो।

5. पाठ योजना की विषय-वस्तु इतनी होनी चाहिए कि शिक्षक निश्चित अवधि में उसे पूरा कर ले।

6. अच्छी पाठ योजना वह होती है जिसमें वातावरण और दूसरे विषयों के साथ सम्भव समवाय स्थापित हो सके।

7. एक अच्छी पाठ योजना शिक्षक की बुद्धिमता का परिचायक होती है। उचित सहायक सामग्री और उदाहरणों का प्रयोग इस ढंग से हो कि पाठ के उद्देश्यों की प्राप्ति हो।

8. पाठ योजना में गृह कार्य अवश्य ही दिया जाना चाहिए इससे छात्र-छात्राओं को सीखे हुए अनुभवों का अभ्यास करने का अवसर प्राप्त होता है।

## अर्थशास्त्र विषय पाठ योजना के आधार
## (Basis of the Lesson Plan of Economics)

पाठ योजना बनाने हेतु अधिकतर शिक्षकों द्वारा शिक्षा शास्त्री हरबार्ट की पंचपद विधि को अपनाया गया है। यद्यपि इस विधि में कुछ कमियां हैं फिर भी सभी शिक्षाविदों ने इस प्रणाली को अधिक मनोवैज्ञानिक बताया है। यही कारण है कि अधिकांश शिक्षण महाविद्यालयों में इस विधि का प्रचलन है। इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र के शिक्षण में भी इस प्रणाली का प्रयोग होता है। इस प्रणाली के पांच पद हैं जो निम्न हैं–

1. प्रस्तावना (Intoduction)
2. प्रस्तुतीकरण (Presentation)
3. स्पष्टीकरण, विशेष वर्णन (Association)
4. नियमीकरण या साधारणीकरण (Generalization)
5. प्रयोग, गृह कार्य या अभ्यास अवसर (Application)

उपरोक्त पदों के आधार पर सभी विषयों की पाठ योजना बनाना सम्भव है। केवल इतना ही अन्तर है कि कई विषयों में चतुर्थ पद का प्रयोग नहीं होता है। जैसे इतिहास, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र, भूगोल में चतुर्थ पद नियमीकरण या साधारणीकरण का प्रयोग नहीं होता क्योंकि इन विषयों से सम्बन्धित प्रकरण पढ़ाने के पश्चात् किसी नियम को निकलवाया नहीं जाता, जैसे कि गणित, विज्ञान और व्याकरण के शिक्षण के पश्चात् किया जाता है।

## अर्थशास्त्र पाठ योजना की लेखन विधि
## (Writing Method of Lesson Plan of Economics)

पाठ योजना बनाने एवं लेखन हेतु निम्न शीर्षकों को क्रमशः (क्रमबद्ध रूप में) अपनाया जाता है–

1. सामान्य उद्देश्य (General Aim)
2. विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims)
3. सहायक सामग्री (Material Aids)
4. पूर्व ज्ञान (Previous Knowledge)
5. प्रस्तावना (Introduction)
6. उद्देश्य कथन (Statement of Aim)



7. पाठ का विकास (Development of the Lesson)
8. चाकबोर्ड सारांश (Chalk Board Summary)
9. पुनरावृत्ति (पुनरावलोकन) (Recapitulation)
10. गृह कार्य (Home Work)

ऊपरलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत क्या लिखना चाहिए ? इसका संक्षिप्त विवरण निम्न है –

**1. सामान्य उद्देश्य (General Aim)**–सामान्य उद्देश्यों के अन्तर्गत उन्हीं उद्देश्यों को लिखते हैं जिनकी प्राप्ति हेतु उस विषय को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है। सामान्य उद्देश्य एक नहीं होता बल्कि अनेक होते हैं और सभी उस विषय से सम्बन्धित होते हैं। इन सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति किसी अन्य विषय से नहीं हो सकती। उदाहरण के लिए पाठ्यक्रम में अर्थशास्त्र को सम्मिलित करने का उद्देश्य यह है कि छात्र-छात्राएं भारत की आर्थिक व्यवस्था और आर्थिक जीवन से परिचित हो जाएं, वे राष्ट्र के आर्थिक विकास में भौतिक संसाधनों और मानव संसाधनों के महत्त्व को जान लें और आर्थिक दृष्टि से बचत को प्रोत्साहन दें आदि-आदि इन उद्देश्यों की प्राप्ति अन्य विषयों से सम्भव नहीं है। प्रत्येक विषय में इन उद्देश्यों को आरम्भ में ही लिख दिया जाता है।

**2. विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims)**–विशेष उद्देश्यों का सम्बन्ध प्रस्तुत पाठ से होता है। प्रत्येक विषय के सामान्य उद्देश्य तो समान होते हैं, पर विशेष उद्देश्य प्रत्येक पाठ के भिन्न होते हैं। शिक्षक को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि विशेष उद्देश्य बहुत ही स्पष्ट और उचित भाषा में लिखा हुआ हो।

**3. सहायक सामग्री (Material Aids)**–शिक्षक को जिसके सहायक सामग्री का पाठ पढ़ाने में प्रयोग करना होता है उसको सहायक सामग्री के शीर्षक के अन्तर्गत लिखना आवश्यक होता है। सहायक सामग्री के उपकरणों का उल्लेख संख्या की दृष्टि से नहीं करना चाहिए बल्कि जिन उपकरणों की वास्तविक रूप से पाठ पढ़ाने के लिए आवश्यकता होती है उन्हीं का उल्लेख करना चाहिए।

**4. पूर्व ज्ञान (Previous Knowledge)**–शिक्षक अपनी पाठ योजना बनाने में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि उसे छात्र-छात्राओं के पूर्व ज्ञान के बारे में स्पष्टता न हो। इसलिए शिक्षक को अपनी पाठ योजना में यह उल्लेख कर देना चाहिए कि कक्षा विशेष के छात्र-छात्राओं का पूर्व ज्ञान कितना है। यह ज्ञान साधारण ज्ञान न होकर विषय विशेष के प्रकरण से सम्बन्धित होता है।

**5. प्रस्तावना (Introduction)**–प्रस्तावना का सम्बन्ध पाठ के प्रस्तुतीकरण से होता है। प्रस्तावना के अन्तर्गत शिक्षक को ऐसी विधि का प्रयोग करना चाहिए जिससे कक्षा में अपेक्षित (वांछनीय) वातावरण उत्पन्न हो जाए और छात्र-छात्राएं सहज रूप से पाठ की ओर अकर्षित हो जाएं। यदि शिक्षक उपयुक्त वातावरण उत्पन्न करने में सफल हो जाता है तो अवश्य ही वह पाठ पढ़ाने में भी पूर्ण रूप से सफल रहेगा। प्रत्येक विषय में प्रस्तावना कई

प्रकार से की जा सकती है। जैसे-छात्र-छात्राओं से प्रश्न करके, कोई चित्र, चार्ट या फोटो दिखाकर, चाकबोर्ड पर कुछ लिखकर या फिर कोई छोटी-सी कहानी सुनाकर। प्रस्तावना की प्रत्येक विधि में शिक्षक के कौशल की आवश्यकता होती है क्योंकि प्रस्तावना के प्रश्न परस्पर सम्बन्धित हों, एक प्रश्न का उत्तर दूसरे प्रश्न की ओर स्वाभाविक रूप से ही प्रेरित करता हो और अन्तिम प्रश्न से 'उद्देश्य कथन' की स्पष्टता हो।

**6. उद्देश्य कथन (Statement of Aim)**—प्रस्तावना के तुरन्त बाद उद्देश्य कथन की आवश्यकता होती है जिसके माध्यम से शिक्षक यह स्पष्ट कर देता है कि छात्र-छात्राएं अर्थशास्त्र के किस प्रकरण के बारे में पढ़ेंगे। उद्देश्य कथन में शिक्षक को हमेशा 'हम' शब्द को प्रयोग करना चाहिए। छात्र-छात्राओं को यह अनुभव नहीं होने देना चाहिए कि शिक्षक उनसे भिन्न है। ऐसा प्रयत्न करने से कक्षा में सहयोग तथा अनुशासन के भाव उत्पन्न होते हैं और पाठ की समाप्ति कुशलतापूर्वक होती है।

**7. पाठ का विकास (Development of the Lesson)**—यह पाठ से सम्बन्धित वह स्थिति होती है जहां से पाठ का आरम्भ हो जाता है और शिक्षक पाठ के विकास के लिए अग्रसर होता है। इसलिए प्रस्तुतीकरण प्रारम्भ करने से पूर्व पाठ की इकाइयों (Units) का क्रम देना चाहिए। पाठ का विकास करने में शिक्षक को प्रश्नोत्तर शैली का प्रयोग करते हुए उपयुक्त सहायक सामग्री की सहायता लेनी चाहिए। पाठ के विकास में छात्र-छात्राओं की भागीदारी अवश्य होनी चाहिए।

**8. चाक बोर्ड सारांश (Chalk Board Summary)**—कोई भी शिक्षक अपने अध्यापन को तब तक सफल नहीं बना सकता जब तक कि छात्र-छात्राएं पाठ को समझ न जाएं और आवश्यकता पड़ने पर सीखे हुए ज्ञान का दैनिक जीवन में प्रयोग कर सकें। पाठ योजना में यदि विषय-सामग्री को इकाईयों में बांटा हुआ है तो प्रत्येक इकाई के समाप्त होने पर उस इकाई का चाक बोर्ड सारांश देना चाहिए और अगर पाठ इकाईयों में बंटा हुआ न हो तो पाठ के प्रस्तुतीकरण की समाप्ति के बाद चाक बोर्ड सारांश छात्र-छात्राओं के लिए बहुत लाभकारी सिद्ध होता है। चाक बोर्ड का प्रयोग करते समय शिक्षक को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-

1. भाषा छात्रों के स्तर के अनुकूल हो।
2. सारांश थोड़े से वाक्यों में हो।
3. प्रत्येक वाक्य की भाषा स्पष्ट और सार्थक हो।
4. सम्पूर्ण सारांश में क्रमबद्धता हो।
5. निष्कर्ष रूप में सारांश ऐसा हो जो सभी छात्र-छात्राओं की समझ में सहजता से आ जाए।

**9. पुनरावृत्ति ( पुनरावलोकन ) (Recapitulation)**—पुनरावृत्ति से तात्पर्य यह है कि पढ़ाए हुए पाठ को पांच-छः प्रश्नों की सहायता से दोहरा लिया जाना चाहिए। इससे



शिक्षक को यह पता लग जाता है कि पढ़ाया हुआ पाठ छात्र-छात्राओं ने समझा या नहीं। पुनरावृत्ति प्रत्येक इकाई की करनी चाहिए। अगर पाठ इकाइयां बांट कर न पढ़ाया गया हो तो सम्पूर्ण पाठ की समाप्ति के बाद पुनरावृत्ति करनी चाहिए।

**10. गृह कार्य (Home Work)**—अर्थशास्त्र के विषय में गृह कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। वैसे तो गृह कार्य सभी विषयों के लिए गुणकारी है। परन्तु इस बात में कोई दो मत नहीं हैं कि अर्थशास्त्र और उससे सम्बन्धित विषय जैसे भूगोल व्यावहारिक उपयोगिता के विषय हैं। इसलिए जहां तक सम्भव हो इन विषयों के अध्यापन के बाद गृह कार्य अवश्य दिया जाना चाहिए। इन नियमों को गृह कार्य दैनिक जीवन की समस्याओं से सम्बन्धित होता है। ऐसे विषयों को गृह कार्य लिखित रूप न होकर प्रयोगात्मक रूप में होना चाहिए। अगर ऐसा सम्भव न हो तो पाठ संक्षिप्त में पुनरावृत्ति कक्षा में करा देनी चाहिए।

## अभ्यास के प्रश्न

## (Study Questions)

1. पाठ योजना से आप क्या समझते हो ? शिक्षक को पाठ योजना का उपयोग किस प्रकार करना चाहिए ?

   (What do you mean by Lesson Plan ? How the teacher should make use of Lesson Plan ?)

2. शिक्षण में पाठ योजना का क्या महत्त्व है ? एक अच्छी पाठ योजना में क्या विशेषताएं होनी चाहिए ?

   (What is the importance of Lesson Planning in teaching ? What should be the characteristics of good Lesson Plan ?)

3. निम्नलिखित के उत्तर 150 शब्दों में दीजिए-

   1. पाठ योजना साध्य नहीं साधन है।
   2. पाठ योजना की रूप-रेखा।
   3. पाठ योजना का अर्थ।
   4. शिक्षक के लिए पाठ योजना की आवश्यकता।

   Give answer of the following in 150 words :

   1. Lesson Planning is not aim, but mean.
   2. Out-line of the Lesson Plan.
   3. Meaning of Lesson Planning.
   4. Need of Lesson Plan for teacher.

* * *

## पाठ योजना-1

**अनुक्रमांक ...**

**विषय–अर्थशास्त्र** — **कक्षा–दसवीं**

**उपविषय–(प्रकरण) भारतीय** — **अवधि–40 मि**

अर्थ व्यवस्था की मुख्य समस्याएं — **औसत आयु–15**

**दिनांक–**

**सहायक सामग्री–गरीबी बेरोजगारी और महंगाई से सम्बन्धित चार्ट।**

**सामान्य उद्देश्य–**

1. छात्र-छात्राओं को समाज के आर्थिक पक्ष और देश की आर्थिक समस्या परिचित करना।
2. छात्र-छात्राओं को प्रजातन्त्र व्यवस्था में आर्थिक स्वतन्त्रता से अवगत कराना।
3. छात्रों को उदार दृष्टिकोण का विकास करना जिससे वे अन्य देशों की आ समस्याओं को समझें और उनके प्रति सहयोग एवं सहानुभूति की भावना प्रक सकें।
4. उनमें मानसिक शक्तियों का विकास करना और मनन एवं चिन्तन की आ डालना।
5. उनमें विश्व की आर्थिक प्रगति के साथ अपने देश की आर्थिक प्रगति की तुल करने की क्षमता का विकास करना।

**विशेष उद्देश्य–**छात्र-छात्राओं को भारतीय अर्थव्यवस्था की मुख्य समस्याओं परिचित कराना।

**पूर्व-ज्ञान–**छात्र-छात्राएं भारत की कुछ समस्याओं से परिचित हैं जैसे-देश बढ़ती हुई जनसंख्या और इससे उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में थोड़ी बहु जानकारी रखते हैं लेकिन विस्तार से समस्याओं का ज्ञान नहीं है।

**पूर्व ज्ञान परीक्षा ( प्रस्तावना )–**

1. लोग सड़कों पर, बाजारों में और घर-घर जाकर भीख क्यों मांगते हैं ?
2. आज हमारे नवयुवक और नवयुवतियां पढ़ने-लिखने के बाद भी आर्थिक दृष्टि से आत्म-निर्भर क्यों नहीं होते ?
3. अभिभावक (माता-पिता) आज बालकों की सही (जायज) आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अपने को असमर्थ (निसहाय) क्यों समझते हैं ?

उपरोक्त तीनों प्रश्नों के उत्तर प्राप्ति की सही सम्भावना है–गरीबी, बेरोजगारी और महंगाई।

**उद्देश्य कथन–**शिक्षक छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए कहेगा कि आज हम भारतीय अर्थव्यवस्था की तीन मूलभूत समस्याओं-गरीबी, बेरोजगारी और महंगाई के बारे में पढ़ेंगे।



**प्रस्तुतीकरण–**छात्राध्यापक भूमिका के रूप में संक्षिप्त विवरण देते हुए कहेगा कि भारत को स्वतन्त्र हुए 56 वर्ष हो गये हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इन वर्षों में भारत ने अनेक क्षेत्रों में और बहुत-सी समस्याओं का समाधान भी किया लेकिन अभी भी भारत आर्थिक समस्याओं से छुटकारा नहीं पा सका है। यही कारण है कि जिस गति से भारत का आर्थिक विकास होना चाहिए था वह नहीं हो पा रहा है। इसका कारण है मुख्य रूप से तीन समस्याएं जिनका समाधान बहुत आवश्यक है। ये तीन समस्याएं हैं गरीबी, बेरोजगारी और बढ़ती हुई कीमतें। छात्राध्यापक पाठ का विकास प्रश्नोत्तर विधि के माध्यम से करेगा।

| पाठ्य वस्तु | विधि | चाकबोर्ड कार्य |
|---|---|---|
| गरीबी एक ऐसी स्थिति या दशा है सिमें भोजन वस्त्र और मकान जैसी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति में अत्यन्त कठिनाई होती है। | गरीबी से क्या तात्पर्य है ? | रोटी, कपड़ा और रहने के स्थान का अभाव |
| अर्थशास्त्र की भाषा में ऐसे लोगों को गरीबी से पीड़ित और गरीबी रेखा से नीचे का जीवन व्यतीत करने वाला माना जाता है। | अर्थशास्त्र की दृष्टि से ऐसी स्थिति किन लोगों की होती है ? | गरीबी से पीड़ित और गरीबी रेखा से नीचे का जीवन व्यतीत करना। |
| ऐसी व्यवस्था को आर्थिक दृष्टि से व्यापक निर्धनता की स्थिति कहा जाएगा। | जिस देश में अधिकांश लोग गरीबी की रेखा से निम्न स्तर का जीवन व्यतीत करते हों तो ऐसी व्यवस्था को क्या कहा जाएगा ? | व्यापक निर्धनता |
| आज भारत में लगभग 28 करोड़ लोग गरीबी से पीड़ित हैं। | वर्तमान भारत में कितने लोग गरीबी से पीड़ित हैं ? | लगभग 28 करोड़ लोग |
| इस दिशा में मुख्य रूप से दो कदम उठाए गए हैं। पहला कदम इस बात पर जोर देता है कि गरीब और गरीबी रेखा से भिन्न स्तर का जीवन व्यतीत करने वालों की पहचान की जाए। दूसरा कदम है कि इसकी संख्या का पता लगाया जाए। | गरीबी दूर करने के लिए सरकार किस प्रकार के प्रयास कर रही है ? | गरीब लोगों की पहचान और उनकी संख्या का पता लगाना। |

| | | |
|---|---|---|
| इसके लिए दो तरीकों को अपनाया जाता है। पहला किसी परिवार द्वारा वस्तुओं पर किये गये खर्च को मालूम करना। दूसरा परिवार द्वारा की गई कमाई का पता लगाना।<br>1. कृषि का विकास<br>2. जनसंख्या पर रोक<br>3. उद्योगों का विकास<br>4. लघु और कुटीर उद्योगों का विकास<br>5. आय के असमान वितरण में कमी।<br>6. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम<br>7. आधारभूत क्रियाओं जैसे यातायात आदि का विकास | गरीबों की संख्या का पता लगाने के लिए किन-किन तरीकों को अपनाया जाता है ?<br><br>सरकार ने निर्धनता अथवा गरीबी को दूर करने हेतु किन उपायों को अपनाया है ?<br><br>शिक्षक अन्य छात्र से पूछता है कि कोई और अन्य उपाय। | वस्तुओं पर किये खर्च से और परिवार द्वारा गई अर्जित आय से।<br><br>कृषि का विकास।<br>जनसंख्या पर रोक।<br>उद्योगों का विकास।<br>आय के असमान वितरण में कमी आदि। |
| जब किसी व्यक्ति को जीविकोपार्जन हेतु कोई काम या नौकरी नहीं मिलती तो उसे बेरोज़गार कहा जाता है।<br><br>1. समन्वित विकास कार्यक्रम<br>2. अकाल पीड़ित प्रदेशों के लिए ग्राम निर्माण योजना।<br>3. स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण।<br>4. जवाहर रोजगार योजना।<br>5. पशु-पालन और कृषि का विकास।<br>6. रोजगार गारन्टी स्कीम | शिक्षक यह कथन करते हुए कहेगा कि दूसरी समस्या बेरोज़गारी की है और वह छात्रों से प्रश्न करता है कि बेरोज़गारी से क्या तात्पर्य है?<br>बढ़ती बेरोज़गारी को कैसे दूर किया जाए ? | किसी काम या नौकरी का न मिलना बेरोज़गारी है।<br><br>बेरोज़गारी को दूर करने हेतु अनेक उपाय हैं जिनकी हमने चर्चा की है और उनमें से मुख्य हैं–अकाल पीड़ित प्रदेशों के लिए स्वयं रोज़गार योजना। |



| पाठ योजना | | |
|---|---|---|
| 7. लघु और कुटीर उद्योगों का विकास।<br>8. शहरी लोगों के लिए स्वयं रोजगार योजना।<br>9. शिक्षित बेरोज़गारों को स्वयं रोजगार योजना।<br>कीमतों के निरन्तर बढ़ते रहने से महंगाई होती है। इन कीमतों की बढ़ने की प्रवृत्ति को मुद्रा स्फीति भी कहा जाता है।<br>1. भारत जैसे देश में महंगाई रोकने के लिए कृषि औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि की जानी चाहिए।<br>2. गैर-विकासात्मक सरकारी व्यय को कम किया जाना चाहिए।<br>3. जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण किया जाए।<br>4. मुद्रा की पूर्ति की वृद्धि दर में कमी।<br>5. आवश्यक वस्तुओं पर लगाए जाने वाले करों की कमी।<br>6. घाटे की वित्त व्यवस्था में कमी।<br>7. सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अधिक व्यापक बनाना। | शिक्षक किसी अन्य छात्र से पूछता है कि कोई और उपाय बताओ।<br><br>शिक्षक यह बताएगा कि तीसरी समस्या महंगाई की और छात्रों से प्रश्न करेगा कि महंगाई से क्या अभिप्राय है ?<br><br>महंगाई को रोकने के लिए क्या किया जाना चाहिए।<br>उपरोक्त प्रश्न का उत्तर पाने हेतु शिक्षक को दो या दो से अधिक छात्रों से प्रश्न पूछना चाहिए। | स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण लघु और कुटीर उद्योगों का विकास।<br>प्रधान मन्त्री योजना आदि।<br><br>कीमतों का बढ़ना या मुद्रा स्फीति का बढ़ना महंगाई का कारण बनता है।<br><br>कृषि और उद्योगों में विकास।<br>सरकारी व्यय में कमी।<br>जनसंख्या पर नियन्त्रण।<br>करों में कमी।<br>सार्वजनिक वितरण प्रणाली को व्यापक बनाना। |

सारांश रूप में शिक्षक कहेगा कि उपरोक्त तीन मुद्दे भारत की आर्थिक प्रगति में बहुत बड़ी समस्या बने हुए हैं और इनका समाधान करना बहुत आवश्यक है। इन तीनों समस्याओं का मूलभूत कारण भारत में जनसंख्या विस्फोट है जिस पर नियन्त्रण करना बहुत आवश्यक है।

**पुनरावृत्ति–**

1. भारत में आर्थिक विकास में कौन-कौन सी बाधाएं हैं ?
2. गरबी (निर्धनता) से क्या तात्पर्य है ?
3. निर्धनता को किस प्रकार कम किया जा सकता है।
4. बेरोज़गारी की समस्या का समाधान किस प्रकार सम्भव हो सकता है ?
5. महंगाई को रोकने हेतु किन-किन उपायों को अपनाना चाहिए ?
6. गरीबी, बेरोज़गारी और महंगाई के मूलभूत कारण कौन-कौन से हैं ?

**गृह कार्य–**छात्र अध्यापक छात्र-छात्राओं को उपरोक्त शीर्षक पर संक्षिप्त रूप में अपने विचारों को लिखित रूप में प्रकट करने के लिए कहेगा।

* * *





## पाठ योजना-2

अनुक्रमांक–...
विषय–अर्थशास्त्र
उपविषय–उत्पादकता एवं उसका महत्त्व

कक्षा–दसवीं
अवधि–40 मिन्ट
औसत आयु–15 वर्ष
दिनांक–

**सहायक सामग्री**–उत्पादकता से सम्बन्धित चार्ट।

**सामान्य उद्देश्य–**

1. छात्र-छात्राओं को अर्थशास्त्र का सामान्य ज्ञान प्राप्त करना।
2. छात्र-छात्राओं को अपने देश के आर्थिक ढांचे एवं उसकी समस्याओं को सुलझाने के तरीकों से अवगत कराना।
3. उन्हें दैनिक जीवन के आर्थिक पक्ष के विषय में सोचने के लिए प्रेरित करना।
4. वस्तुओं के उत्पादन, वितरण, उपभोग आदि के ज्ञान से परिचित कराना।
5. जीवन में विनिमय, सहयोग और आदान-प्रदान के महत्त्व का ज्ञान कराना।
6. छात्र-छात्राओं की बौद्धिक, तर्क-वितर्क एवं वैचारिक शक्तियों का विकास करना।
7. किसानों, दलितों और मजदूरों की समस्याओं से परिचित कराना और उनके प्रति सहानुभूति के भावों का विकास करना।

**विशेष उद्देश्य**–छात्र-छात्राओं को उत्पादकता एवं उसके महत्त्व के बारे में जानकारी देना।

**पूर्व ज्ञान**–छात्र-छात्राएं इस बात को जानते हैं कि अपने दैनिक जीवन में जिन वस्तुओं का उपयोग और उपभोग करते हैं, उनका उत्पादन किया जाता है।

**पूर्व ज्ञान परीक्षा ( प्रस्तावना )–**

1. हम अपने दैनिक जीवन में जो वस्त्र पहनते हैं उसकी प्राप्ति हमें कहां से होती है अर्थात् किस रूप में होती है।
2. कृषि के माध्यम से किन-किन खाने की वस्तुओं को प्राप्त किया जा सकता है ?
3. बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए कृषि और औद्योगिक क्षेत्र में हमें किस प्रकार के प्रयास करने चाहिए ?

**उद्देश्य कथन**–छात्राध्यापक छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए कहेगा कि आज हम उत्पादन और उसके महत्त्व के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

**प्रस्तुतीकरण**–पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण एवं विकास प्रश्नोत्तर विधि के माध्यम से किया जाएगा।

| पाठ्य वस्तु | विधि | चाकबोर्ड कार्य |
|---|---|---|
| कृषि के क्षेत्र में उत्पादकता का मापन दो प्रकार से किया जा सकता है–प्रति एकड़ उत्पादकता और प्रति व्यक्ति (श्रमिक) उत्पादकता। खेती के कुल उत्पादन में यदि कुल बोई गई एकड़ भूमि से भाग दे दें तो प्रति एकड़ उत्पादकता निकल आती है।<br>इसी प्रकार यदि हम कुल उत्पादन में कुल किसानों की संख्या से भाग दो दें तो प्रति किसान (श्रमिक) उत्पादकता आ जाएगी। | शिक्षक विषय या पाठ्य-वस्तु को प्रस्तुत करते हुए कहेगा कि भारत के लोगों की आयु दनिया के दूसरे देशों की अपेक्षा कम है। इसका कारण है कि भारत में उत्पादकता के स्तर का निम्न होना। हमारे देश में सभी क्षेत्रों में उत्पादकता का स्तर काफी निम्न है।<br>यह बताने के बाद शिक्षक छात्र-छात्राओं से प्रश्न करेगा कि उत्पादकता से क्या तात्पर्य है ?<br>शिक्षक छात्र-छात्राओं को अवगत कराएगा कि भारत में स्वतन्त्रता के बाद कृषि क्षेत्र में वृद्धि हुई है और विशेषकर 1965 के बाद कृषि क्षेत्र में तीव्र गति से वृद्धि हुई है लेकिन यह वृद्धि संसार के विकसित देशों की तुलना में बहुत निम्न है। | प्रति एकड़ उत्पादकता जानने हेतु हम (कुल उत्पादन/कुल बोई हुई भूमि) जैसे कि 60 एकड़ भूमि में कुल 600 क्विंटल कनक पैदा हुई तो प्रति एकड़ उत्पादन 10 क्विंटल कनक 600/60 होगा।<br>प्रति किसान उत्पादकता = कुल उत्पादन/किसानों की संख्या |



| पाठ योजना | | |
|---|---|---|
| उद्योग के क्षेत्र में भी उत्पादकता को दृष्टिकोणों से मापा जा सकता है–प्रति श्रमिक उत्पादकता और निवेश उत्पादकता। कुल उत्पादन में श्रमिकों की कुल संख्या को भाग देकर प्रति श्रमिक उत्पादकता मालूम की जा सकती है। इसी प्रकार कुल उत्पादन में कुल पूंजी का भाग देकर निवेश उत्पादकता निकाली जा सकती है।<br>औद्योगिक क्षेत्र में भी दृष्टिकोण से उत्पादकता का स्तर निम्न है।<br>इसके अनेक कारण हैं।<br>इसका पहला कारण प्राकृतिक है। भारत मुख्य रूप से कृषि प्रधान देश है। खेती प्रकृति पर निर्भर करती है। कभी-कभी वर्षा के कम होने से या बहुत अधिक होने से फसल नष्ट हो जाती है।<br>पूंजी की कमी उत्पादकता के स्तर के कम रहने का एक बहुत बड़ा कारण है क्योंकि उत्पादन हेतु अच्छी और पर्याप्त मात्रा में मशीनों, यन्त्रों और महंगे औजारों का प्रयोग नहीं कर पाते।<br>पुरानी उत्पादन तकनीकियों के प्रयोग के कारण भी उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। | उद्योगों के क्षेत्र में उत्पादकता को किस दृष्टि कोण के आधार पर मापा जाता है ?<br>भारत के उद्योग क्षेत्र में उत्पादकता की स्थिति कैसी है ?<br>भारत में उत्पादकता का स्तर क्यों कम है ?<br>इसका पहला कारण कौन-सा है ?<br>शिक्षक अन्य छात्र से पूछता है कि दूसरा कारण बताओ।<br>शिक्षक किसी अन्य छात्र से पूछता है कि कोई और कारण बताओ। | दो ढंग से मापा जाता है। प्रति श्रमिक उत्पादकता और निवेश उत्पादकता।<br>श्रमिक उत्पादकता = कुल उत्पादन/श्रमिकों की कुल संख्या<br>निवेश उत्पादकता = कुल उत्पादन/कुल पूंजी निवेश<br>उत्पादकता का स्तर निम्न है।<br>प्राकृतिक कारण<br>पूंजी की कमी के कारण अच्छे साधनों का न जुटा पाना।<br>पुरानी तकनीकियों का प्रयोग |

| | | |
|---|---|---|
| इसका एक और कारण यह है कि भारत में आर्थिक और सामाजिक दोनों ही प्रकार के आधारिक संरचना का ढंचा काफी कमज़ोर है। | शिक्षक फिर पूछता है कि इन कारणों के अतिरिक्त कोई और कारण बतलाइए। | आधारिक संरचना का ढांचे का कमजोर होना। |
| उत्पादकता स्तर में सुधार लाने के लिए सर्वप्रथम उन कारणों को दूर किया जाना चाहिए जिनकी वजह से उत्पादन का स्तर निम्न है। | | उत्पादकता के स्तर में किस प्रकार सुधार लाया जा सकता है ? |
| इस दिशा में कई प्रकार के प्रयत्न करने होंगे जैसे कि– | सुधार के अन्य उपाय बताएं। | |
| बचत, निवेश व पूंजी-निर्माण की दर में वृद्धि। अनावश्यक उपभोग को नियन्त्रित करना। परिवहन व संचार साधनों का विस्तार। | | उत्पादन के स्तर को बढ़ाने हेतु अनेक साधनों का प्रयोग करना। |
| बिजली का सिंचाई साधनों का विस्तार। | | |
| प्रबन्ध की कुशलता में वृद्धि करना, आवास, स्वास्थ्य व अन्य नागरिक सुविधाओं को बढ़ाना। इसके अतिरिक्त देश के लोगों में काम करने की भावना का विकास करना। | इन उपायों के अतिरिक्त अन्य उपाय बताइए। | काम करने की भावना का विकास करना। |
| उत्पादन वृद्धि का भारतीय अर्थ व्यवस्था में बहुत महत्त्व है क्योंकि भारत की जनसंख्या लगातार बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में उत्पादन में वृद्धि का होना अत्यन्त जरूरी है। | भारतीय अर्थव्यवस्था में उत्पादन वृद्धि का क्या महत्त्व है ? | जनसंख्या वृद्धि के कारण उत्पादन वृद्धि का बहुत महत्त्व है। |
| इसके अतिरिक्त हम यह भी जानते हैं कि भारत के लोगों का रहन-सहन स्तर काफी निम्न है। | भारत में नागरिकों के रहन-सहन में सुधार कैसे सम्भव हो सकता है ? | उत्पादन में वृद्धि करके ही रहन-सहन का स्तर अच्छा हो सकता है। |



| पाठ योजना | | |
|---|---|---|
| भारतीय नागरिकों के रहन-सहन में सुधार कुल उत्पादकता में वृद्धि करके ही किया जा सकता है। इसके लिए हमें प्रति एकड़ एवं प्रति श्रमिक उत्पादकता में वृद्धि करने पर ही जोर देना होगा। इसी प्रकार उद्योग क्षेत्र में हमें प्रति श्रमिक उत्पादकता बढ़ाने पर ही विशेष बल देना होगा। हमारा देश उत्पादकता में तीव्र गति से वृद्धि करके अपनी राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाकर ही दुनिया के विकसित देशों के मुकाबले में आ सकता है। | हमारा भारत देश विकसित देशों की श्रेणी में कैसे शामिल हो सकता है ? | उत्पादकता में तीव्र गति से वृद्धि करके। |

**पुनरावृत्ति–**

1. उत्पादकता से आपका क्या तात्पर्य है ?
2. स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत में उत्पादकता वृद्धि की प्रवृत्ति कैसी रही ?
3. औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादकता का मापन कैसे किया जाए ?
4. भारत के औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादकता की स्थिति कैसी है ?
5. भारत में उत्पादकता का स्तर क्यों कम है ?
6. उत्पादकता के स्तर में किस प्रकार सुधार लाया जा सकता है ?
7. भारतीय अर्थ व्यवस्था में उत्पादन वृद्धि का क्या महत्त्व है?

**गृह कार्य**–छात्राध्यापक विद्यार्थियों से उत्पादकता एवं उसके महत्त्व पर लिखित कार्य करने के लिए कहेगा।

* * *

## पाठ योजना-3

**अनुक्रमांक–...**

**विषय–अर्थशास्त्र** **कक्षा–दसवीं**

**उपविषय–उद्योगों का स्थानीकरण** **अवधि–40 मिन्ट**

**औसत आयु–15 वर्ष**

**दिनांक–**

**सहायक सामग्री**–विषय-वस्तु से सम्बन्धित चार्ट का प्रयोग।

**सामान्य उद्देश्य–**

1. छात्र-छात्राओं को अर्थशास्त्र का सामान्य ज्ञान प्रदान करना।
2. छात्र-छात्राओं को अपने देश के आर्थिक ढांचे एवं उसकी समस्याओं को सुलझाने के तरीकों से अवगत कराना।
3. उनको दैनिक जीवन के आर्थिक पक्ष के विषय में सोचने के लिए प्रेरित करना।
4. वस्तुओं के उत्पादन, वितरण, उपभोग, उपभोग आदि के ज्ञान से भली-भांति परिचित कराना।
5. जीवन में विनिमय, सहयोग और आदान-प्रदान के महत्त्व का ज्ञान कराना।
6. विद्यार्थियों की मानसिक, बौद्धिक, वैचारिक एवं तर्क-वितर्क शक्तियों का विकास करना।
7. किसानों, मजदूरों, निर्धनों, दलितों की समस्याओं से परिचित कराना और उनके प्रति सहयोग एवं सहानुभूति के भावों का विकास करना।

**विशेष उद्देश्य**–छात्र-छात्राओं को उद्योगों के स्थानीयकरण के विषय में पूर्ण रूप से अवगत कराना।

**पूर्व ज्ञान**–छात्र-छात्राएं को कारखानों और फैक्टरियों के बारे में जानकारी है और स्थानीयकरण शब्द के अर्थ को भी समझते हैं।

**पूर्व ज्ञान परीक्षा ( प्रस्तावना )–**

1. हमारे देश में अधिकांश लोगों का मुख्य व्यवसाय क्या है ?
2. कृषि से हमें कच्चे माल के रूप में क्या-क्या प्राप्त होता है ?
3. गन्ने और कपास के द्वारा किन-किन वस्तुओं का निर्माण किया जा सकता है ?
4. इन सभी वस्तुओं का निर्माण कहां होता है ?

**उद्देश्य कथन**–छात्राध्यापक विद्यार्थियों से कहेगा कि आज उद्योगों के स्थानीयकरण के बारे में पढ़ेंगे।

**प्रस्तुतीकरण**–विषय-वस्तु का विकास प्रश्नोत्तर विधि के माध्यम से किया जाएगा।



| पाठ योजना<br>पाठ्य वस्तु | विधि | चाकबोर्ड कार्य |
|---|---|---|
| सोनीपत में साईकल उद्योग, यमुना नगर में चीनी उद्योग, पानीपत में हथ करघा उद्योग, भिवानी कपड़ा उद्योग आदि। | हरियाणा में कौन-कौन से उद्योग स्थापित हैं ? | साईकल, चीनी, कपड़ा उद्योग। |
| भारत में मुख्य रूप से बिहार और उत्तर प्रदेश में चीनी के कारखाने हैं। | भारत में चीनी उद्योग किन-किन प्रदेशों में स्थित है। | बिहार और उत्तर प्रदेश |
| बिहार और उत्तर प्रदेश में चीनी के कारखाने होने का कारण यह है कि कारखानों को वहां पर कच्चा माल बहुत बड़ी मात्रा में प्राप्त है। अर्थात् वहां पर गन्ना बहुत होता है। | बिहार और उत्तर प्रदेश में ही अधिकांश रूप से चीनी के कारखाने होने का क्या कारण है ? | यहां पर गन्ना बहुत होता है। |
| लोहे के कारखाने बिहार और बंगाल में स्थापित हैं। | लोहे के कारखाने कहां पर स्थित हैं ? | |
| इन प्रदेशों के आस-पास कोयला बहुत होता है और कोयला कारखानों के लिए शक्ति के रूप में काम आता है ? | लोहे के कारखाने इन प्रदेशों में स्थापित होने का मुख्य कारण क्या है ? | यहां पर कोयला बहुत मिलता है जो कारखानों के लिए शक्ति के रूप में प्रयोग में आता है। |
| यह माल बाजारों में बेचा जाता है। | कारखानों में बनाया हुआ माल कहां बेचा जाता है? | बाजारों में |
| कारखानों के समीप (निकट) होने से उपभोक्ताओं को बहुत लाभ होता है। | कारखानों के समीप बाजार होने से किस को लाभ पहुंचता है ? | उपभोक्ता को लाभ होता है। |
| बाजारों के निकट होने से कारखानों में तैयार किया गया माल आसानी से बिक जाता है। | उद्योगों के स्थानीयकरण के लिए बाजारों का निकट होना क्यों आवश्यक है ? | तैयार माल आसानी से बिक जाता है। |
| रेल, बस, ट्रक आदि। | यातायात एवं परिवहन के मुख्य साधन कौन से हैं ? | |

| | | |
|---|---|---|
| उद्योग-धन्धों के लिए अर्थात् स्थानीयकरण के लिए यातायात एवं परिवहन की सुविधा का होना बहुत आवश्यक है। क्योंकि जिन स्थानों पर माल ले जाने और लाने की सुविधा होती है वहां उद्योग धन्धे स्थापित हो जाते हैं। | इन साधनों से उद्योग धन्धों को क्या सहायता मिलती है ? | माल को आसानी से लाया और ले जाया जा सकता है। |
| कच्चा माल और मशीन खरीदने के लिए पर्याप्त रूप से धन की आवश्यकता होती है। | कच्चा माल और मशीनों को खरीदने के लिए हमें किस चीज़ की आवश्यकता होती है। | धन की आवश्यकता |
| अधिकांश मालिक अपने धन को बैंकों में जमा कर देते हैं। आवश्यकता पड़ने पर बैंक से धन निकाल सकते हैं। | कारखानों के मालिक धन को सुरक्षा हेतु कहां पर रखते हैं ? | बैंक में |
| अधिकतर बैंक शहरों (नगरों) में होते हैं। | अधिकांश रूप से बैंक कहां होते हैं ? | शहरों में |
| उद्योगपति शहरों में रहते हैं। | उद्योगपति कहां पर रहते हैं। | |
| जिससे वे शहरों में स्थित बैंकों में धन जमा करवा सकें और निकलवा सकें और आवश्यकता पड़ने पर बैंक से उधार ले सकें। | वे शहरों में क्यों रहते हैं ? | धन को जमा करवाना और निकालना सहज हो सके। |
| कारखाना चलाने के लिए अधिकांश रूप से श्रमिकों की आवश्यकता होती है। कारखानों के स्थानीयकरण के लिए कारखानों के निकट श्रमिकों का उपलब्ध होना बहुत आवश्यक है। | कारखानों के मालिकों को कारखाने में काम करने के लिए किस प्रकार के लोगों की आवश्यकता होती है। | श्रमिकों की आवश्यकता होती है। |



| | | |
|---|---|---|
| पाठ योजना<br>इन सभी शहरों में उद्योग-धन्धों शहरों के उद्योग-धन्धों के स्थानीयकरण का मुख्य कारण श्रमिकों का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना है। | मेरठ, अलीगढ़ और फिरोजाबाद में उद्योग-धन्धों के स्थानीयकरण का मुख्य कारण क्या है ? | श्रमिकों का उपलब्ध होना। |
| सारांश में उद्योगों के स्थानीयकरण के लिए कच्चे माल की सुलभता, शक्ति के साधनों की प्राप्ति, बाजार की निकटता, यातायात एवं परिवहन के साधनों की सुविधा, बैंकों की निकटता की सेवाओं का प्राप्त होना अत्यन्त आवश्यक है। | उद्योगों के स्थानीयकरण के लिए सारांश रूप में क्या कहना उचित होगा? | स्थानीयकरण से सम्बन्धित साधनों की उपलब्धता। |

**पुनरावृत्ति–**

1. उद्योगों के स्थानीयकरण से क्या अभिप्राय है ?
2. स्थानीयकरण के लिए किन-किन तत्त्वों (घटकों) का होना आवश्यक है।
3. चीनी के कारखाने अधिकांश रूप में बिहार और उत्तर प्रदेश में ही स्थापित क्यों हुए?
4. बम्बई, कलकत्ता और अहमदाबाद में उद्योगों के स्थानीयकरण का क्या कारण है ?
5. उद्योगों का स्थानीयकरण मुख्य रूप से किन-किन बातों पर निर्भर करता है ?

**गृह कार्य**–छात्राध्यापक छात्रों से कहेगा कि किसी उद्योग का स्थानीयकरण किन-किन बातों पर निर्भर करता है ? उदाहरण सहित स्पष्ट करने के लिए कहेगा।

* * *

## पाठ योजना-4

**अनुक्रमांक**–...

**विषय**–अर्थशास्त्र
**उपविषय**–पूंजी के रूप

**कक्षा**–दसवीं
**अवधि**–40 मिनट
**औसत आयु**–15 वर्ष
**दिनांक**–

**सहायक सामग्री**–कक्षाकक्ष की आवश्यक सामग्री एवं दो चित्र।

**सामान्य उद्देश्य**–

1. छात्र-छात्राओं को अर्थशास्त्र का सामान्य ज्ञान प्रदान करना।
2. छात्र-छात्राओं को अपने देश के आर्थिक ढांचे एवं उसकी समस्याओं को सुलझाने के तरीकों से अवगत कराना।
3. उनको दैनिक जीवन के आर्थिक पक्ष के विषय में सोचने के लिए प्रेरित करना।
4. वस्तुओं के उत्पादन, वितरण, उपभोग, उपभोग आदि के ज्ञान से भली-भांति परिचित कराना।
5. जीवन में विनिमय, सहयोग और आदान-प्रदान के महत्त्व का ज्ञान कराना।
6. छात्र-छात्राओं की बौद्धिक, तर्क-वितर्क एवं वैचारिक शक्तियों का विकास करना।
7. किसानों, मजदूरों, निर्धनों, दलितों की समस्याओं से परिचित कराना और उनके प्रति सहयोग एवं सहानुभूति के भावों का विकास करना।

**विशेष उद्देश्य**–छात्र-छात्राओं को पूंजी के विभिन्न रूपों से अवगत कराना।

**पूर्व ज्ञान**–छात्र-छात्राओं को उत्पत्ति के विषय में ज्ञान है।

**पूर्व ज्ञान परीक्षा ( प्रस्तावना )**–

1. उत्पादक माल को बेचकर क्या प्राप्त करता है ?
2. धन कमाने में जो धन का भाग काम आता है उसे क्या कहते हैं ?
3. पूंजी कितने प्रकार की होती है ?

**उद्देश्य कथन**–छात्राध्यापक छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए कहेगा कि आज हम पूंजी के विभिन्न रूपों के विषय में अध्ययन करेंगे।

**प्रस्तुतीकरण**–विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण एवं विकास प्रश्नोत्तर विधि के माध्यम से किया जाएगा।



| पाठ्य वस्तु | विधि | चाकबोर्ड कार्य |
|---|---|---|
| किसान अन्न प्राप्त करने के लिए खेत में बीज बोता है। | किसान अन्न प्राप्त करने के लिए खेत में क्या बोता है ? | बीज |
| बीज से अधिक धन किसान को फसल के रूप में प्राप्त होता है। | बीज से अधिक धन किसान को किस रूप में प्राप्त होता है ? | फसल के रूप में |
| बीज किसान के लिए पूंजी है। | बीच किसान के लिए क्या है ? | पूंजी |
| विभिन्न कारखानों को अपने कार्य के लिए कच्चे माल की आवश्यकता होती है। | कारखानों को अपने कार्य के लिए किस पदार्थ की आवश्यकता होती है ? | कच्चे माल की |
| कच्चे माल से कारखाने अधिक धन पक्का माल बेचने के बाद प्राप्त करते हैं। | कारखाने कच्चे माल से अधिक धन कब प्राप्त कर पाते हैं ? | पक्का माल बेचने के बाद |
| कच्चा माल कारखानों के लिए पूंजी है। बीच एवं कच्चा माल एक बार ही प्रयुक्त किया जा सकता है। | अतः कच्चा माल कारखानों के लिए क्या है ? | पूंजी |
| | बीज एवं कच्चा माल कितनी बार प्रयुक्त किया जा सकता है ? | एक बार |
| निष्कर्ष में बीच एवं कच्चा माल जैसे पदार्थ जिनका उपयोग केवल एक बार ही किया जा सके, को हम चल पूंजी कहेंगे क्योंकि इस प्रकार की पूंजी चलायमान अथवा नष्ट होने वाली होती है। | बीज एवं कच्चे माल को हम किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | चल पूंजी |
| कारखानों में उत्पादन के लिए कच्चे माल के अतिरिक्त औजार एवं मशीनों का प्रयोग किया जाता है। | कारखानों में उत्पादन के लिए कच्चे माल के अति रिक्त अन्य किन साधनों का प्रयोग किया जाता है ? | औजार एवं मशीन |
| औजार एवं मशीनें कारखाने को अधिक धन कमाने में सहायता करते हैं। | औजार एवं मशीनें कारखानों को किस प्रकार की सहायता करते हैं ? | अधिक धन कमाने में |

| | | |
|---|---|---|
| अतः औजार एवं मशीनें कारखानें के लिए पूंजी है। | अतः औजार एवं मशीनें कारखानें के लिए क्या हैं ? | पूंजी |
| किसान खेती में बीज के अलावा हल, बैल आदि साधनों का प्रयोग करता है। | किसान बीज के अलावा खाद में किन साधनों का प्रयोग करते हैं ? | हल और बैल |
| हल और बैल किसान की अधिक धन कमाने में मदद करते हैं। | हल और बैल आदि उसकी क्या कमाने में मदद करते हैं ? | धन कमाने में |
| अतः हल, बैल किसान के लिए पूंजी हैं। | अतः हल, बैल किसान के लिए क्या हैं ? | पूंजी |
| औजार, मशीन, हल एवं बैल का कई बार प्रयोग किया जा सकता है। | औजार, मशीन, हल और बैल का कितनी बार प्रयोग किया जा सकता है ? | कई बार |
| औजार, मशीन, हल एवं बैल को हम अचल पूंजी कहेंगे। | औजार, मशीन, हल एवं बैल को हम किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | अचल पूंजी |
| | छात्राध्यापक चित्र प्रदर्शित करके निम्नलिखित प्रश्न पूछेगा- | |
| प्रस्तुत चित्र में हम मकान, मशीन, गायिका एवं वकील देखते हैं। | प्रस्तुत चित्र में तुम क्या देखते हो ? | मकान, मशीन, गायिका, वकील |
| मकान, मशीन एवं कच्चा माल पूंजी है। | मकान, मशीन एवं कच्चा माल क्या है ? | पूंजी |
| मकान को धन के द्वारा खरीदा जा सकता है। | मकान को किसके द्वारा खरीदा जा सकता है ? | धन के द्वारा |
| मशीन एवं कच्चा माल धन के द्वारा खरीदा जा सकता है। | मशीन एवं कच्चा माल किसके द्वारा खरीदा जा सकता है ? | धन के द्वारा |
| देखी व खरीदी जाने वाली वस्तुओं को हम भौतिक वस्तुओं के नाम से पुकारते हैं। | देखी व खरीदी जाने वाली वस्तुओं को हम किस नाम से पुकारते हैं ? | भौतिक वस्तुओं |
| हम, मकान, मशीन एवं कच्चे माल को भौतिक पूंजी कहेंगे। | हम मकान, मशीन एवं कच्चे माल को कैसी पूंजी कहेंगे ? | भौतिक |





| | | |
|---|---|---|
| गायिका अधिक धन गाकर कमा सकती है। | गायिका अधिक धन किस प्रकार कमा सकती है। | गाकर |
| अतः गाना गायिका के लिए पूंजी है। | अतः गाना गायिका के लिए क्या है ? | पूंजी |
| वकील अधिक धन कमाने के लिए मस्तिष्क का उपयोग करता है। | वकील अधिक धन कमाने के लिए शरीर के किस भाग का उपयोग करता है ? | मस्तिष्क |
| गायिका एवं वकील की योग्यता को हम आंखों से देख नहीं सकते हैं। | गायिका एवं वकील की योग्यता को देखने में क्या कठिनाई होती है ? | आंखों से नहीं देख सकते |
| गायिका एवं वकील की योग्यता को क्रय-विक्रय नहीं किया जा सकता है। | गायिका एवं वकील की योग्यता के क्रय-विक्रय में क्या कठिनाई है ? | क्रय-विक्रय नहीं होता। |
| ऐसी वस्तुएं जिन्हें हम देख व क्रय-विक्रय नहीं कर सकते, उन्हें अभौतिक वस्तुएं कहते हैं। | ऐसी वस्तुएं जिन्हें हम देख व क्रय-विक्रय नहीं कर सकते, उन्हें किस प्रकार की वस्तुएं कहते हैं ? | अभौतिक वस्तुएं |
| गायिका एवं वकील की योग्यता को हम अभौतिक पूंजी कहेंगे। अभौतिक पूंजी को हम दूसरे शब्दों में व्यक्तिगत पूंजी कहते हैं क्योंकि गाना एवं मस्तिष्क का कार्य व्यक्ति विशेष से सम्बन्धित होता है। | गायिका एवं वकील की योग्यता को किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | अभौतिक पूंजी |
| उत्पादन के लिए कारखानों को कच्चा माल, औजार एवं मशीन आदि की आवश्यकता होती है। | उत्पादन के लिए कारखानों को किन पदार्थों की आवश्यकता होती है ? | कच्चा माल, औजार एवं मशीन |
| उत्पादन में सहयोग देने वाली वस्तुओं एवं साधनों को हम उत्पादन पूंजी कहेंगे। | उत्पादन में सहयोग देने वाली वस्तुओं को हम किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | उत्पादन पूंजी |
| श्रमिक कारखानों को अधिक धन कमाने में सहायता करते हैं। अतः कारखानों के लिए श्रम पूंजी है। | कारखानों के लिए श्रम क्या है ? | श्रम पूंजी |

| | | |
|---|---|---|
| श्रमिक भोजन, वस्त्र मकान आदि का उपभोग करता है। अत: उपभोग किये जाने वाले पदार्थों को हम उपभोग पूंजी कहते हैं। | श्रमिक द्वारा उपभोग किये जाने वाले पदार्थों को हम किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | उपभोग पूंजी |
| श्रमिक को काम करने के बदले वेतन मिलता है। अत: श्रमिक के वेतन को हम वेतन पूंजी कहेंगे। | श्रमिक के वेतन को हम कैसी पूंजी कहेंगे ? | वेतन पूंजी |
| श्रमिक अपने कार्य में औजार,यन्त्र एवं मशीन से सहायता प्राप्त करता है। अत: औजार, यन्त्र एवं मशीन को हम सहायक पूंजी कहेंगे। | औजार, यन्त्र एवं मशीन को हम कैसी पूंजी कहेंगे ? | सहायक पूंजी |
| रेलगाड़ी का इंजन धन कमाने में सहायता करता है। अत: इंजन पूंजी है। | इंजन क्या है ? | पूंजी |
| रेल के इंजन का प्रयोग एक अर्थ में किया जाता है। अत: इंजन को हम एक अर्थी पूंजी कहेंगे। | एक अर्थ में प्रयुक्त होने के कारण इंजन को हम किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | एक अर्थी पूंजी |
| मुद्रा बहुत से अर्थों में धन कमाने के काम आती है। अत: मुद्रा को हम बहुअर्थी पूंजी कहेंगे ? | मुद्रा को हम किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | बहुअर्थ पूंजी |
| प्रस्तुत चित्र में हम रेडियो पंखा एवं मकान देखते हैं। | छात्राध्यापक चित्र प्रदर्शित करके निम्न प्रश्न पूछेगा– प्रस्तुत चित्र में हम क्या देखते हैं ? | |
| एक व्यक्ति के पास ये सब होने पर इन्हें हम व्यक्तिगत पूंजी कहेंगे। | एक व्यक्ति के पास ये सब होने हम पर इन्हें किस प्रकार की पूंजी कहेंगे ? | व्यक्तिगत पूंजी |
| लाइब्रेरी एवं स्कूल का प्रयोग अधिक व्यक्ति करते हैं। | प्रस्तुत चित्र में तुम लाइब्रेरी देख रहे हो। लाइब्रेरी एवं स्कूल का उपयोग कितने व्यक्ति करते हैं ? | अधिक व्यक्ति |



| पाठ योजना | | |
|---|---|---|
| अत: विद्यालय एवं लाइब्रेरी को हम सार्वजनिक पूंजी कहेंगे। | विद्यालय एवं लाइब्रेरी को कैसी पूंजी कहेंगे ? | सार्वजनिक पूंजी |
| रेल एवं डाकखाने का संचालन स्वयं सरकार करती है। | चित्र में तुम रेल, डाकखाना देख रहे हो। रेल, डाकखाने का संचालन कौन करता है ? | सरकार |
| रेल एवं डाकखाने को हम सरकारी अथवा सम्पूर्ण राष्ट्र की पूंजी कहेंगे। | रेल एवं डाकखाने को हम कैसी पूंजी कहेंगे ? | राष्ट्र पूंजी |
| समुद्र में आने जाने का सभी देशों को अधिकार है। | प्रस्तुत चित्र में तुम समुद्र देख रहे हो, समुद्र में आने जाने का कितने देशों को अधिकार है। | सभी देशों को |
| समुद्र को हम अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी कहेंगे। | समुद्र को हम कैसी पूंजी कहेंगे ? | अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी |
| देश के बाहर की पूंजी को हम विदेशी पूंजी कहेंगे। | देश के बाहर की पूंजी को हम कैसी पूंजी कहेंगे ? | विदेशी पूंजी |
| देश के अन्दर की पूंजी को हम देशी पूंजी कहेंगे। | देश के अन्दर की पूंजी को हम कैसी पूंजी कहेंगे ? | देशी पूंजी |

**पुनरावृत्ति–**

1. चल एवं अचल पूंजी का भेद उदाहरण देकर समझाइए।
2. भौतिक पूंजी एवं व्यक्तिगत पूंजी में क्या भेद है ?
3. उत्पादन पूंजी और उपभोग पूंजी में क्या अन्तर है ?
4. एक अर्थी एवं बहुअर्थी पूंजी का अन्तर स्पष्ट कीजिए।
5. राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय विदेशी एवं देशी पूंजी से क्या तात्पर्य है ?

**गृह कार्य**–पूंजी के विभिन्न रूपों को अपने शब्दों में उदाहरण सहित विस्तार से लिखिए।

* * *

## पाठ योजना-5

**अनुक्रमांक**–...

**विषय**–अर्थशास्त्र

**उपविषय**–मांग का सिद्धान्त

(Law of Demand)

**कक्षा**–ग्यारहवीं

**अवधि**–40 मिनट

**औसत आयु**–17 वर्ष

**दिनांक**–

**सहायक सामग्री**–मांग के नियम की तालिका रेखाचित्र, मांग के नियम का चार्ट [illegible] लिखी हुई मार्शल की परिभाषा एवं मॉडल।

**सामान्य उद्देश्य**–

1. छात्र-छात्राओं को अर्थशास्त्र का सामान्य ज्ञान प्रदान करना।
2. उन्हें दैनिक जीवन के आर्थिक पक्ष के विषय में सोचने के लिए प्रोत्साहित करना।
3. उनको अर्थशास्त्र के नियमों से अवगत कराना।
4. छात्र-छात्रों को अपने देश के आर्थिक ढांचे एवं उसकी समस्याओं को सुलझाने के तरीकों से अवगत कराना।
5. वस्तुओं के उत्पादन वितरण, उपभोग, उपयोग आदि के ज्ञान से पूरी तरह से परिचित कराना।
6. जीवन में विनिमय, सहयोग एवं आदान-प्रदान के महत्त्व का ज्ञान कराना।
7. उनकी मानसिक बौद्धिक तर्क-वितर्क एवं वैचारिक शक्तियों का विकास करना।
8. उनकी निर्धनों, किसानों, मजदूरों और गरीबी रेखा से निम्न स्तर का जीवन जीने वाले गरीबों की समस्याओं से परिचित कराना और उनके प्रति सहानुभूति के भावों का विकास करना।

**विशेष उद्देश्य**–छात्र-छात्राओं को मांग के नियम के बारे में पूर्ण रूप से भली-भान्ति जानकारी देना।

**पूर्व ज्ञान**–छात्र-छात्राएं साधारण बोल-चाल की भाषा में मांग के अर्थ से परिचित हैं क्योंकि वे अपने अभिभावकों के समक्ष अपनी मांगों को प्रस्तुत करते हैं।

**पूर्व ज्ञान परीक्षा ( प्रस्तावना )**–

1. मांग से आप क्या समझते हैं ?
2. व्यक्ति किसी वस्तु की मांग कब करता है ?
3. हम दैनिक जीवन में प्रयोग में आने वाली वस्तुओं को कहां से खरीदते हैं ?
4. बाजार में जब इन वस्तुओं की कीमत अधिक हो जाती है तो इसका मांग पर क्या प्रभाव पड़ता है।

**उद्देश्य कथन**–छात्राध्यापक छात्र-छात्राओं से कहेगा कि आज मूल्यों के उतार-चढ़ाव से सम्बन्धित मांग के नियम के बारे में पूरी तरह से जानकारी प्राप्त करेंगे।





**प्रस्तुतीकरण**–छात्राध्यापक प्रश्नोत्तर विधि के द्वारा मांग के नियम का स्पष्टीकरण करेगा। छात्राध्यापक समस्या प्रस्तुत करते हुए पाठ वस्तु का विकास करेगा। उदाहरण के रूप में छात्राध्यापक यह कहता है कि अभी-अभी आम का मौसम प्रारम्भ हुआ है और आम बहुत महंगे हैं।

| पाठ्य वस्तु | विधि | चाकबोर्ड कार्य |
|---|---|---|
| बहुत कम लोग आम खरीदेंगे क्योंकि उनकी खरीदने की शक्ति सीमित है। आम की कीमतें घटने पर अधिक लोग आम खरीदना पसन्द करेंगे। | आम बहुत महंगे हैं तो कितने लोग आम खरीदने का साहस कर सकेंगे ? कुछ समय के पश्चात् आम सस्ते हो जाते हैं तो कितने लोग आम खरीदना पसन्द करेंगे ? | कम लोग आम खरीदेंगे। अधिक लोग आम खरीददारी करेंगे। |
| आम की मांग कम हो जाती है अर्थात् कम लोग ही आम खरीदने में समर्थ होते हैं। | आम का मौसम जब समाप्त होने लगता है तो फिर आम की कीमतें बढ़ जाती हैं तो फिर खरीददारी पर क्या प्रभाव पड़ता है अर्थात् आम की मांग में किस प्रकार की परिवर्तन होता है ? | खरीददारी कम हो जाती है मांग घटने लगती है। |
| आम के भाव बढ़ने से मांग में कमी आ जाती है और भाव के घटने से मांग बढ़ जाती है। | आम के भाव बढ़ने या घटने से मांग में किस प्रकार का उतार-चढ़ाव आता है ? | भाव बढ़ने से मांग घटती है और भाव के घटने से मांग बढ़ती है। |
| निष्कर्ष रूप में यह सहज ढंग से कहा जा सकता है कि भाव के घटने से अधिक व्यक्ति खरीददारी करेंगे और भाव के बढ़ने पर कम लोग खरीददारी करेंगे। | इस बात से आप किस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं ? | |

तालिका के माध्यम से स्पष्टीकरण

| आम का मूल्य (रुपयों में) | आम की मांग (किलो में) |
|---|---|
| 40 | 2 |
| 30 | 3 |
| 25 | 4 |
| 20 | 5 |
| 15 | 6 |
| 12 | 7 |
| 10 | 8 |

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि जैसे-जैसे आम की कीमत घटती है वैसे-वैसे मांग अधिक होती है।

दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब मूल्य कम है तो मांग अधिक होती है परन्तु इसके विपरीत जब मूल्य अधिक है तो मांग कम है।

भावी शिक्षण स्पष्टीकरण देते हुए कहता है कि मांग और मूल्य में एक प्रकार का विपरीत सम्बन्ध पाया जाता है।

भावी शिक्षक चार्ट को लिखी हुई मार्शल की परिभाषा को पढ़ने के लिए कहेगा जो इस प्रकार है, "यदि अन्य बातें समान रहें तो मूल्य के कम होने पर मांग में वृद्धि और बढ़ने पर मांग में कमी आ जाती है।"

भावी शिक्षक कहेगा कि मार्शल की परिभाषा से यह पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाता है कि कीमतों के घटने पर मांग बढ़ जाती है और इसके विपरीत कीमतों के बढ़ने पर मंग घट जाती है। इसे ही मांग का नियम कहा जाता है।

**पुनरावृत्ति–**

1. मनुष्य किसी चीज की मांग कब करता है ?
2. मांग से क्या अभिप्राय है ?
3. मांग और मूल्य में किस प्रकार का सम्बन्ध है ?
4. मूल्यों के घटने और बढ़ने का क्या प्रभाव पड़ता है ?
5. मार्शल ने मांग के बारे में क्या कहा है ?

**गृह कार्य**–छात्राध्यापक (भावी शिक्षक) छात्राओं को मांग के नियम को उदाहरण सहित स्पष्टीकरण के लिए कहेगा।

# UNIT—III

## शिक्षण और सीखने के संसाधन और प्रक्रिया
## (Teaching Learning Resources and Process)

1. अर्थशास्त्र का एक अच्छा पाठ्यक्रम तैयार करने का अर्थ, महत्व और सिद्धांत, अर्थशास्त्र में मौजूदा पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण मूल्यांकन, सुधार के लिए सुझाव। अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम आयोजन के प्रस्ताव
2. शिक्षण अधिगम सामग्रीः पाठ्यपुस्तक और संदर्भ पुस्तकें, वृत्तचित्र, ग्राफ, टेबल्स, समाचार पत्र, पुस्तकालय और ई-संसाधन (ब्लॉग, वर्ल्ड वाइड वेब, और सोशल नेटवर्किंग)
3. अर्थशास्त्र शिक्षण के कौशलः व्याख्या करने का कौशल, उदाहरणों द्वारा दृष्टान्त कौशल, खोजपूर्ण प्रश्न कौशल और उद्दीपन परिवर्तन कौशल

# 1
## CHAPTER

# अर्थशास्त्र का एक अच्छा पाठ्यक्रम तैयार करने का अर्थ, महत्व और सिद्धांत, अर्थशास्त्र में मौजूदा पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण मूल्यांकन, सुधार के लिए सुझाव। अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम आयोजन के प्रस्ताव

## (Meaning, Importance and Principles of Designing a Good Curriculum of Economics, Critical Appraisal of the Existing Curriculum in Economics, Suggestions for Improvement. Approaches of Organizing the Curriculum of Economics)

### भूमिका

### (Introduction)

अर्थशास्त्र का क्षेत्र बहुत विशाल है। यह विषय माध्यमिक विद्यालय में नवम् कक्षा से पढ़ाया जाता है। अर्थशास्त्र को चुनावी ऐच्छिक मानवीय विषयों के समूह में रखा गया है। अर्थशास्त्र की शिक्षण सामग्री का चयन और संगठन की समस्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, क्योंकि शिक्षण सामग्री और सहायक सामग्री का विस्तार होता जा रहा है। यदि अन्य विषयों की तरह अर्थशास्त्र में पाठ्यक्रम का चुनाव भी इस विषय के उद्देश्यों को सम्मुख रखते हुए किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम उद्देश्यों की पूर्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शिक्षा के तीन महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं–

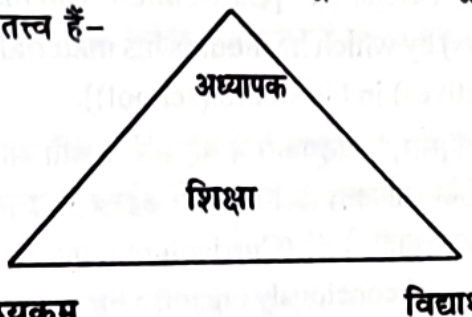

इन तीनों तत्त्वों में पाठ्यक्रम एक ऐसा महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जिसको निर्धारित करना अध्यापक और विद्यार्थी के लिए अनिवार्य है। "कब और कैसे" पढ़ाया जाए ? यह बात उस समय निरर्थक हो जाती है जब तक कि यह निर्णय न लिया जाए कि पढ़ाना क्या है ? पाठ्यक्रम में वह साधन है जिसके द्वारा विद्यार्थी अर्थव्यवस्था का अध्ययन उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयत्न करता है। पाठ्यक्रम (Curriculum) लातीनी (Latin) भाषा के शब्द 'currere' से बना है जिसका तात्पर्य है 'मार्ग' जिस में ऊपर घोड़े दौड़ते हैं (Race course) इस प्रकार ही पाठ्यक्रम वह मार्ग है जिस पर चल कर विद्यार्थी अपनी मंजिल पर पहुँचते हैं।

## परिभाषाएँ
## (Definitions)

भिन्न-भिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने पाठ्यक्रम की निम्नलिखित परिभाषाएं दी हैं।

मुनरों के शब्दों में, "पाठ्यक्रम में वह सारे अनुभव आते हैं जिनको स्कूल द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोग किया जाता है।" (Curriculum embodies all the experiences which are utilised by the school to attain the aims of Education)

क्रो और क्रो (Crow and Crow) अनुसार "पाठ्यक्रम में शिक्षार्थी के स्कूल के भीतर और बाहर के सभी अनुभव आते हैं। उस प्रोग्राम में शामिल है जो उसके बौद्धिक, शारीरिक, भावात्मक, सामाजिक, आत्मिक और नैतिक विकास के लिए तैयार किए जाते हैं।"

(Curriculum includes all the learner's experiences in or outside school, that are included in a programme which has been devised to help him develop mentally, Physically, emotionally socially, spiritually and Morally).

हार्लोड अलबर्टी (Harold Alberty) अनुसार, "पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की उन क्रियाओं का जोड़ है जो शिक्षा उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए स्कूल की तरफ से आयोजित की जाती है।" (Currilulum may be defined as the sum total of student activities which the school sponsors for the purpose of achieving its objectives).

कनिंघम (Conningham) अनुसार, "पाठ्यक्रम कलाकार (अध्यापक) के हाथों में, वह औज़ार हैं जिससे वह अपने पदार्थ (विद्यार्थी) को अपने मन्तव्य (उद्देश्य) अनुसार अपने स्टूडियो (स्कूल) में ढालता है।" [Curriculum is an instrument in the hands of an artist (teachers) by which he moulds his material (students) according to his ideals (objectives) in his studio (school)].

पाईनी (Piyene) अनुसार, "पाठ्यक्रम में वह सारी स्थिति आ जाती है जो कि विद्यालय की तरफ से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास में उद्देश्य से उनमें परिवर्तन करने के लिए चयनित या आयोजित की जाती है।" (Curriculum consists of all situation that school may select or and conciously organise for the purpose of developing the personality of its pupils and making behavioural changes in them).



सैकण्डरी ऐजूकेशन कमिशन (1952-53) (Secondary Education Commission 1952-53) अनुसार सर्वोत्तम आधुनिक शिक्षा विचारों के अनुसार, "पाठ्यक्रम से तात्पर्य विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले परम्परागत शैक्षणिक विषय में ही नहीं, बल्कि इसमें विद्यालय में कक्षा कक्ष और पुस्तकालय में, प्रयोगशाला में, वर्कशाप में खेल के मैदान में और अध्यापक विद्यार्थियों के बीच अनौपचारिक संबंधों सहित सरगर्मीयाँ शामिल हैं।"

The best Modern educational thoughts, curriculum does not mean only the academic subjects, traditionally taught in schools, but it includes the activities that go in the school, in the classroom, Liberary, Laboratory, workshop, play-grounds and in the humerous informal contacts between teachers and the pupils.

हैनरी जे. ओटो (Herry J. Otto) के अनुसार, "पाठ्यक्रम उस यन्त्र के समान है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को शिक्षा के उद्देश्य को प्राप्त करने के योग्य बनाने की इच्छा रखी जाती है।" ("The curriculum may be considered as the vehical whereby and through which we hope to enable children to achieve the objectives of education.")

कार्टर वी. गुड (Carter V. Good) की Dictionary of Education के अनुसार, "पाठ्यक्रम विषय सामग्री और नियोजित अनुभवों का समूह है जिसे एक विद्यार्थी स्कूल या कॉलेज के निर्देशन में प्राप्त करता है।" ("Curriculum is a group of courses and planned experiences which a student get under the guidance of the school or college.")

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम में वह सारी क्रियाएं या अनुभव शामिल होते हैं जिसे बच्चा अपने विद्यार्थी जीवन में शिक्षा अधिकारी के मार्गदर्शन द्वारा प्राप्त करता है। इस तरह पाठ्यक्रम बच्चे की संपूर्ण शिक्षा कहलाता है। (Curriculum includes all these activities, experiences and environment which the educand receives during his Educational career and the guidance of Educational authorities. Thus, it is called the total education of the child).

इस प्रकार पाठ्यक्रम के बिना शिक्षण अधिगम की कल्पना करना भी मूर्खता कहलाती है।

## अर्थशास्त्र में पाठ्यक्रम तैयार करने के सिद्धान्त
## (Principles of Curriculum Construction in Economics)

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम के लिए विषय सामग्री का चयन करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य है। पाठ्यक्रम तैयार करने से तात्पर्य विषय सामग्री का चयन करते समय निम्नलिखित सिद्धान्तोंका पालन करना चाहिए-

**1. अर्थशास्त्र के मनोरथ और उद्देश्यों की प्राप्ति का सिद्धान्त (Principle of Realisation of Aims and Objectives of Economics)**–उद्देश्य पाठ्यक्रम को इकट्ठा करने में मार्ग-दर्शन करते हैं पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि अर्थशास्त्र के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए एक सीढ़ी का काम करें। बच्चों में आर्थिक चेतना पैदा करना और उनको आर्थिक कठिनाईयों से परिचित करवाने के लिए हमें ऐसे पाठों को पाठ्यक्रम में शामिल करना पड़ेगा जो हम पर रोशनी डाल सकें इस प्रकार पाठ्यक्रम का चुनाव करते समय उन प्रकरणों और क्रियाओं को पाठ्यक्रम में शामिल करना चाहिए जिससे तय किए गए उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके।

**2. बाल केन्द्रीयता का सिद्धान्त (Principle of child centredness)**–विद्यार्थी शिक्षा का धुरा है जिसके आसपास सारी क्रियाएं घूमती हैं। इसीलिए अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम इस प्रकार होना चाहिए जो बच्चों की रुचियों, रुझानों और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के अनुसार हो। अलग-अलग क्रियाओं में विद्यार्थी की धार्मिक और आर्थिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखना आवश्यक है।

**3. समाज केन्द्रीयता का सिद्धान्त (Principle of community centredness)**–मनुष्य एक सामाजिक जीव है, उसने समाज में रहना है। विद्यार्थी समाज का उत्तराधिकारी होता है। व्यक्ति और समाज दोनों के दिल सांझे होते हैं और वह समाज में रहकर मूल्यों के बारे में जानता है। इसलिए, अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम समाज से सम्बन्धित होना चाहिए। सामाजिक भाईचारे की आवश्यकता सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को पाठ्यक्रम का महत्त्वपूर्ण भाग बनाया जाना चाहिए। जिस समाज में विद्यार्थी रहते हैं उनकी आवश्यकताओं और वातावरण को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम का चयन होना चाहिए।

**4. विकास का सिद्धान्त (Principle of development)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम एक साधन है। जिसके द्वारा विद्यार्थी के व्यक्तित्व का विकास किया जाता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों का भावात्मक, ज्ञानात्मक, क्रियात्मक पक्षों का विकास होता है। पाठ्यक्रम का विकास करते समय इन बातों को ध्यान में रखना चाहिए कि किस प्रकार की विषय सामग्री और शिक्षण अनुभवों को शामिल किया जाए कि विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वपक्षीय विकास करके अच्छे नागरिक बनाए जिससे वह देश के विकास में अपना हिस्सा डाल सकें।

**5. क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principle of activiting centredness)**–अर्थशास्त्र एक प्रयोगीय विषय है जिसका मुख्य उद्देश्य ज्ञान प्रदान करना ही नहीं अपितु ठीक प्रकार के व्यवहारों का विकास करना भी है। इसलिए यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम अनुभव प्रदान होना चाहिए जिसका अभिप्राय बच्चों की क्रियाओं को पाठ्यक्रम में उचित स्थान देना चाहिए। पाठ्यक्रम में चार्ट, मानचित्र, मॉडल आदि बनाने की क्रियाओं को शामिल किया जाना चाहिए।

**6. लचकता का सिद्धान्त (Principleof Flexibility)**–कभी-कभी और विज्ञान की उन्नति से सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक मूल्यों में काफी परिवर्तन आया है। शिक्षा



प्रणाली में क्रियाशीलता और कल्पना-शक्ति होना अनिवार्य है। इसलिए यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सकता है। पाठ्यक्रम की सीमाओं को इस प्रकार निर्धारित किया जाना चाहिए कि अध्यापक उनका स्वतन्त्रता से चयन कर सकें। अर्थशास्त्र एक गतिशील विषय है, इसके लिए इसके पाठ्यक्रम में लचीलापन होना चाहिए जिससे जो बदलते समय के साथ-साथ नए विचारों और गतिविधियों को इसमें शामिल कर सकें।

**7. व्यापक विचारों का सिद्धान्त (Principle of Comprehensiveness)**–अर्थशास्त्र का क्षेत्र बहुत ही विशाल और व्यापक है। यह विद्यार्थी के जीवन के साथ जुड़ी प्रत्येक आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। यह विद्यार्थी में व्यक्तिगत, पड़ोस राष्ट्र से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय पक्षों की जानकारी का विकास करता है। इसलिए, अर्थशास्त्रका पाठ्यक्रम विशाल और व्यापक होना चाहिए। इसमें विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुसार विषय सामग्री को शामिल किया जाना चाहिए जिससे सामाजिक, आर्थिक समस्याओं को समझने और उनके सुझाव ढूंढे जा सकने की योग्यता है। यह तभी संभव हो सकता है यदि पाठ्यक्रम संकीर्ण ने बनाकर विशाल, व्यापक और विस्तृत बनाया जा सकें।

**8. उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of Utility)**–पाठ्यक्रम तैयार करते समय उपयोगिता के सिद्धान्त को अवश्य ही ध्यान में रखा जाना चाहिए, यह विद्यार्थियों के व्यवहारिक प्रयोग के लिए भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता हो। पाठ्यक्रम में शामिल क्रियाएं इस प्रकार की होनी चाहिए जो विद्यार्थियों को रोज़ाना कामोंमें मदद करती हो। अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में बैंकिंग, उद्योग, व्यापार,बाज़ार, बीमा आदि से सम्बन्धित व्यवहारिक प्रयोग होने चाहिए, जिनको विद्यार्थी दैनिक जीवन में उपयोग कर सके। यह सब समाज के उपयोगी सदस्य बनने में सहायता करेगा।

**9. दूरदर्शिता का सिद्धान्त (Principle Forward Looking)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम तैयार करते समय भविष्य की आवश्यकताओं को भी ध्यान रखना चाहिए क्योंकि अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को भविष्य के लिए तैयार करना है। उन्होंने अपनी आर्थिक आवश्यकताओं को कैसे पूरा करना है इसके बारे में तकनीकी जानकारी होनी चाहिए। इस प्रकार की विषय सामग्री को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए जो विद्यार्थियों की आर्थिक आवश्यकताओं आर्थिक कठिनाईयों, आर्थिक स्थितियों और आर्थिक परिवर्तनों की जानकारी दे सकें।

**10. सहसम्बन्ध का सिद्धान्त (Principle of correlation)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इसके प्रकरणों और क्रियाओं का चुनाव किया जाए कि एक-दूसरे विषयों से इसका सह-सम्बन्ध स्थापित हो सके इसको लम्ब रूप से सह सम्बन्धित होना चाहिए। इसके अतिरिक्त अर्थशास्त्र की अपनी ही शाखाओं से संबंध होना चाहिए इसको ऊंचे रूप का सह सम्बन्ध कहा जाता है।

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम के लिए चयनित किए गए विषय जीवन और वातावरण से सम्बन्धित होने चाहिए जिससे उनका स्थाई ज्ञान प्राप्त किया जा सकें।

**11. उपयुक्त क्रमबद्धता का सिद्धान्त (Principle of Sequenceness)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम एक उपयुक्त क्रम-बद्धता के आधार से चुना जाना चाहिए। इन से तात्पर्य है कि सभी पाठों का आपस में सह-सम्बन्ध होना चाहिए। प्रत्येक पाठ प्राकृतिक रूप से सम्बन्धित होना चाहिए और इसकी क्रमबद्धता भी नहीं टूटनी चाहिए। बच्चों को पढ़ाए जाने वाले विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए इससे उनकी दिलचस्पी और भाग लेने की प्रवृति बढ़ जाती है।

**12. आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताओं का सिद्धान्त (Principle of Economic and Social Needs)**–अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। आर्थिक समस्याएँ जैसे कि जनसंख्या, बेरोजगारी निर्धनता धन का असमान वितरण आदि के प्रति जागृत करने के साथ-साथ विद्यार्थियों को इन समस्याओं को भी सुलझाने के लिए प्रेरित करना है। डा० मार्शल ने इसके बारे में कहा है कि अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य सामाजिक समस्याओं के सुझाव ढूंढना है। (The main objectives of Economics is the find out a solution to the social Problems).

**13. तत्परता का सिद्धान्त (Principle of readiness)**–पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के शारीरिक मानसिक स्तर को ध्यान में रखते हुए तैयार किया जाना चाहिए। यदि विद्यार्थी उसे पढ़ने के लिए तत्पर नहीं तो उसके ऊपर दबाव नहीं डाला जा सकता और उसको पढ़ने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। इसके लिए आवश्यक है कि विद्यार्थियों को उपयोगी और अनिवार्य ज्ञान प्रदान किया जा सके।

**14. सम्पूर्ण अनुभवों का सिद्धान्त (Principle of totality of experiences)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम तैयार करते समय यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि वो अनुभव की झलक देता हो। इसमें ऐसी सामग्री को शामिल किया जाना चाहिए जो विद्यार्थियों को अपने ही अनुभवों से सीखने के योग्य बनाए। यह गतिविधियों उसे प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करें जिससे वह अपने भविष्य में लाभकारी ढंग से प्रयोग करके समाज का उचित और योग्य सदस्य बन सकें।

**15. व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त (Principle of Individual differences)**–कोई भी दो व्यक्ति एक समान नहीं हो सकते उनमें विभिन्नताएं पाई जाती हैं। पाठ्यक्रम तैयार करते समय व्यक्तिगत भिन्नता को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए बच्चों में व्यक्तिगत रूप से रुचियां, सामर्थ्य, योग्यताएं आदि में भी विभिन्नताएं पाई जाती है। अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम बच्चों के बौद्धिक स्तर के अनुरूप होना चाहिए इसका स्तर औसत स्तर का होना चाहिए जिससे वह सभी विद्यार्थियों के लिए लाभदायक हो सके।



**माध्यमिक शिक्षा आयोग**

**सैकण्डरी ऐजूकेशन कमीशन** (Secondary Education Commission) अनुसार, "व्यक्तिगत भिन्नताओं को मानते हुए आज व्यक्तिगत आवश्यकताओं और रूचियों का समायोजन करने के लिए पाठ्यक्रम में उचित भिन्नता तथा लचीलापन होना चाहिए।"

सी. पी. हिल का विचार (View of C.P. Hill) : सी. पी. हिल ने पाठ्यक्रम तैयार करने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों का परामर्श दिया है–

1. आवश्यकताओं की पूर्ति (Satisfaction of needs) पाठ्यक्रम इस प्रकार नियोजित किया जाना चाहिए कि वह विद्यालय की अनिवार्यताओं की पूर्ति कर सके।
2. अन्य विषयों से सम्बन्धित (Related to other subjects) पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि वह विद्यालय की अनिवार्यताओं की पूर्ति कर सके।
3. बच्चे का मनोविज्ञान (Psychology of the child) पाठ्यक्रम बालकों की मनोविज्ञान अर्थात् रुचियों, योग्यताओं और अवस्थाओं को ध्यान में रखकर भिन्न-भिन्न स्तरों के अनुसार निर्धारित होना चाहिए।
4. लचकता (flexibility) पाठ्यक्रम में लचकता होनी चाहिए जिससे इसमें नए अनुभवों को उचित स्थान दिया जा सके।
5. सामाजिक पुर्ननिर्माण (Social reconstruction) पाठ्यक्रम अधिकतर सामाजिक पुर्नजीवन के निर्माण में साधन का कार्य करे।

इस प्रकार उपरोक्त चर्चा से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में निरन्तर आ रहे परिवर्तनों का प्रभाव इसमें पढ़ाए जाने वाले विषयों पर पड़ता है। इस प्रकार अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम चयन करते समय इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जाना बहुत अनिवार्य है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली के साथ-साथ विश्वीकरण, निजीकरण और उदारीकरण की तेजी से विकसित हो रहा है इसके लिए आवश्यक है कि अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की भविष्य जीवन में तैयारी करवाने में समर्थ हो तभी वह भविष्य से आने वाली कठिनाईयों का मुकाबला डट कर, कर सकेंगे। और अपने भविष्य जीवन की आश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे।

## अर्थशास्त्र में पाठ्यक्रम की रूप रेखा
## (An Outline of Curriculum of Economics)

अर्थशास्त्र का विषय माध्यमिक विद्यालय में नवम् कक्षा से पढ़ाया जाता है। अर्थ विज्ञान को चुनावी मानवीय विषयों के समूह में रखा गया है माध्यमिक शिक्षा के अतिरिक्त मिडल स्तर पर भी इसका अध्ययन सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत करवाया जाता है। इसमें अर्थशास्त्र से सम्बन्धित कुछ आर्थिक क्रियाओं जैसे कि फसलें, कृषि, लघु कुटीर उद्योग यातायात के साधन, संचार के साधन, बैंकिंग प्रणाली, खनिज पदार्थ आदि का ज्ञान प्रदान किया जाता है।

माध्यमिक स्तर पर इस विषय को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। (NCERT) नैशनल कौंसिल आफ़ ऐजूकेशन रिसर्च और ट्रेनिंग द्वारा (National Curriculum Framework NCF) के अन्तर्गत उच्च माध्यमिक स्तर के लिए अर्थशास्त्र के जो पाठ्यक्रम तैयार किए गए हैं वह निम्नलिखित अनुसार है–

**नवम् कक्षा (IX)**

पाठ 1 पालमपुर गांव की कहानी

पाठ 2 मानवीय स्रोत

पाठ 3 निर्धनता एक चुनौती

पाठ 4 भारत में भोजन सुरक्षा

**दशम् कक्षा (X)**

पाठ 1 विकास

पाठ 2 भारतीय अर्थव्यवस्था के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र

पाठ 3 विश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था

पाठ 4 उपभोक्ता अधिकार

**कक्षा ग्यारवीं (XI)**

Part-A Statistics for Economics.

1. Introduction
2. Collection, Organisation and Presentation.
3. Statistical tools and Inerpretation.
4. Developing of Projects in Economics.

Part-B Indian Economic Development.

5. Development Policies and Experiences (1947-90).
6. Economic Reforms Since 1991.
7. Current Challenges Facing Indian Economy.
8. Development experiences of India, A comparison with neighbours.

**कक्षा बाहरवीं (XII)**

Part-A : Introductory Micro Economics.

1. Introduction.
2. Consumer equilibrium and Demand.
3. Producer Behaviour & Supply.



4. Forms of Market and Price Determination.
5. Simple application of tools of demand supply.

Pat-B : Introductory Macro Economics.

6. National Income and Related Aggregates.
7. Money & Banking.
8. Determination of Income and Employment.
9. Government Budget and the Economy.
10. Balance of Payment.

**अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम का समीक्षात्मक विश्लेषण**

**(Critical Evaluation of Curriculum of Economics)**

NCERT द्वारा दर्शाये गए पाठ्यक्रम का समीक्षात्मक विश्लेषण करने के बाद निम्नलिखित तथ्य सामने आते हैं–

**1. सैद्धान्तिक और पुस्तकीय (Theoratical and bookish)**–अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम का अच्छी प्रकार से विश्लेषण करने के बाद चलता है कि मुख्य रूप से शैक्षिक महत्त्व पर जोर दिया गया है। व्यवहारिक पक्ष से इसको अवहेलित किया गया है। पाठ्यक्रम में बल पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करता है जिसका कि विद्यार्थियों के जीवन से कोई संबंध नहीं है। इस पाठ्यक्रम में व्यवहारिक कार्यों के लिए बहुत कम व्यवस्था की गई है। इस प्रकार के पाठ्यक्रम को केवल बच्चे अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए पढ़ते हैं।

**2. संकीर्ण पाठ्यक्रम (Narrow curriculum)**–अर्थशास्त्र में विद्यमान पाठ्यक्रम संकीर्णता से भरपूर है। इसमें पुराने सिद्धान्तों, विचारों को अधिक महत्त्व दिया गया है। इसमें आर्थिक और सामाजिक विकास की सम्भावनाओं के लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं की गई है। यह व्यक्तिगत समस्याओं को सुलझाने के लिए कोई सुझाव नहीं देता।

**3. परीक्षा आधारित ( केन्द्रित ) (Examination Oriented)**–अर्थशास्त्र का वर्तमान पाठ्यक्रम परीक्षा पर आधारित है। इसमें परीक्षा के लिए अधिक महत्त्व दिया गया है। विद्यार्थी पाठ्यक्रम को रट्टा लगाने की कोशिश करते हैं, जिससे उनको परीक्षा में ठीक ढंग से निकाल पाएं। वह इसको समझकर उपयोग नहीं करते उनका मुख्य उद्देश्य केवल अंक लेना बन गया है। इस प्रकार वह अस्थाई ज्ञान प्राप्त करते हैं।

**4. व्यक्तिगत भिन्नताओं की अवहेलना (Ignores individual differences)**– पाठ्यक्रम निर्धारित करने के लिए मुख्य सिद्धान्त व्यक्तिगत भिन्नताओं को भी ध्यान में रखना है परन्तु वर्तमान पाठ्यक्रम इस सिद्धान्त को अवहेलित करना दिखाई देता है। यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की भिन्नताओं, रुचियों और योग्यताओं के अनुकूल नहीं है।

**5. सर्वपक्षीय विकास की कमी (Lack of All round development)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को सर्वपक्षीय विकास करने में जो कि अर्थशास्त्र अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है, योगदान नहीं डालता। यह विद्यार्थियों का कुछ सीमा तक बौद्धिक विकास ही करता है। यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों में आर्थिक चेतना का विकास नहीं करता। क्योंकि इसमें मुख्य रूप आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का ज्ञान नहीं दिया जाता। इस प्रकार यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों का सर्वपक्षीय विकास करने में असफल रहा।

**6. क्रियाओं की कमी (Lack of Activities)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम तैयार करते समय क्रियाशीलता के सिद्धान्त को ओझल किया गया है विभिन्न क्रियाओं के द्वारा बच्चों का रचनात्मक और भावानात्मक विकास होता है अर्थशास्त्र एक ऐसा विषय है जिसमें बहुत सारी ऐसी क्रियाएं हैं जैसे कि, मॉडल, चित्र, ग्राफ, चार्ट आदि बनाने को शामिल किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भिन्न-भिन्न प्रकार के सर्वेक्षण भी किए जा सकते हैं पर इन सभी क्रियाओं को अवहेलित किया गया है।

**7. जीवन सम्बन्धों की कमी (Lack of life relations)**–प्रत्येक विषय का महत्व इस बात से जाना जाता है कि वो विद्यार्थी जीवन की समस्याओं को कैसे सुलझा सकता है या कैसे सहायक हो सकता है। अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में यह कमी पाई गई है कि विद्यार्थियों को आर्थिक समस्याओं का सामना करने में किस प्रकार सहायता मिल सकती है या उनके उपाय क्या हैं ? कई प्रकार की आर्थिक क्रियाएँ हैं जो कि बच्चों को अपने दैनिक जीवन में पूरी करनी होती है यह पाठ्यक्रम क्रियाओं से भली-भांति परिचित नहीं करवाता।

**8. सहसम्बन्ध की कमी (Lack of correlation)**–अर्थशास्त्र को पाठ्यक्रम का चुनाव और संगठन करते समय यह सम्बन्धों के सिद्धान्त का कम ही ध्यान रखा गया है। यदि नवम् कक्षा के पाठ्यक्रम को ध्यानपूर्वक देखा जाए तो इसमें शामिल पाठों में भी कोई संबंध नहीं दर्शाया गया इसके अतिरिक्त अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से भी कोई संबंध न दिखाते हुए इसे एक भिन्न विषय को रूप में लिया गया है।

**9. वातावरण से सम्बन्धित नहीं (Not related with environment)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के वातावरण में सम्बन्धित नहीं किया गया। पाठ्यक्रम द्वारा विद्यार्थियों के भारत के प्राकृतिक साधन, भारत की जनसंख्या की समस्या औद्योगिक कृषि आदि का भी ज्ञान दिया जाता है विद्यार्थी को अपने प्रांत के आर्थिक जीवन, प्राकृतिक साधनों और उद्योगों के बारे में ज्ञान नहीं दिया जाता। इस प्रकार विद्यार्थी आर्थिक रूप से चेतन नहीं होते और अपने प्रांत की आर्थिक उन्नति में योगदान नहीं डाल सकते। इस प्रकार वर्तमान अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के वातावरण से सम्बन्धित नहीं है।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण के उपरान्त हम यह कह सकते हैं कि वर्तमान अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम उद्देश्यों और मनोरथों की प्राप्ति में असमर्थ है। पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय कुछ मुख्य सिद्धान्तों को नजर अंदाज किया गया है। वर्तमान पाठ्यक्रम में कुछ परिवर्तन करके इसको उपयोगी बनाया जा सकता है।



## अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में सुधार के लिए सुझाव
## (Suggestions for improving the Economics Curriculam)

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम को उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुकूल बनाए जाने के लिए कुछ परिवर्तन अनिवार्य है। निम्नलिखित सुझावों का उपयोग करते हुए इसके पाठ्यक्रम को लाभदायक बनाया जा सकता है–

**1. क्रियात्मक केन्द्रित (Activity Oriented)**–अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम क्रियात्मक बनाना बहुत अनिवार्य है। बच्चों को भिन्न-भिन्न क्रियाओं में हिस्सा लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। विद्यार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में व्यवहारिक बनाने के लिए क्रियाओं का बहुत महत्त्व है। इन क्रियाओं जैसे कि मॉडल, चार्ट, ग्राफ, रेखा-चित्र आदि बनाने से किसी समस्या पर सर्वेक्षण करके प्रोजैक्ट तैयार करना आदि। क्रियाएं विद्यार्थियों का सर्वपक्षीय विकास करने में सहायता करती है।

**2. उद्देश्यों और मनोरथों की स्पष्टता (Clarity of aims and objectives)**–पाठ्यक्रम को सुधारने के लिए विषय के उद्देश्य और मनोरथ पूर्ण रूप से स्पष्ट होने चाहिए। प्रत्येक पाठ के अपने कुछ उद्देश्य होते हैं। उदाहरण के लिए, उपभोक्ता के अधिकार के अपने उद्देश्य है जैसे कि विद्यार्थियों का उपभोक्ता के अधिकारों के प्रति चेतन करना, उनको कर्त्तव्य के बारे में जानकारी देना, उपभोक्ता संरक्षण नियम और कानून की स्पष्ट व्याख्या होना बहुत ज़रूरी है। तभी विद्यार्थियों को उसका पूरा लाभ उठाने के लिए अवसर मिल सकेंगे।

**3. व्यक्तिगत भिन्नताओं की ओर ध्यान (Attention towards individual differences)**–पाठ्यक्रम को उपयोगी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उसमें व्यक्ति भिन्नताओं को पूरा ध्यान में रखा जाना चाहिए। ऐसा पाठ्यक्रम तैयार करना चाहिए जो प्रत्येक प्रकार से मानसिक बुद्धि के स्तर के लिए उपयोगी हो। इसमें बच्चों की रुचियों, योग्यताओं और आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

**4. विषयों में पूर्ण तालमेल (Proper Correlation among subjects)**–किसी भी विषय को ठीक ढंग से समझने के लिए यह अनिवार्य है कि विभिन्न विषयों में तालमेल स्थापित किया जाए। इस प्रकार अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम की उपयोगिता को बढ़ाने के लिए इसको भिन्न-भिन्न विषयों से सम्बन्धित करने के साधन और तालमेल को स्थापित करना बहुत आवश्यक है।

**5. कुशलताओं का विकास (Development of skills)**–अर्थशास्त्र को पाठ्यक्रम में इस प्रकार के प्रकरणों को शामिल किया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में भिन्न-भिन्न कुशलताओं का विकास हो सके। विद्यार्थियों में ठीक ढंग से रेखा चित्र बनाना, आंकड़ों को एकत्रित करना, उनका वर्गीकरण करना और व्याख्या करने के कौशल विकास करने वाली क्रियाओं को शामिल किया जाना चाहिए।

**6. पाठ्यक्रम के बोझ को कम करना (Reduce the curriculum Load)**—पाठ्यक्रम को अधिक बोझिल बनाने से रट्टने की प्रवृत्ति का विकास होता है। इसके लिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रम के बोझ को कम किया जाए। केवल उसी पाठ्यक्रम को किया जाए जो कि तय किए गए समय में आसानी से पढ़ाया जा सके। बहुत अधिक पाठ्यक्रम के स्थान पर थोड़ी विषय-सामग्री को ठीक ढंग से तैयार करवाया जाना चाहिए। विद्यार्थी उसी विषय सामग्री को ठीक ढंग से अपनी दिनचर्या में उपयोग कर सकेंगे।

**7. स्थानीय अर्थव्यवस्था पर दबाव (Emphasis on Local Economy)**—विद्यार्थियों को आर्थिक पक्षों को समझने के लिए स्थानीय अर्थव्यवस्था को अधिक महत्त्व देना चाहिए। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की समस्याओं और आवश्यकताओं का प्रभाव विद्यार्थियों के सर्वपक्षीय विकास में इतना नहीं पड़ता जितना कि उन पर स्थानीय अर्थव्यवस्था का पड़ता है इसलिए, आवश्यक है कि अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में स्थानीय आर्थिक पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए आर्थिक साधनों को राष्ट्रीय आर्थिकता में प्रभाव डालने का पूर्ण विकास होना चाहिए।

**8. मूल्यांकन परीक्षा केन्द्रित नहीं होना चाहिए (Evaluation should not be Examination Oriented)**—अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि वह केवल परीक्षा पर ही केन्द्रित ना रहे। यह तभी संभव हो सकता है यदि वह केवल पुस्तकीय ज्ञान पर महत्त्व देने की अपेक्षा सैद्धान्तिक ज्ञान की तरफ भी आकर्षण का केन्द्र रहें। इसके लिए मूल्यांकन तकनीकों का विस्तार होना चाहिए। मूल्यांकन के लिए अलग-अलग साधनों का प्रयोग करना चाहिए।

**9. दूरदर्शिता (Forward Looking)**—अर्थशास्त्र के क्रम को लाभदायक बनाने के लिए उसमें दूरदर्शिता को अधिक महत्त्व देना चाहिए। पाठ्यक्रम में सुधार करके इस प्रकार की विषय वस्तु शामिल करनी चाहिए जो विद्यार्थियों के भविष्य में मदद मिले। उनको कम से कम खर्च करके अधिक से अधिक उपयोगिता की प्राप्ति मांग और पूर्ति के नियमों का ज्ञान, बचत, निवेश, उत्पादन और अर्थव्यवस्था की समस्याओं से परिचित करवाना होना चाहिए।

**10. अध्यापक और विशेष समूहों के विचारों को शामिल करना (Include views of teachers and special groups)**—पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय अनुभवी अध्यापकों के विचारों को शामिल किया जाना चाहिए इसके अतिरिक्त विशेष समूह जैसे कि लेखक, व्यापारी, वकील, अर्थशास्त्री उद्योगपति आदि के विचारों को अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

पाठ्यक्रम में सुधार संबंधी सैकण्डरी शिक्षा कमिशन (1952-53) और कोठारी कमिशन (1964-66) ने भी व्यापक सुझाव दिए हैं। सैकण्डरी कमिशन ने पाठ्यक्रम में संतुलित व्यक्तित्त्व का विकास, लचीलापन, खाली समय का उचित उपयोग, समाज से सम्बन्धित विषयों और आपसी सम्बन्धों, अनुभवों की पूर्णता पर पूर्ण जोर दिया है। दूसरी तरफ कोठारी कमिशन ने अपने सुझावों में पाठ्यक्रम में अन्वेषण, प्रयोगात्मक पाठ्यक्रम की स्वतन्त्रता,



शैक्षणिक तकनीकों पर अधिक दबाव, हस्तश्रम आदि पर दबाव डाला है। इस प्रकार अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम आलोचनात्मक विश्लेषण के बाद हम यह कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम में समय-समय पर परिवर्तन लाने की आवश्यकता है जो कि विद्यार्थियों और समाज की आर्थिकता के अनुसार रूप धारण कर सकें।

## सैकण्डरी शिक्षा कमिशन के सुझाव
## (Suggestion of Secondary Education Commission)

सैकण्डरी शिक्षा कमिशन (1952-53) ने पाठ्यक्रम सम्बन्धी कमियों (न्यूनताओं) को समाप्त करने के लिए निम्नलिखित कुछ सुझाव दिए हैं-

**1. संतुलित व्यक्तित्व का विकास (Development of Balanced Personality)**—अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम कमिशन के अनुसार इस प्रकार का हो कि वह विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का संतुलित विकास करने वाला होना चाहिए। पाठ्यक्रम में इसके लिए अनिवार्य है कि इस प्रकार की क्रियाओं को शामिल किया जाए जो बच्चों के शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक, विकास करने में सहायक सिद्ध हो। इसके लिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रम किताबों या सैद्धान्तिक होने के अपेक्षा व्यवहारिक हो। पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को इस प्रकार के अनुभव करवाने में सहायक होना चाहिए जिससे वह अपने जीवन में आने वाली समस्याओं का सामना कर सकें और उनके उचित उपाय भी ढूंढ सकें।

**2. विभिन्नता और लचीलापन (Variety and Flexibility)**—कमिशन के अनुसार पाठ्यक्रम में विभिन्नता और लचीलापन होना चाहिए ताकि विद्यार्थी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं, योग्यताओं और रुचियों को विकसित किया जा सकें। पाठ्यक्रम को तैयार करते समय विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर को ध्यान में रखना बहुत आवश्यक है। पाठ्यक्रम में परिवर्तन की कोई गुंजाइश होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए उचित और सम्भव परिवर्तन किए जा सकें।

**3. खाली समय का उचित उपयोग (Proper use of Leisure Time)**—पाठ्यक्रम में सुधार सम्बन्धी सैकण्डरी शिक्षा कमिशन के सुझाव के अनुसार पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि विद्यार्थी इसके साथ अपने खाली समय में कुछ न कुछ जरूर प्राप्त कर सकें। यह तभी संभव हो सकता है यदि कुछ इस प्रकार की गतिविधियों को शामिल किया जाए जो कि विद्यार्थियों को खाली समय की उचित उपयोग करने की प्रेरणा प्रदान करें। इसके अतिरिक्त यह कहावत है कि खाली मन शैतान का घर जब विद्यार्थी अपने खाली समय का उचित उपयोग नहीं करेगा तो उनके बौद्धिक विकास में रुकावट आएगी। यदि वह अपने खाली समय का उचित उपयोग करेगा तो उनके बौद्धिक विकास के साथ-साथ उनकी रुचि और व्यस्त क्रमबद्धता का विकास होगा।

**4. समाज से सम्बन्धित (Related to Society)**—पाठ्यक्रम समाज के बहुत नजदीक होना चाहिए। शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों के आवश्यक गुणों का विकास किया जाना चाहिए

जिससे वह अपने देश की पूंजी बन सकें और यह तभी सम्भव है जब विद्यार्थियों में
नागरिक के गुणों का विकास किया जाएगा। पाठ्यक्रम में समाज से सम्बन्धित जैसे
नियम, कानून, सीमाएँ, कर्त्तव्यों और अधिकारों की जानकारी होना बहुत जरूरी है। यह
ही विद्यार्थियों को अपने समाज में रहने के योग्य बना सकते हैं जिससे वह देश और
के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकें।

**5. विषयों का आपसी सम्बन्ध (Inter-relation of the subjects)**—सैकण्डरी
शिक्षा कमिशन के अनुसार प्रत्येक विषय का अन्य विषयों से आपसी सम्बन्ध होना बहुत
जरूरी हैं। इस प्रकार होने से विद्यार्थियों में विषयों को लेकर कोई भी परेशानी नहीं होगी,
और अलग-अलग विषयों को समझाने में आसानी रहेगी।

**6. अनुभवों की सम्पूर्णता (Totality of experiences)**—पाठ्यक्रम में कक्षा और
कक्षा के बाहर, सभी अनुभव शामिल किए जाने चाहिए क्योंकि यह सारे अनुभव बच्चों के
व्यक्तित्व का सर्वपक्षीय विकास करने में सहायक सिद्ध होते हैं। इस प्रकार कमिशन के
अनुसार पाठ्यक्रम को व्यक्तित्व के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित अनुभवों को शामिल करना
चाहिए जिससे सर्वपक्षीय व्यक्तिगत विकास में किसी भी प्रकार की कोई कमी न रहे।

सैकण्डरी शिक्षा कमिश्न (1952-53) द्वारा दिए गए सझाव आज भी पाठ्यक्रम का
हिस्सा नहीं बन सकें। विद्यार्थियों के सर्वपक्षीय विकास के लिए इन सुझावों की पाठ्यक्रम
के निर्माण के लिए ध्यानमें रखना बहुत ही आवश्यक बन जाता है।

## कोठारी कमिश्न (1964-66) के सुझाव

कोठारी कमिश्न (1964-66) ने पाठ्यक्रम के सुधार सम्बन्धी कोठारी कमिश्न (1964-66) ने पाठ्यक्रम के सुधार सम्बन्धी निम्नलिखित सुझाव पेश किए हैं-

**1. पाठ्यक्रम में अनसंधान (Research in curriculum)**—कोठारी कमिश्न अनुसार अनुसंधान शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके लिए यह अनिवार्य है कि पाठ्यक्रम के विकास के लिए इसमें शामिल भिन्न-भिन्न क्रियाओं और विषय सामग्री, अध्यापन विधियां, तकनीकें और मूल्यांकन विधियों पर आधारित, अनुसंधान, मूल्यांकन विधियों पर आधारित अन्वेषणों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे इन सभी पक्षों में आवश्यक सुधार किए जा सकें।

**2. नौकरी दौरान प्रशिक्षण (Inservice Training)**—पाठ्यक्रम के निर्माण में और उसके विकास में अध्यापक की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। किसी भी अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया की सफलता काफी सीमा तक अध्यापक पर निर्भर करती है। इसके लिए आवश्यक है कि अध्यापक सेवा के दौरान भी प्रशिक्षण प्राप्त करते रहें। यह प्रशिक्षण अलग-अलग प्रकार के सैमीनारों में भाग लेकर या कोर्सों में दाखिला लेकर प्राप्त किया जाना चाहिए कि अध्यापक अपने ज्ञान को वर्तमान आवश्यकता अनुसार नवीनतम रख सकने और आवश्यकता पड़ने पर पाठ्यक्रम सम्बन्धी सुझाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकें।



**3. पाठ्य-पुस्तक और शिक्षण अधिगम सामग्री (Textbook and Teaching Learning Material)**—पाठ्यक्रम की विषय सामग्री विषय के पूर्ण निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार चुनी जानी चाहिए। कोठारी कमिश्न के सुझाव अनुसार विषय सामग्री को प्रस्तुत करते समय पाठ्य-पुस्तक प्रत्येक प्रकार से पूर्ण होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त शिक्षण-अधिगम सामग्री आधुनिक होनी चाहिए। इसके लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग तभी संभव होगा यदि पाठ्यक्रम में इस तरह की सामग्री से सम्बन्धित क्रियाओं को शामिल किया जाएगा।

**4. प्रयोगात्मक पाठ्यक्रम की स्वतन्त्रता (Freedom of experimental curriculum)**—कोठारी मिशन अनुसार विद्यालियों को पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वह आवश्यकतानुसार पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाकर इसको लागू कर सके। पाठ्यक्रम विभिन्नता और लचीलेपन के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए जिसे विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और रुचियों के अनुसार लागू किया जा सके।

**5. वैज्ञानिक शिक्षा पर दबाव (Emphasis on scientific education)**—कोठारी कमिश्न अनुसार वैज्ञानिक शिक्षा पर अधिक दबाव दिया जाना चाहिए विज्ञान के विषय को विद्यालय में पाठ्यक्रम का आवश्यक अंग होना चाहिए इसके अतिरिक्त तकनीकी शिक्षा पर भी जोर दिया जाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों के वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जा सके। इसके लिए अनिवार्य है कि पाठ्यक्रम पुस्तकीय न होकर व्यवहारिक होना चाहिए।

**6. सामाजिक विज्ञान के प्रभावशाली कार्यक्रम (Affective Programmes of Social Sciences)**—शिक्षा को पाठ्यक्रम के सुझाव के बारे में कोठारी कमिश्न अनुसार आवश्यक है कि अधिक से अधिक प्रभावशाली कार्यक्रमों को अलग-अलग सामाजिक विज्ञान से सम्बन्धित पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों को अच्छे नागरिक बनने में सहायता मिल सके। किसी भी देश की आर्थिकता को मजबूती प्रदान करने के लिए प्राकृतिक साधनों के साथ-साथ नागरिक भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए राष्ट्रीय एकता और अन्तर्राष्ट्रीय सूझ-बूझ के विकास के लिए अधिक से अधिक कार्यक्रमों को शामिल किया जाना चाहिए।

**7. श्रम पर जोर (Emphasis on manual work)**—कमिश्न ने शिक्षा के एक स्तर में हाथों से काम करने के महत्त्व पर प्रकाश डाला है। श्रम द्वारा विद्यार्थियों में अलग-अलग कौशलों का विकास किया जाना चाहिए रस के लिए पाठ्यक्रम में इस प्रकार के विषय शामिल किए जाने चाहिए जिससे विद्यार्थी भविष्य में अपनी आजीविका कमाने के योग्य हो सकें। इसके साथ-साथ उत्पादन में वृद्धि होगी और देश की आर्थिकता मजबूत होगी।

**8. राज्य बोर्ड की स्कूली शिक्षा में भूमिका (Role of state boards of School Education)**—कमिश्न के सुझाव अनुसार राज्य स्कूल शिक्षा बोर्ड को पाठ्यक्रम के सुधार में निरन्तर अपनी भूमिका निभानी चाहिए। राज्य स्कूल शिक्षा बोर्ड को अपने पाठ्यक्रम तैयार करते समय सामाजिक आर्थिक स्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए। विषय सामग्री

का चयन करते समय ध्यान रखना चाहिए कि अनिवार्य मूल्यों को विकास की ओर ले जाए जाए।

उपरोक्त सुझाव कोठारी कमिश्न की तरफ से पाठ्यक्रम सुधार के लिए दिए गए पर आध भी विद्यमान पाठ्यक्रम में कई कमियां और उनको पूरी तरह से लागू नहीं किया गया।

## अर्थशास्त्र की विषय सामग्री का आयोजन
## (Organisation of Subject Matter in Economics)

### भूमिका
### (Introduction)

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम का चुनाव पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों और उद्देश्यों को मुख्य रखते हुए किया जाता है। पाठ्यक्रम के निर्माण के बाद प्रश्न यह उठता है कि इसमें चयन किए गए पाठ्यक्रम को किस ढंग से पेश किया जाए ? विषय वस्तु आयोजन भी निश्चित किए गये उद्देश्यों और मनोरथों की प्राप्ति पर निर्भर करता है। विषय-वस्तु को आयोजित करने का मुख्य मनोरथ अधिगम प्रक्रिया को अधिक से अधिक सफल बनाना होता है। यह बहुत अनिवार्य है कि चयन की गई विषय-सामग्री को व्यापार और निरन्तर ढंग से आयोजित किया जाए। अर्थशास्त्र की विषय सामग्री के आयोजन में मुख्य रूप से तीन ढंग अपनाए जाते हैं।

1. इकाई प्रस्ताव (Unit Approach)
2. संकेन्द्रित प्रस्ताव (Concentric Approach)
3. प्रकरण प्रस्ताव (Topical Approach)

### इकाई प्रस्ताव
### (Unit Approach)

इकाई प्रस्ताव गैस्टालट के सिद्धान्त पर आधारित है, जो कि समस्त अधिगम पर जोर देता है। यह प्रस्ताव इस मान्यता पर चलता है कि समस्त रूप से प्राप्त की गई शिक्षा प्रभावशाली और स्थाई होती है। क्योंकि विद्यार्थियों की स्थिति अंश रूप से ज्ञान लेने की अपेक्षा संपूर्ण रूप से होती है। इकाई प्रस्ताव को अलग-अलग शिक्षा शास्त्रियों ने इस प्रकार परिभाषित किया है।

शिक्षा के शब्द कोष अनुसार, "इकाई भिन्न-भिन्न क्रियाओं, अनुभवों और सीखने के भिन्न प्रकारों का किसी केन्द्रीय विषय, समस्या या उद्देश्य के साथ संबंधित संगठन है, इसका विकास अध्यापक के नेतृत्व में बालकों के समूह द्वारा सहयोगपूर्ण ढंग से किया जाता है। इसमें नियोजन, योजना को लागू करने तथा परिणामों का मूल्यांकन शामिल होता है।" (Unit is an organisation of various activities, exeperiences and types of learning around a control theme, problem or purpose, developed co-



operatively by a group of pupils under teacher's Leadership. It's involves planning execution of plan and evaluation of results.

हेना, हेजमैन और पॉटर (Hanna, Hageman and Putter) विचारानुसार-"इकाई की परिभाषा उद्देश्यपूर्ण अधिगम अनुभव के रूप में दी जा सकती है जो शिक्षार्थी के व्यवहार पर केन्द्रित होता है। उसको जीवन की परिस्थितियों के साथ अपने आप को अधिक प्रभावपूर्ण रूप से समायोजित करने में समर्थ बनाता है।" ("A unit can be defined as a purposeful Learning experience focussed upon behaviour of the learner and enables him to adjust to a life situation more effectively").

जोनस (Jones) के विचार अनुसार-"इकाई नियोजित ताल-मेल क्रियाओं के एक समूह या कड़ी से बनती है। जिनको शिक्षार्थी द्वारा किसी विशेष प्रकार की सीखने की स्थिति पर नियन्त्रण प्राप्त करने के लिए संपादित किया जाता है।"

("A unit consists of group or chain of planned co-ordinated activities undertaken by the Learner in order to obtain control over a type of learning situation"—Jones)

एच. सी. मोरिसन (H.C. Morrison) के अनुसार, "इकाई किसी संगठित विज्ञान, कला या आचरण के वातावरण का व्यापक और महत्त्वपूर्ण पक्ष है जिसको सीख लेने से व्यक्तित्व में अनुकूलता आती है।"

("Unit is a comprehensive and significant aspect of the environment of an organised science or art of conduct, which learned result in adaptation in Personality.)"

वेसले (Weseley) के विचार अनुसार, "इकाई जानकारी और अनुभवों का एक संगठित क्या है जिसकी रचना विद्यार्थी से महत्त्वपूर्ण परिणाम प्राप्त करने के लिए की जाती है।"

(Unit is an organised body of information and experience designed to effect significant outcomes of the Learner").

रिचर्ड सरवे (Richard Survey) के अनुसार, "अर्थशास्त्र में अध्यापन इकाई एक विस्तृत अनुदेशात्मक योजना है जिसमें बड़े विचार का अध्यापन देते समय 'क्या' 'कैसे' और 'कब' का विशेष रूप से उल्लेख होता है।"

(A teaching unit in Economic is a comprehensive instructional plan specifying the 'what', 'how' and when of teaching a comprehensive idea.")

माईकेलिस (Michaeslies) के अनुसार-"अर्थशास्त्र में एक इकाई बच्चों का ध्यानपूर्वक विकास, अनुभव अर्थशास्त्र के विशेष प्रकरण से सम्बन्धित रूपरेखा है जो कि अर्थशास्त्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान देती है।"

(A unit in Economics is may be defined as a carefully developed child like experience related to a particular topic and designed to contribute to the achievement of purpose of Economics).

बासिंग (Bossing) के विचारानुसार–"इकाई से सम्बन्धित अर्थपूर्ण क्रियाओं की विस्तृत सेवाएं इस प्रकार विकसित की जाती हैं जिससे विद्यार्थियों को उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। और वह उपयोगी सिद्ध होते हैं और उनके स्वभाव में तबदीली होती है।"

(A unit consists of comprehensive services related and meaningful activities so developed as to achieve pupil's purposes provide significant educational experiences and result in apporpriate behavioural changes).

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर एक अच्छी इकाई की निम्नलिखित विशेषताएं सामने आती हैं–

1. इकाई एक उद्देश्यपूर्ण शिक्षण क्रिया है।
2. इकाई एक महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य विषय वस्तु होती है।
3. एक अच्छी इकाई केन्द्रीय विचारों से सम्बन्धित होती है।
4. इसमें उचित प्रकार की क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।
5. एक अच्छी इकाई को विद्यार्थियों के समूह द्वारा विकसित किया जाता है।
6. इसमें ऐकीकृत शिक्षण अनुभव शामिल किए जाते हैं।
7. एक अच्छी इकाई सृजनात्मक अनुभव के अवसर प्रदान करती है।
8. एक अच्छी इकाई का उपयोगी बंटवारा किया जाता है।
9. एक अच्छी इकाई लचकीली होती है।
10. एक अच्छी इकाई अध्यापक के उचित नेतृत्व से विकसित की जाती है।
11. एक अच्छी इकाई विकासात्मक होती है।
12. यह विद्यार्थियों की भौतिक और बौद्धिक दोनों प्रकार की हिस्सेदारी (भागीदारी) की मांग करती है।
13. एक अच्छी इकाई विद्यार्थियों की समस्याओं और स्थितियों से प्रभावशाली ढंग से सामना करने में सहायता करती है।

## इकाई का वर्गीकरण
## (Classification of Unit)

इकाई का वर्गीकरण निम्नलिखित भागों में किया जाता है–

1. विषय सामग्री इकाई (Subject Matter Unit)
2. अनुभव इकाई (Experience Unit)



3. अनुकूलन इकाई (Adaptive Unit)
4. स्रोत इकाई (Resource Unit)
5. अध्यापन इकाई (Teaching Unit)

**1. विषय सामग्री इकाई (Subject Matter Unit)**–विषय सामग्री इकाई में विद्यार्थियों की अपेक्षा विषय सामग्री को ही संपूर्णता प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत प्रकरण इकाई शामिल होती है। इसके अतिरिक्त विषय-वस्तु इकाई में मारिसन इकाई और साधारणीकरण इकाई को भी शामिल किया जाता है। यह इकाई किसी सिद्धान्त पर आधारित होती है।

**2. अनुभव इकाई (Experience Unit)**–यह इकाई विद्यार्थी के अनुभव और परिस्थितियों में अपनी प्रतिक्रिया दिखाती है। और इसके उद्देश्य, रुचियों और आवश्यकताएं अनुभवों को प्रभावित करती है। अनुभव इकाई में विद्यार्थी-आवश्यकता विद्यार्थी उद्देश्य, विद्यार्थी रुचि से मिलाकर इकाई बनाई जाती है।

**3. अनुकूलन इकाई (Adaptive Unit)**–अनुकूलन इकाई की विशेषता यह होती है कि वह जीवन की विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए योग्यता विकसित व प्रदान करती है। इकाई नियोजित और सम्बन्धित क्रियाओं के समूह से बनती है।

**4. स्रोत इकाई (Resource Unit)**–स्रोत इकाई अध्यापक के नेतृत्व के रूप में कार्य करती है। यह किसी विषय या समस्या या प्रकरण को विकसित करने के सुझावों का आयोजन होती है। इसमें प्रत्यक्ष और संबंधित अनुभवों को संगठित किया जाता है और उनके सारांश प्रस्तुत किए जाते है।

**5. अध्यापन इकाई (Teaching Unit)**–अध्यापन इकाई में निर्धारित परिस्थितियों की कड़ियों को विद्यार्थियों के एक विशेष समूह को पढ़ाने के लिए निश्चित् योजनाबद्ध किया जाता है। इसको कार्य रूप इकाई भी कहा जाता है। इसमें इकाई के विकास के साथ-साथ होने वाली अधिगम क्रियाओं पर भी ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

## इकाई नियोजन के आवश्यक
## (Essential Steps in Unit Planning)

एक अच्छी इकाई का नियोजन करने के लिए निम्नलिखित में से गुजरना पड़ता है–

**1. मनोरथों की स्पष्टता (Clearity of objectives)**–किसी भी काम को करने से पहले उसके लक्ष्यों की स्पष्टता होना बहुत आवश्यक है। मनोरथों का स्पष्ट रूप में अलग-अलग वर्गों में उल्लेख होना चाहिए।

**2. पृष्ठभूमि का ज्ञान (Knowledge of background)**–अर्थशास्त्र का विषय वस्तु, भूतकाल, वर्तमान और भविष्य से सम्बन्धित होता है इसीलिए पाठ्यक्रम को आयोजित करते समय एक इकाई को विषय की पृष्ठभूमि की पूर्ण जानकारी होना बहुत जरूरी है।

**3. विषय-सामग्री का चयन (Selection of Subject matter)**–विषय सामग्री का चुनाव प्रत्येक इकाई के उद्देश्यों और पृष्ठभूमि को मुख्य रखकर की जानी चाहिए। विषय

सामग्री इस प्रकार की हो जो उन उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक जिनको चयन विषय सामग्री के लिये किया जाता है।

**4. शिक्षण सामग्री की स्पष्टता (Clarity of Teaching aids)**—अध्यापन को प्रभावशाली बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की सहायक सामग्री जैसे कि श्यामपट्ट, चार्ट, मॉडल आदि का स्पष्ट वर्णन किया होना चाहिए जिससे विद्यार्थी और अध्यापक उनसे पूरी तरह से परिचित हो सकें।

**5. विद्यार्थी क्रियाओं का वर्णन (Description of Student activities)**—इकाई प्रस्ताव में, विद्यार्थियों की क्रियाओं का पूर्ण वर्णन किया जाना चाहिए विद्यार्थियों को किस प्रकार की क्रियाएं करनी है। अध्यापन केवल श्रेणी तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि उसके बाहर की क्रियाओं को भी शामिल किया जाना चाहिए।

**6. अधिक महत्त्वाकांक्षी न हो (Not too ambitions)**—इकाई बहुत अधिक महत्त्वाकांक्षी नहीं होनी चाहिए। इकाई के भीतर विषय सामग्री को विद्यार्थियों की रुचियों और योग्यताओं के अनुसार चुना जाना चाहिए।

**7. विकासात्मक इकाई (Evaluationary Unit)**—इकाई विकासात्मक होनी चाहिए। प्रत्येक इकाई आगे आने वाली इकाई से सम्बन्धित होनी चाहिए यह एक निरन्तरता के सिद्धान्त को मानकर क्रमबद्ध ढंग से पूर्ण होनी चाहिए।

**8. संदर्भ सूची (List of References)**—प्रत्येक इकाई को प्रभावशाली ढंग से पेश करने के लिए यह अनिवार्य है कि प्रत्येक इकाई में प्रत्येक पाठ को संदर्भ सूची दी जाए। इससे अध्यापक और विद्यार्थी को उनका ज्ञान होगा और वह उन संदर्भों की जानकारी को प्रयोग कर सकेंगे।

**9. अध्यापक के सुझाव (Suggestion of Teacher)**—इकाई में अध्यापक के सुझाव भी शामिल किए जाने चाहिए। एक अध्यापक जो कि इकाई के बीच विषय-सामग्री को व्यवहारिक रूप से प्रस्तुत करता है उसको यह पूरी तरह से अनुभव हो जाता है कि कौन-सा निर्देश या टिप्पणी आगे पढ़ाने में अध्यापक या विद्यार्थी के लिए सहायक सिद्ध हो सकती है।

**इकाई प्रस्ताव की उदाहरण**—इकाई प्रकरण को निम्नलिखित उदाहरणों से सरलता से समझा जा सकता है।

**इकाई (I)**

1. भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप और विशेषताएँ
2. भारत में कृषि-महत्त्व और उत्पादकता
3. हरी क्रान्ति और इसका प्रदूषण पर प्रभाव
4. भूमि सुधार



**इकाई (II)**

1. भारत में औद्योगिक विकास उसका महत्त्व और समस्याएँ
2. सार्वजनिक उद्यम और व्यक्तिगत क्षेत्र
3. कुटीर और लघु उद्योग
4. विस्तृत स्तर के उद्योग औद्योगिक प्रदूषण का वातावरण पर प्रभाव

**इकाई (III)**

1. भारतीय कर प्रणाली
2. विदेशी व्यापार और भुगतान की समस्या
3. निर्यात प्रोत्साहन और आयात प्रतिस्थापन
4. उदारीकरण निजीकरण और विश्वीकरण

**इकाई (IV)**

1. भारत में आर्थिक योजनाओं का मूल्यांकन
2. ग्यारवीं पंच वर्षीय योजना (2007-2012)
3. भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य समस्याएं-निर्धनता, बेरोजगारी और जनसंख्या में वृद्धि
4. उपभोक्ता शिक्षा और संरक्षण

**इकाई प्रस्ताव के गुण**

**(Merits of Unit Approach)**

**1. सर्वपक्षीय विकास में सहायक (Helpful in all round development)**—इकाई प्रस्ताव विद्यार्थियों के सर्वपक्षीय विकास में सहायक होता है क्योंकि इसमें भिन्न भिन्न आदर्शों, गुणों,क्रियाओं, विकास के लिए स्थान है। विद्यार्थी केवल स्वतन्त्र समीक्षात्मक चिन्तन द्वारा समस्याओं को सुलझते ही नहीं अपितु वह व्यवहारिक रूप से इनको लागू भी करते हैं।

**2. उलझनों से बचाव (Avoid confusion)**—इकाई प्रस्ताव में विषय वस्तु को अलग-अलग इकाईयों में बांटा जाता है जिससे विद्यार्थियों को किसी भी प्रकार की उलझन का सामना नहीं करना पड़ता।

**3. विषय-वस्तु का तर्कपूर्ण वितरण (Logical division of subject matter)**—जैसे कि पहले बाताया गया है कि विषय-सामग्री को इकाईयों में वितरण किया जाता है। विषय-सामग्री को केवल वितरण ही नहीं किया जाता अपितु पाठों का तर्कपूर्ण चयन करके अलग-अलग इकाईयों में रखा जाता है। प्रत्येक प्रकार की इकाईयों में रखे गए पाठों का आपस में सम्बन्धित किया जाता है इस प्रकार निर्धारित समय में महत्त्वपूर्ण पाठों पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है।

**4. अध्यापक के लिए सहायक (Helpful for teachers)**—इकाई प्रस्ताव अध्यापक के लिए भी सहायक है। इसके अन्तर्गत रखे गए पाठ्यक्रम को अध्यापक अच्छी प्रकार समझकर निर्धारित कर सकता है वह पहले से ही आने वाली परीक्षा के लिए पाठ्यक्रम को इकाईयों में बराबर बांट कर उसके अनुसार सामग्री और शिक्षण विधियों का चयन कर सकता है।

**5. अधिगम सीखने में सहायक (Helpful in Learning)**—इकाई योजना द्वारा विद्यार्थी का सीखना आसान हो जाता है। वह प्रत्येक इकाई अपने स्वयं के आत्मविश्वास के साथ संगठित करता है। इनमेंदी गई महत्त्वपूर्ण धारणाओं, प्रक्रियाओं और सम्बन्धों को विद्यार्थियों के लिए सीखना सरल हो जाता है। विद्यार्थी आवश्यक ज्ञान को सरलता से समझ कर गृहण कर लेता है।

**6. क्रियाओं और अनुभवों के लिए अवसर (Opportunities for activities and experiences)**—इकाई में लचीलापन होता है इसीलिए बच्चों के व्यक्तिगत अन्तर अनुसार क्रियाओं को आदेशित करना सरल होता है। विद्यार्थियों प्रस्ताव द्वारा सीधा अनुभव हासिल किया होता है। जिससे विषय सीखना सरल और रोचक हो जाता है। भिन्न-भिन्न क्रियाओं और अनुभवों के द्वारा प्रत्येक प्रकार के अवसर मिलते हैं जिससे व्यक्तिगत व्यक्तित्व का विकास होता है।

## इकाई प्रस्ताव की सीमाएं
## (Limitation of Unit Approach)

**1. असमान वितरण (Unequal distribution)**—इकाई प्रस्ताव की सबसे बड़ी सीमा यह है कि अनिवार्य नहीं कि प्रत्येक समय इकाईयों का वितरण तर्कपूर्ण ढंग से हो। कई बार कुछ इकाईयों को बहुत विस्तृत और कुछ इकाईयों को लघु आकार में बांटा जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ इकाईयों की विषय सामग्री सरल और कुछ की बहुत कठिन होती है।

**2. कुशल अध्यापकों की कमी (Lack of competent teachers)**—इकाई प्रस्ताव के लिए बहुत अनिवार्य हो जाता है कि अध्यापक अनुभवी और कुशल हो जिससे कि पाठ्यक्रम का आयोजन उचित प्रकार से हो आमतौर पर देखा गया है कि कुशल और अनुभवी अध्यापक उपलब्ध नहीं होते यदि वो उपलब्ध भी होते तो वह अपनी इच्छानुसार ही इकाईयों का वितरण करते हैं।

**3. कठिन कार्य (Difficult Task)**—सारे पाठ्यक्रम को एक स्वरूप में भिन्न-भिन्न इकाईयों में बांटना असंभव तो नहीं परन्तु कठिन कार्य है।

इकाई पद्धति पाठ्यक्रम को आयोजित करने के लिए सबसे अधिक उपयोग की जाने वाली पद्धति है। चाहे इसकी कुछ सीमाएं हैं परन्तु शिक्षण विधि की सहायता से इसे दूर किया जा सकता है। ज्ञान का विस्तार कौशलों, योग्यताओं और दृष्टिकोणों का विकास सभी प्रभावशाली इकाई निर्माण का परिणाम होता है। विषयवस्तु को इकाईयों में बांटना अध्यापक



के लिए दो प्रकार से लाभदायक हो सकता है एक तो विषय सामग्री का चयन करना और दूसरा उसका अध्यापन। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम का आयोजन करने के लिए इकाई प्रस्ताव को अध्यापक अपनी योग्यता ओर कौशलों द्वारा सफल बना सकता है।

**संकेन्द्रित प्रस्ताव (Concentric Approach)**—संकेन्द्रित प्रस्ताव का प्रतिपादन महान शिक्षा शास्त्री पैस्टालोजी प्रस्तावित ने किया था। यह प्रस्ताव मनोविज्ञान के सिद्धान्त पर आधारित है यह आरम्भ में विद्यार्थियों के समस्त और साधारण संकल्प को विकसित करता है और फिर जैसे-जैसे विद्यार्थियों में विकास के साथ-साथ विस्तार में बताया जाता है। छोटी कक्षाओं में इस विधि द्वारा विद्यार्थियों में साधारण की समूची जानकारी दी जाती है फिर आने वाली कक्षाओं में ज्ञान का विस्तार किया जाता है। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। इस पद्धति में आवश्यकतानुसार पुनर्रावृत्ति होती रहती है। इस पद्धति द्वारा विद्यार्थियों की आयु के और समझ के अनुकूल बनाया जाता है। पहले वर्षों में विवरण का विस्तार किया जाता है। प्राथमिक वर्षों में यह सरल होता है जैसे-जैसे विद्यार्थियों की आयु और मानसिक स्तर बढ़ता है उनके सोचने समझने की शक्ति का विकास होता है उसी प्रकार से विषय सामग्री भी जटिल व कठिन हो जाती है।

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम को संकेन्द्रित विधि द्वारा आयोजित करने के लिए विषयों का चयन किया जाता है। प्रत्येक विषय को मिडल, सैकण्डरी, सीनियर सैकण्डरी स्तर पर बढ़ाया जाता है। परन्तु प्रत्येक स्तर पर इनका जटिलता स्तर बढ़ता चला जाता है। उदाहरण के लिए मिडल स्तर पर अर्थशास्त्र की प्राथमिक धारणाओं के रूप जैसे कि उपयोगिता, वस्तु या पदार्थ, धन, मुद्रा, मांग, पूर्ति,कीमत, लागत, आय, संतुलन, उत्पादन के साधनों के बारे में पढ़ाया जाता है इसके अतिरिक्त भारतीय अर्थव्यवस्था की जान पहचान करवाई जाती है। इसी तरह माध्यमिक स्तर पर प्राथमिक धारणाओं को विस्तारपूर्वक पढ़ाया जाता है। इसके आपसी सम्बन्धों का परस्पर विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए मांग और पूर्ति का आपसी सम्बन्ध, यह एक दूसरे को कैसे प्रभावित करते है आदि। उदाहरण के लिए, मिडल स्तर पर साधारण जानकारी दी जाती है। मूल्य क्या है ? इसकी परिभाषा और उदाहरणें बताई जाती हैं। माध्यमिक स्तर पर कीमत निर्धारण और प्रभावित करने वाले तत्त्वों की विस्तारपूर्वक जानकारी दी जाती है। उच्च माध्यमिकस्तर पर अलग-अलग बाज़ारों में कीमत निर्धारण, कीमत वृद्धि के कारण, मुद्रा स्फीति के प्रभाव, मुद्रा स्फीति को रोकने के सुझाव, सरकार द्वारा कीमतों पर नियन्त्रण के उपाय आदि आ जाते हैं। उप विषय प्रत्येक स्तर पर वही रहता है पर उसकी जटिलता का स्तर बढ़ता चला जाता है। यह सब विद्यार्थियों की आयु, योग्यता, समझ और बौद्धिक विकास के अनुसार किया जाता है। यह प्रस्ताव में विषय-वस्तु 'सरलता से जटिलता' की ओर ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ता है।

### संकेन्द्रित प्रस्ताव के गुण

**1. मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological Bases)**—मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें बच्चों को मानसिक स्तर और आयु के आधार पर साधारण संकल्पों की

जानकारी दी जाती है। जैसे-जैसे वह बढ़ती है विषय-वस्तु का विस्तार होता है साथ-साथ जटिलता का स्तर भी बढ़ता जाता है।

**2. शिक्षण सूत्रों पर आधारित (Based on Maxims of Teaching)**–संकेन्द्रित प्रस्ताव अध्यापन के सूत्रों पर आधारित है इस प्रस्ताव में विषय सामग्री 'संपूर्ण से अंश' (Whle to parts) सरल से जटिल (Simple to complex) 'ज्ञात से अज्ञात' (Known to unknown) मूर्त से अमूर्त (Concrete to Abstract) की तरफ जाता है।

**3. विशिष्टीकरण का आधार (Bases for Specialisation)**–संकेन्द्रित पद्धति विषय में विशिष्टीकरण के लिए आधार प्रदान करता है विद्यार्थियों को प्राप्त विषय का पूर्ण ज्ञान उस विषय के विशिष्टीकरण के आधार प्रदान करता है। विद्यार्थियों के प्रत्येक स्तर पर पुनरावृत्ति होती रहती है।

**4. रुचि जागृत करना (Arousal of Interest)**–संकेन्द्रित पद्धति द्वारा विद्यार्थियों की रुचि का विस्तार होता है। बच्चों को इस बात में उत्सुकता बनी रहती है कि विषय के बारे में आगे क्या पढ़ना है अभी रुचि विषय की गहराई तक जाने की होती है।

**5. विषय की पुनरावृत्ति (Revision of Subject)**–संकेन्द्रित पद्धति में बच्चों को पहले साधारण संकल्पों की जानकारी दी जाती है। इससे विषय की पुनरावृत्ति तो होती ही है साथ-साथ विषय का विस्तार भी होता है जिससे विद्यार्थियों में परिपक्वता आती है।

**6. बौद्धिक विकास (Development of Intellect)**–संकेन्द्रित पद्धति से विद्यार्थियों का मानसिक विकास होता है उनकी कल्पना शक्ति, चिन्तनशक्ति और तर्कशक्ति का विकास होता है। विषय के बारे में विस्तारपूर्वक पढ़ने से विद्यार्थियों की बौद्धिक समृद्धि भी बढ़ती है।

**7. विद्यार्थियों के लिए सरल (Easy for Students)**–संकेन्द्रित पद्धति का मुख्य गुण है कि विद्यार्थियों के लिए पढ़ना सरल हो जाता है और विद्यार्थी पढ़ाई को बोझ न समझ कर उस विषय में पूर्ण रूप से रुचि लेते हैं।

### संकेन्द्रित प्रस्ताव की सीमाएं

**1. बहुत अधिक दोहराई (To much repitition)**–संकेन्द्रित प्रस्ताव की मुख्य सीमा यह है कि इसमें बहुत अधिक दोहराई पर जोर दिया जाता है। इसके कारण बच्चे अधिक ज्ञान हासिल न करके दोहराई में उलझे दिखाई देते हैं। जब विद्यार्थी एक ही विषय को बार-बार पढ़ते हैं तो उनमें विषय के प्रति अरुचि की भावना उत्पन्न हो जाती है।

**2. अनुसंधान और जोखिम उठाने से वंचित रखना (Deprive from Research and Adventure)**–संकेन्द्रित पद्धति में अनुसंधान और जोखिम उठाने से विद्यार्थियों को वंचित रखा जाता है बच्चों की मिडल स्तर पर समूची जान पहचान करवाई जाती है तो उनमें इस बात की संतुष्टि होती है कि आने वाले समय में इन विषयों की विस्तृत पढ़ाई करनी है परन्तु इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता कि विषय को लेकर अनुसंधान और जोखिम भरी साहस भरी क्रियाएं करवाई जाए।



**3. समय स्थान की समझ की कमी (Lack of time space sense)**–समय और स्थान की समझ का विकास अर्थशास्त्र को अध्यापन का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। संकेन्द्रित पद्धति द्वारा विद्यार्थियों को समय और स्थान की समझ को विकसित करना मुश्किल हो जाता है।

**4. नएपन ( नवीनता ) की कमी (Lack of Novelty)**–संकेन्द्रित पद्धति में नएपन और ताजगी की कमी है। विद्यार्थी उस विषय को प्रत्येक स्तर पर दोहराते है जिससे उनमें रुचि और जिज्ञासा जागृत नहीं हो पाती वह प्रत्येक विषय में मन उकता लेते हैं।

**5. योग्य अध्यापकों की कमी (Lack of capable teachers)**–संकेन्द्रित पद्धति के अधीन योग्य अध्यापक की आवश्यकता होती है जो कि पद्धति का पालन ठीक ढंग से कर सकें। परन्तु साधारण रूप से देखा गया है कि योग्य अध्यापक कम मिलते हैं।

**6. समझ की कमी (Lack of Understanding)**–अर्थशास्त्र में कुछ इस प्रकार के उपविषय है जिनको विस्तारपूर्वक समझाने की आवश्यकता होती है। पर इस प्रस्ताव अनुसार संगठित की गई विषय वस्तु को पढ़ाते हुए अध्यापक कई बार विस्तारपूर्वक नहीं पढ़ा सकता। जिसके फलस्वरूप विषय सामग्री जटिल और उलझनदार बन जाती है।

**7. व्यापकता की कमी (Lack of Comprehensiveness)**–अर्थशास्त्र का क्षेत्र बहुत विशाल है। पर संकेन्द्रित प्रस्ताव के आधार पर संगठित किया गया पाठ्यक्रम व्यापकता को दिखाने के काबिल नहीं है क्योंकि आने वाले स्तर में पहले से ही विषय में दोहराया जाता है।

उपरोक्त सीमाओं के बावजूद संकेन्द्रित विधि अर्थशास्त्र के विषय वस्तु को संगठित करने के लिए काफी सीमा तक उपयोगी है क्योंकि मनोवैज्ञानिक रूप से उचित होने के साथ ही शिक्षण के सूत्रों पर आधारित है। इस द्वारा विषय की दोहराई भी आसानी से हो जाती है।

### प्रकरण प्रस्ताव
### (Topical Approach)

प्रकरण पद्धति का प्रतिपादन कोमोनियम (Comenius) ने किया था। उसके अनुसार किसी भी विषय को रोचक बनाने के लिए उसको अलग-अलग प्रकरणों में बांट देना चाहिए। इस प्रस्ताव के अनुसार अर्थशास्त्र के विषय वस्तु को भिन्न-भिन्न प्रकरणों (Topics) के आधार में वितरित किया जाता है। प्रत्येक प्रकार का प्रकरण अपने आप में स्वतन्त्र होता है और अध्यापक, शिक्षण के दौरान उनमें आपसी सम्बन्धों को स्थापित करता है अर्थशास्त्र में उत्पादन के साधन, भूमि, पूंजी, श्रम, उद्यम को उनकी सेवाओं के बदले में लगान, ब्याज, मजदूरी, और लाभ दिया जाता है जोकि एक ही उद्देश्य को दर्शाता है। अध्यापक भी पढ़ाते हुए उनके संबंधों का विवरण प्रस्तुत करता है। किसी भी प्रकरण को शुरु करके अधूरा नहीं छोड़ा जाता। अगला प्रकरण आरम्भ करने से पहले इसको पूर्ण रूप से समाप्त किया जाना चाहिए।

अर्थशास्त्र में विषय-वस्तु को विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, रुचियों, सामर्थ्य के अनुसार वितरण किया जाता है। इन प्रकरणों को पाठ योजना भी कहा जाता है। प्रत्येक प्रकरणों को अपने आप में पूर्ण किया जाता है। प्रकरण प्रस्ताव अनुसार अर्थशास्त्र में प्रकरण को काम के केन्द्रीय विषय के रूप में लिया जाता है। अध्यापक उन सम्बन्धों संबंध स्थापित करता है। विद्यार्थियों को उद्योगों के बारे में बताने के बाद कुटीर उद्योग, उद्योग और बड़े उद्योगों के बारे में पढ़ाया जा सकता है जो कि विशेष प्रकरण है और केन्द्रीय विषय के रूप में लिया गया है। अध्यापक बाद में भिन्न-भिन्न उद्योगों के बारे में कर विशेष प्रकरण से संबंध स्थापित करता है।

## प्रकरण प्रस्ताव के गुण
## (Merits of Topical Approach)

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम को आयोजित करने के लिए प्रकरण प्रस्ताव काफी सीमा तक प्रयोग किया जाता है। इस प्रस्ताव के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं-

1. प्रकरण पद्धति मनोवैज्ञानिक रूप से एक उत्तम विधि है। इसके अनुसार प्रकरणों को विद्यार्थियों की आयु, योग्यता रुचि अनुसार चयनित करके प्रस्तुत किया जाता है।

2. प्रत्येक प्रकरण अपने आप में नया और पूर्ण होने के कारण विद्यार्थियों की रुचि बनी रहती है और वह नवीनता महसूस करते हैं।

3. इस प्रस्ताव में अध्यापक पढ़ाते समय प्रभावशाली विषय वस्तु प्रदान करता है क्योंकि पाठ की उलझन भरे, विषय को पढ़ाने के स्थान पर प्रकरण को पढ़ाना आसान होता है।

4. विषय वस्तु के किसी भी प्रकरण को अतीत, वर्तमान, भविष्य, ऐतिहासिक, भूगौलिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, समाजिक आदि भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है।

5. यह प्रस्ताव अर्थशास्त्र के अध्ययन को उद्देश्यपूर्ण बनाता है। प्रत्येक प्रकरण 'सरल से कठिन' की ओर बढ़ता है। विद्यार्थी विषय सामग्री को आसानी से समझ लेते हैं।

6. प्रकरण प्रस्ताव के अधीन समान विषयों को एक श्रेणी में रखा जाता है इस कारण उनके बीच सह-सम्बन्ध स्थापित करना काफी सरल हो जाता है। विद्यार्थियों को याद करने और समझने में काफी आसानी होती है।

7. प्रकरण पद्धति में विषय सामग्री क्रमबद्ध रूप में होती है वह लघु इकाईयों में बांटी जाती है जो कि विद्यार्थियों की समझ में आसानी से आ जाती है।

## प्रकरण प्रस्ताव की सीमाएँ
## (Limitation of Topical Approach)

प्रकरण प्रस्ताव विषय वस्तु आयोजित करने में काफी उपयोगी और मनोवैज्ञानिक है फिर भी इसकी कुछ निम्नलिखित सीमाएँ हैं।

1. प्रकरण प्रस्ताव से समय और स्थान की अनुभूति विकसित करने में सहायता नहीं मिलती।



2. अर्थशास्त्र में बहुत सारे प्रकरण इस प्रकार के हैं जिनका विस्तृत अध्ययन करना अनिवार्य होता है। यदि इन प्रकरणों का विस्तारपूर्वक अध्ययन न किया जाए तो विद्यार्थी के मन में उल्ट धारणायें उत्पन्न हो सकती हैं।

3. इस प्रस्ताव द्वारा नियोजित पाठ्यक्रम में विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को शामिल करना कठिन होता है इस कारण ज्ञान किताबी रह जाता है और व्यवहारिक नहीं होता।

4. इस विधि को अपनाना कठिन है। सारे प्रश्नों को सारे दृष्टिकोणों से पेश करना तथा समझाना भी कठिन कार्य है।

5. प्रकरण पद्धति में कुशल और योग्य अनुभवी अध्यापकों की आवश्यकता होती है जो साधारणत: नहीं मिलते।

6. इस विधि द्वारा पुनरावृत्ति का अवसर नहीं मिलता। विद्यार्थी पिछले ज्ञान को जल्दी भूल जाते हैं।

7. प्रकरणों में उचित अध्ययन के लिए अच्छे पुस्तकालय की आवश्यकता होती है जिनकी विद्यालय में कमी पाई जाती है।

अर्थशास्त्र का पाठ्यक्रम संगठित करने के लिए सब पद्धतियों की अपनी-अपनी सीमाएं है परन्तु फिर भी यह उपयोगी माने गए हैं। कोई भी पद्धति पूर्ण रूप से दोषमुक्त नहीं है अध्यापक अपनी कुशलता से प्रत्येक प्रस्ताव को दोषमुक्त कर सकता है।

निकसन और राइट (Nickson and Wright) के अनुसार, "पाठ्यक्रम की पाठ सामग्री का चयन, क्रमबद्ध और संगठित करना, अध्यापक का काम है क्योंकि वह विद्यार्थियों की योग्यताओं और सीमाओं को जानता है। इसलिए अर्थशास्त्र के अध्यापक के विचारों में लचकता, अनुभव, चेतना और स्पष्ट सोच होनी चाहिए।" इस प्रकार अर्थशास्त्र का शिक्षण और पाठ्यक्रम आयोजित करने के लिए सारे प्रस्तावों का मिश्रण चुनाव किया जाना चाहिए।

## अभ्यास के प्रश्न
## (Study Questions)

1. अर्थशास्त्र में पाठ्यक्रम का चयन करते समय किन-किन सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जाए। लिखें।
(What Principles should be kept in mind while selecting the curriculum of Economics ? Write.)

2. अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम बनाने के सिद्धान्तों की व्याख्या करो।
(Discuss the Principles of curriculum construction of Economics.) **(P.U. April 2008)**

3. क्या आप महसूस करते हो कि सीनियर सैकण्डरी स्तर पर अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम को परिवर्तन की आवश्यकता है ? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दो।

(Do you feel there is a need to change the syllabus of Economics at senior secondary level ? Give argument in support of your answer.) **(P.U. April 2005)**

4. सीनियर सैकण्डरी स्तर पर अर्थशास्त्र के वर्तमान पाठ्यक्रम का आलोचनात्मक परीक्षण करो।

(Critically examine the present curriculum of Economics at Senior Secondary Level.) **(P.U. April 2002, 2003, 2007)**

5. क्या सीनियर सैकण्डरी स्तर पर अर्थशास्त्र के विद्यमान पाठ्यक्रम में सुधारों की आवश्यकता है ?

(Do you feel, there is need to reform the syllabus of Economics at Senior secondary Level ? Give suggestions in support of your answer.) **(P.U. April 2009)**

6. अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम संगठन के लिए प्रकरण पद्धति का विवरण दो, इसकी सीमाएं भी दो।

(Describe topical Approach for organisation of curriculum of Economics, Give its limitation). **(P.U. April 2003, 2007)**

7. अर्थशास्त्र की विषय सामग्री बनाते समय, ''इकाई पहुँच'' का मूल्यांकन करो।

(Evaluate Unit Approach to organise the subject matter of Economics.) **(P.U. April 2005, 2006, 2008)**

8. अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु के संगठन की भिन्न-भिन्न पद्धतियों की सूची दो। आपके विचार अनुसार कौन-सी पद्धति सबसे उचित है ?

(Enlist various approaches for organisation of subject matter of Economics, in your opinion, which approach is most appropriate.)

9. अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम की सामग्री संगठित करने सम्बन्धी संकेन्द्रित विधि का वर्णन करो।

(Describe the concentric Approach for organisation of curriculum of Economics.) **(P.U. April 2009)**

* * *

# 2 CHAPTER

# शिक्षण अधिगम सामग्री: पाठ्यपुस्तक और संदर्भ पुस्तकें, वृत्तचित्र, ग्राफ, टेबल्स, समाचार पत्र, पुस्तकालय और ई-संसाधन (ब्लॉग, वर्ल्ड वाइड वेब, और सोशल नेटवर्किंग)

## (Teaching Learning Material : Textbook & Reference Books, Documentaries, Graphs, Tables, Newspapers, Library and E-Resources (Blog, World Wide Web, and Social Networking)

पाठ को रुचिकर बनाने के लिए अनुदेशन सामग्री का प्रयोग किया जाता है। ज्ञानेन्द्रियां ज्ञानार्जन का मुख्य द्वार है इसलिए अनुदेशन सामग्री द्वारा सीखने में एक से अधिक इन्द्रियां काम करती हैं और छात्र अधिक ज्ञान प्राप्त करते हैं। छात्र पाठ में अधिक रुचि लेते हैं और सीखने के लिए तैयार रहते हैं। आधुनिक शैक्षिक तकनीकी के प्रभाव से अनुदेशन सामग्री को अधिक सशक्त और सार्थक रूप में प्रयोग किया जाता है और आज इसके रूप में भी परिवर्तन हो गया है। शोध कार्यों में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि किसी विशेष सामग्री का प्रयोग शिक्षण के विशेष उद्देश्य प्राप्त करने के लिए किया जाता है। सामग्री के प्रयोग से छात्रों के ध्यान को पाठ्य-वस्तु की ओर आकर्षित किया जाता है तथा बालक क्रियाशील बनते हैं जिससे वे सक्रिय रहकर ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

**अनुदेशन सामग्री से तात्पर्य (Meaning of Instructional Material)**—अनुदेशन सामग्री से तात्पर्य शिक्षण के उन साधनों से है जिनके प्रयोग से छात्र-छात्राओं की ज्ञानेन्द्रियां सक्रिय हो जाती हैं और वे पाठ के सूक्ष्म-से-सूक्ष्म तथा कठिन से कठिन बातों कों सरलता से समझ जाते हैं।

संक्षेप में **ई. सी. डेन्ट** (E.C. Dent) के अनुसार, ''अनुदेशन सामग्री का अर्थ उस समस्त सामग्री से है जो कक्षा में अथवा अन्य शिक्षण परिस्थितियों में लिखित अथवा बोली हुई पाठ्य-सामग्री को समझाने में सहायता देती है।'' (Instructional material is all

materials used in class room or in other teaching situations to facilitate the understanding of the written or spoken words.)

### अर्थशास्त्र शिक्षण में अनुदेशन सामग्री की आवश्यकता एवं महत्त्व (Need and Importance of Instructional Material in Teaching of Economics)

अर्थशास्त्र शिक्षण को रुचिकर, सरल एवं सुगम बनाने के लिए यह आवश्यक है कि अनुदेशन सामग्री का प्रयोग किया जाए। अनुदेशन सामग्री की उपयोगिता निम्नलिखित कारणों से है–

**1. विषय-वस्तु को रोचक बनाना (To make the subject-matter Interesting)**–अनुदेशन सामग्री अर्थशास्त्र की शिक्षा का सम्बन्ध छात्रों के प्रत्यक्ष अनुभव से जोड़ती है तथा उसे सरल तथा रोचक बनाती है। अनुदेशन सामग्री का प्रयोग करने से छात्र को यह विषय नीरस, शुष्क और काल्पनिक नहीं लगता। सहायक साधनों के प्रयोग से छात्र इस विषय के अध्ययन में रुचि लेने लगते हैं।

**2. विषय की स्पष्टता (Clarity in Subject-matter)**–अनुदेशन साधनों के प्रयोग से छात्र अर्थशास्त्र के विषय को भली-भान्ति समझ सकते हैं और उनको यह विषय स्पष्ट हो जाता है।

**3. प्रेरणा में सहायक (Helpful in Motivation)**–अनुदेशन सामग्री द्वारा अर्थशास्त्र के शिक्षण से छात्रों को जीविकोपार्जन की प्रेरणा मिलती है।

**4. स्थाई ज्ञान (Permanent Knowledge)**–अनुदेशन सामग्री से छात्रों को स्पष्ट रूप से अर्थशास्त्र समझने में सहायता मिलती है और वे अर्थशास्त्र के नियमों अथवा सूत्रों को अधिक समय तक याद रख सकते हैं।

**5. सीखने की गति में तेजी (Learning with Speed)**–अनुदेशन सामग्री की सहायता से विद्यार्थी अर्थशास्त्र को शीघ्र सीख लेते हैं।

**6. समय और शक्ति की बचत (Save time and Energy)**–अनुदेशन सामग्री के प्रयोग से विद्यार्थियों की समय और शक्ति में बचत होती है वे विषय-वस्तु को शीघ्र अच्छी तरह सीख लेते हैं।

**7. शिक्षण में नवीनता (Novelty in Teaching)**–अनुदेशन सामग्री के प्रयोग से शिक्षण में नवीनता तथा भिन्नता आती है।

**8. अधिकतम ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग (Maximum use of Senses)**–ज्ञानेन्द्रियां ज्ञान प्राप्त करने का द्वार हैं। अनुदेशन सामग्री अधिकतम ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग करने का अवसर प्रदान करती हैं। इनकी सहायता से नवीन ज्ञान प्राप्त करने में आसानी हो जाती है।

**9. मनोवैज्ञानिक उपयोगिता (Psychological Utility)**–अनुदेशन सामग्री छात्रों का ध्यान विषय की ओर आकर्षित करती है और उनकी स्वाभाविक रुचियों की पूर्ति करती है इसलिए इसकी मनोवैज्ञानिक उपयोगिता है। अनुदेशन सामग्री के प्रयोग में छात्र रुचि लेते



हैं तथा ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वे शारीरिक तथा मानसिक रूप से क्रियाशील रहते हैं।

**10. वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर विकास (Development of Scientific Attitude)**–अनुदेशनात्मक सामग्री से छात्र-छात्राओं में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित होता है। इनकी सहायता से छात्र अर्थशास्त्र को क्रियात्मक एवं व्यावहारिक रूप देने का प्रयास करते हैं। छात्र-छात्राओं में परीक्षण तथा निरीक्षण करके उचित परिणामों पर पहुंचने की क्षमता का विकास होता है।

**11. शिक्षण सिद्धान्तों पर आधारित (Based on principles of Teachings)**–शिक्षण के प्रमुख सिद्धान्तों पर अनुदेशन सामग्री का प्रयोग आधारित है। इसके प्रयोग द्वारा हम ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरल से कठिन की ओर, स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ सकते हैं। **एम. पी. मोफात (M.P. Moffat)** ने अनुदेशन सामग्री के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "अनुदेशन सामग्री अनुभव प्रदान करती है, वस्तु एवं शब्द को सुविधापूर्ण बनाती है, छात्रों के समय की बचत होती है, सरल एवं अधिकारपूर्ण सूचनाएं उपलब्ध कराती हैं, मूल्यांकन को उत्तम एवं विस्तृत रूप प्रदान करती है, आनन्दमय मनोरंजन प्रदान करती है, जटिल प्रवृत्तों को सरलतम रूप प्रदान करती है, कल्पना को उत्तेजित करती है तथा छात्रों की निरीक्षण शक्ति को विकसित करती है, अनुदेशन सामग्री छात्रों के ध्यान को पाठ्य-सामग्री की ओर आकर्षित करके उनको सक्रिय बनाती है।"

### पाठ्यपुस्तकें और सन्दर्भ पुस्तकें (Text Books & Reference Books)

किसी भी देश की शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यक्रम का विशेष महत्त्व होता है। पाठ्यक्रम का आधार पाठ्य-पुस्तकें होती हैं। अच्छे पाठ्यक्रम के निर्माण में पाठ्य-पुस्तकें पूर्ण रूप से सहायक होती हैं। पाठ्यक्रम के द्वारा ही शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार पाठ्य-पुस्तकें प्रत्येक स्तर की शिक्षा को प्रभावित करती हैं। पाठ्य-पुस्तकों का छात्र-छात्राओं के मानसिक एवं बौद्धिक विकास पर प्रभाव पड़ता है। हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था में अच्छी पाठ्य-पुस्तकों की अत्यन्त आवश्यकता इसलिए भी है, क्योंकि गांवों में अधिकांश स्कूलों में आवश्यक शिक्षण सामग्री सुविधाएं केवल नाममात्र को उपलब्ध हैं और ऐसी स्थिति में अच्छी पाठ्य-पुस्तकें शिक्षक एवं छात्र दोनों के लिए ही उपयोगी साधन होती हैं। इस दृष्टि से यह सत्य है कि पाठ्य-पुस्तकें शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने हेतु शिक्षण सामग्री का विशेष अंग है।

शिक्षण प्रक्रिया का मुख्य सम्बन्ध शिक्षक और छात्रों से होता है पर शिक्षण प्रक्रिया को सशक्त और सार्थक बनाने में पाठ्य-पुस्तकों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। छात्र पाठ्य-पुस्तक की सहायता से न केवल कक्षा में सीखता है, बल्कि वह उसकी सहायता से अगले पाठ की तैयारी भी करता है, कक्षा में इसका प्रयोग करता है, अपने पाठ को दोहराता है और अपना

गृह कार्य भी पूरा करता है। परीक्षा की तैयारी के लिए भी पाठ्य-पुस्तक का सहारा लेता है।

पाठ्य-पुस्तकों का जितना महत्त्व छात्रों के लिए है उतना ही महत्त्व शिक्षकों के लिए भी है। शिक्षक पाठ्य-पुस्तक की सहायता से अपनी दैनिक पाठ-योजना का निर्माण करता है और अपने पाठ की पूरी तरह से तैयारी करता है, इससे अभ्यास करवाता है, गृह कार्य देने में इसकी सहायता लेता है। वह पाठ्य-पुस्तक की सहायता से ही अध्यापन विषय-वस्तु को निश्चित करता है। इस प्रकार पाठ्य-पुस्तक शिक्षक की शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावपूर्ण, सशक्त और सार्थक बनाने में पूर्ण रूप से लाभप्रद होती है। शिक्षा व्यवस्था में पाठ्य-पुस्तकों के अत्यधिक महत्त्व को देखते हुए ही अनेक अच्छी पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण एवं सुधार के कार्यक्रम अपनाये गये हैं। इन कार्यक्रमों में पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण सिद्धान्तों, मूल्यांकन के नियमों एवं विभिन्न विषयों में अच्छी पाठ्य-पुस्तकों की रचना पर बल दिया गया है। शिक्षण व्यवस्था सुधार कार्यक्रम में अच्छी पाठ्य-पुस्तकों की रचना एवं उपलब्ध पाठ्य-पुस्तकों के दोषों को दूर करने की आवश्यकता स्वीकार कर ली गई है। पाठ्य-पुस्तकों के सम्बन्ध में अखिल भारतीय सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि पूरे देश में बहुत कम पाठ्य-पुस्तकें मान्यता प्राप्त हैं जिनकी संख्या लाखों में न होकर केवल मात्र हजारों में ही है। इस सर्वेक्षण ने पाठ्य-पुस्तकों के कुछ आपत्तिजनक दोषों की ओर भी संकेत किया है जिसके कारण पाठ्य-पुस्तकों के सुधार कार्यक्रम को गति प्रदान करना अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

पाठ्य-पुस्तकों का छात्र-छात्राओं के मस्तिष्क पर अच्छा या बुरा प्रभाव इस पर निर्भर करता है कि उनकी रचना करते समय कितनी सावधानी बरती गई है। उसको लिखते समय आवश्यक सिद्धान्तोंका पालन किया गया है या नहीं। हमारे देश में पाठ्य-पुस्तकों के अधिकांश लेखक इन सिद्धान्तों एवं पाठ्य-पुस्तकों के लिखने की आवश्यक बातों से अनिभिज्ञ हैं। अर्थशास्त्र की पुस्तकों पर यह बात विशेष रूप से लागू होती है। केवल लिखित रूप में विषय-वस्तु को प्रस्तुत करना और भाषा का ज्ञान प्रदर्शन करना अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों की रचना के लिए पर्याप्त नहीं है। अर्थशास्त्र की अच्छी पाठ्य-पुस्तक के लिए सावधानीपूर्वक तैयारी और पाठ्य-पुस्तक लिखने की कला से जानकारी या अवगत होना बहुत आवश्यक है।

### अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक का महत्त्व
### (Importance of Economics Book)

उपरोक्त बातों को पढ़ने से पता चलता है कि शिक्षा का सम्पूर्ण कार्यक्रम और पाठ्यक्रम पाठ्य-पुस्तकों पर ही आधारित होता है। उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकों के अभाव में शिक्षा प्रणाली को सुदृढ़ नहीं बनाया जा सकता। भारतीय शिक्षालयों में पाठ्य-पुस्तक को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। पाठ्य-पुस्तक के माध्यम से छात्र विभिन्न विद्वानों, अन्वेषकों तथा मनीषियों के संचित विचारों की जानकारी प्राप्त करते हैं। पाठ्य-पुस्तकें ही यह निश्चित करती हैं कि शिक्षक कितना पढ़ाए और किस प्रकार पढ़ाये और छात्र-छात्राएं कितना पढ़े



और किस प्रकार पढ़े। अर्थशास्त्र के विषय को पढ़ाने का उद्देश्य छात्र-छात्राओं को जीविका कमाने योग्य बनाना आर्थिक रूप से कुशल बनाना है इस कार्य में अध्यापक पाठ्य-पुस्तकों की मदद लेता है। शिक्षक के लिए पाठ्य-पुस्तकें ज्ञानार्जन करने का महत्त्वपूर्ण साधन है। पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता हमें किलपैट्रिक तथा मौरिसन की योजना एवं इकाई विधियों में भी होती है। इकाई पूर्ण रूप से तैयार करने के लिए पाठ्य-पुस्तक अत्यन्त आवश्यक है।

**प्रो. कीटिंग** के अनुसार, "पाठ्य-पुस्तक शिक्षण का आधार यन्त्र है।"

**हर्ल आर. डगलस** (Harl R. Duglas) ने पाठ्य-पुस्तक के महत्त्व के बारे में लिखा है, "शिक्षकों के बहुमत ने अन्तिम विश्लेषण के आधार पर पाठ्य-पुस्तक को 'वे क्या और किस प्रकार पढ़ायेंगे' की आधार शिला बतलाया है।"।

**प्रो. बार** (Prof Barr) तथा **बर्टन** (Button) ने पाठ्य-पुस्तक के विषय में कहा है कि, "संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में पाठ्य-पुस्तक एक महत्त्वपूर्ण शैक्षिक साधन है।"

1. "In the last analysis with great majority, the text book is a potent determinent of what and how they will teach."

2. "The text-book is probably the most important tool in this country. (U.S.A.)"

### पाठ्य-पुस्तक निर्माण के सिद्धान्त
### (Principles of the Construction of Text-book)

1. पाठ्य-पुस्तक रचना की आवश्यकता जैसे एक कक्षा/कक्षाओं के लिए पाठ्य-पुस्तक की रचना करने हेतु उपलब्ध विषय-वस्तु की समीक्षा के आधार पर पता लगाया जाए।

2. पाठ्य-पुस्तक कभी भी जल्दबाजी में नहीं लिखनी चाहिए। पुस्तक की रचना के लिए धैर्य और पर्याप्त समय अपेक्षित है।

3. केवल उन्हीं विद्वानों को लेखन कार्य दिया जाए, जिनमें विजय की योग्यता के अतिरिक्त विचारों को प्रकट करने की सरलता एवं लेखन कार्य मे रुचि हो।

4. लेखन से पूर्व लेखक उपलब्ध सामग्री एवं स्रोतों की जानकारी प्राप्त करें और फिर उनकी अच्छी तरह से समीक्षा भी कर लें।

5. लेखक उस विषय के उद्देश्यों की विस्तारपूर्वक जांच करे और यह निश्चित करें कि पाठ्य-पुस्तक द्वारा उन्हें ज्ञान प्राप्त करने के लिए क्या करना उचित होगा। इसके पश्चात् प्रत्येक इकाई की विस्तारपूर्वक योजना बनाई जाए।

6. पाठ्य-पुस्तक में विषय-वस्तु के साथ-साथ अभ्यास, चित्र, निर्देश आदि पर पूरी तरह से विचार एवं मनन किया जाए। इकाइयों के शीर्षक और उप-शीर्षक पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

## पाठ्य-पुस्तक लिखने की विधि
## (Method of Writing Text-Book)

अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक लिखते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है-

1. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक लिखते समय विषय-वस्तु के चयन की ओर विशेष ध्यान दिया जाए। पाठ्य वितरण में केवल विषय-वस्तु की रूप-रेखा दी जाती है। इसलिए शिक्षा के उद्देश्यों एवं पाठक की प्रकृति तथा आवश्यकतानुसार विस्तारपूर्वक विषय-वस्तु का चयन एक महत्त्वपूर्ण विषय-वस्तु का चयन एक महत्त्वपूर्ण कदम है। विषय वस्तु का चयन करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि वह त्रुटिपूर्ण न हो। बल्कि नवीनतम हो। पाठ्य-पुस्तक में किस सामग्री को शामिल किया जाए इसका निर्णय विषय शिक्षण के उद्देश्यों के आधार पर लिया जाना चाहिए।

2. अर्थशास्त्र की पुस्तक लिखने से पूर्व शिक्षा के उद्देश्यों और अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तक भी उन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो। इसलिए लेखक को इन उद्देश्यों के अनुसार पाठ्य-पुस्तकों के द्वारा छात्र छात्राओं का किस प्रकार विकास किया जा सकता है, इस महत्तवपूर्ण प्रश्न पर अवश्य ही विचार करना चाहिए।

3. पाठ्य-पुस्तक लिखते समय छात्र-छात्राओं के स्वभाव एवं आवश्यकता और उनके मानसिक विकास, रुचि आदि का ध्यान भी रखना आवश्यक होता है। पाठ्य-पुस्तकें छात्र-छात्राओं के प्रयोग के लिए ही होती है। इसलिए लेखक को उनकी आयु, विषय का ज्ञान, भाषा स्तर, मानसिक विकास एवं आवश्यकताओं और सामाजिक पृष्ठभूमि का भी ध्यान रखना चाहिए।

4. पाठ्य-पुस्तक की रचना करते समय लेखक को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह अपने विचारों से पुस्तक पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं को कैसे अवगत कराए। वह अपने विचारों और भावों को कलमबद्ध करते समय विचारों की स्पष्टता, सरलता, सार्थकता, पक्षपात रहित भावना को अवश्यक ही दृष्टि में रखे। लेखक का दृष्टिकोण व्यापक और मानवीय होना चाहिए।

5. पाठ्य-पुस्तक की विषय-वस्तु लिपिबद्ध होने के पश्चात् प्रकाशन से पूर्व विषय-वस्तु का भाषा विशेषज्ञ की अच्छी तरह से समीक्षा करे। विशेषज्ञों और समीक्षकों द्वारा दिये गये सुझावों को कार्यान्वित करके ही पाठ्य-पुस्तक का प्रकाशन होना चाहिए।

6. समीक्षा एवं पुनर्विचार के बाद पाठ्य-पुस्तक के लिए आवश्यक चित्र, तालिका, मानचित्र, डायग्राम आदि पर विचार किया जाना चाहिए। पुस्तक के आकार एवं रूप प्रकाशन से पूर्व विचार करना आवश्यक है। पुस्तक की आकृति और आवरणपृष्ठ जिल्द आदि पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।



## अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक के गुण
## (Qualities of Economics Text-Book)

अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में निम्न गुणों का होना आवश्यक है-

1. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक प्रत्येक कक्षा के छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तर के अनुसार होनी चाहिए। पुस्तक की विषय-वस्तु छात्रों की योग्यता के अनुसार होनी चाहिए।

2. पाठ्य-पुस्तक में विषय का प्रस्तुतीकरण इस ढंग से हो कि अधिक-से-अधिक छात्र-छात्राएं रुचि के साथ इसका अध्ययन करें और इसको समझने का प्रयास भी करें।

3. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में पर्याप्त रूप से उदाहरणों को महत्त्व दिया जाना चाहिए। उदाहरण द्वारा समझाई गई कठिन विषय-वस्तु को भी छात्र आसानी से समझ लेते हैं।

4. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में प्रकरणों की व्यवस्था उचित प्रकार से करनी चाहिए जिसमें सरल से कठिन की ओर के सूत्र का पालन हो।

5. पाठ्य-पुस्तक की रचना करते समय लेखक इस बात का ध्यान अवश्य रखें कि उसकी शैली स्पष्ट और सरल हो और छात्र-छात्राओं की क्षमता और स्तर के अनुकूल हो। सामान्यीकरण हेतु स्पष्ट और परिचित उदाहरणों की सहायता लें।

6. विषय का प्रस्तुतीकरण आकर्षक और रोचक होना चाहिए। शीर्षक पाठ को समझने में पूर्ण रूप से सहायक सिद्ध हो। चित्रों का प्रयोग आवश्यकता के अनुकूल होना चाहिए। पाठ के अन्त में उसका सारांश अवश्य दिया जाना चाहिए।

7. छात्र-छात्राएं पाठ्य-पुस्तक पढ़कर जीवन में व्यावहारिक बने जिससे समाज की गतिविधियों में सक्रिय होकर भाग ले सकें।

8. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक का संशोधन समय-समय पर आवश्यकतानुसार किया जाना चाहिए। इस विषय का सम्बन्ध मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं, रहन-सहन के तरीकों और उसके दृष्टिकोण से है। समाज की बदलती परिस्थितियों के अनुसार संशोधन करना आवश्यक हो जाता है।

9. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में मानव जीवन के आर्थिक पहलुओं की व्याख्या होनी चाहिए।

10. पाठ्य-पुस्तक की बाह्य आकृति सुन्दर आकर्षक एवं सचित्र हो। जिल्द सुदृढ़ होनी चाहिए। अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में आर्ट पेपर का प्रयोग किया जाना चाहिए क्योंकि उसमें प्रदर्शनात्मक सामग्री का उपयोग आवश्यक है। पुस्तक की छपाई साफ एवं शुद्ध हो।

11. पाठ्य-पुस्तक निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार पूर्ण हो।

12. अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक अर्थशास्त्र शिक्षण उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हो। पुस्तक की प्रस्तावना ऐसी होनी चाहिए जिसे देखकर पाठक उसके गुणों और पाठ्य विषयों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सके।

13. पाठ्य-पुस्तक का मूल्य कम होना चाहिए। उसमें सहायक तथा निर्देश पुस्तकों की सूची दी गई है।

## वृत्तचित्र

## (Documentaries)

किसी वृत्त अर्थात समाचार या सत्य घटना पर आधारित फ़िल्म को वृत्तचित्र (डाक्यूमेंट्री फिल्म) कहते हैं। इसमें कलात्मकता, अभिनय और मनोरंजन के स्थान पर वृत्त के विषय और उद्देश्य पर अधिक ध्यान रखा जाता है।

वृत्तचित्र एक ऐसा साधन हैं जिन्हें देखकर छात्र दूसरों के साथ सांस्कृतिक अनुभवों के बारे में सीख सकते हैं। अन्य संस्कृतियों और देशों के बारे में वृत्तचित्रों को देखने से एक राष्ट्र की भाषाओं और संस्कृति जैसे विभिन्न विषयों में छात्रों की रुचि पैदा हो सकती है।

वृत्तचित्र फिल्में मुख्य रूप से शिक्षा देने या एक ऐतिहासिक रिकॉर्ड को बनाए रखने के प्रयोजनों के लिए, वास्तविकता के कुछ पहलू दस्तावेज़ करने के उद्देश्य से शिक्षाके विभिन्न विषयों पर बनाई जाती हैं।

केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड (सेंसर बोर्ड) ने अर्थशास्त्र में नोबेल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर अमर्त्य सेन के ऊपर बनी डॉक्यूमेंटरी द आर्ग्यूमेंटेटिव इंडियन आजकल चर्चा में है। इसको शीघ्र ही रिलीज किया जा सकेगा। कोलकाता में डॉक्यूमेंटरी की स्पेशल स्क्रीनिंग के बाद इसके निर्माता सुमन घोष ने यह जानकारी दी।

इस डॉक्यूमेंटरी में प्रोफेसर सेन, कॉर्नेल विश्वविद्यालय (अमेरिका) में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर कौशिक बसु और छात्रों के बीच संवाद दिखाया गया है। बताया जाता है कि यह बातचीत अमर्त्य सेन के बचपन से लेकर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय (ब्रिटेन)में उनके अर्थशास्त्र के प्रोफेसर बनने तक के सफर पर आधारित है।

## ग्राफ

## (Graph)

अर्थशास्त्र अध्यापन में ग्राफ भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। ग्राफ ऐसे स्पाट चित्र होते हैं जिन पर बिन्दुओं, रेखाओं या चित्रों का प्रयोग करके आंकड़ों को दर्शाया जाता है। यह विश्लेषण, व्याख्या या तुलना के लिए आवश्यक आंकड़े प्रस्तुत करते हैं। अर्थशास्त्र में कई नियम और सिद्धान्तोंको शब्दों से नहीं दिखाया जा सकता है इसके लिए ग्राफों की आवश्यकता पड़ती है।

मोफत (Moffat) अनुसार, "ग्राफ संख्यात्मक आंकड़ों को पेश करने के प्रभावशाली साधन है जो कि विद्यार्थियों को आधारभूत या विशेष सम्बन्धों को समझने के योग्य बनाते हैं।" ("Graphs are excellent means of presenting quantitative data in a form that enables pupils to understand fundamental or specific relationship.")



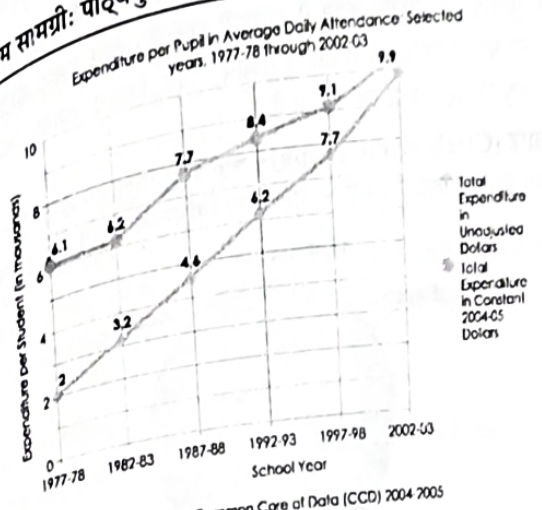


## ग्राफ के प्रकार

## (Types of Graphs)

**1. रेखा ग्राफ (Line Graphs)**—इन ग्राफों में आंकड़ों को रेखाओं के रूप में पेश किया जाता है। इन रेखाओं को वक्र कहा जाता है क्योंकि यह रेखायें सीधी नहीं होती, इस प्रकार के ग्राफ का प्रयोग उस समय में किया जाता है जब आंकड़ें निरन्तर और बहुत अधिक मात्रा में होते हैं। संकल्प को लम्ब रूप में या सीधी रेखाओं की सहायता से दिखाया जाता है। इस बार यह ग्राफ मृत्यु और जन्म दर को दर्शाता है साल 2006 में जन्म दर 23.7 और मृत्यु दर 7.5 प्रति हजार हो गई।

**2. बार ग्राफ ( छड़ ग्राफ ) (Bar graph)**—इनको छड़ ग्राफ भी कहा जाता है। इनको लम्ब या सीधी पंक्ति बद्ध छड़ों के रूप में आंकड़ों को पेश किया जाता है। इनकी

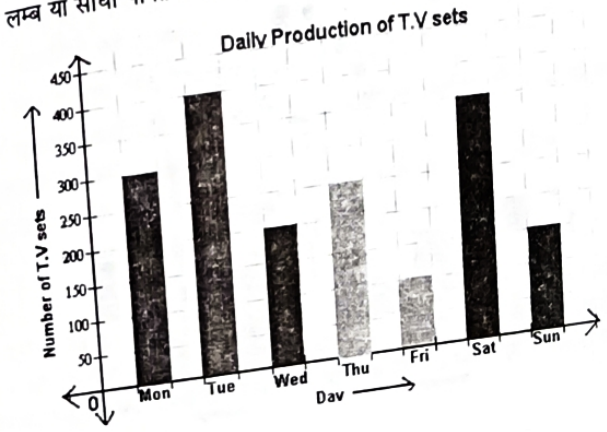

सहायता से आंकड़ों की तुलना करने में आसानी होती है। इनमें तुलना करते समय अलग-अलग रंगों का प्रयोग किया जा सकता है। आय, वेतन, विक्रय, व्यापार आदि आंकड़ों को तुलनात्मक रूप में पेश किया जा सकता है।

**चक्र ग्राफ (Circle or Pie-graph)**—चक्र ग्राफ गोलाकार होता है यह विभिन्न रंगों या शेडों द्वारा दिखाए जाते हैं। यह भी तुलना या विभिन्नता दर्शाने में सहायक होते हैं।

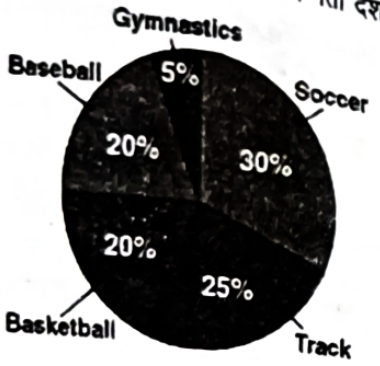


**चक्र ग्राफ**—विश्व जनसंख्या की तुलना में भारत की जनसंख्या प्रदर्शित करते हुए।

**चित्र ग्राफ (Picture graph)**—इनमें संख्यात्मक आंकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन चित्रों की सहायता से प्रदर्शित किया जाता है यह बहुत ही आसानी और प्रभावशाली होते हैं क्योंकि विद्यार्थी चित्रों में काफी रूचि लेते हैं।

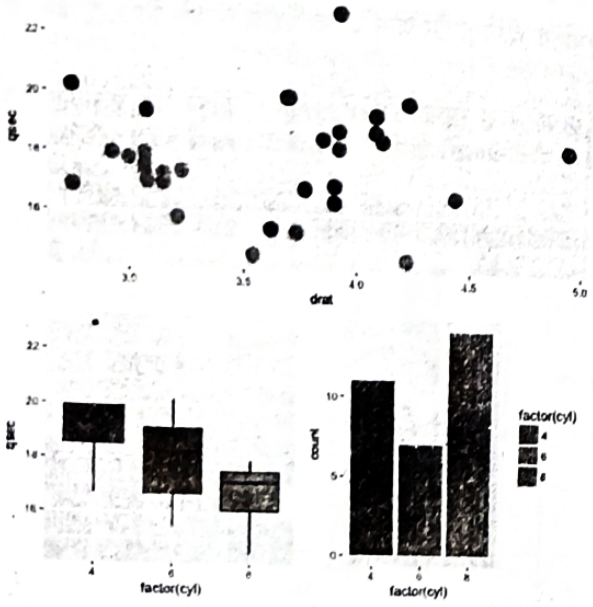




इस प्रकार इस चित्र ग्राफ से यह पता चलता है कि भारत की जनसंख्या संसार का लगभग 1/6 हिस्सा है। इस प्रकार दुनिया में प्रत्येक छठा नागरिक भारतीय है।

ग्राफों का प्रयोग करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

1. ग्राफ साधारण होने चाहिए। भिन्न-भिन्न तथ्यों का ज्ञान देते समय भिन्न-भिन्न ग्राफ का प्रयोग किए जाने चाहिए।
2. ग्राफ में प्रयोग किए जाने वाले चिन्ह अपनी व्याख्या स्वयं करने में समर्थ होने चाहिए जिनको देखते ही विद्यार्थियों समझ जाए कि किस विषय के तथ्यों का ज्ञान प्रदान किया जा रहा है।
3. ग्राफ का माप निश्चित और स्पष्ट होना चाहिए।
4. ग्राफ पेपर बढ़िया होना चाहिए और ग्राफ बनाते समय बढ़िया किस्म की पैंसिल और रंगों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
5. ग्राफ का आकार न तो बहुत बड़ा होना चाहिए और न ही बहुत छोटा होना चाहिए।
6. अध्यापक को साफ और शुद्ध ग्राफ बनाने की विधि का पूरा ज्ञान होना चाहिए।
7. ग्राफ बनाने के लिए अध्यापक श्यामपट्ट का भी प्रयोग कर सकता है।
8. ग्राफ को उचित शीर्षक देना चाहिए।

### ग्राफ के लाभ

1. ग्राफ में तथ्यों की तुलना में सहायक होते हैं।
2. ग्राफ की सहायता से अर्थशास्त्री के कई प्रकार के प्रकरणों की रोचक बनाया जा सकता है।
3. विद्यार्थियों में कलात्मक गुण पैदा करते हैं।
4. अध्यापक श्यामपट्ट का उपयोग प्रभावशाली ढंग से करता है।
5. विद्यार्थियों का ध्यान केन्द्रित करते हैं।
6. ग्राफ व्यवस्था और विश्लेषण में सहायक होते हैं।
7. ग्राफ द्वारा अर्थशास्त्र की भिन्न-भिन्न समस्याओं और आर्थिक स्थितियों की व्यवस्था और तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
8. ग्राफ आर्थिक परिवर्तनों को प्रदर्शित करने में सहायक होते हैं।

### सूचियाँ ( तालिकाएं )

### (Tables)

सूचियाँ या तालिकाएं आंकड़ों को पेश करने के लिए प्रयोग की जाती है। अर्थशास्त्र मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। इस प्रकार भिन्न तरह के आंकड़े उनकी आर्थिक स्थितियों की जानकारी देने के लिए अनिवार्य होते हैं। अर्थशास्त्र में जरूरी मांग और

पूर्ति के सिद्धान्त, कीमत निर्धारण, जनसंख्या, विदेशी व्यापार, गरीबी आदि को तालिकाओं की सहायता से आसानी से पढ़ाया जा सकता है।

उदाहरण के लिए भारत की जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना में होने वाले परिवर्तन को निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया है।

| क्षेत्र Sector | 1981 | 1991 | 2000 | 2004-05 |
|---|---|---|---|---|
| प्राथमिक क्षेत्र Primary sector | 69.41 | 67.4 | 57.4 | 52 |
| गौण क्षेत्र Secondary sector | 12.96 | 12.1 | 16.8 | 19.5 |
| ट्रशरी क्षेत्र Tertiary Sector | 17.63 | 20.5 | 25.8 | 28.5 |
| कुल | 100 | 100 | 100 | 100 |

(तालिका–भारत की जनसंख्या में व्यवसायिकर संरचना में होने वाले परिवर्तन)

सूची का प्रयोग करते समय अध्यापक को निम्नलिखित सावधानियां का प्रयोग करना चाहिए।

1. सूचियों द्वारा कम से कम समय में अधिक से अधिक ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।
2. सूचियों में आंकड़ों को क्रमबद्ध ढंग से पेश किया जाना चाहिए।
3. सूचियाँ उपविषय से संबंधित होनी चाहिए।
4. यह निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होनी चाहिए।
5. यह बढ़िया नतीजे देने में समर्थ होनी चाहिए।
6. सूचियों में दिखाए जाने वाले आंकड़े शुद्ध होने चाहिए।
7. सूचियां विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुसार तैयार करनी चाहिए।
8. सूचियाँ सरल होनी चाहिए। आंकड़ों को जटिल बनाने वाली नहीं होनी चाहिए।

### सूचियों के लाभ
### (Advantages of Tables)

1. सूचियों की सहायता से अध्यापक किसी भी विषय वस्तु के आंकड़ों को सरलता से पेश किया जा सकता है।

2. इनकी सहायता से अर्थशास्त्र में कई विषय जैसे मांग और पूर्ति के नियम, घटते प्रतिफल का नियम, मूल्य निर्धारण आदि को आसानी से समझा जा सकता है।

3. सूचियां अध्यापन को प्रभावी और रोचक बनाती है।



4. सूचियों द्वारा आंकड़ों को क्रमबद्ध ढंग से पेश किया जाता है।
5. अपूर्ण नियमों, सिद्धान्तों और संकल्पों को सूची द्वारा समझाया जा सकता है।
6. सूची द्वारा विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित किया जा सकता है।
7. सूचियों की सहायता से जटिल सिद्धान्तों को स्पष्ट किया जा सकता है।

### अखबारें/समाचार पत्र
### (Newspapers)

आज के समाज में समाचार-पत्र का बड़ा महत्त्व है। इनका अध्ययन समाज की गतिविधि को जानने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। इनमें छपने वाले समाचार तथा लेख सामाजिक घटनाओं पर प्रकाश डालते हैं। अध्यापक का यह कर्त्तव्य है कि वह स्वयं इनका अध्ययन करें और बालकों में इसकी आदत डालें। बालकों को चाहिए कि वे समाचार-पत्रों में पढ़ी हुई कुछ बातों को एक कापी में लिखते रहा करें तथा सप्ताह में एक बार अध्यापक के साथ इनके सम्बन्ध में बातचीत करें।

इस बात का ध्यान रहे कि दैनिक घटनाओं के बारे में अनेक मत हो सकते हैं। अतः अध्यापक इनके बारे में बालकों से बातचीत करे तो निष्पक्ष रह कर सभी बातें बच्चों को बताए। यह बात उन पर छोड़ दी जाए कि वे उनमें से जिस मत को भी ठीक समझे अपना लें।

इस साधन का ठीक ढंग से प्रयोग किए जाने पर बालकों की विचार और तर्क शक्ति का विकास होता है। उन्हें जिम्मेदार नागरिक बनने की ट्रेनिंग मिलती है तथा अंधविश्वास दूर होते हैं जिससे वे दूरदर्शी नागरिक बन जाते हैं।

समाचार-पत्रों तथा पत्रिकाओं के अध्ययन का एक और लाभ भी होता है। इससे बालकों को मानव समाज की उन्नति के बारे में पूरी जानकारी रहती है। नए आविष्कारों, नये सरकारी नियमों, गिरते-चढ़ते भावों तथा ऋतुओं की गतिविधि के बारे में जानकारी वे समाचार-पत्रों से प्राप्त करते हैं। इनमें छपने वाले सुन्दर चित्रों का प्रयोग एल्बम बनाने में भी किया जा सकता है।

### पुस्तकालय
### (Library)

#### विद्यालय पुस्तकालय का महत्त्व
#### (Importance of School Library)

*Library is the heart of the school and it is to this centre pupils bring varied experiences, problems and questions and the discuss and pursue them in search of new light from the experience of others and especially from the accumulated westom of the world garnered, arranged and displayed in the library.*

—John Dewey

पुस्तकालय सेवा शैक्षिक कार्यक्रम से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है। इसको शैक्षिक कार्यक्रम का एक अंग मानना उपयुक्त होगा। पुस्तकालय को विद्यालय भवन के एक निर्जीव कक्ष के रूप में ग्रहण नहीं किया जाना चाहिए, वरन् इसको एक सेवा के रूप में स्वीकार किया जाए। यह अपने उच्चतम महत्त्व को तभी प्राप्त कर सकता है जब यह विद्यालय के लिए वास्तविक सेवा के रूप में कार्य करता है। पुस्तकालय को 'विद्यालय का हृदय' कहा गया है। यदि इस कथन का अर्थ यह है कि पुस्तकालय विद्यालय के प्रत्येक अंग के लिए पुस्तकों तथा अन्य सामग्री को प्रदान करे तब पुस्तकालय वास्तविक सेवा को पूर्ण कर सकता है। पुस्तकालय वह स्थान है जिसका बालकों को शिक्षित करने के लिए सहारा लेना चाहिए। पुस्तकों को पढ़ लेना ही शिक्षा का मर्म नहीं है। वरन् यह एक क्रिया है जो उत्तम प्रकार से शिक्षित होने के लिए सहायक होती है। इसलिए पुस्तकालय को शिक्षा की एक सहायक सेवा के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए।

पुस्तकालय को विद्यालय का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग माना गया है। शिक्षक इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि पाठ्य-पुस्तकों द्वारा सम्पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती, वरन् उनकी पूर्ति अन्य उपयोगी पुस्तकों से की जानी चाहिए। इन विचारों को आजकल मान्यता प्रदान की जा रही है। अब पुस्तकालय को विद्यालय की 'बौद्धिक प्रयोगशाला' के रूप में देखा जाता है। जिसके द्वारा व्यक्तिगत एवं सामूहिक योजनाओं, बहुत से साहित्यिक प्रिय व्यापारों (Hobbies) तथा पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं को पूर्ण करने के लिए सहायता प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त इसके द्वारा प्रगतिशील शिक्षण पद्धतियों को व्यावहारिक रूप प्रदान किया जाता है।

### भारत में पुस्तकालयों की स्थिति
### (Condition of Libraries in India)

हमारे देश के अधिकांश विद्यालयों में इनकी स्थिति बड़ी शोचनीय है। अब भी ऐसे बहुत से विद्यालय हैं जिनके पास नाममात्र के पुस्तकालय हैं, इस सम्बन्ध में माध्यमिक शिक्षा आयोग के शब्द उल्लेखनीय हैं–

"अधिकांश माध्यमिक विद्यालयों के पुस्तकालयों में सामान्यतः प्राचीन, पिछड़ी हुई, अनुपयुक्त तथा छात्रों की अभिरुचियों एवं रुचियों को ध्यान में न रखकर चयन की हुई पुस्तकें हैं। उनको कुछ अल्मारियों में रख दिया गया है। अल्मारियां अनुपयुक्त एवं अनाकर्षक कक्ष में रख दी गई हैं। पुस्तकालय जिन व्यक्तियों के अधीन है वे या तो क्लर्क हैं या शिक्षक। जिनकी इस कार्य में रुचि नहीं है और न ही उनको पुस्तकों से प्रेम है और पुस्तकालय रीतियों का ज्ञान। इसलिए सम्भावतः वहां सुव्यवस्थित पुस्तकालय सेवा नाम की कोई वस्तु नहीं है जो कि बालकों को अध्ययन करने तथा उनमें पुस्तकों के प्रति प्रेम जागृत कर सके।"

### विद्यालय पुस्तकालय के उद्देश्य
### (Objectives of School Library)

विद्यालय पुस्तकालय के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. बालकों में पढ़ने तथा स्वाध्ययन की आदतों का निर्माण करना।



2. बालकों के अपने विद्यालय अध्ययन की पूर्ति के हेतु पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों, पत्रिकाओं आदि का उपयोग करने के लिए तत्पर बनाना।
3. बालकों में विभिन्न रुचियों का विकास करना तथा उनमें बौद्धिक कार्य करने का साहस उत्पन्न करना।
4. बालकों में साधन-सम्पन्नता, जिज्ञासा प्रवृत्ति का प्रोत्साहन एवं वैयक्तिक खोज करने के गुणों का विकास करना।
5. बालकों में शब्दकोष, सन्दर्भ पुस्तकों आदि का उचित प्रयोग करने की कुशलता का विकास करना तथा उनके सामान्य ज्ञान में वृद्धि करना।
6. बालकों में सहयोगी दृष्टिकोण विकसित करना तथा उनको अपने नागरिक दायित्वों के समझने के योग्य बनाना।
7. अध्यापकों के विषय ज्ञान व सामान्य ज्ञान की पूर्ति व वृद्धि करना तथा उनको नवीनतम शिक्षण विधियों की सूची प्राप्ति का साधन प्रदान करना।

कुछ पुस्तकों के संग्रह मात्र को ही पुस्तकालय का नाम नहीं दिया जा सकता है। बालकों को लाभ पहुंचाने तथा शैक्षिक कार्यक्रम को रोचक एवं बोधगम्य बनाने के लिए हमें पुस्तकालय की उचित व्यवस्था करना आवश्यक है। प्रधानाध्यापक का इस सम्बन्ध में बड़ा ही महत्त्वपूर्ण दायित्व है। उसे इसकी समुचित व्यवस्था करने के लिए पर्याप्त स्थान एवं साज-सज्जा, उचित वातावरण, योग्य एवं प्रशिक्षित पुस्तकालयाध्यक्ष की नियुक्ति, उपयोगी पुस्तकों एवं अन्य अध्ययन योग्य सामग्री का संकलन तथा उसका अधिकाधिक प्रयोग करने के लिए बालकों को प्रोत्साहन देने के लिए कार्य करना होगा। इन सब बातों का विस्तृत विवेचन नीचे दिया जा रहा है–

### पुस्तकालय कक्ष एवं साज-सज्जा
### (Library Room and Its Decoration)

एक उत्तम पुस्तकालय का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व यह है कि उसके पास आवश्यकतानुसार पर्याप्त स्थान हो। जिस समय विद्यालय भवन का निर्माण किया जा रहा हो, उस समय पुस्तकालय के लिए सबसे उपयुक्त स्थान प्राप्त किया जा सकता है। यदि उस समय पुस्तकालय का ध्यान न रहा हो तो उसको ऐशी कक्षा-कक्ष में व्यवस्थित किया जाए, जहां उसके अधिक विस्तार के लिए स्थान प्राप्त होने में कठिनाई न हो। पुस्तकालय जहां तक सम्भव हो सके केन्द्र में स्थापित किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त चारों ओर का वातावरण शान्त होना चाहिए अर्थात् पुस्तकालय ऐसी जगह स्थापित किया जाए जहां कम-से-कम शोरगुल एवं अन्य बाधाएं उपस्थित न हों। पुस्तकालय के साथ ही एक अध्ययन कक्ष (Reading Room) हो जिसका एक दरवाजा पुस्तकालय कक्ष में जाने के लिए हो। इसके अतिरिक्त पुस्तकालयाध्यक्ष का कमरा भी होना चाहिए। वस्तुतः यह कमरा बड़ा नहीं होना चाहिए।

पुस्तकालय कक्ष तथा सहायक कक्षों में प्राकृतिक रोशनी आने की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त कृत्रिम प्रकाश की भी समुचित रूपसे व्यवस्था की जाए। इन कक्षों में दीवार की अल्मारियों की व्यवस्था पर्याप्त मात्रा में की जानी चाहिए। इन कक्षों का फर्श ध्वनिरोधी (Sound Proof) हो तो अच्छा है। इन बातों के अतिरिक्त पुस्तकालय को ऐसे ढंग से विद्यालय में सबसे आकर्षक स्थान बनाना चाहिए। इसके लिए पुस्तकालय को ऐसे ढंग से सजाया जाए कि इसकी सुन्दरता व स्वच्छता आदि बालकों को निमन्त्रित करे। इसकी सजावट में बालकों का सहयोग लेना चाहिए। यदि उनके सहयोग को प्राप्त किया गया हो तो उनमें स्वत: ही यह भावना उत्पन्न हो सकेगी कि यह हमारा पुस्तकालय है।

एक उत्तम पुस्तकालय में पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं आदि के अतिरिक्त अधोलिखित साज-सज्जा का होना आवश्यक है।

1. पढ़ने के लिए मेजें (Reading Tables)–इनका आकार 3′×5′ होना चाहिए। इनकी ऊंचाई का निर्धारण उन बालकों के आकार के अनुसार होना चाहिए। जो कि इनका प्रयोग करेंगे।

2. कुर्सियां (Chairs)–इनकी ऊंचाई मेजों की ऊंचाई के अनुपात में हो। जहां तक सम्भव हो सके ये हल्की हों।

3. मैग्ज़ीन स्टैंड (Magazine Stand) और एटलस स्टैंड (Atlas Stand)

4. समाचार पत्र रैक (News Paper Rack)

5. पुस्तकालयाध्यक्ष की मेज (Labrarian Table)

6. कार्ड तालिका बक्स (Card-Catalogue Case)

7. काऊंटर (Couter)

8. घड़ी (Clock)

9. सूचना-पट (Bulletin Boards)

10. पुस्तकों के लिए अलमारियां (Almirahs for Books)

### पढ़ने योग्य सामग्री का चयन
### (Selection of Readable Material)

अध्ययन सामग्री की उपयुक्तता पर अधिकांशत: पुस्तकालय का महत्त्व निर्भर है। इसका चयन करते समय विद्यालय की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। एक उत्तम पुस्तकालय विद्यालय के प्रत्येक विभाग, विषय, क्रिया एवं बालक की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

पुस्तकालय के महत्त्व को उच्च बनाने तथा इन सब की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए पुस्तकालय में उपयुक्त अध्ययन सामग्री का होना आवश्यक है। प्रश्न यह उठता है कि किस अध्ययन सामग्री को उपयुक्त कहा जा सकता है। वस्तुत: इस सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं है जिनके अनुसार उसे चुन लिया जाए। परन्तु निम्नलिखित कुछ सामान्य सिद्धान्त



हैं जिनको ध्यान में रखकर उपयुक्त अध्ययन सामग्री का चयन किया जा सकता है–

1. अध्ययन सामग्री का चयन करते समय बालकों की रुचियों एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए। इस तथ्य को ध्यान में रखकर पुस्तकालय के लिए विषयों से सम्बन्धित पुस्तकें, सन्दर्भ पुस्तकों, कहानी संग्रह, विभिन्न कुशलताओं से सम्बन्धित विश्व साहित्य की सर्वोत्तम पुस्तकें, बालकों में निरीक्षणात्मक आदतों, माननीय गुण, नागरिक एवं सामाजिक आदर्श आदि विकसित करने वाली पुस्तकें चयन की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त अध्ययन सामग्री के चयन में बालकों की आयु का भी ध्यान रखा जाना अर्थात् उन पुस्तकों का भी चयन किया जाए जो विभिन्न आयु के बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। विकास के प्रत्येक स्तर पर बालक की कुछ अपनी विशेषताएं होती हैं। उन विशेषताओं को ध्यान में रखकर अध्ययन सामग्री का चयन किया जाए।

2. अध्ययन सामग्री के चयन में शिक्षकों की आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा जाए। अत: उनके दृष्टिकोण के अनुसार भी पुस्तकों का चयन करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उनके विषयों की आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा जाए।

3. पुस्तकालयाध्यक्ष तथा विद्यालय अधिकारियों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि पुस्तकालय प्रयोग करने के लिए है न कि प्रदर्शन के हेतु। अत: उन्हें पुस्तकों की संख्या पर बल देकर उनके गुणों पर बल देना चाहिए क्योंकि एक उत्तम पुस्तक हजारों निकम्मी पुस्तकों की अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी होती है।

4. पुस्तकों का चयन करते समय निम्न बातों पर भी ध्यान देना परमावश्यक है–

(1) पुस्तकों का बाह्य स्वरूप

(2) जिल्द-इस सम्बन्ध में जिल्द की सुदृढ़ता पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

(3) कागज़ की किस्म

(4) छपाई की स्पष्टता-इस सम्बन्ध में बालकों की आयु का ध्यान रखा जाए। छोटे बालकों के लिए मोटे छापे की तथा युवकों के लिए उससे कुछ छोटे छापे की पुस्तकें चयन की जानी चाहिए।

(5) भाषा शैली, विषय प्रतिपादन एवं उसकी निष्पक्षता आदि।

(6) पुस्तकों के लेखकों तथा उनका अनुभव एवं प्रसिद्धि।

5. विद्यालय अधिकारियों के पास पुस्तकों के खरीदने के लिए छोटी-सी धन-राशि होती है। अत: उन्हें धनराशि से अधिक-से-अधिक उत्तम पुस्तकों को खरीदना है। इसके लिए उन्हें विभिन्न पुस्तक विक्रेताओं से मूल्य तथा कमीशन के विषय में खरीदने से पहले सूचनाएं प्राप्त करनी चाहिए।

पुस्तकों के चयन का कार्य-भार किसी एक व्यक्ति पर नहीं होना चाहिए। वरन् इसके लिए लोकतन्त्रीय दृष्टिकोण को अपनाया जाए। पुस्तकालयाध्यक्ष को इस कार्य में सहायता देने के लिए एक पुस्तकालय समिति का निर्माण किया जाना चाहिए। जिसमें पुस्तकालयाध्यक्ष

के अतिरिक्त शिक्षकों तथा बालकों दोनों के प्रतिनिधि हों। इस समिति की सहायता से बालकों की रुचियों एवं आवश्यकताओं का पता लग सकेगा। इससे एक ओर यह लाभ होगा कि उपलब्ध धन सभी विषयों में उनकी आवश्यकतानुसार बंट सकेगा।

**समाचार पत्र-पत्रिकाओं का चयन (Selection of Newspapers and Magazine)**—प्रत्येक पुस्तकालय में बालकों की रुचि एवं आयु के अनुसार पत्र-पत्रिकाओं का चयन किया जाना चाहिए। इनमें से कुछ मनोरंजन प्रदान करने वाली तथा कुछ विषयों से सम्बन्धित होनी चाहिए। प्रत्येक विद्यालय में एक या अधिक समाचार पत्र अवश्य मंगाने जाने चाहिए। इनके अतिरिक्त स्थानीय समाचार-पत्रों को भी पुस्तकालय के हेतु मंगाया जाए। शिक्षकों के दृष्टिकोण से विभिन्न विषयों सम्बन्धी शिक्षण पत्रिकाओं को भी मंगाया जाए जिनमें नवीनतम ज्ञान और शैक्षिक सिद्धान्तों एवं शिक्षण विधियों का विवेचन किया जाता हो।

**पुस्तकालयाध्यक्ष एवं उसका कार्य (Librarian and his functions or Duties)**—जिस प्रकार शिक्षक वर्ग अधिकांशत: विद्यालय को बनाता है, उसी प्रकार पुस्तकालयाध्यक्ष पुस्तकालय को बनाता है। जैसा पुस्तकालयाध्यक्ष होगा, वैसा ही पुस्तकालय होगा। यदि हमारे पास उत्तम पुस्तकों का संकलन, पुस्तकालय एवं अध्ययन कक्ष अपनी समस्त सामग्री के साथ उपलब्ध है, परन्तु उनको कुशलतापूर्वक संचालित करने वाला पुस्तकालयाध्यक्ष नहीं तो उपर्युक्त सामग्री बहुत ही कम लाभ प्रदान करने वाली सिद्ध होगी। अत: प्रत्येक विद्यालय के लिए एक प्रशिक्षित एवं योग्य व्यक्ति की आवश्यकता है। इसकी नियुक्ति पूर्ण समय के लिए की जानी चाहिए। बहुधा हमारे विद्यालयों में या तो थोड़े समय के लिए (Part-Time) पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त करके या किसी शिक्षक के अध्यापन कार्य के कुछ घंटे कम करके पुस्तकालय का कार्य सौंप दिया जाता है। परन्तु ऐसी व्यवस्था सन्तोषजनक नहीं होती क्योंकि इस व्यवस्था के द्वारा पुस्तकालय का सदुपयोग नहीं हो पाता है और पुस्तकालय अपने उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर पाता है। पुस्तकालय की सफलता एक कुशल सेवा पर ही निर्भर है। यह कुशल सेवा तभी प्राप्त की जा सकती है जब एक योग्य तथा प्रशिक्षित पुस्तकालयाध्यक्ष को पूर्ण समय के लिए नियुक्त किया जाए।

पुस्तकाल्याध्यक्ष को वेतन, सेवा प्रतिबंधों (Service Conditions) आदि बातों में शिक्षक के समान रखा जाना चाहिए। क्योंकि उसका कार्य उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना की शिक्षा का। उसमें शिक्षक के समान ही कुछ गुणों की अपेक्षा की जाती है। उदाहरणार्थ- उत्साह, चातुर्य, समझदारी, सहृदयता, उपगम्यता या मिलनसारी (Approachability), मन शान्ति या सन्तुलन (Poise) आदि। इसमें सब गुणों का होना इसलिए आवश्यक है क्योंकि वह एक शैक्षिक संस्था में व्यावसायिक एवं प्रशसकीय दोनों प्रकार के कार्यों को पूर्ण करता है। इसके साथ ही वह विद्यालय के प्रत्येक विभाग की सेवा भी करता है तथा बालकों एवं बालिकाओं के सहायतार्थ उनकी रुचि के प्रत्येक क्षेत्र पर बातचीत करता है। उसके निम्नलिखित कार्य महत्त्वपूर्ण हैं–



1. पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं आदि का वर्गीकरण करना तथा उनका लेखा करना।
2. उत्तम पुस्तकों की बालकों तथा शिक्षकों को जानकारी कराने के लिए उनका विभिन्न ढंगों से प्रचार करना।
3. बालकों तथा शिक्षकों को पढ़ने के लिए पुस्तकें देना और उनको लेखबद्ध करना।
4. विभिन्न स्तरों के बालकों के लिए उत्तम पुस्तकों की सूची तैयार करना तथा उनको उनके पास पहुंचाना।
5. पुस्तकालय में आई हुई नवीन पुस्तकों के मुख पृष्ठों (Title Pages) तथा विभिन्न पुस्तकों के पुनरीक्षणों को सूचनापट पर लगाना।
6. बालकों को पुस्तकों के विषय में सलाह देना। इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत या सामूहिक योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए जिन पुस्तकों की आवश्यकता हो, उनके विषय में बालकों को बताना।
7. पुस्तकालय में सुव्यवस्था करना।

**पुस्तकालय के अधिकाधिक प्रयोग को प्रोत्साहन देना (Encouraging the use of Library as much as Possible)**—बहुधा यह कहा जाता है कि 'पुस्तकालय एक विश्वविद्यालय है।' परन्तु यह कथन पूर्णतया सत्य नहीं है। इसमें केवल आंशिक सत्यता है। यदि हमारे पास सुव्यवस्थित पुस्तकालय कक्ष, मूल्यवान साज-सज्जा, उत्तम पुस्तकें एवं पत्र-पत्रिकाएं तथा कुशल पुस्तकालयाध्यक्ष आदि है। परन्तु यदि हम उनका उपयोग न करें तो वे न्यूनतम महत्त्व की वस्तुएं होंगी। बहुधा यह देखा जाता है कि हमारे बालकों का अधिकांश भाग पुस्तकालय का कभी-कभी प्रयोग करता है या बिल्कुल भी नहीं करता है। पुस्तकालयों को स्थापना केवल देखने के लिए नहीं की जाती है। वरन् उनका उपयोग करने के लिए की जाती है। यदि यह कहा जाए कि "प्रयोग किया जाने वाला पुस्तकालय एक विश्वविद्यालय है" तो अधिक उत्तम होगा। पुस्तकालय के अधिकाधिक प्रयोग को प्रोत्साहन देने के लिए पुस्तकालयाध्यक्ष एवं विद्यालय अधिकारियों को अधोलिखित साधनों को अपनाना चाहिए–

1. पुस्तकालय दिवस मनाये जाएं।
2. सूचनापट पर पुस्तकों के मुखपत्र, पुनरीक्षण, अध्ययन सामग्री की सूची एवं अन्य रोचक सामग्री प्रदर्शित की जाए।
3. पुस्तकों की विषयानुसार नुमाइश लगानी चाहिए।
4. अल्मारियों पर उनकी विषय-सामग्री की सूची लगानी चाहिए।
5. विभिन्न महत्त्वपूर्ण प्रकरणों पर पुस्तकों की सूची तैयार करके इसके प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाए।
6. पुस्तकालयाध्यक्ष प्रत्येक पढ़ने वाले में व्यक्तिगत रुचि रखे। यह उनके साथ सद्व्यवहार करे तथा उनकी कठिनाइयों को जानने का प्रयत्न करे।

7. विभिन्न पुस्तकों के विषय में संक्षेप में बताकर पुस्तकालय के अधिकाधिक प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जा सकता है।

8. बालकों की पुस्तकालय समिति बनाई जाए जिसका प्रमुख कार्य बालकों में पुस्तकों के प्रति रुचि एवं उसके प्रयोग के लिए प्रचार करना होगा।

9. शिक्षकों की भी एक पुस्तकालय समिति बनाई जाए तो पुस्तकालयाध्यक्ष को पुस्तकों के चयन, पुस्तकालय के प्रशासन एवं उसके अधिकाधिक प्रयोग के लिए सुझाव देने में सहायता देगी।

10. कक्षा-पुस्तकालय स्थापित किये जाएं। ये पुस्तकालय कक्षाध्यक्ष के अधीन रहेंगे। इनमें समस्त विषयों की बालकों के स्तर के अनुसार पुस्तकें रखी जानी चाहिए। इन पुस्तकालयों के द्वारा बालकों को पढ़ने की आदत का निर्माण किया जा सकता है। यह पुस्तकालय केन्द्रीय पुस्तकालय का एक अंग होगा। इसके द्वारा बालकों में पुस्तकों को उचित प्रयोग एवं उनके प्रति प्रेम रखने व स्वाध्ययन की भावना का भी विकास किया जा सकता है।

11. पुस्तकालय के अधिकाधिक प्रयोग को प्रोत्साहित करने में विषय पुस्तकालय का भी बहुत महत्त्वपूर्ण हाथ है। इनके द्वारा बालकों में विशेष रुचियों का विकास किया जा सकता है तथा ये उनमें पढ़ने की आदत की नींव डालने में बहुत सहायक हैं। विषय पुस्तकालय में विषय से सम्बन्धित पुस्तकें एवं पत्रिकाएं होंगी। इनके द्वारा शिक्षक तथा बालकों में अधिकाधिक सम्पर्क होने के अवसर प्रदान किए जाते हैं।

## प्रधानाध्यापक का पुस्तकालय संगठन एवं प्रशासन में कार्य भाग

## (Role of Headmaster/Principal in the Organisation and Administration of Library)

वस्तुत: विद्यालय की प्रत्येक दिशा के संगठन एवं प्रशासन का अन्तिम दायित्व प्रधानाचार्य पर ही है। प्रधानाध्यापक को पुस्तकालय की व्यवस्था पर अधिकाधिक ध्यान देना चाहिए। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि पुस्तकालय 'बौद्धिक प्रयोगशाला' है। यदि इस प्रयोगशाला की उचित व्यवस्था नहीं की गई तो शैक्षिक कार्यक्रम को उपयुक्त ढंग से चलाना कठिन हो जाएगा। इस सम्बन्ध में प्रधानाध्यापक का यह प्रमुख कर्त्तव्य है कि वह यदा-कदा पुस्तकालय में जाए और वहां की व्यवस्था का निरीक्षण करे तथा पुस्तकालयाध्यक्ष की कठिनाइयों एवं सुझावों को सुने। इसके अतिरिक्त वह खरीदी जाने वाली पुस्तकों की सूची पर भी दृष्टि डाले तथा समय-समय पर उन रजिस्टरों का निरीक्षण करे जिनमें बालकों को दी जाने वाली पुस्तकों को लेखाबद्ध किया गया है। वह इनको देखकर यह जानने का प्रयत्न करे कि बालक किस प्रकार की पुस्तकों का अध्ययन कर रहे हैं। इस प्रकार उनकी रुचियों को जानकर उनको यथासम्भव सुझाव देकर उचित मार्ग पर लायें।

प्रधानाध्यापक को भी बालकों द्वारा पुस्तकालय का अधिकाधिक प्रयोग कराने के लिए महत्त्वपूर्ण कदम उठाने चाहिए। इसके लिए उसे विद्यालय-पुस्तकालय को लम्बी छुट्टियों में



खुलवाना चाहिए। इसके अतिरिक्त समय तालिका में विभिन्न कक्षाओं के लिए इसके उपयोग के हेतु समय-निर्धारितत करवा देना चाहिए। बालकों से एक डायरी स्थापित करवानी चाहिए। जिसमें वे उन पुस्तकों के नाम, लेखक का नाम, महत्त्वपूर्ण उद्धरण आदि लेखबद्ध करें जिनका उन्होंने अध्ययन किया है। समय-समय पर शिक्षकों से इन डायरियों का निरीक्षण करवाना परमावश्यक है।

प्रधानाध्यापक को पुस्तकालय को अधिक समृद्ध बनाने के लिए विद्यालय बजट से उदारता के साथ धन देना चाहिए। उसे स्थानीय साधनों का भी अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए। यदि नगर में कोई सार्वजनिक पुस्तकालय है जहां कि उसका विद्यालय स्थापित है तो उसको इस पुस्तकालय के अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और अपने बालकों द्वारा उसका प्रयोग कराने की स्वीकृति प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। यदि विद्यालय की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि इसके पुस्तकालय में सभी महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं मंगाई जा सकें, तो सार्वजनिक पुस्तकालय के अधिकारियों के सहयोग से इस अभाव को पूरा कर सकता है। वह उनको सुझाव देकर उन पुस्तकों की उनके पुस्तकालय में व्यवस्था करा सकता है तथा बालकों को वहां उनके प्रयोग के हेतु भेज सकता है।

## ई-संसाधन

## (E-Resoruces)

नवीनतम प्रौद्योगिकी में संरक्षण, नवाचार और सहयोग के माध्यम से ज्ञान का प्रभावी और कुशल उपयोग करने के उद्देश्य से शैक्षणिक संस्थानों में ई-संसाधनों की बहुत उपयोगिता है।

ई-संसाधनों का उद्देश्य सभी शिक्षा संस्थानों में शैक्षिक समुदाय को विद्वतापूर्ण और समकक्ष समीक्षित इलैक्ट्रानिक संसाधनों सहज, विश्वसनीय सर्वव्यापक पहुंच उन सेवाओं और उपकरण, प्रक्रियाओं और प्रथाओं को ध्यान में रखकर प्रदान करना जो इसके प्रभावी उपयोग की सहायता कर सके और इस जानकारी के महत्त्व में वृद्धि कर सके। शिक्षा संस्थानों में मूल्य वर्धित सेवाओं के साथ आईसीटी बुनियादी सुविधाओं को बनाना और मजबूत करना। प्रयोक्ताओं को कहीं भी, कभी भी इलैक्ट्रानिक स्वरूप में जानकारी तक सुरक्षित और सुविधाजनक पहुँच के लिए उपकरण प्रबंधन सक्रिय करना, तकनीक और प्रक्रियाओं का विकास करना। ई-संसाधनों के प्रभावी प्रदाय और उपयोग के लिए संसाधन चयन गाईड और ऑनलाइन ट्यूटोरियर का विकास। शैक्षिक संस्थाओं के पुस्ताकालयों में पूर्व स्वचालन करना।

निम्न में विशेषज्ञता विकसित करना-

1. डिजिटल सामग्री निर्माण
2. डिजिटलीकरण की प्रक्रिया

## ब्लॉग
## (Blog)

**ब्लॉग क्या होता है ?**

"Blog" एक अंग्रेजी शब्द है और यह Weblog शब्द का एक छोटा नाम है। John Berger ने 1997 में इसको weblog नाम दिया था और बाद में 1999 में Metholz ने इसको छोटा कर इसका नाम Blog रख दिया और तब से यह ब्लॉग नाम से ही जाना जाता है। पहले के जमाने में लोग अपने मन की बात या कोई जानकारी अपनी डायरी में लिखकर रखते थे या अखबारों में छपवाते थे, लेकिन जैसे-जैसे टेक्नोलॉजी में सुधार होता गया इन चीजों की जगह ब्लॉग ने ले ली। दरअसल ब्लॉग इंटरनेट पर एक ऐसा प्लेटफॉर्म है जहाँ लोग अपने विचार, जानकारियां, तथ्य आदि लिखकर लोगों से जानकारियां शेयर करते हैं। ब्लॉग लिखने वाले को ब्लॉगर और जो काम ब्लॉग पर होता है उसे ब्लॉगिंग (Blogging) कहा जाता है।

**ब्लॉग और शिक्षा**–शिक्षा एक परम पुनीत कार्य है। कई लोग शिक्षा देना एक खुशी और प्रसन्नता का कार्य मानते हैं। कई ऐसे N.G.O. भी हैं जहां पर लोग बिना पैसों के शिक्षा देने का काम करते हैं। यानि कि शिक्षा का महत्त्व और शिक्षा देने का धर्म आज भी हमारे देश और पूरी दुनिया में सर्वविदित है।

**अर्थशास्त्र की शिक्षा देने वाले ब्लॉग**–जिस प्रकार चिकित्सा शास्त्र में मानव शरीर की समस्याओं का अध्ययन किया जाता है, उसी प्रकार अर्थशास्त्र में किसी व्यक्ति या संपूर्ण अर्थव्यवस्था से संबंधित आर्थिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। देश के तेज आर्थिक विकास के लिए सही आर्थिक नीतियों को अपनाना नितांत आवश्यक होता है और आर्थिक नीतियों का निर्माण अर्थशास्त्र से ही संभव होता है। अर्थशास्त्र विषय के व्यावहारिक महत्त्व के कारण ही इसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। आजकल बहुत से ऐसे अर्थशास्त्र की शिक्षा देने वाले ब्लॉग हैं, जहाँ अर्थशास्त्र का विद्यार्थी सरल शब्दों में ही अर्थशास्त्र से जुड़े प्रत्येक विषय के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है।

अर्थशास्त्र जैसे विषय को याद करने की बजाए उसे समझने का प्रयास करें, क्योंकि यह हमारी रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़ा हुआ है। अर्थशास्त्र की शिक्षा देने वाले ब्लॉग इसके लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

## वर्ल्ड वाइड वेब
## (World Wide Web)

WWW का अर्थ वर्ल्ड वाइड वेब है। विशेष रूप से स्वरूपित दस्तावेजों का समर्थन करने वाले इंटरनेट सर्वर की व्यवस्था वर्ल्ड वाइड वेब है। वर्ल्ड वाइड वेब या विश्व व्यापी वेब आपस में परस्पर जुड़े हाइपरटेक्स्ट दस्तावेजों को इन्टरनेट द्वारा प्राप्त करने की प्रणाली है। एक वेब ब्राउजर की सहायता से हम उन वेब पन्नों को देख सकते हैं जिनमें मूलपाठ, छवि (image), वीडियो, एवं अन्य मल्टीमीडिया होते हैं तथा हाइपरलिंक की सहायता से



इन पन्नों के बीच में आवागमन कर सकते हैं। विश्व व्यापी वेब को टिम बर्नर्स ली द्वारा 1989 में यूरोपीय नाभिकीय अनुसंधान संगठन जो की जेनेवा, स्वीट्ज़रलैंड में है, में काम करते वक्त बनाया गया था और 1992 में जारी किया गया था। उसके बाद से बरनर्स-ली ने वेब के स्तरों के विकास (जैसे की मार्कअप भाषाएँ जिनमें की वेब पन्ने लिखे जाते हैं) में एक सक्रिय भूमिका अदा की है। आम भाषा में कहे तो World Wide Web आपको किसी भी वेबसाइट से जुड़ने में मदद करता है। यह एक प्रकार से कंप्यूटर का ही एक एप्लीकेशन प्रोग्राम है। World Wide Web पूरी पृथ्वी पर फैले वेब के लिए है।

## सामाजिक नेटवर्किंग
## (Social Networking)

सामाजिक नेटवर्किंग एक ऑनलाइन सेवा, प्लेटफॉर्म या साइट होती है जो लोगों के बीच सामाजिक नेटवर्किंग अथवा सामाजिक संबंधों को बनाने अथवा उनको परिलक्षित करने पर केन्द्रित होती है, उदाहरण के लिए ऐसे व्यक्ति जिनकी रुचियां अथवा गतिविधियां समान होती हैं। एक सामाजिक नेटवर्किंग सेवा में अनिवार्य रूप से प्रत्येक प्रयोगकर्त्ता का निरूपण (अक्सर एक प्रोफ़ाइल), उसके सामाजिक संपर्क तथा कई अतिरिक्त सेवायें शामिल रहती हैं।

अधिकांश सामाजिक नेटवर्किंग सेवायें वेब आधारित होती हैं और प्रयोगकर्त्ताओं को इन्टरनेट का प्रयोग करते हुए एक-दूसरे से संपर्क करने का साधन प्रदान करती हैं उदाहरण के रूप में ई-मेल तथा इंसटैंट मैसेजिंग। हालांकि ऑनलाइन समुदाय सेवाओं को भी कभी-कभी सामाजिक नेटवर्किंग सेवा माना जाता है। व्यापक अर्थ में, सामाजिक नेटवर्किंग सेवा व्यक्ति केंद्रित होती है जबकि ऑनलाइन समुदाय सेवा समूह केंद्रित होती हैं। सामाजिक नेटवर्किंग साइटें किसी प्रयोगकर्त्ता को अपने व्यक्तिगत नेटवर्किंग में विचारों, गतिविधियों, घटनाओं और उनके व्यक्तिगत रुचियों को बांटने की सुविधा देती हैं।

इंटरनेट ने आज विश्व के लोगों को एक-दूसरे से जोड़ दिया है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स के जरिए आज कोई भी व्यक्ति एक दूसरे से कहीं से भी संपर्क साध सकता है। इसका प्रयोग करने वाले युवाओं की संख्या निरंतर बढ़ रही है।

सोशल मीडिया का जन्म 1995 में माना जाता है। उस वक्त क्लासमेट्स डॉट कॉम से एक साइट शुरू की गयी थी जिसके जरिये स्कूलों, कॉलेजों, कार्यक्षेत्रों और मिलीटरी के लोग एक दूसरे से जुड़ सकते थे। यह साइट अब भी सक्रिय है। इसके बाद वर्ष 1996 में बोल्ट डॉट कॉम नाम की सोशल साइट बनायी गयी। वर्ष 1997 में एशियन एवेन्यू नाम की एक साइट शुरू की गयी थी एशियाई-अमरीकी कम्यूनिटी के लिए। सोशल मीडिया के क्षेत्र में सबसे बड़ा बदलाव आया फेसबुक और ट्वीटर के आने से। फेसबुक का जन्म 4 फरवरी 2004 में हुआ। मार्क जकरबर्ग ने हार्वर्ड विश्वविद्यालय के छात्रों के लिए फेसबुक को डेवलप किया था। धीरे-धीरे इसका विस्तार दूसरे कॉलेजों और विश्वविद्यालयों तक हुआ और वर्ष 2005 में अमरीका की सरहद लाँघ कर यह विश्व के दूसरे देशों में पहुँच गया।

ऐसी ही कहानियाँ दूसरे सोशल नेटवर्किंग साइट्स की भी हैं।

**भारत में सोशल नेटवर्किंग की भूमिका**–भारत में सोशल नेटवर्किंग की भूमिका सबसे ज्यादा अन्ना हजारे द्वारा चलाए गए भष्ट्राचार के विरोद्ध अनशन आंदोलन में दिखी। जिसमें लोगों ने रैलियों में तो भाग लिया साथ-साथ सोशल साइट्स के माध्यम से भी बढ़ चढ़ कर अपनी प्रतिक्रिया दिखाई। यह आंदोलन 2011 का सबसे बड़ी घटना कहीं जाती है। जिस पर आम लोगों ने ही नहीं बल्कि बड़ी-बड़ी हस्तियों ने भी भाग लिया।

सामाजिक कार्यकर्त्ता अन्ना हजारे और टीम द्वारा चलाए गए भ्रष्टाचार के विरुद्ध आंदोलन में सबसे ज्यादा समर्थन देश के युवाओं से मिला। अपने स्कूल कॉलेजों और ऑफिसों को छोड़कर युवा देश के अलग-अलग हिस्सों में भ्रष्टाचार के विरोध में प्रदर्शन कर रहे थे। इनके प्रदर्शन का तरीका नए नारे, रोचक तस्वीरों और संदेशों वाले बैनर, टी-शर्ट और टोपी पर आंदोलन के समर्थन में की गई थी कलाकारी साथ ही साथ ढपली बजाकर गाने गाते हुए विरोध जताया। इन सबने भ्रष्टाचार के विरुद्ध किए जा रहे आंदोलन में जान डाल दी। साथ ही साथ सोशल साइट्स का भी भरपूर इस्तेमाल किया और प्रतिक्रिया जताई। विरोध में जहां जमकर नारे लगे वहीं सोशल नेटवर्किंग की मदद से लाइव तस्वीरें और वीडियो अपलोड की गई।

संक्षेप में सोशल नेटवर्किंग-नए समय का संवाद का माध्यम बन गया है।

## अभ्यास के प्रश्न

## (Study Questions)

1. अर्थशास्त्र के शिक्षण में अनुदेशन सामग्री की आवश्यकता और महत्त्व बताओ।
   (State the need and importance of instructional material in the teaching of economics.)
2. पाठ्य पुस्तकों और संदर्भ पुस्तकों पर एक विस्तृत नोट लिखें। अर्थशास्त्र की पुस्तक का महत्त्व भी वर्णन करें।
   (Write a detailed note on textbooks and reference books. Also describe the importance of the book of economics.)
3. एक पाठ्यपुस्तक के निर्माण के सिद्धांत क्या हैं ? पाठ्य पुस्तक लिखने की विधि की व्याख्या करें।
   (What are the principles of the construction of a textbook ? Explain the method of writing a text book.)
4. अर्थशास्त्र की पाठ्यपुस्तक के गुणों का वर्णन करें।
   (Describe the qualities of the textbook of economics.)
5. वृत्तचित्रों पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।
   (Write a brief note on documentaries.)
6. ग्राफ क्या हैं ? ग्राफ के प्रकारों का वर्णन करें। ग्राफ के लाभ भी बताएं।
   (What are the graphs ? Describe the types of graphs. Also narrate the benefits of the graphs.)
7. तालिकाओं की अवधारणा को समझाओ। तालिकाओं के लाभों का भी वर्णन करें।
   (Explain the concept of tables. Describe the benefits of tables.)
8. शिक्षण सामग्री सीखने के रूप में समाचार पत्रों के बारे में वर्णन करो।
   (Describe about the newspapers as the teaching learning material.)
9. स्कूल लाइब्रेरी के महत्व को समझाइए। भारत में पुस्तकालयों की स्थिति क्या है ? वर्णन करें।
   (Explain the important of school library. What is the condition of libraries in India ? Describe.)
10. स्कूल पुस्तकालय के उद्देश्य क्या हैं ? पुस्तकालय के कमरे और इसकी सजावट के बारे में भी लिखें।
    (What are the objectives of a school library ? Also write about the library room and its decoration.)
11. स्कूल पुस्तकालय के लिए पठनीय सामग्री के चयन के लिए मानदंडों को समझाओ।
    (Explain the criteria for the selection of readable material for the school library.)
12. लाइब्रेरियन और उसके कार्यों या कर्त्तव्यों पर एक संक्षिप्त नोट लिखें। यह भी समझाएं कि पुस्तकालय के अधिकतम उपयोग को प्रोत्साहित कैसे करें?
    (Write a short note on the librarian and his/her functions or duties. Also explain how to encourage the maximum usage of library?)
13. पुस्तकालय के संगठन और प्रशासन में हेडमास्टर/प्रिंसिपल की भूमिका समझाओ।
    (Explain the role of Headmaster/Principal in the organisation and administration of library.)
14. ई-संसाधनों पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।
    (Write a short note on E-Resources.)
15. ब्लॉग पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।
    (Write a short note on "Blog".)
16. वर्ल्ड वाइड वेब पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।
    (Write a short note on World Wide Web.)
17. सोशल नेटवर्किंग के बारे में वर्णन करें। भारत में सोशल नेटवर्किंग की भूमिका की व्याख्या करें।
    (Describe about social networking. Explain the role of social networking in India.)

* * *

# 3
CHAPTER

# अर्थशास्त्र शिक्षण के कौशल : व्याख्या करने का कौशल, उदाहरणों द्वारा दृष्टान्त कौशल, खोजपूर्ण प्रश्न कौशल और उद्दीपन परिवर्तन कौशल

## (Skills of Teaching Economics : Skill of Explaining, Skill of Illustration with Examples, Skill of Probing Questions and Skill of Stimulus Variation)

### कौशल से तात्पर्य एवं परिभाषा

### (Meaning and Definition of Skill)

एक पुरानी कहावत के अनुसार यह कहा जाता है कि शिक्षक जन्म-जात होते हैं वे बनाये नहीं जाते (The Teachers are born, they are not made.)। अगर हम इस बात को स्वीकार कर भी लेते हैं तो प्रश्न उठता है कितने ऐसे व्यक्ति हैं जिनमें जन्म से अच्छे शिक्षक के गुण होते हैं। प्रश्न का उत्तर होगा कि कुछ गिने चुने व्यक्तियों में ही एक अच्छे शिक्षक के गुण विद्यमान हो सकते हैं। इन शिक्षकों की संख्या से हमारे विद्यालय का शिक्षण कार्य सम्भव नहीं हो सकता क्योंकि ये संख्या में बहुत कम हैं। इसलिये भावी शिक्षकों को प्रशिक्षण देना बहुत आवश्यक है। उनको प्रशिक्षण के अन्तर्गत प्रभावशाली शिक्षण की दृष्टि से विशेष कौशलों का ज्ञान दिया जाता है जिनका प्रयोग वे आगे चलकर कक्षा शिक्षण में करते हैं। वैसे भी जब हम आज शिक्षण को विज्ञान के रूप में समझने लगे हैं तो हमारी धारणा यह होनी चाहिये कि अच्छे शिक्षक प्रशिक्षण द्वारा तैयार किये जा सकते हैं और उनमें विशेष शिक्षण कौशलों का विकास किया जा सकता है। इसलिये जो छात्र-छात्राएं शिक्षण व्यवसाय में प्रवेश करने के इच्छुक होते हैं, उनको पूर्व सेवाकालीन शिक्षण का प्रशिक्षण देना अत्यन्त आवश्यक होता है ताकि वे अपने विभिन्न विषयों से सम्बन्धित विभिन्न कौशलों की पहचान कर लें और उनकी परख करके भविष्य में आवश्यकतानुकूल शिक्षण प्रक्रिया का सदुपयोग कर सकें।





### कौशल की परिभाषा

### (Definition of Skill)

1. एन. एल. गेज (N.L. Gage) (1968) ने शिक्षण के क्षेत्र में अधिक कार्य किया है इसके अनुसार कौशल की परिभाषा निम्न है-

"शिक्षण कौशल वह विशिष्ट अनुदेशन प्रक्रिया है जिसे शिक्षक अपनी कक्षा-शिक्षण में प्रयोग करता है। यह शिक्षण क्रम की विभिन्न क्रियाओं से सम्बन्धित होता है जिन्हें शिक्षक अपनी कक्षा अन्त: क्रिया में लगातार प्रयोग करता है।" (Teaching skills are specific instructional activities and procedures that a teacher may use in his class room. These are related to the various stages of teaching or in the continuous flow of the teacher perfomance.)

2. डॉ. बी. के. पासी (Dr. B.K. Pass) (1976) ने शिक्षण-कौशल की परिभाषा इस प्रकार की है-

"शिक्षण-कौशल शब्द से अर्थ शिक्षण क्रियाओं अथवा उन व्यवहारों के सम्पादन से है जो छात्रों के सीखने के लिये सुगमता प्रदान करने के इरादे से किये जाते हैं।" (Teaching skills are a set of related teaching acts or behaviours performed with the intention to facilitate pupil's learning.)

3. मैलनटेयर तथा व्हाइट (Melntyer and White) का कथन है कि "शिक्षण-कौशल, शिक्षण व्यवहारों से सम्बन्धित वह स्वरूप है जो कक्षा की अन्त: प्रक्रिया उन विशिष्टमय परिस्थितियों को उत्पन्न करता है जो शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होती है और छात्रों को सीखने में सुगमता प्रदान करता है।" (Teaching skill is a set of related teaching behaviours which are specified types of class room interaction situations tends to facilitate the achievement of specified educational objectives.)

### 1. कथन कौशल या व्याख्या करने का कौशल

### (Skill of Narration Or Explaining)

कथन कौशल का अर्थ है घटनाओं के बारे में श्रोता को कहना। कथन एक कला है जिसका ज्ञान प्रत्येक अर्थशास्त्र विषय के शिक्षक होना चाहिए। वह अपने शिक्षण को उपयोगी और प्रभावशाली तभी बना सकता है जब उसे कथन कौशल का ज्ञान हो। कथन करते समय शिक्षक कल्पना का सहारा लेता है किसी घटना को मनोरम् एवं आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करता है। कथन करते समय शिक्षक अपने आपको भूल जाता है और उत्साहपूर्वक वर्णन करता है जिससे पाठ रसपूर्ण हो जाता है और बालकों को घटना के बारे में स्पष्टीकरण हो जाता है। शिक्षक जितने रोचक ढंग से कथन करता है उतना ही वह अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है। यद्यपि प्रत्येक अध्यापक इस कला में निपुण नहीं होता किन्तु यह अभ्यास द्वारा सीखी जा सकती है।

कथन के द्वारा बालक पर्याप्त मात्रा में ज्ञान अर्जित करता है। इस कौशल द्वारा बालकों की रुचियों तथा उनके सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित किया जाता है। कथन के द्वारा शिक्षक अप्रत्यक्ष वस्तु का ज्ञान छात्रों को प्रदान करता है। इस कौशल के द्वारा वर्णित वस्तु या सामग्री को सरल, सुगम, स्पष्ट तथा सुबोध बनाया जा सकता है।

अर्थशास्त्र के शिक्षक को इस कौशल का प्रयोग कुशलता एवं सर्तकता से करना चाहिए। कथन करते समय शिक्षक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए-

1. कथन करने से पूर्व अध्यापक को अपने विचार क्रमबद्ध कर लेने चाहिए और पढ़ाते समय उस क्रम का अनुसरण करना चाहिए।

2. कथन छात्रों की रुचि और मानसिक स्तर के अनुकूल होना चाहिए। यदि कथन बालकों के बौद्धिक स्तर से ऊंचा हो तो बालक उसे नहीं समझेंगे और यदि निम्न कोटि का होगा तो बालक उसमें रुचि नहीं लेंगे।

3. कथन करते समय वर्णन सरल, स्पष्ट तथा रोचक भाषा में करना चाहिए जिससे छात्र उसे अच्छी तरह समझ सकें।

4. कथन बहुत अधिक लम्बा या बहुत छोटा नहीं होना चाहिए। यदि कथन बहुत लम्बा होगा तो विद्यार्थी उसे समझ नहीं पाएंगे और बहुत छोटा होगा तो उनके मन पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

5. यदि कथन में रोचकता और सजीवता होगी तो छात्रों में कौतूहल जागृत होगा और कथन सुनते ही उनका मन नहीं उबता। वे कथन को ध्यानपूर्वक सुनते हैं।

6. कथन में अनावश्यक बातों और घटनाओं का वर्णन नहीं करना चाहिए। इससे समय व्यर्थ नष्ट होता है और विद्यार्थियों को कुछ लाभ भी नहीं होता। पाठ योजना बनाते समय ही अध्यापक यह निश्चित कर ले कि कथन कहां-कहां देना उपयुक्त रहेगा।

7. अध्यापक को अपनी पाठ्य-वस्तु सोपानों में विभाजित कर लेनी चाहिए पर उन सोपानों में क्रमबद्धता होनी चाहिए। यदि सोपान क्रमबद्ध होंगे तो विद्यार्थियों को विषय-वस्तु समझने में कोई अड़चन नहीं आएगी प्रत्येक सोपान के बाद कुछ प्रश्न पूछ कर निष्कर्ष निकलवाना चाहिए। उसी निष्कर्ष के आधार पर अगला सोपान शुरू करें। इससे अध्यापक को यह पता चलता है कि बालक ने कथन को समझा है या नहीं और बालक भी उसमें रुचि लेते हैं।

8. कथन करते समय रेखाचित्र, मानचित्र, चार्ट, उदाहरणों और दृष्टान्तों आदि का उपयुक्त स्थान पर प्रयोग करना चाहिए। इससे विद्यार्थी रुचि लेकर पढ़ते हैं और विषय-वस्तु उन्हें अच्छी तरह समझ में आती है। छोटे बच्चों को पढ़ाते समय कथन के साथ सहायक सामग्री का प्रयोग करना चाहिए।

9. अध्यापक के स्वर, उच्चारण एवं बोलने के ढंग का बालकों पर प्रभाव पड़ता है। यदि अध्यापक का बालकों पर प्रभाव पड़ता है। यदि अध्यापक का स्वर ऊंचा, उच्चारण स्पष्ट



और बोलने का ढंग मधुर और रोचक है तो उसका कथन प्रभावशाली होगा। यदि कथन अरोचक, नीरस और प्रभावहीन होगा तो बालक रुचि नहीं लेंगे। शिक्षक को स्थिति के अनुकूल हाव-भाव दिखाने चाहिए।

10. यदि कथन अभिनय द्वारा किया जाए तो उत्तम है। अध्यापक की भाव-मुद्रा नेत्र संचालन आदि का बालकों पर प्रभाव पड़ता है। लेकिन अभिनय अत्यधिक नाटकीय नहीं होना चाहिए।

11. कथन धैर्यपूर्वक, आत्मविश्वास के साथ होना चाहिए।

12. कथन को कल्पना शक्ति के द्वारा रोचक बनाना चाहिए।

## उदाहरणों द्वारा दृष्टांत कौशल
## (Skill of Illustration with Examples)

कुछ अवधारणाएं इतनी अमूर्त होती हैं कि व्याख्या की सहायता से विद्यार्थी उसे ठीक ढंग से नहीं समझ पाते। ऐसी परिस्थिति में एक कुशल अध्यापक विचार, अवधारणा और सिद्धांत की व्याख्या करने के लिए उदाहरणों का प्रयोग करता है। किसी प्रत्यय के बारे में दृष्टांत देने से अभिप्राय है, उस पर रोशनी/प्रकाश डालना और शिक्षण में दृष्टांत से अभिप्राय है उन सामग्रियों का प्रयोग करना, जो विद्यार्थियों के लिए विभिन्न अवधारणाएं स्पष्ट करती हैं और सही ज्ञान प्राप्त करने में उनकी सहायता करती हैं। दृष्टांत की उपयोगिता ऐसे कौशल पर निर्भर करती है, जिससे विषय के नए तथा कठिन विचारों को सरल वस्तुओं के प्रयोग से प्रस्तुत किया जा सके। उनकी उपयोगिता छोटे स्तर पर बहुत अधिक होती है जहां ऐसे पाठों को पढ़ाना होता है जिससे सम्बन्धित वस्तुओं को छुआ या देखा नहीं जा सकता। परंतु इसका प्रयोग हर स्तर के बच्चों के लिए करना चाहिए।

### दृष्टांत प्रयोग का महत्व
### (Importance of use of Illustrations)

1. मानसिक बोध की कठिनाइयों को स्पष्ट करने तथा उन्हें सुलझाने में सहायता करता है।

2. यह व्याख्या को सरल तथा सजीव बनाने में सहायक होता है।

3. यह अनुदेशन को संपूर्ण बनाता है और विद्यार्थियों को अमूर्त प्रत्ययों को मूर्त सामग्री की सहायता से समझने योग्य बनाता है।

4. यह उन वस्तुओं की रुचि जागृत करता है जो इसके बिना शुष्क तथा नीरस रह जाती है।

5. यह विद्यार्थियों के ध्यान को आकर्षित करने तथा उसे केन्द्रित करने में सहायक होता है।

6. यह निरीक्षण तथा निर्णयात्मक शक्ति का विकास करता है।

7. जो विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है या उन्हें पढ़ाया जाता है, यह उसे ज्योतिर्मय/प्रकाशयुक्त करता है।

8. यह ज्ञान के भार को कम करता है।

9. यह विद्यार्थियों की स्मरण शक्ति में वृद्धि करता है।

10. यह विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति को विकसित करता है।

## दृष्टांतों के प्रकार
## (Types of Illustraions)

मुख्य रूप से दृष्टांत दो प्रकार के होते हैं। पहले वे जिनका सीधा सम्बन्ध ज्ञानेन्द्रियों से होता है। उन्हें **अशाब्दिक**, प्राकृतिक, ठोस सामग्री दृष्टांत कहा जा सकता है। दूसरे वे दृष्टांत होते हैं जो सम्बन्धित विचारों के माध्यम से मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं और जिन्हें शब्दों की सहायता से प्रस्तुत किया जाता है। उन्हें **शाब्दिक दृष्टांत** कहा जाता है। शाब्दिक दृष्टांतों में उपमाओं, तुलनाओं, शब्द-चित्रों, कहानियों आदि का समावेश होता है। इसका मुख्य कार्य शाब्दिक उदाहरणों की सहायता से किसी सामान्य कथन या विचार को स्पष्ट करना होता है। अशाब्दिक या ठोस उदाहरण या दृष्टांत अधिक उपयोगी होते हैं क्योंकि वास्तविक वस्तु, मॉडल, रेखाचित्र, मानचित्र, पोस्टर इत्यादि के प्रदर्शन से शिक्षण को अधिक संजीव बनाया जा सकता है और अधिगम अधिक प्रभावशाली तथा स्थायी बनता है। उदाहरण द्वारा दृष्टांत कौशल में मुख्यत: दो प्रक्रियाएं निहित होती हैं-

1. विद्यार्थियों के सम्मुख किसी विचार अथवा सिद्धांत को स्पष्ट करना।

2. इस बात की पुष्टि करना कि विद्यार्थियों ने उस विचार को अच्छी प्रकार से समझ लिया है या नहीं।

## कौशल के घटक
## (Components of the skill)

इस कौशल में पारंगत होने के लिए निम्नलिखित व्यवहारों का अभ्यास और पालन आवश्यक है-

**1. सम्बन्धित उदाहरणों का निर्माण (Formulating Relevant Examples)**- उदाहरण तभी उचित है, जब तक व्याख्यात्मक नियम, सिद्धांत या अवधारणा से सम्बन्धित है और उसे उचित रूप से समझाने में सहायक हो। इसलिए उदाहरण विषय सामग्री से सम्बन्धित होने चाहिए।

**2. सरल उदाहरणों का निर्माण (Formulating Simple Examples)**-साधारण उदाहरण वे होते हैं, जो विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान या अनुभवों पर आधारित होते हैं। पूर्व ज्ञान का अभिप्राय विद्यार्थियों द्वारा पहले से ही प्राप्त ज्ञान से हैं। यह विद्यार्थी को शिक्षण में अधिकतम क्रियात्मक योगदान देने में सहायता करते हैं और प्रत्यय का स्पष्ट बोध प्रदान करते हैं।



**3. रोचक उदाहरणों का निर्माण (Formulating Interesting Examples)**- उदाहरण तभी रोचक होता है, जब वह विद्यार्थियों के मन में किसी विचार, प्रत्यय या सिद्धांत को उचित ढंग से समझने के लिए, रोचकता जागृत करे और ध्यान आकर्षित करे। उदाहरण विद्यार्थियों के परिपक्वता स्तर, आयु तथा अनुभवों के अनुसार होने चाहिए।

**4. उदाहरणों के लिए उचित माध्यमों का प्रयोग (Use of Appropriate Media to Illustrate)**-कक्षा में दृष्टांत या उदाहरण को जब प्रयोग किया जाता है तब उपयुक्त माध्यम का चयन करना अति आवश्यक है। दृष्टांत के प्रयोग के लिए दो प्रकार के माध्यमों का चयन किया जा सकता है-

**( क ) अशाब्दिक माध्यम**-कक्षा में कुछ अवधारणाओं को स्पष्ट करने के लिए शब्दों का प्रयोग न करके वास्तविक या मिलती-जुलती वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है जैसे-

**(i) पदार्थ या वस्तु (Object)**-प्राय: कक्षा में विषय सामग्री को स्पष्ट करने के लिए वास्तविक पदार्थों का प्रयोग बहुत प्रभावशाली अधिगम प्रदान करता है। कृषि के लिए आवश्यक तत्व जैसे खाद, बीज इत्यादि को वास्तविक वस्तु के लिए प्रदर्शित किया जा सकता है।

**(ii) मॉडल (Model)**-अर्थशास्त्र में प्राय: वास्तविक वस्तुओं को लाकर विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करना संभव नहीं होता। ऐसी स्थिति में उस वस्तु का मॉडल बनाकर विषय वस्तु को समझाया जा सकता है। जैसे किसी डैम, धरती, खेत इत्यादि का मॉडल। इनके प्रयोग से पाठ को रूचिकर बनाया जा सकता है।

**(iii) रेखाचित्र, मानचित्र एवं चार्ट (Diagrams, Maps and Charts)**-अर्थशास्त्र अध्यापक विभिन्न राज्यों, देशों में विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन को मानचित्र की सहायता से समझा जा सकता है। विभिन्न दशकों में भारत की जनसंख्या वृद्धि, पंचवर्षीय योजनाओं में सरकार की आय तथा व्यय इत्यादि को रेखाचित्र या चार्ट की सहायता से दर्शाया जा सकता है। अनुभवी शिक्षक इन्हें श्यामपट्ट पर भी बना सकता है।

**(iv) चित्र, छायाचित्र और पोस्टर (Picture, Photographs and Posters)**- कई बार कक्षा में वास्तविक वस्तु, मॉडल इत्यादि का प्रदर्शन संभव नहीं होता, तो शिक्षक छायाचित्र, चित्र तथा पोस्टर का प्रयोग करता है। ये सामग्री बहुत आसानी से उपलब्ध होती है और सस्ती भी होती है। कृषि उपकरण बैंक की प्रक्रिया इत्यादि उपविषयों को चित्रों की सहायता से प्रभावशाली ढंग से पढ़ाया जा सकता है।

**( ख ) शाब्दिक माध्यम**-शाब्दिक माध्यम से अभिप्राय है कि शिक्षक कक्षा में विचारों, संप्रत्ययो,सिद्धांतों को स्पष्ट करने के लिए शब्दों का प्रयोग करें। कुछ मुख्य शाब्दिक माध्यम निम्नलिखित हैं-

**(i) उदाहरण (Examples)**-दृष्टांत कौशल में उदाहरणों का प्रमुख स्थान है। कीमत वृद्धि के उदाहरणों को प्रस्तुत करके विषय सामग्री को सरल व रूचिकर बनाया जा सकता है।

**(ii) शब्द चित्र (Verbal Pictures)**–किसी घटना का अध्यापक श्यामपट्ट पर चित्र बनाकर उससे सम्बन्धित शब्दों को लिखकर, स्पष्टीकरण कर सकता है। कई बार चित्र शब्दों से चित्र को विद्यार्थी समझने में असमर्थ होते हैं।

**(iii) तुलना (Comparison)**–अध्यापक अपनी विषय वस्तु को स्पष्ट करने के लिए, किसी प्रत्यय की व्याख्या के लिए 'तुलना' की सहायता लेता है। जैसे दो देशों की जलवायु को उत्पादन को तुलना द्वारा अधिक अच्छे ढंग से समझा जा सकता है।

**(iv) कहानी कथन (Story)**–अर्थशास्त्र के इतिहास में अध्यापक कहानी के माध्यम से विषय-वस्तु को स्पष्ट करता है। अर्थव्यवस्था का उत्थान तथा पतन भारत की अर्थव्यवस्था इत्यादि। कहानी के माध्यम से ही विद्यार्थियों की अर्थशास्त्र के इतिहास में रूचि जागृत की जा सकती है।

**5. उचित उपागम का प्रयोग (Use of Appropriate Approach)**–दृष्टांत के प्रयोग के लिए शाब्दिक व अशाब्दिक माध्यमों के प्रयोग के लिए दोनों प्रकार के उपागमों का प्रयोग किया जाता है–

**(i) आगमन उपागम (Inductive Approach)**–कक्षा में किसी अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए शिक्षक विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत करता है, विद्यार्थियों से ही नियम अथवा अन्य सूचनाएं निकलवाता है और उनका सामान्यीकरण करता है। इसे आगमन विधि/उपागम कहते हैं। इस उपागम में ज्ञात से अज्ञात की ओर, विशिष्ट से सामान्य की ओर अग्रसर होते हैं। इस विधि में प्रयोग किए जाने वाले उदाहरण सरल, रोचक एवं सम्बन्धित होने चाहिए ताकि विद्यार्थी आसानी से समझ सके।

**(ii) निगमन उपागम (Deductive Approach)**–इस उपागम में अध्यापक किसी अवधारणा की व्याख्या करने से पहले उसका अर्थ, परिभाषा, नियम आदि बता देता है और फिर उसे उदाहरणों की सहायता से स्पष्ट करता है। इसमें अध्यापक सामान्य से विशिष्ट की ओर, सूक्ष्म से स्थूल की ओर अग्रसर होता है।

दोनों उपागमों का एक साथ भी प्रयोग किया जा सकता है। जैसे पहले आगमन उपागम से उदाहरणों के सहारे अवधारणा को समझाया जाए, इसके उपरांत निगमन द्वारा विद्यार्थियों के सत्सम्बन्धी उदाहरण अथवा घटनाओं को प्राप्त कर उनका विश्लेषण करके अवधारणा के अधिगम स्तर को विकसित किया जाये। इस प्रकार दोनों का एक साथ उपयोग अधिक प्रभावशाली सिद्ध होता है।

**दृष्टांत के प्रयोग के लिए सुझाव (Suggestions to use Illustration)–**

1. दृष्टांत सरल तथा बोधगम्य होने चाहिए।
2. वे उपयुक्त होने चाहिए।
3. लम्बे उदाहरणों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।
4. अधिक उदाहरणों का भी प्रयोग नहीं करना चाहिए।



5. दृष्टांतों को उचित रूप से पकड़ना व प्रदर्शित करना चाहिए।
6. दृष्टांत प्रदर्शन के लिए पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थी उसे समझने में पूरा ध्यान लगा सकें।
7. वे रूचिकर होने चाहिए।
8. उनमें तकनीकी भाषा का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।
9. विद्यार्थियों को दृष्टांत का अच्छी प्रकार से निरीक्षण करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
10. वे समय से पहले तैयार किए जाने चाहिए।
11. दृष्टांत सामग्री आकर्षित होनी चाहिए, जहां तक संभव हो रंगीन होनी चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को अधिक आकर्षित कर सके।
12. वे उपविषय में सम्बन्धित होने चाहिए।

अतः दृष्टांतों का चुनाव ध्यानपूर्वक किया जाना चाहिए, प्रभावशाली ढंग से तैयार, उचित समय पर प्रस्तुत तथा बुद्धिमतापूर्ण ढंग से प्रयोग किया जाना चाहिए।

## 3. खोजपूर्ण प्रश्न कौशल
## (Skill of Probing Question)

ग्रीस के प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात ने मनुष्य के अव्यवस्थित ज्ञान को व्यवस्थित करने के लिये इस विधि को अपनाया था। इसी लिये यह विधि सुकराती (Soeratic) नाम से भी जानी जाती है जिसको आज हम 'प्रश्नोत्तर विधि' कहते हैं। शिक्षण की दृष्टि से प्रश्न पूछने के कौशल का अत्यन्त महत्त्व है। प्रश्न करना शिक्षण करने का सर्वश्रेष्ठ साधन है। इसके द्वारा ही शिक्षक छात्र-छात्राओं के सम्पर्क में आता है और उनके विचार-विमर्श अथवा विचारों का आदान-प्रदान करता है। प्रश्न विद्यार्थियों को प्रेरित करते हैं और उनकी शिक्षा प्राप्ति की प्रक्रिया और दिशा का निर्देशन करते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि 'शिक्षण की निपुणता' (Efficiency of Teaching) बहुत कुछ पूछे गये प्रश्नों तथा उनके बताने पर निर्भर करती है। पार्कर महोदय ने अपनी पुस्तक 'शिक्षण पद्धतियां' में प्रश्नों की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि 'प्रश्न आदत-कौशल स्तर के बाहर समस्त शैक्षिक क्रिया की कुंजी है।' ("The question is the key to all educative activity above the habit-skill level.")

उपरोक्त कथन से यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट होती है कि शिक्षण कला में प्रश्नों का सबसे अधिक महत्त्व है। प्रश्न पूछना एक कला है और बहुत कुछ सीमा तक शिक्षक की कुशलता उसके प्रश्न पूछने की योग्यता पर निर्भर करती है। एक अच्छा शिक्षक एक अच्छा प्रश्नकर्त्ता होता है। परन्तु प्रश्न पूछने की कला में सभी शिक्षक निपुण नहीं होते इसलिये सभी शिक्षकों को प्रश्नोत्तर की कला में प्रवीण होना चाहिये। इस कला में दक्षता प्राप्त करने हेतु शिक्षकों को यह पता होना चाहिये कि अच्छे प्रश्नों के कौन से लक्ष्य होते हैं और उनका प्रयोग करना शिक्षण प्रक्रिया में किस प्रकार हितकर हो सकता है।

शिक्षण प्रक्रिया को सफल बनाने में प्रश्नों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रश्नों के महत्व को निम्न बातों के आधार पर भली-भान्ति समझा जा सकता है–

1. पाठ के विकास हेतु आवश्यकतानुकूल प्रश्न पूछना बहुत सहायक सिद्ध होता है।
2. प्रश्नों के पूछने से छात्रों में जिज्ञासा उत्पन्न होती है वे कक्षा में ध्यान से सुनते हैं।
3. यदि शिक्षक पाठ के बीच-बीच छात्रों से प्रश्न पूछते हैं तो शिक्षक के प्रत्येक वाक्य को छात्र बहुत ध्यान से सुनते हैं, ताकि बाद में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर दे सकें।
4. प्रश्नों के द्वारा छात्र-छात्राओं की कल्पना और तर्क-वितर्क की शक्ति का विकास होता है तथा गूढ़ एवं रहस्यपूर्ण बात या तथ्य को समझने की योग्यता विकसित होती है।
5. प्रश्न पूछ कर यह पता किया जा सकता है कि छात्र-छात्राओं ने पढ़ाये हुए प्रकरण को कितना समझा है।
6. समयानुकूल उचित एवं खोजपूर्ण प्रश्नों के द्वारा छात्र-छात्राओं को प्रेरित करके उनकी कल्पना एवं रचनात्मक शक्ति का विकास भी किया जा सकता है।

## प्रश्नों के उद्देश्य
## (Objectives of Questioning)

शिक्षण करते समय शिक्षक को यह प्रयास करना चाहिये कि वह आवश्यकता एवं समयानुकूल प्रश्न पूछकर छात्र एवं छात्राओं को अधिक-से-अधिक ज्ञानार्जन में सहायता दे और छात्र-छात्राओं के प्रश्नों का उत्तर देकर उनकी शंकाओं का निवारण करे। उनको इस योग्य भी बनाया जाये कि वे ज्ञान से सम्बन्धित तथ्यों को तर्क की कसौटी पर कस कर स्वीकार करे। इन सभी महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखते हुए खोजपूर्ण प्रश्नों के उद्देश्य इस प्रकार से होने चाहिएं–

1. छात्र-छात्राओं का मानसिक एवं बौद्धिक विकास करना।
2. छात्र-छात्राओं के द्वारा कक्षा में सजीवता लाना।
3. छात्र-छात्राओं की कठिनाइयों का निवारण करना।
4. पाठ को रोचक बनाकर छात्रा-छात्राओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना।
5. उनके ज्ञान, ज्ञान के प्रयोग और उनके चातुर्य का पता लगाना।
6. उनकी अभिव्यक्ति क्षमता एवं योग्यता का पता लगाना।
7. इस बात का पता लगाना कि जो कुछ पढ़ाया जा रहा है उसमें से विद्यार्थियों को कितना कुछ समझ में आ रहा है।
8. छात्र-छात्राओं द्वारा प्राप्त किये गये ज्ञान एवं तथ्यों का मूल्यांकन करना।
9. छात्र-छात्राओं में स्वस्थ समालोचनात्मक दृष्टिकोण का विकास करना।

**प्रश्न और शिक्षक का दायित्व**–इस बात की चर्चा पहले ही की जा चुके हैं कि प्रश्न पूछना एक कला है और शिक्षक को इस दृष्टि से कलाकार होना चाहिये। अपने शिक्षण



दायित्व को कुशलतापूर्वक एवं निष्ठापूर्वक निभाने हेतु प्रत्येक शिक्षक को इस कला में दक्ष होने का पूर्ण रूप से प्रयास करना चाहिये। इस कला में प्रवीण एवं दक्ष होने के बाद ही वह शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावपूर्ण, सशक्त एवं सार्थक बना सकता है। इसलिये एक कुशल एवं अनुभवी शिक्षक को प्रश्न पूछते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना अवश्य ही श्रेयस्कर होता है।

1. कक्षा के सभी विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए प्रश्न पूछे जाने चाहिए।
2. प्रश्न छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तर के अनुकूल होने चाहिए।
3. अगर प्रश्न बड़े हैं तो उनको छोटे-छोटे भागों में बांट लेना चाहिये।
4. प्रश्नों का केन्द्र एक ही छात्र नहीं होना चाहिये। अर्थात् एक ही छात्र से अनेक प्रश्न न पूछे जाएं।
5. प्रश्न पूछते समय विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिये।
6. विद्यार्थियों द्वारा दिये गये उत्तरों में शिक्षक को सुधार करना चाहिए।
7. प्रश्न केवल प्रश्न पूछने के लिये नहीं होने चाहिये बल्कि प्रश्न उद्देश्य पूर्ण और सार्थक होने चाहिये अन्यथा पाठ में नीरसता की बढ़ने की सम्भावना रहती है और विद्यार्थी उबने लगेंगे।
8. प्रश्न पूछने के बाद छात्र-छात्राओं को सोच-समझ कर उत्तर देने के लिए शिक्षण को धैर्य रखना चाहिए।
9. प्रश्न पूछने के बाद शिक्षक को विद्यार्थियों को उत्तर देने के लिए प्रेरित करना चाहिये।
10. ऐसे प्रश्न न पूछे जाए जो विवादास्पद हों।
11. ऐसे प्रश्न कदापि भी न पूछे जायें जिनके उत्तर अनेक हों जैसे-श्रीमती इन्दिरा गांधी कौन थी ?
12. प्रश्नों की भाषा सरल, स्पष्ट हो ताकि सभी छात्र-छात्राओं की समझ में आ जायें।
13. शिक्षक को ऐसे प्रश्न नहीं पूछने चाहिये जिनका उत्तर प्रश्नों में ही निहित हो जैसे-आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन का उपयोग ही अर्थशास्त्र में उपभोग कहलाता है। उपभोग किसे कहते हैं ?
14. प्रश्नों की रचना एक जैसी नहीं होनी चाहिये।
15. प्रश्न ऐसे होने चाहिये जो छात्र-छात्राओं की मानसिक क्रियाओं को सचेत और जागृत कर दे और उन्हें अवलोकन, स्मरण और विचार करने के लिये प्रोत्साहित करे।
16. शिक्षक को ऐसे प्रश्न भी नहीं पूछने चाहिये जिनका उत्तर हां या ना में हो। जैसे-क्या डॉक्टर को अर्थशास्त्र की दृष्टि से एक उत्पादक कहा जा सकता है ?
17. प्रश्नों में विषय-वस्तु की दृष्टि से क्रमबद्धता होनी चाहिये।

18. प्रति ध्वनि प्रश्न भी नहीं पूछे जाने चाहिए। ऐसे प्रश्नों से तर्क एवं मनन शक्ति का विकास नहीं होता। उदाहरणतया भारत विशाल देश है। भारत क्या है ?

19. ऐसे प्रश्न भी न पूछे जायें जिनके अन्त में यह ठीक है न ? यह कहना सही होगा ? आदि का प्रयोग होता है। ये प्रश्न पुष्टि कारक प्रश्न कहलाते हैं। ऐसे प्रश्नों के द्वारा शिक्षक अपने कथन की पुष्टि छात्र-छात्राओं से करवाता है। यह एक बड़ी भूल है। शिक्षक को कदापि भी ऐसा नहीं करना चाहिये।

20. शिक्षक को प्रश्न पूछते समय अभ्यस्त शब्दों का प्रयोग अधिक नहीं करना चाहिये। जैसे–शाबाश, बहुत अच्छे, अति सुन्दर, बहुत खूब, वाह क्या जवाब दिया है, कमाल कर दिया आदि। ऐसा करने से शिक्षक उपहास का पात्र बन जाता है। इसलिये शिक्षक को ऐसे शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिए।

## सूक्ष्म शिक्षण में खोजपूर्ण प्रश्न कौशल

## (Skill of Probing Question in Micro-Teaching)

प्रश्न पूछने की कला शिक्षण की सफलता का आधार है। **थ्रिंग** के कथानानुसार, "पढ़ाने का अर्थ है कुशलतापूर्वक प्रश्न पूछना जिससे मन देखने, प्रबन्ध करने तथा कार्य करने के लिये विवश हो उठे।" **पार्कर** के विचारानुसार, "प्रश्न पूछना समस्त शिक्षा क्रिया की चाबी है।" सूक्ष्म शिक्षण की दृष्टि से प्रश्न पूछने के निम्न उद्देश्य हैं–

1. ज्ञान की परीक्षा।
2. कठिनाइयों का जानना।
3. अभिप्रेरणा जागृत करना।
4. छात्रों का सक्रिय सहयोग प्राप्त करना।
5. ज्ञान का प्रयोग करना।
6. पाठ की पुनरावृत्ति करना।
7. चिन्तन, विवेक, तर्क-वितर्क-मनन और मौलिकता एवं सृजनात्मकता का विकास करना।
8. आत्म-विश्वास को दृढ़ करना और उसका विकास करना।
9. कक्षा में अनुशासन बनाये रखना।
10. मानसिक एवं बौद्धिक शक्तियों का विकास करना।

मुख्य रूप से प्रश्नों को तीन भागों में बांटा जा सकता है जो निम्न हैं–

**1. प्रारम्भिक प्रश्न (Introductory Questions)**–ये वह प्रश्न हैं जिन्हें आरम्भ में पाठ परिचय के लिये पूछा जाता है। इसलिये इन्हें परिचयात्मक प्रश्न भी कहते हैं।

**2. विकासात्मक प्रश्न (Development Questions)**–ये प्रश्न पाठ के विकास हेतु पूछे जाते हैं।



**3. पुनरावृत्ति प्रश्न (Recapitulatory Questions)**–इन प्रश्नों का सम्बन्ध पाठ पढ़ाने के बाद के प्रश्नों से होता है। इन प्रश्नों के द्वारा यह जाना जाता है कि छात्र-छात्राएं पाठ से सम्बन्धित कितनी जानकारी प्राप्त कर चुके हैं।

## व्यावहारिक दृष्टि से खोजपूर्ण प्रश्न कौशल का तात्पर्य

## (Meaning of Probing Question from Practical point of View)

खोजपूर्ण प्रश्न से तात्पर्य है कि छात्र-छात्राओं के उत्तर की खोज की जाये। खोजने से अभिप्राय है कि सम्बन्धित विषय के बारे में गहराई (गहनता) एवं सूक्ष्मता से जानना। कोई भी शिक्षक जब विद्यार्थी से प्रश्न करता है तो उसके उत्तर में पांच प्रकार की सम्भावना होती है जो कि निम्न हैं–

1. कोई उत्तर नहीं, 2. गलत उत्तर, 3. आंशिक रूप से सही उत्तर, 4. अपूर्ण उत्तर, 5. सही उत्तर।

अगर छात्र प्रश्न का उत्तर सही देता है तो शिक्षक और प्रश्न पूछ कर छात्र के बोध के प्रति निश्चित हो जाता है। लेकिन उपरोक्त पहली चार स्थितियों में शिक्षक छात्र-छात्राओं का सही उत्तर प्राप्त करने हेतु मार्ग दर्शन करता है। इसके लिये वह छात्र-छात्राओं से पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित प्रश्न पूछता है जो उनके पूर्व ज्ञान की खोज करते हैं और उन्हें सही उत्तर देने के लिये प्रेरित करते हैं।

## खोजपूर्ण प्रश्न कौशल के घटक

## (Components of Probing Question)

इस कौशल के घटक निम्न हैं–

**1. अनुबोधन (Prompting)**–संकेतों के द्वारा छात्र-छात्राओं को सही उत्तर देने के लिये प्रेरित करना ही अनुबोधन कहलाता है। अनुबोधन तकनीक निम्न ढंग से सहायक होती है।

1. आत्म-विश्वास का विकास होता है।
2. लम्बे समय तक उत्तर याद रहता है।
3. प्रेरणा का मिलना।
4. विषय-वस्तु के बारे में स्पष्ट बोध होता है।

**2. अधिक सूचना प्राप्ति (Seeking further information)**–ये प्रश्न छात्र-छात्राओं से पाठ से सम्बन्धित अधिक सूचना प्राप्त करने के लिये पूछे जाते हैं। सूचना प्राप्ति प्रविधि का प्रयोग प्रश्न के अधूरे उत्तर मिलने पर भी किया जाता है। इसके अनुसार शिक्षक 'क्या', 'क्यों', कैसे प्रकार का प्रश्न पूछ कर अधिक सूचना प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

**3. पुनः केन्द्रीयकरण (Refocussing)**–इस तकनीक का प्रयोग सही उत्तर प्राप्त करने की स्थिति में किया जाता है। इसका उद्देश्य छात्र-छात्राओं के सही उत्तर की पुष्टि करना होता है। इसमें विद्यार्थी के उत्तर के महत्त्व का बोध होता है। इस प्रकार इस तकनीक में समानता, भिन्नता, अन्तर और वास्तविक जीवन में प्रयोग से सम्बन्धित प्रश्न पूछे जाते हैं।

**4. पुनः निर्देशन (Redirection)**–इस विधि का प्रयोग करने की आवश्यकता तब पड़ती है जब छात्र उत्तर न दे सकें या उसका उत्तर अपने में अपूर्ण हो। एक ही प्रश्न कई छात्र-छात्राओं से पूछा जाता है। इस प्रविधि का प्रयोग खोजपूर्ण उत्तर प्राप्त करने के लिये किया जाता है और कभी-कभी अधिक सूचना प्राप्ति के लिये भी किया जाता है।

**5. आलोचनात्मक सजगता में वृद्धि (Increasing Critical Awareness)**–प्रश्न का उत्तर पूर्ण रूप से सही मिलने पर इस प्रविधि का प्रयोग करते है। इसका उद्देश्य प्रकरण से सम्बन्धित आलोचनात्मक सजगता एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण का विकास करना होता है। इसके लिये निम्न प्रकार के प्रश्न पूछे जायें–

1. आप ने यह किस आधार पर कहा ?
2. आपके ऐसे विचार (सोच) क्यों हैं ?
3. यह कैसे सम्भव हो सकता है ?
4. आप मर्यादा में रहना क्यों पसन्द करते हैं ?
5. इस घटना के पीछे कौन-कौन से कारण हो सकते हैं ?

## 4. उद्दीपन परिवर्तन कौशल
## (Skill of Stimulus Variation)

एक कुशल एवं अनुभवी शिक्षक अपने पाठ को प्रभावशाली एवं सार्थक बनाने के लिये अच्छे ढंग से प्रश्न पूछता है, विषय-वस्तु की व्याख्या करता है, पाठ को विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से सरल बनाता है। परन्तु इन तीनों कौशलों के प्रयोग के साथ-साथ शिक्षक के लिये छात्र-छात्राओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिये विभिन्न प्रकार के उद्दीपनों का शिक्षण प्रक्रिया में प्रयोग करना अत्यन्त आवश्यक है। इस बात को हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि शिक्षक कक्षा में खड़ा होकर एक ही मुद्रा में न बोलता रहे बल्कि उसे अभिनयात्मक ढंग को अपना कर अपनी शिक्षण प्रक्रिया को पूर्ण रूप से सार्थक, आकर्षक एवं सजीव बनाने का पूरा-पूरा प्रयास करना चाहिये। अगर वह ऐसा करने में असफल रहता है तो छात्र-छात्राओं का ध्यान पाठ में न होकर अपनी बातचीत में लग जायेगा अर्थात् उनको पाठ नीरस लगने लगेगा और शिक्षण प्रक्रिया का प्रयोजन ही समाप्त हो जायेगा। इसलिये शिक्षक के लिये छात्र-छात्राओं के ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये अपनी शारीरिक मुद्रा, हाव-भाव, अंग संचालन और आवाज में उतार-चढ़ाव का परिवर्तन करना आवश्यक है। शिक्षक के इस प्रकार के व्यवहार को ही उद्दीपन परिवर्तन कौशल कहा जाता है।

### उद्दीपन परिवर्तन कौशल के घटक
### (Components of Skill of Stimulus Variation)

उद्दीपन परिवर्तन हेतु शिक्षक कक्षा में अनेक ढंग से व्यवहार करता है। उनमें से कुछ व्यवहार निश्चित रूप से सफल शिक्षण के लिये उपयोगी हैं, जो निम्न हैं–



1. शरीर संचालन (Movement)
2. भाव मुद्रा (Gesture)
3. आवाज में आरोह-अवरोह (Change in speech pattern)
4. भाव केन्द्रीयकरण (Focussing)
5. छात्र शिक्षण परस्पर क्रिया (Change in interaction style)
6. विराम प्रयोग (बोलते-बोलते चुप हो जाना) (Pause)
7. श्रव्य-दृश्य क्रम परिवर्तन (Oral visual switching)

**1. शरीर एवं अंग संचालन (Movement)**–बहुत से शिक्षक एक स्थान पर बुत की तरह खड़े होकर बोलते रहते हैं और वे छात्र-छात्राओं का ध्यान बहुत देर तक अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकते। जो शिक्षक इस कौशल का प्रयोग करना जानते हैं वे आवश्यकतानुकूल शरीर एवं अंगों का संचालन करते हुए विद्यार्थियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किये रखते हैं।

**2. भाव मुद्रा (Gesture)**–छात्रों के ध्यान को आकर्षित किये रखने के लिये भाव मुद्राओं में परिवर्तन होना चाहिये जैसे–मुख मुद्रा के अन्तर्गत हंसना, मुस्कुराना, गुस्सा करना और भौंह आदि का चढ़ाना। सिर को हां या ना के लिये हिलाना और विभिन्न क्रियाओं के लिये हाथ से संकेत करना। कई बार नैन के संकेत से शिक्षक स्नेह, आश्चर्य और क्रोध को भी दर्शाता है।

**3. स्वर में आरोह-अवरोह (Change in speech Pattern)**–शिक्षक की आवाज शिक्षण करते समय एक जैसी न होकर उसमें उतार-चढ़ाव का होना आवश्यक है अर्थात् आवश्यकतानुकूल और समयानुकूल आवाज में परिवर्तन होना चाहिये।

**4. भाव केन्द्रीयकरण (Focussing)**–शिक्षक इसका प्रयोग छात्र-छात्राओं के ध्यान को किसी विशेष बिन्दु, घटना की ओर आकर्षित करने के लिये करता है। इस घटक का प्रयोग शिक्षण को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये शिक्षक शाब्दिक एवं मुद्रात्मक दोनों तरह के व्यवहारों से कर सकता है जैसे चॉक बोर्ड पर देखिए या ध्यान से सुनिए यह प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

**5. छात्र शिक्षण परस्पर क्रिया (Change in interaction Style)**–छात्र शिक्षक परस्पर क्रिया छात्र-छात्रों के पाठ को सीखने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। इस क्रिया से छात्र-छात्राओं का संकोच दूर होता है और आत्मविश्वास की भावना का विकास होता है।

यह क्रिया कई ढंग से हो सकती है जिसे निम्न रूप में दर्शाया गया है–

(क) शिक्षक का पूरी तरह से कक्षा के सभी छात्रों को सम्बोधित करना।

(ख) छात्रों से प्रश्न पूछना और उनको प्रश्न का उत्तर देने के लिये हाथ खड़ा करने के लिये कहना।

(ग) छात्र विशेष से प्रश्न करना और छात्र द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर देना।

(घ) छात्र द्वारा पूछे गये प्रश्न का किसी अन्य छात्र को उत्तर देने के लिए कहना।

**6. विराम का प्रयोग ( बोलते-बोलते चुप हो जाना ) (Pause)**–कई बार शिक्षक छात्र-छात्राओं के ध्यान को आकर्षित करने के लिये बोलता-बोलता कुछ क्षण के लिये रुक जाता है तो इसे विराम प्रयोग कहा जाता है और शिक्षण प्रक्रिया में सहायता हेतु ऐसा करना शिक्षक के लिये श्रेयस्कर रहता है।

**7. श्रव्य-दृश्य क्रम परिवर्तन (Oral Visual Switching)**–जब शिक्षक कुछ बोलते हुए पढ़ा रहा हो और फिर बाद में चॉक बोर्ड पर कुछ लिखना शुरू कर दे या मानचित्र दिखाने लगे तो इसे श्रव्य दृश्य क्रम परिवर्तन कहते हैं।

## अभ्यास के प्रश्न
## (Study Questions)

1. व्याख्या कौशल या कथन कौशल के अर्थ, कौशल, घटक एवं कौशल व्यवहारों के विकास पर विस्तार से चर्चा कीजिए।

   (Discuss the meaning, components and process of developing the skill of Explaining of Narration.)

2. खोजपूर्ण प्रश्न का विस्तार से वर्णन कीजिए। इस कौशल को सूक्ष्म शिक्षण अभ्यास द्वारा कैसे विकसित किया जा सकता है ? उदाहरण सहित समझाइए।

   (Describe the various components of the skill of Probing questions. How can this skill be developed through Micro teaching ?)

3. उद्दीपन परिवर्तन कौशल से आप क्या समझते हैं ? एक सूक्ष्म पाठ योजना द्वारा इस कौशल से सम्बन्धित शिक्षण व्यवहारों के विकास पर प्रकाश डालिए।

   (What do you understand by skill of Stimulus variation ? Illustrate the process of developing various components of this skill through a Micro-lesson.)

4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए–

   1. खोज प्रश्न कौशल
   2. कथन (व्याख्या) कौशल
   3. उद्दीपन परिवर्तन कौशल

   Write short note on the following :

   1. Skill of Probing Question.
   2. Skill of Explaining or Narration.
   3. Skill of Stimulus Variation.

* * *

# UNIT—IV

## शिक्षा में दृष्टिकोण और मूल्यांकन
## (Approaches and Evaluation in Teaching)

1. मानचित्रण अवधारणा, पूछताछ प्रशिक्षण मॉडल, अग्रिम आयोजक मॉडल, प्रोजेक्ट विधि, नाटक, सर्वेक्षण और क्षेत्रीय दौरा के माध्यम से अर्थशास्त्र शिक्षण
2. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के अर्थ और महत्त्व, अर्थशास्त्र क्लब-अर्थ, महत्त्व और संगठन
3. अर्थशास्त्र में मूल्यांकन का अर्थ, महत्त्व और प्रकार
4. सतत् और व्यापक मूल्यांकन : अर्थ, महत्व और प्रक्रिया
5. उपलब्धि परीक्षा का निर्माण-अवधारणा और कदम

# 1
## CHAPTER

# मानचित्रण अवधारणा, पूछताछ प्रशिक्षण मॉडल, अग्रिम आयोजक मॉडल, प्रोजेक्ट विधि, नाट्क, सर्वेक्षण और क्षेत्रीय दौरा के माध्यम से अर्थशास्त्र शिक्षण

# (Teaching Economics through Concept Mapping, Inquiry Training Model, Advance Organizer Model, Project Method, Dramatization, Survey and Field Visit)

## अध्यापन विधियां
## (Methods of Teaching)

### भूमिका
### (Introduction)

अध्यापन एक कलायुक्त प्रक्रिया है। जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को लाभ पहुँचाना है। अध्यापन के द्वारा ही विद्यार्थियों के व्यवहार में आवश्यकतानुसार परिवर्तन लाने या सुधार करने का प्रयत्न किया जाता है। इस कार्य की सफलता बहुत सीमा तक उचित एवं नियोजित अध्यापन विधियों पर निर्भर करती है। शिक्षा प्रणाली में अध्यापन विधियों का महत्वपूर्ण स्थान है। अच्छे से अच्छा संगठित किया पाठ्यक्रम भी उतनी देर तक प्रभावशाली नहीं बन सकता जब तक अच्छा अध्यापक शिक्षण की विधियों के द्वारा नहीं पढ़ाता।

### अध्यापन विधि का अर्थ
### (Meaning of Teaching Method)

अध्यापन विधि से भाव अध्यापन के द्वारा विषय-वस्तु को पेशकश से है। अध्यापन विधि वह साधन है, जिसे अध्यापक अध्यापन शिक्षा प्रक्रिया को सरल एवं प्रभावशाली बनाने के लिए अपनाता है। साधारण शब्दों में विधि से भाव योजनाबंदी, मार्गदर्शन करना, काम का बंटवारा और विद्यार्थियों की शिक्षा प्राप्ति का मूल्यांकन करना है। शिक्षा एक इस

प्रकार की प्रणाली है जिसके द्वारा अलग-अलग विधियों की सहायता के साथ विद्यार्थियों के मस्तिष्क और आचरण का निर्माण किया जा सकता है। यदि अध्यापक अपने अध्यापन को उच्चकोटि का बनाना चाहता है तो यह जरूरी है कि उसको विषय-वस्तु की पूरी समझ हो, अध्यापक अध्यापन विधियों के सारे महत्वपूर्ण पड़ावों को जानता हो और शिक्षा के दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का भी ज्ञाता हो।

निम्नलिखित कुछ परिभाषाओं के द्वारा अध्यापन विधि के अर्थों को समझा जा सकता है। ई. बो. वेज़ले (E.B. Wesely) के अनुसार "अध्यापन विधि अध्यापक द्वारा संचालित कार्य है, जिसके द्वारा विद्यार्थी ज्ञान की प्राप्ति करते हैं।"

"Teaching method is a teacher operated activity by which the students get knowledge."

थट और गरबेरिच (Thut and Gerberich) के अनुसार "विधि प्रक्रियाओं को परिभाषित संरचना है जिससे अलग-अलग प्रक्रियाएं और तकनीकें परिस्थितियों की मांग के अनुसार शामिल की जाती है।"

"A method is well-defined pattern of procedures within which a variety of techniques and devices may appear as circumstances may requires."

बाइनिंग और बाइनिंग (Bining and Bining) के अनुसार, "अध्यापन विधि शैक्षिक प्रक्रिया की गतिशील क्रिया है।"

"Teaching method is the mobile activity of educational process."

अर्थशास्त्र अध्यापन की सफलता भी पूरी तरह इस बात पर निर्भर करती है कि अध्यापक विषय-वस्तु पेश करने के लिए किस विधि का प्रयोग करता है।

## माध्यमिक शिक्षा आयोग

**सैकेंडरी ऐजुकेशन कमिशन** (Secondary Education Commission) ने बहुत बढ़िया कहा है, "अच्छा पाठ्यक्रम और सबसे उत्तम पाठ्यक्रम तब तक असफल रहेगा जब तक ठीक अध्यापन विधि को लागू करने की व्यवस्था और ठीक अध्यापक द्वारा न पढ़ाया जाए।"

"Even the best curriculum and most perfect syllabus remain dead unless quickened into life by the right methods of teaching and the right kind of teacher."

इसलिए बहुत आवश्यक हो जाता है कि अर्थशास्त्र का अध्यापक भिन्न-भिन्न अध्यापन विधियों को प्रयोग करने के योग्य होना चाहिए। अर्थशास्त्र के उद्देश्य निर्धारित करने के बाद पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाता है और फिर उस पाठ्यक्रम के अनुसार अध्यापन विधियों का चुनाव किया जाना चाहिए। अर्थशास्त्र एक विशाल विषय है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को एक



अच्छे आर्थिक नागरिक बनाया जाता है। इस प्रकार अध्यापन विधियों का शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान है।

## अच्छी अध्यापन विधियों की विशेषताएँ
## (Characteristics of Good Teaching Method)

एक अच्छी अध्यापन विधि की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

**1. उद्देश्य प्राप्ति में सहायक (Helpful in achieving aims and objectives)**– एक अच्छी अध्यापन विधि वही है जो किसी भी विषय-वस्तु के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध हो सके। एक अध्यापन विधि में उस विषय के उद्देश्यों को प्राप्त करने की योग्यता होनी चाहिए। वो उस उद्देश्य की पूर्ति करती हो जिसके लिए उस विधि का चुनाव किया गया है।

**2. विषय वस्तु में रुचि पैदा करने वाली (Developing the interest in subject matter)**–अध्यापन विधि विषय-वस्तु में रुचि पैदा करने वाली होनी चाहिए। अगर अध्यापन विधि का ढंग उत्तम और प्रभावशाली होगा तो ही विद्यार्थियों की उस विषय-वस्तु में रुचि पैदा की जा सकती है।

**3. स्वयं अध्यापन का प्रशिक्षण (Training of self-study)**–एक आदर्श विधि आत्म अध्ययन का प्रशिक्षण देने के योग्य होनी चाहिए। आत्म अध्ययन एक ऐसी कला या हुनर है जो कि किसी भी शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाता है। आत्म अध्ययन का प्रशिक्षण अध्यापकों की ग़ैर-मौजूदगी में विद्यार्थियों को व्यक्तिगत कोशिशों से सीखने के लिए प्रेरित करता है।

**4. व्यक्तिगत विभिन्नताओं की पहचान (Identifying individual diferences)**–कक्षा में उपस्थित प्रत्येक विद्यार्थी आपस में भिन्न-भिन्न होते हैं। कोई भी दो व्यक्ति समान गुणों वाले नहीं है। हर एक विद्यार्थी की अपने आप में एक पहचान होती है। उनकी रुचियाँ, योग्यताएँ, गुण, बुद्धि स्तर की अभिरुचियाँ भिन्न होती हैं। एक अच्छी अध्यापन विधि वो होती है जो कि व्यक्तिगत विभिन्नताओं की पहचान करती है। इसके द्वारा सभी बच्चों को समान अवसर मिलने चाहिए और लाभ पहुँचना चाहिए।

**5. विद्यार्थी अनुभव और क्रियाएँ (Students activities and experiences)**– एक आदर्श अध्यापन विधि में विद्यार्थी अनुभवों और क्रियाओं के लिए महत्वपूर्ण स्थान होना जरूरी है। अध्यापन शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थियों का क्रियाशील होना बहुत महत्वपूर्ण है। यदि अध्यापन विधि में विद्यार्थी क्रियाओं को शामिल न किया जाए तो वो अनुशासनहीन करने की तरफ ध्यान लगाते हैं। इसलिए अध्यापन विधि में विद्यार्थी क्रियाशील होने चाहिए।

**6. प्रेरणा स्रोत (Motivating)**–अध्यापन विधि प्रेरित करने वाली होनी चाहिए। विधि इस प्रकार की हो कि ऐसी परिस्थितियां पैदा की जा सकें जिनके द्वारा विद्यार्थियों को प्रेरणा मिल सके। विद्यार्थियों में सीखने की रुचि पैदा की जा सके।

**7. गुणों एवं मानव-मूल्यों का विकास (Development of values and qualities)**—एक आदर्श अध्यापन विधि विद्यार्थियों में गुणों एवं मानव-मूल्यों का विकास करें। यह विद्यार्थियों को मिल कर भातृभाव, सहयोग, प्रेम, त्याग और सहनशीलता आदि गुण पैदा करें। यह सारे गुण विद्यार्थियों को एक अच्छे नागरिक बनने में सहायता प्रदान करते हैं।

**8. परिणाम की गुणवत्ता (Quality of result)**—एक अच्छी आदर्श अध्यापन विधि परिणाम की गुणवत्ता भी निर्धारित करती है। एक अच्छी विधि का चुनाव से पूर्व पाठ्यक्रम में भी अच्छे परिणामों की आशा की जा सकती है। सैकेंडरी शिक्षा आयोग पहले ही इस बारे कह चुका है कि अच्छा पाठ्यक्रम और परिपूर्ण विषय सामग्री भी तब तक सही परिणाम नहीं दे सकते जब तक उनकी विद्यार्थियों तक पहुँचाने के लिए सही अध्यापन और सही अध्यापन विधि का चुनाव न किया जा सके।

### ग्लेसर का बुनियादी अध्ययन मॉडल/अवधारणा प्राप्ति मॉडल
### (Glaser's Basic Teaching Model/Concept Mapping Model)

राबर्ट ग्लेसर ने सन् 1962 में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित मॉडलों का निर्माण किया। जॉन पी. डैसीको ने इसे बुनियादी मॉडल माना चूंकि यह सम्पूर्ण अध्ययन प्रक्रिया को उपयुक्त तरीके के स्तर पर लागू करता है अर्थात् प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च स्तर इत्यादि। इस मॉडल का उपयोग करके किसी भी विषय की सामग्री जैसे अंग्रेजी, कला, फ्रेंच, विज्ञान, व्यावसायिक आदि में किया जा सकता है। इस मॉडल का प्रयोग करके कितनी भी देर पढ़ाया जा सकता है, जैसे चालीस मिनट, एक घंटा, पांच घंटे, एक सप्ताह, एक मास, एक सत्र।

इस अध्ययन मॉडल के चार प्रमुख भाग निम्नलिखित हैं–

1. अध्यापन उद्देश्य (Instructional Objectives)
2. प्रारम्भिक व्यवहार (Entering Behaviour)
3. अध्यापन विधियां (Instructional Procedures)
4. व्यवहार मूल्यांकन (Performance Assessment)

**1. अध्यापन उद्देश्य (Instructional Objectives)**—प्रत्येक अध्ययन के कुछ उद्देश्य होते हैं। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अध्यापन सम्पन्न किया जाता है। अंत में छात्र के व्यवहार में सुधार होता है तथा छात्र उन उद्देश्यों को प्राप्त करने में समर्थ होता है। ये अध्यापन उद्देश्य, अतएवं वे हैं जिन्हें छात्रों से अध्ययन के अंग के रूप में प्राप्त करने की अपेक्षा होती है।

**2. प्रारम्भिक व्यवहार (Entering Behaviour)**—प्रत्येक क्षेत्र का अध्यापन प्रक्रिया में प्रवेश-पूर्व आरम्भिक व्यवहार होता है। इसकी अपेक्षा, शिक्षा देने के पूर्व छात्र के प्रवेशक व्यवहार का पता लगाना आवश्यक है।



**3. अध्यापन विधियां (Instructional Procedures)**—अध्यापन प्रक्रिया का अत्यधिक सक्रिय भाग अध्यापन तरीके हैं। यह विधियों, तरीकों तथा व्यूह रचना को बताता है। व्यूह रचना, जिसे अध्यापक काम में लाता है, उद्देश्यों तथा व्यवहार पर निर्भर होती है। निःसंदेह, यह अंश उपरोक्त सोपान एक तथा दो पर निर्भर होता है।

**4. व्यवहार मूल्यांकन (Performance Assessment)**—यहां पर छात्र के अंतिम व्यवहार की जांच की जाती है ताकि प्रतिपुष्टि की जा सके। यदि आवश्यक हो तो उद्देश्यों को सुधारा जाना चाहिए, अध्यापन तरीकों को सुधारा जाए और छात्र के व्यवहार का पुनः मूल्यांकन किया जाए। उपलब्ध मापन हेतु किसी भी प्रकार की मूल्यांकन तकनीक जैसे टैस्ट (जांच) निरीक्षण, साक्षात्कार, रेटिंग स्केल, प्रोजेक्टिव तकनीक को अमल में लाया जाता है।

उपरोक्त समझाये गये अंग पारस्परिक सम्बन्धित हैं और इसी प्रकार से यह सब कुछ अध्यापन की सफलता को आश्वासित करता है। राबर्ट ग्लैसर के अनुसार, "समाप्ति व्यवहार अंतिम उपलब्धि के तौर पर, विशिष्ट अध्यापन स्थिति के उद्देश्यों तथा अध्यापन तरीकों द्वारा छात्र व्यवहार जो कि अंतिम बिंदु के समीप पहुंचता है को स्पष्ट परिवर्तन रूप में प्राप्त करना चाहिए।"

According to **Robert Glaser,** "Terminal behaviour as the end product, objective of a particular instructional situation and the procedure of instructional technology should result in definable changes in student behaviour which approximate this end point."

### ग्लेसर के बुनियादी अध्यापन मॉडल का विवरण
### (Description of Glaser's Basic Teaching Model)

मुख्य तत्त्वों के संदर्भ में ग्लेसर के बुनियादी अध्यापन मॉडल का विवरण निम्न प्रकार से दिया जा सकता है–

**1. फोकस-ध्यान केन्द्र (Focus)**—इस मॉडल का मुख्य केन्द्र यह है समस्त अध्यापन प्रक्रिया का अनुभव करता है। अध्यापन प्रक्रिया के भिन्न-भिन्न अंग हैं–

1. अध्यापन उद्देश्य 2. प्रवेशक व्यवहार 3. अध्यापन 4. व्यवहार के मूल्यांकन को पूर्ण समझाया जा चुका है। यह भी बताया गया है कि अध्यापन प्रक्रिया में किस क्रम का अवलम्बन किया जाना चाहिए।

**2. वाक्य रचना (Syntax)**—कार्य रूप में मॉडल के वर्णन से मॉडल का सम्बन्ध है। मॉडल की बनावट का विस्तार अग्रलिखित है–

(अ) मॉडल के प्रयोग द्वारा प्राप्त किये जाने वाले उद्देश्यों को निश्चित किया जाता है।

(आ) छात्रों की समझ तथा पार्श्व के दर्शाने वाले प्रवेशक व्यवहार को निश्चित किया जाता है।

(इ) छात्र के प्रवेशक व्यवहार को ध्यान में रख कर उद्देश्य प्राप्ति के लिए अध्यापन कार्य सम्पन्न किया जाता है। परिस्थिति के लिए उपयुक्त विभिन्न व्यूह रचना को सुझाव जाता है तथा काम में लाया जाता है।

(ई) भिन्न प्रकार के जांच का उपयोग करके, छात्रों के अंतिम व्यवहार का मू लगाया जाता है।

**3. प्रतिक्रिया के सिद्धान्त (Principles of Reaction)**–विभिन्न परिस्थितियों में छात्रों की विभिन्न प्रत्युत्तरों की शिक्षक किस प्रकार से प्रतिक्रिया करता है, मॉडल की यह अवस्था में बताया गया है। प्रतिक्रियाओं के मुख्य सिद्धान्तों को संक्षेप रूप में नीचे दिया जा रहा है–

(अ) संपूर्ण अध्यापन प्रक्रिया की विभिन्न अवस्थाएं पारस्परिक निर्भर हैं। प्रत्येक अवस्था का ज्ञान अध्यापन के लिए महत्त्वपूर्णत भी है जब वह सभी प्रकार की परिस्थितियों में जो भी उत्पन्न हों, वह उचित बिन्दुओं पर स्थिर रह सकता हो।

(आ) यह मॉडल, अध्यापक का आदि से अंत तक सक्रिय समावेश चाहता है। यह किसी प्रकार की अस्था में सुस्ती दिखा कर पीछा नहीं छुड़ा सकता है। उसे साथ-साथ यह भी देखना होगा कि समस्त अध्यापन प्रक्रिया में सभी छात्र भी सक्रिय रहते हैं।

(इ) अध्यापन की समाप्ति पर मूल्यांकन किया जाता है। तब कमियों के पीछे कारणों को ढूँढ निकालने का यत्न करता है तथा प्रतिपुष्टि द्वारा उन कमियों को दूर करने का प्रयत्न करता है।

**4. सामाजिक व्यवस्था (Social System)**–इस अध्यापन मॉडल में अध्यापक तथा छात्र, दोनों को सभी तरह से अधिक सक्रिय रहना होता है। दोनों में अधिकाधिक अन्त: क्रियाएँ होती हैं। यह उनमें सामाजिक कुशलता लाने में सहायता देता है। छात्र आपस में एक-दूसरे को समझने में समर्थ होते हैं तथा वे सहयोग की भावना प्राप्त करते हैं।

**5. समर्थन व्यवस्था (Support System)**–मॉडल की सफलता के लिए उपयुक्त किस्म का वातावरण समर्थक सिद्ध होता है। उद्देश्यों तथा प्रवेशक व्यवहार की दृष्टि से इस मॉडल में उपयुक्त व्यूह रचनाएं बनाई जाती हैं। अत: यह मॉडल की सफलता के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करते हैं।

**6. अमल (Application)**–हर एक प्रकार की अध्यापन-अध्ययन स्थिति में यह मॉडल सहायक होता है। यह शोध कार्यकर्त्ताओं के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करता है। वे छात्रों के कल्याण की योजना तथा उसे सम्पन्न करने के लिए योग्य अध्यापन तकनीक का विकास कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त व्यवहार का मूल्यांकन प्रत्येक अंग की प्रतिपुष्टि करता है व इस प्रकार के सम्पूर्ण सुधारों की सम्भावना होती है।

**पूछताछ ( पृच्छा ) प्रशिक्षण प्रतिमान (Equiry Training Model)**–इस मॉडल का मुख्य लक्ष्य छात्र-छात्राओं में ज्ञानात्मक कुशलता (cognitive skill) और तर्कपूर्ण



चिंतन की क्षमता विकसित करना है। जिससे वे समस्याओं तथा उनके विविध पहलुओं पर स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष ढंग से सोच सकें। इसके प्रतिपादक सचमैन की दृष्टि से वास्तविक पूछताछ की प्रक्रिया यह है जिसमें व्यक्ति सत्य तक पहुंचने में समर्थ होता है। 'पूछताछ प्रशिक्षण' के अन्तर्गत एक विस्मयकारी या चौंका देने वाली परिस्थिति (Puzzling Situation) का प्रस्तुतीकरण उसके कारण भूत तत्त्वों का विश्लेषण साक्षियों का संकलन एवं निष्कर्ष प्रतिपादन का कार्य पूछताछ के द्वारा सम्पन्न होता है। कक्षा का वातावरण शैक्षिक एवं छात्र-छात्राओं के परस्पर सहयोग तथा अन्तर्क्रिया के परिणामस्वरूप बनता है जिसमें स्वाभाविक ढंग से विचार-विनिमय का कार्य पूरा होता है। औपचारिक शिक्षण के अनेक ऐसे सन्दर्भों की खोज की जा सकती है जिनमें मॉडल का उपादेय सिद्ध हो सकता है।

### पूछताछ प्रशिक्षण मॉडल के लिए शिक्षकों का प्रशिक्षण
### (Training of Teaching for Enquiry Training Model)

इस मॉडल को अपनाने के लिए शिक्षकों को पर्याप्त रूप से प्रशिक्षण देने की अत्यन्त आवश्यकता है। उनमें पूछताछ करने की विधि में दक्षता एवं निपुणता के साथ-साथ प्रश्नों के विभिन्न रूपों उनके प्रकार और उनके गठन के ढंगों तथा प्रश्नों के सम्भव प्रभावों के बारे में पूर्ण रूप से उचित जानकारी अवश्य ही होनी चाहिए। इस मॉडल के सैद्धान्तिक पक्ष की पूर्ण जानकारी के साथ-साथ शिक्षकों के लिए व्यावहारिक पक्ष को जानना भी बहुत आवश्यक है।

इसके व्यावहारिक पक्ष को समझने और उसको क्रियान्वित रूप देने के लिए शिक्षक में निम्न कुशलताओं एवं क्षमताओं का होना ज़रूरी है–

1. शिक्षकों में उचित विषयों एवं समस्याओं के चुनाव सम्बन्धित चित्र, चार्ट, पोस्टर आदि के प्रस्तुत करने की दक्षता होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पूछताछ विधियों की भी पर्याप्त रूप से जानकारी होनी चाहिए।

2. पूछताछ की सही दिशा एवं गति प्रदान करने वाली समर्थक व्यवस्था (Support System) के महत्त्वपूर्ण तत्त्वों और उनके लिए अपेक्षित संसाधनों (Resources) की व्यवस्था करने की क्षमता भी बहुत जरूरी है।

3. पूछताछ के लिए छात्र-छात्राओं की स्वतन्त्र रूप से सहभागिता को प्रेरित किया जाना चाहिए। इसके लिए शिक्षक को कक्षा में सहज और सचेत होना चाहिए।

4. शिक्षक में यह कुशलता होनी चाहिए जिससे वह अधिक-से-अधिक छात्र-छात्राओं को अनुशासित ढंग से प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित कर सके। उसे इस बात के लिए भी प्रयास करने चाहिए ताकि उचित अनुदेशनात्मक सामग्रियों और पूछताछ के रचना कौशलों को प्रयोगात्मक (व्यावहारिक) परिस्थितियों के द्वारा मूर्त एवं ठोस स्वरूप प्रदान किया जा सके।

5. शिक्षक को एक कुशाग्र पर्यवेक्षक (obserior), विश्लेषक (Analyser) और नियन्त्रक (controller) की सशक्त एवं सार्थक भूमिका निभाने हेतु प्रशिक्षण लेना चाहिए जिससे पूछताछ की परिस्थितियों में सहजता, प्रवाह एवं स्वाभाविकता का समावेश हो सके।

### पूछताछ प्रशिक्षण मॉडल की सीमाएं
### (Limitations of Enquiry Training Model)

भारतीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए 'पूछताछ प्रशिक्षण मॉडल' की कुछ सीमाएं हैं। हमारे देश में अधिकांश शिक्षक व्याख्यान विधि का ही प्रयोग करते हैं और प्रश्नोत्तर विधि को अपनाने से बचने का प्रयास करते हैं। पूछताछ के लिए यह आवश्यक है कि प्रश्नोत्तर की कला में शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही दक्ष हों। इस मॉडल को कार्यान्वित करने के लिए हमारे यहां उचित अध्ययन सामग्री और अधिगम संसाधनों का अभाव है। हमारे यहां आज भी शिक्षा के क्षेत्र में दकियानूसी विचारधारा को अपनाया जा रहा है जिसके कारण पूछताछ प्रशिक्षण मॉड़ल (प्रतिमान) को अपेक्षित व्यावहारिक रूप नहीं दिया जा रहा है।

### अग्रिम ऑर्गनाइज़र मॉडल
### (Advance Organizer Model)

अग्रिम ऑर्गनाइज़र मॉडल (एओएम-AOM) डेविड औसबेल द्वारा दिया गया है जो शैक्षिक मनोवैज्ञानिक में से एक है। सार्थक मौखिक सीखने का यह सिद्धांत तीन मामलों से संबंधित है–

(ए) ज्ञान (पाठ्यक्रम सामग्री) कैसे आयोजित किया जाता है,

(ब) कैसे दिमाग नई जानकारी (सीखने) के लिए क्रिया करता है, तथा

(सी) शिक्षक इन पाठ्यक्रमों को कैसे सीख सकते हैं और सीखने के बाद कैसे उसे लागू करते हैं और कैसे तब वे छात्रों को नई सामग्री और सूचना पेश करते हैं। यह मॉडल छात्र की संज्ञानात्मक संरचना को मजबूत करने के लिए डिज़ाइन किया गया है।

इस मॉडल के शिक्षण में शिक्षक द्वारा विषय के आयोजक की भूमिका निभाई जाती है और वह व्याख्यान के द्वारा, पढ़ाने के द्वारा और छात्रों को कार्यों को प्रदान करके उन्हें नई जानकारी प्रस्तुत करता है और जो सीखा हुआ है, उसके साथ इस जानकारी को जोड़ता है। इस दृष्टिकोण में, जो विषय सीखना है उसे आयोजित करने और प्रस्तुत करने के लिए शिक्षक जिम्मेदार है। शिक्षार्थी की प्राथमिक भूमिका, विचारों और सूचनाओं को पूरी तरह ग्रहण करना है। अग्रिम आयोजक सीधे छात्रों को अवधारणाओं और सिद्धांत प्रदान करते हैं।

औसबेल के मुताबिक सामग्री सार्थक है या नहीं, यह प्रस्तुति की पद्धति से सीखने वाले औ सामग्री के संगठन के आधार पर अधिक निर्भर करता है।



### संरचनाएं
### (Structures)

औसबेल ने कहा है कि किसी व्यक्ति की मौजूदा संज्ञानात्मक संरचना सबसे महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि यह नियंत्रित करता है कि नई सामग्री सार्थक होगी और कितनी अच्छी तरह इसे प्राप्त किया जा सकता है और बनाए रखा जा सकता है।

औसबेल के विचारों के अनुसार जिस तरह से विषय वस्तु का आयोजन किया जाता है और जिस तरह से लोग अपने मन में ज्ञान (संज्ञानात्मक संरचना) को व्यवस्थित करते हैं, उसके बीच समानांतर होता है। वर्तमान अध्ययन में एओएम को विद्यार्थियों को अवधारणाओं को प्राप्त करने में मदद करने के लिए एक उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाता है। माध्यमिक स्तर के छात्रों के लिए अर्थशास्त्र की अध्ययन सामग्री की समझ के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है।

### अग्रिम ऑर्गनाइज़र मॉडल के घटक
### (Components of Advance Organizer Model)

**(A) वाक्य-विन्यास (Syntax)**

अग्रिम ऑर्गनाइज़र मॉडल में गतिविधि के तीन चरण है। चरण एक अग्रिम आयोजक की प्रस्तुति है; चरण दो कार्य सीखना या सीखने की सामग्री की प्रस्तुति है; और चरण तीन संज्ञानात्मक संगठन को सुदृढ़ बनाना है। एक सक्रिय सीखने की प्रक्रिया के बारे में जानने के लिए मौजूदा विचारों के लिए सीखने की सामग्री के तीन चरणों का अनुपालन करें।

तालिका एक

**Table 1**

**अग्रिम आयोजक मॉडल के चरण**

**(Phases of Advance Organizer Model)**

| चरण | रूपरेखा | गतिविधि |
|---|---|---|
| पहला चरण | अग्रिम आयोजक की प्रस्तुति | 1. पाठ के उद्देश्य स्पष्ट करना<br>2. आयोजक की प्रस्तुति–<br>A. परिभाषित गुण पहचानें।<br>B. उदाहरण दें।<br>C. संदर्भ प्रदान करें।<br>D. दोहराना।<br>3. शिक्षार्थी के प्रासंगिक ज्ञान और अनुभव के बारे में शीघ्र जागरूकता। |

| | | |
|---|---|---|
| चरण दो | कार्य या सामग्री सीखने की प्रस्तुति | 1. सामग्री को प्रस्तुत करें।<br>2. ध्यान रखें।<br>3. संगठन को स्पष्ट बनाएं।<br>4. सामग्री सीखने के तार्किक क्रम को स्पष्ट करें। |
| चरण तीन | संज्ञानात्मक संगठन को सुदृढ़ बनाना | 1. एकीकृत सामंजस्य के सिद्धांतों का उपयोग करें।<br>2. सक्रिय प्राप्ति के सीखने को बढ़ावा देना।<br>3. विषय के लिए महत्वपूर्ण दृष्टिकोण अपनाएं।<br>4. स्पष्टीकरण। |

**(B) सामाजिक व्यवस्था–**

एडवांस ऑर्गनाइज़र मॉडल में शिक्षक बौद्धिक संरचना का नियंत्रण बरकरार रखता है, सीखने की सामग्री को आयोजकों के साथ जोड़ता है और छात्रों को नई सामग्री को पहले से प्राप्त सामग्री से अलग करने में मदद करता है तांकि नई सामग्री का सफल अधिग्रहण हो सके।

**(C) प्रतिक्रिया के सिद्धांत–**

शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच अर्थ और प्रतिक्रियाओं की बातचीत छात्रों के मौजूदा ज्ञान के साथ नई शिक्षा सामग्री के अर्थ को स्पष्ट करती है। शिक्षक और शिक्षार्थियों के बीच पारस्परिक संपर्क से जिम्मेवारी पूर्वक आयोजकों और सीखने की सामग्री में सम्बन्ध बनता है।

**(D) समर्थन प्रणाली–**

अग्रिम आयोजक की प्रभावशीलता, विषय वस्तु के आयोजक और सामग्री के बीच एक अभिन्न और उचित संबंध पर निर्भर करती है। यह मॉडल संरचनात्मक सामग्रियों को पहचानने के लिए दिशा निर्देश प्रदान करता है।

**(E) अनुदेशात्मक और पोषक प्रभाव–**

आयोजक शिक्षित होते हैं और साथ ही छात्रों को जानकारी भी प्रस्तुत करते हैं, फिर वे विचारों को स्वयं उपयोग में लाते हैं और यही इस मॉडल के महत्वपूर्ण मूल्य हैं।



## योजना विधि ( प्रोजैक्ट विधि )

## (Project Method)

बालक स्वभाव से क्रियाशील होते हैं और वह कुछ न कुछ करने में विश्वास करता है और वह निष्क्रिय होकर नहीं बैठ सकता। इस पद्धति का निर्माण विद्यालय के परम्परागत एवं शुष्क वातावरण को दूर करने के लिए किया गया है। इसमें छात्रों की क्रियाशीलता को महत्व दिया जाता है। इसलिए बालकों को करके सीखने (Learning by doing) का अवसर दिया जाना चाहिए। मनोविज्ञान के तथ्यों और अनुभवों से भी यही पता चलता है कि बालकों को क्रियाशील बनाकर ज्ञान देना चाहिए। यही कारण है कि विशेषज्ञों ने विभिन्न देशों में परिस्थितियों के अनुसार ऐसी शिक्षण विधियों की खोज की है जो छात्र-छात्राओं की प्रवृत्तियों के अनुसार हों और जिससे उनको जीवन के वास्तविक अनुभव प्राप्त हों। इन खोजी हुई विधियों में से एक विधि प्रौजैक्ट विधि है जो उपरोक्त आधार पर छात्र-छात्राओं को शिक्षा देने में प्रभावपूर्ण सशक्त और सार्थक है।

प्रोजैक्ट विधि के सम्बन्ध में जॉन डीवी (John Dewey) और किलपैट्रिक (Kilpatrick) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्होंने अमेरिका में प्रचलित कृषि सम्बन्धी शिक्षा के दोषों को दूर करने की दृष्टि से इस विधि की खोज की। डॉ. किलपैट्रिक ने इस खोज की हुई विधि का नाम प्रोजैक्ट विधि रखा। यह विधि जॉन डीवी के प्रयोजनवाद पर आधारित है।

प्रोजैक्ट विधि की परिभाषाएं जो सबसे अधिक मान्य हैं वे निम्न हैं–

**1. डॉ. किलपैट्रिक** (Dr. Kilpatrick) के अनुसार, "वह उपयोगी प्रक्रिया है जिसे पूर्ण रुचि के साथ सामाजिक वातावरण में किया जाए।" (A project is a whole hearted purposeful activity proceeding in a social environment.)

**2. स्टीवनस** (Stevens) के शब्दों में, "प्रोजैक्ट एक समस्यामूलक कार्य है जिसे स्वाभाविक वातावरण में पूरा किया जाए।" (A project is a problematic act carried to competition in its natural setting.)

**3. बेलार्ड** (Ballard) के विचार, "प्रोजैक्ट वास्तविक जीवन का एक अंश है जो विद्यालय में दिया जाता है।" (A project is a bit of real life that has been imparted into the school.)

**4. पार्कर** (Parker) के शब्दों में, "प्रोजैक्ट क्रिया की इकाई है जिसमें योजना एवं सुझाव का दायित्व छात्रों पर होता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रोजैक्ट बच्चे के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित किसी समस्या का हल ढूंढने के लिए भली-भान्ति चयन किया हुआ उद्देश्यपूर्ण कार्य है जिसे स्वाभाविक परिस्थितियों में खुशी-खुशी पूरा किया जाता है। बालक में ज्ञान तभी स्थायी होता है जब उसे स्वेच्छा से ग्रहण करता है तथा उसका जीवन उपयोग

होता है। प्रोजैक्ट विधि का भी यही अभिप्राय है। यह विधि विद्यार्थियों को सामाजिक रूप से कुशल नागरिक बनने में सहायता करती है। उसमें सहयोग, सहायता एवं सहानुभूति की भावना का विकास करती है।

### प्रोजैक्ट विधि की अवस्थाएं अथवा सोपान
### (Stages involved in Project Method)

**1. उपयुक्त परिस्थिति उत्पन्न करना (Providing a Situation)**–प्रोजैक्ट विधि पर अध्यापक को बहुत समझ के साथ कार्य करना पड़ता है। अध्यापक बच्चों की प्रकृति के अनुकूल विभिन्न युक्तियों द्वारा वातावरण उत्पन्न करता है। परिस्थिति उत्पन्न करने के लिए अध्यापक कहानी कह सकता है, कोई घटना सुना सकता है, बच्चों से बातचीत करके परिस्थिति उत्पन्न कर सकता है विद्यार्थी समस्या को हल करने के लिए उपाय सोचने लगते हैं। इस प्रकार परिस्थिति को हल करने के लिए प्रोजैक्ट का चयन किया जाता है।

**2. प्रोजैक्ट का चुनाव (Choosing of the Project)**–योजना का चुनाव विद्यार्थियों के द्वारा होता है। अध्यापक विद्यार्थियों का पथ-प्रदर्शन करता है वह उन पर कोई योजना थोपता नहीं है। परिणामस्वरूप विद्यार्थी योजना को भार स्वरूप नहीं समझते, उसमें रुचि लेकर काम करते हैं। तर्क-वितर्क द्वारा प्रोजैक्ट का चयन किया जाता है। योजना के उद्देश्यों से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त की जाती है।

**3. योजना सम्बन्धी कार्यक्रम का निर्धारण (Planning)**–कक्षा का प्रत्येक विद्यार्थी योजना को सफल बनाने के लिए कार्यक्रम में योगदान देता है। अध्यापक विद्यार्थियों के विचार-विमर्श से पूरा सहयोग प्रदान करता है क्योंकि अनुभवहीन विद्यार्थी सही रास्ते से दूर जा सकते हैं। योजना की कार्य विधि के निर्माण में अध्यापक सही मार्ग निर्देशन करता है जिससे योजना का सम्पादन स्वाभाविक परिस्थितियों में हो। विद्यार्थियों को समूह में बांटकर प्रत्येक समूह को उनकी योग्यतानुसार कार्य दिया जाता है। सभी विद्यार्थी प्रेम से कार्य पूरा करने में जुट जाते हैं।

**4. योजना को कार्यान्वित करना (Execution of the Plan)**–योजना बनाने के बाद योजना की पूर्ति के लिए अध्यापक विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना है उनका मार्ग दर्शन करता है। प्रत्येक विद्यार्थी अपनी सामर्थ्य के अनसार कार्य करता है। कोई लिखने का कार्य करता है, कोई हिसाब रखता है, कोई निरीक्षण करता है, कोई नक्शेएवं चित्र बनाने का कोई विचार-विमर्श का कार्य करता है। इससे विद्यार्थी क्रिया द्वारा सीखते हैं तथा उनमें मिलकर कार्य करने की भावना विकसित होती है।

**5. प्रोजैक्ट का मूल्यांकन करना (Evaluation of the Project)**–यह वह पद है जिसमें विद्यार्थी आत्म निरीक्षण एवं स्वयं की आलोचना करता है। योजना पूरा हो जाने पर सभी अपने कार्य की जांच करते हैं कि वे कहां तक निर्धारित योजना के अनुसार चले और कहां रास्ते से विचलित हो गए।



**6. प्रोजैक्ट का रिकार्ड रखना (Recording of Project)**–इस पद में छात्र द्वारा प्रोजैक्ट सम्बन्धी बातें रिकार्ड कर ली जाती हैं। जैसे प्रोजैक्ट का चयन कैसे किया जाए। इसका आयोजन व रूप-रेखा कैसे तैयार की गई, कार्य का विभाजन कैसे हुआ, कार्य करते हुए जिन स्थानों पर जाते हैं, जिन व्यक्तियों से मिलते हैं, कार्य करते समय किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा योजना में कहां तक सफलता मिली, विद्यार्थी अन्त में अपनी आलोचना करते हैं, अपनी कमियों का पता लगाते हैं।

### योजना विधि के सिद्धान्त
### (Principles of Project Method)

योजना विधि निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित है–

**1. उद्देश्यपूर्णता का सिद्धान्त (Principle of Purposefulness)**–छात्र-छात्राओं के सामने कार्य करने का निश्चित उद्देश्य होता है। वे उस कार्य को अपना समझते हैं तथा मन लगाकर रुचि पूर्वक कार्य करते हैं। उद्देश्यपूर्ण कार्य होने के कारण विद्यार्थियों को कार्य करने में आत्म-सन्तुष्टि का अनुभव होता है।

**2. अनुभव का सिद्धान्त (Principles of Experience)**–इस विधि में बच्चे समूह में कार्य करते हैं तथा कार्य करते हुए जो अनुभव प्राप्त होते हैं उससे वे सीखते हैं। सभी सामाजिक गुणों का विकास उनमें अनुभव के द्वारा होता है।

**3. वास्तविकता का सिद्धान्त (Principles of Reality)**–योजना के अन्तर्गत अध्यापक विद्यार्थियों के सामने जीवन की वास्तविक समस्याएं रखता है और विद्यार्थी उन समस्याओं को हल करने का प्रयास करते हैं। योजना विधि एक शिक्षण विधि है यह वास्तविक ही होनी चाहिए। शिक्षा भावी नागरिकों का निर्माण करती है। कार्य में वास्तविकता होने के कारण विद्यार्थी मन लगाकर कार्य करते हैं और उनके ज्ञान में वृद्धि होती है।

**4. क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principles of Activity)**–बालक स्वभाव से ही क्रियाशील होते हैं। उनका सही विकास करने के लिए क्रिया करने में आनन्द आता है। योजना विधि उन्हें क्रिया करने का अवसर देती है। इस विधि का सिद्धान्त है कि विद्यार्थियों को शारीरिक तथा मानसिक रूप से क्रियाशील बनाए रखना चाहिए।

**5. स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principles of Freedom)**–बच्चे किसी कार्य में तभी आनन्द लेते हैं जब उन्हें कार्य करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। योजना विधि में स्वतन्त्रता का पूरा ध्यान रखा जाता है। योजना का चुनाव बच्चों की आवश्यकता तथा रुचि के अनुसार होता है।

**6. उपयोगिता का सिद्धान्त (Principles of Utility)**–बालक उसी कार्य को रुचिपूर्वक करता है जिससे उसे लाभ हो। योजना विधि द्वारा प्राप्त किया हुआ ज्ञान क्रियात्मक एवं व्यावहारिक होता है। इस विधि में उपयोगिता के सिद्धान्त को उचित स्थान दिया गया है। बालकों को वही कार्य करने को दिए जाते हैं जिनकी उनके वास्तविक जीवन में उपयोगिता है।

अर्थशास्त्र शिक्षण के लिए योजना पद्धति बहुत लाभदायक है। इसके द्वारा छात्रों को अपने आर्थिक जीवन की समस्याओं को हल करने की शिक्षा सरलता से दी जा सकती है। सभी छात्र मिल-जुल कर सहयोग से तथा सूझ-बूझ से कार्य करते हैं इससे उनमें सहयोग, प्रेम, सहानुभूति आदि सामाजिक गुणों का विकास होता है।

योजनाएं दो प्रकार की होती हैं-

1. व्यक्तिगत, 2. सामूहिक।

अर्थशास्त्र शिक्षण में दो प्रकार की योजनाओं का प्रयोग किया जाता है। सामूहिक योजनाओं में समस्त छात्र मिलकर सहयोग से कार्य करते हैं और व्यक्तिगत योजना में विद्यार्थी-पृथक् कार्य करते हैं।

योजना पद्धति के ऊपर कुछ सोपान बताए गए हैं। निम्नलिखित उदाहरण द्वारा योजना पद्धति के प्रयोग को उन्हीं सोपानों के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है-

योजना-सहकारी बैंक का संचालन।

1. शिक्षक छात्रों को प्रेरित करेगा कि वे अपनी बचत के सदुपयोग के बारे में विचार करें। इस प्रकार शिक्षक छात्रों के सामने योजना के चयन के लिए स्वाभाविक परिस्थितियां उत्पन्न कर देगा और छात्र अपनी बचत का सदुपयोग करने के लिए विचार करेंगे।

2. परिस्थितियां उत्पन्न होने पर छात्र सहकारी बैंक खोलने का निश्चय करेंगे।

3. समस्त छात्र मिलकर योजना के उद्देश्यों को निर्धारित करेंगे। तत्पश्चात् सहकारी बैंक की स्थापना के लिए एक निश्चित कार्यक्रम की रूप-रेखा बनाएंगे।

4. उसके बाद छात्र योजना को क्रियान्वित करने के लिए आपस में कार्य का विभाजन करेंगे।

5. कार्य करने के बाद अपने कार्य का मूल्यांकन करेंगे कि उन्हें कहां तक सफलता मिली।

6. अन्त में, सहकारी बैंक का सुनिश्चित रूप अपनी योजना के हल के रूप में प्रस्तुत करेंगे। समस्त कार्य का ब्यौरा लिखित रूप में प्रस्तुत किया जाएगा।

अर्थशास्त्र शिक्षण में अनेक ऐसे प्रसंग हैं जिन्हें योजना विधि द्वारा सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

## योजना विधि के गुण
## (Merits of Project Method)

**1. मनोवैज्ञानिक विधि (Psychological Method)**–योजना विधि एक मनोवैज्ञानिक विधि है इसमें बच्चों की रुचियों, प्रवृत्तियों, योग्यताओं एवं क्षमताओं का ध्यान रखा जाता है। इस विधि द्वारा बच्चों की जिज्ञासा तथा रचनात्मक प्रवृत्ति की सन्तुष्टि होती है। इस विधि में बच्चे उत्साह, रुचि एवं प्रसन्नता से कार्य करते हैं क्योंकि कार्यों के लक्ष्य निश्चित एवं स्पष्ट हो हैं। यह विधि सीखने के नियमों पर आधारित है।



**(i) तत्परता का नियम (Law of readiness)**–योजना विधि में छात्र स्वयं योजना का चुनाव करते हैं और उस समय को हल करने के लिए योजना बनाते हैं इसलिए छात्रों में कार्य करने की तत्परता होती है।

**(ii) अभ्यास का नियम (Law of Exercise)**–छात्र कार्य करते हुए जिन तथ्यों एवं नियमों को सीखते हैं वे उनका अभ्यास करते हैं तभी सीखा हुआ ज्ञान स्थायी रहता है।

**(iii) प्रभाव का नियम (Law of Effect)**–योजना विधि में बच्चे कार्य स्वयं करते हैं और जब उन्हें उस कार्य में सफलता मिलती है तब उन्हें बहुत आनन्द प्राप्त होता है। इस प्रकार उन्हें कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।

**2. वास्तविक जीवन से सम्बन्धित (Related to real Life)**–योजना विधि द्वारा दी गई शिक्षा का सम्बन्ध वास्तविक जीवन से होता है। छात्र इसमें स्वयं कार्य करके शिक्षा प्राप्त करते हैं। अत: उस प्राप्त ज्ञान को अपने व्यावहारिक जीवन में प्रयोग में लाते हैं योजना विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान विद्यार्थियों के जीवन के लिए लाभप्रद होता है।

**3. सामाजिक गुणों का विकास (Development of Social Values)**–योजना विधि द्वारा शिक्षा देने से विद्यार्थियों में सामाजिक गुणों का विकास होता है। छात्रों में सहयोग, सहिष्णुता, धैर्य आत्म-विश्वास, कर्त्तव्य परायणता एवं उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है।

**4. श्रम का महत्त्व (Importance of Labour)**–योजना विधि में सभी काम विद्यार्थियों द्वारा किये जाते हैं। अत: छात्र-छात्राएं श्रम के महत्त्व को समझने लगते हैं। वे अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार योजना पूर्ण करने के लिए कार्य करते हैं।

**5. समवाय द्वारा शिक्षण (Teaching through Co-relation)**–इस विधि द्वारा विषयों तथा पाठ्यक्रम की उपयोगिता के मध्य समवाय स्थापित होता है। इस विधि में अर्थशास्त्र का अन्य विषयों तथा उद्योगों के साथ आसानी से समवाय किया जा सकता है।

**6. प्रजातन्त्रीय शिक्षण (Democratic Teaching)**–छात्र योजना के चुनाव को लेकर समाप्ति तक सोचते, विचारते और कार्य करते हैं। उन्हें कार्य करने के लिए समान अवसर मिलते हैं। इस प्रकार उन्हें प्रजातन्त्रिक भावना का शिक्षण मिलता है। छात्रों में बन्धुत्व की भावना का विकास होता है।

**7. स्थायी ज्ञान (Permanent Knowledge)**–योजना विधि में विद्यार्थी करके क्रिया द्वारा सीखते हैं। क्रियात्मक अनुभव से प्राप्त किया ज्ञान स्थायी होता है। ऐसे ज्ञान का प्रयोग विद्यार्थी अपने भावी जीवन में कर सकते हैं।

**8. समस्या हल करने के लिए प्रोत्साहन (Motivation for solving Problems)**–योजना विधि द्वारा विद्यार्थियों को जीवन की समस्याओं को हल करने का प्रोत्साहन मिलता है। वे समस्या को हल करने के लिए योजना बनाते हैं।

**9. विभिन्न शैक्षिक समस्याओं का हल (Solution of different educational Problems)**–योजना विधि में विद्यार्थी स्वयं कार्य करते हैं इसलिए अनुशासन की समस्या

नहीं आती। अध्यापक को गृह कार्य देने की समस्या, टाईम-टेबल बनाने की समस्या से छुटकारा मिल जाता है क्योंकि विद्यार्थी अपनी रुचि व आवश्यकतानुसार कार्य करते हैं।

### अर्थशास्त्र विषय में योजना विधि की उपयोगिता (Utility of Project Method in the Subject of Economics)

योजना विधि द्वारा विद्यार्थियों को वास्तविक जीवन की शिक्षा मिलती है। डॉ. स्टीवेन्स का अनुभव है कि इस विधि में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रहती है कि कर्त्ता की कार्य शक्ति के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

डब्ल्यू. डब्ल्यू. चार्टस भी इसी बात का समर्थन करते हैं कि अन्य विधियों द्वारा अध्यापक में सबसे पहले सिद्धान्त बनाए जाते हैं जबकि प्रोजैक्ट विधि में समस्याएं पहले आती हैं और विद्यार्थी उनका हल निकालते समय आवश्यकतानुसार सिद्धान्तों को मालूम करते हैं। योजना विधि द्वारा विद्यार्थियों में उन सभी गुणों का समावेश हो जाता है जो एक आदर्श नागरिक के लिए आवश्यक होते हैं।

### योजना विधि के दोष एवं सीमाएं (Demerits and Limitations of Project Method)

**1. खर्चीली (Expensive)**—योजना विधि में धन, समय और शक्ति का बहुत खर्च होता है। छात्रों में अनुभव व योग्यता की कमी होती है, इसलिए धन और समय बहुत खर्च होता है। योजना को अच्छी तरह सम्पन्न करने के लिए स्कूल अधिक धन खर्च नहीं कर पाते।

**2. सीमित क्षेत्र (Limited Scope)**—योजना विधि द्वारा अर्थशास्त्र के सभी विषय नहीं पढ़ाए जा सकते। कई विषयों पर योजना नहीं बनाई जा सकती इसलिए इस विधि का क्षेत्र सीमित है।

**3. व्यक्तिगत ध्यान देना कठिन (Difficult to pay individual Attention)**—अध्यापक सभी छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान नहीं दे सकता। जिन कक्षाओं की संख्या कम होती है उनमें व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जा सकता है। व्यक्तिगत ध्यान न देने के कारण अध्यापक यह नहीं जान पाता कि विद्यार्थी योजना पर ठीक से काम कर रहे हैं या नहीं।

**4. प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव (Lack of trained Teachers)**—अर्थशास्त्र शिक्षण में योजना विधि के अनुसार शिक्षण देने के लिए अध्यापक को छात्रों की योजना का चयन करने, आयोजन करने, निरीक्षण करने और उचित पथ-प्रदर्शन करने में कुशल होना चाहिए पर स्कूलों में ऐसे प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी है।

**5. पाठ्य-पुस्तकों की कमी (Lack of Text-Books)**—योजना विधि के अनुसार लिखी गई पुस्तकों का अभाव है।



**6. पाठ्यक्रम समाप्त करने में कठिनाई (Difficult to complete course of Economics)**—एक योजना को पूरा करने में बहुत समय लग जाता है। अत: सम्पूर्ण पाठ्यक्रम योजना विधि द्वारा वर्ष भर में पूरा नहीं किया जा सकता।

**7. स्कूल की वर्तमान परिस्थितियों के प्रतिकूल (Against the present Condition of School)**—योजना विधि खर्चीली है। भारत एक गरीब देश है। अत: इस विधि पर फजूल खर्च नहीं किया जा सकता। स्कूलों में अनुभवी एवं योग्य अध्यापक तथा पाठ्य-पुस्तकों का अभाव है।

अत: योजना विधि को अकेले ही अर्थशास्त्र शिक्षण के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता। परन्तु शिक्षण को रोचक व्यावहारिक बनाने के लिए यह उपयोगी है।

### नाटकीकरण (Dramatization)

"नाटकीकरण एक 'मिश्रित कला' है। जिसमें भाषण के नाजुक अंगों और शरीर की मांसपेशियों की स्वतंत्र और बुद्धिपूर्ण ढंग के साथ विचारों और संवेगों के प्रकटाव के लिए सलाहकारी तालमेल बिठा कर नियन्त्रित किया जाता है।" ("Dramatization is a "synthesis art", involing purposive coordination and control of the delicate organs of speech and muscles of he body combined with a sense of rhythm, with a view to free and intelligent expression of emotions and ideas.")

नाटकीकरण तकनीक के द्वारा अधिक से अधिक विषयों के बीच आपसी तालमेल बिठाया जा सकता है। अपनी-अपनी भूमिका की तैयारी करते हुए विद्यार्थी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप के बीच अपने भाषा शैली, आदतों और बोली में सुधार करते हैं। इस तकनीक का प्रयोग विद्यार्थियों में सृजनात्मक चिंतन का प्रयोग के लिए भी किया जाता है। यह विद्यार्थियों में टीम भावना और अच्छे नागरिक के गुण पैदा करता है। इसकी सामाजिक महत्ता बहुत अधिक है। यह एक सार्वजनिक काम है जो कि विद्यार्थियों में सहयो., और सामाजिक समझदारी और सूझ-बूझ को विकसित करती है। विद्यार्थियों में बोलने की कला 'Art of Speaking' का विकास होता है।

नाटकीकरण की तकनीक के द्वारा पहले से घटित हो चुकी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक घटनाओं को वर्तमान में पेश किया जाता है। इस तकनीक के द्वारा मुश्किल और नीरस विषयों को भी दिलचस्प बनाया जा सकता है। नाटकीकरण विद्यार्थियों के आर्थिक और भूगौलिक ज्ञान में बढ़ौतरी करता है। नाटक के द्वारा एक घटना या कहानी की स्टेज के ऊपर दर्शाया जाता है और जब इसके साथ नृत्य और संगीत को शामिल किया जाता है तो इसकी खूबसूरती में चार चाँद लग जाते हैं। नाटकीकरण में कई प्रकार की क्रियाओं को शामिल किया जाता है। जिसके द्वारा बच्चों में आत्म-चेतना आदि गुणों का विकास होता है और वो अपने विचार प्रकट करते हैं।

नाटकीकरण तकनीक का अर्थ-शास्त्र अध्यापन में काफी महत्त्वपूर्ण स्थान है। कई आर्थिक समस्याओं और बुराईयों जैसे गरीबी, जनसंख्या की बढ़ौतरी, बेरोजगारी, नशाखोरी आदि को समाज के समक्ष पेश किया जाता है।

### I. नाटकीकरण की सफलता के लिए जरूरी शर्तें
### (Conditions for the success if Dramatization)

1. स्टेज पर जाने से पहले अधिक अभ्यास करना चाहिए।
2. विद्यार्थियों को नाटक आप लिखने के लिए उत्साहित करना चाहिए।
3. जहाँ तक हो सके प्रतिभागियों को भिन्न-भिन्न रोल अदा करने का मौका देना चाहिए।
4. नाटक बहुत ज्यादा खर्चीला नहीं होना चाहिए।
5. नाटक का विषय विद्यार्थियों की आयु और श्रेणी के अनुसार चुनाव करना चाहिए।
6. एक ही विद्यार्थी को बार-बार नकारात्मक रोल अदा नहीं करना चाहिए।
7. विवादपूर्ण विषयों के ऊपर नाटकीकरण नहीं होना चाहिए।
8. नाटकों का आर्थिक और सामाजिक आधार होना चाहिए।
9. जहाँ तक संभव हो सके विद्यार्थियों को स्टेज सामग्री अपने हाथ के साथ तैयार करने के लिए उत्साहित करना चाहिए।

### II. नाटकीकरण के गुण
### (Merits of Dramatization)

1. नाटकीकरण तकनीक के सही विद्यार्थियों की आन्तरिक भावनाओं और संवेगों का प्रकटीकरण करने का मौका मिलता है।
2. नाटकीकरण के द्वारा भिन्न-भिन्न आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का प्रगटावा करके लोगों को जागरूक बनाया जाता है।
3. विद्यार्थियों में आत्म-विश्वास पैदा होता है। विद्यार्थियों में झिझक की भावना खत्म हो जाती है।
4. विद्यार्थी क्रियाशील रहते हैं।
5. नाटकीकरण से बच्चों में टीम-भावना के साथ-साथ और भी कई गुणों तथ मानव-मूल्यों का विकास होता है।
6. नाटकीकरण के द्वारा कई विषयों में सह-संबंध स्थापित किया जाता है।
7. इसके द्वारा कई कौशलों का विकास होता है।



## सर्वेक्षण विधि
## (Survey Method)

अर्थशास्त्र अध्यापक के लिए सर्वेक्षण विधि एक महत्वपूर्ण विधि है। अर्थशास्त्र देश और समाज की आर्थिक व्यवस्था की व्याख्या करता है। इस प्रकार सर्वेक्षण विधि द्वारा इस आर्थिक व्यवस्था में होने वाली मनुष्य की भिन्न-भिन्न आर्थिक क्रियाओं का सही ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। सर्वेक्षण से भाव है-पूर्ण रूप के साथ देखकर अध्यापन करना। सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किसी भी वर्तमान प्रक्रिया की व्याख्या के लिए किया जा सकता है। सर्वेक्षण के द्वारा विद्यार्थियों को आर्थिक घटनाओं का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होता है। विद्यार्थी मौके पर जाकर संबंधित व्यक्तियों के साथ बातचीत करके आंकड़े एकत्रित करते हैं। सर्वेक्षण क्या है ? (What is Survey ?) किसके साथ संबंधित है। यह वर्तमान में जो भी मौजूद है उसकी व्याख्या करता है।

**वैबस्टर शब्दकोश (Webster Dictionary) के अनुसार-**

सर्वेक्षण एक आलोचनात्मक निरीक्षण है जो कि प्रशासनिक रूप में सही सूचना प्रदान करता है।

"Survey is a critical inspection often official to provide exact information."

**एफ. एल. विटने (F.L. Whitney) के अनुसार**-सर्वेक्षण एक संगठित कोशिश है जो कि एक सामाजिक संस्था, समूह या क्षेत्र के मौजूद स्तर का विश्लेषण और व्याख्या करके रिपोर्ट पेश करती है।

("The survey is an organised attempt to analysis interpret and report the present status of a social institution, group or area.")

**थेंग पासिन पाओ (Yang Psin Pao) के अनुसार**-सामाजिक सर्वेक्षण लोगों के समूह की बनावट, क्रियाओं और रहने के हालातों की जांच करता है।

("A social survey is usually an inquiry into the composition, activity and living conditions of a group of people.")

इस प्रकार सर्वेक्षण एक ऐसी विधि है जो कि प्रचलित तथ्यों की व्याख्या करने के लिए उससे संबंधित आंकड़े एकत्र करती है। इन आंकड़ों के आधार पर भविष्य के लिए मार्गदर्शन के साथ-साथ सर्वेक्षण विधि वर्तमान स्थिति का भी पूर्ण निर्धारित इकाईयों के साथ तुलना करके उसकी सार्थकता भी निर्धारित करती है।

सर्वेक्षण विधि में शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की क्रियाएँ शामिल हैं। अध्यापक विद्यार्थियों को तथ्यों की खोज करने के लिए योग्य यत्नों के लिए प्रेरित करते हैं। योजनाबद्ध किया गया सर्वेक्षण विद्यार्थियों के ज्ञान में केवल बढ़ावा ही नहीं करता, बल्कि उनमें बहुत सारे सामाजिक गुणों, योग्यताओं, मानव-मूल्यों और कौशलों का विकास करता है।

### 1. सर्वेक्षण विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Survey Method)

सर्वेक्षण विधि की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. इस विधि के द्वारा आवश्यक आंकड़ें इकट्ठे किए जाते हैं।
2. यह विधि वर्गीकरण पर आधारित है। इस विधि में अर्थ-व्यवस्था को भिन्न-भिन्न भागों में बांट कर उनका सर्वेक्षण किया जाता है।
3. इस विधि के पूर्व निर्धारित उद्देश्य होते हैं।
4. यह स्पष्ट समस्या के साथ संबंधित होती है।
5. इस विधि के लिए योजनाबद्ध कौशलों की जरूरत होती है।
6. एकत्रित किए गए आंकड़ों का सावधानी के साथ विश्लेषण और व्याख्या की जाती है।
7. यह भिन्न-भिन्न आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए जरूरी सूचनाएं प्रदान करती हैं।
8. सर्वेक्षण गुणात्मक और संख्यात्मक होते हैं।
9. सर्वेक्षण के परिणाम शाब्दिक या गणित के संकेतों के द्वारा दर्शाए जाते हैं।
10. सर्वेक्षण वास्तविक परिस्थितियों में किया जाता है। इसके लिए यह विश्वास योग्य होते हैं।
11. सर्वेक्षण में भिन्न-भिन्न तथ्यों का आपसी संबंध देखा जाता है। उदाहरण के तौर पर, किसी वस्तु की माँग पर उसकी कीमत, आमदनी, रुचि, पसंद आदि का प्रभाव आदि।
12. सर्वेक्षण की तर्कपूर्ण ढंग के साथ रिपोर्ट की जाती है।

### 2. सर्वेक्षण विधि के भिन्न-भिन्न पड़ाव (Different Steps in Survey Method)

सर्वेक्षण विधि की प्रक्रिया चाहे निश्चित नहीं है क्योंकि इसकी कार्यविधि अध्यापक की योग्यता, विद्यार्थियों और संबंधित स्थितियों पर निर्भर करती है फिर भी इस विधि को निम्नलिखित पड़ाव पार करने होते हैं–

**1. समस्या का चुनाव (Selection of the problem)**–सर्वेक्षण-विधि का सबसे पहला पड़ाव समस्या का चुनाव है। विद्यार्थियों के सहयोग के साथ समस्या का चुनाव होता है। समस्या के चुनाव के साथ वाद-विवाद या किसी भी संबंधित जगह दौरा करके स्थिति पैदा की जा सकती है। समस्या का चुनाव विद्यार्थियों की आयु, योग्यताओं, जरूरतों और सुविधाओं के अनुसार होना चाहिए। समस्या सरल और जीवन के साथ संबंधित होनी चाहिए।



**2. समस्या को परिभाषित करना (Defining the problem)**–समस्या के चुनाव के बाद यह जरूरी है कि चुनी गई समस्या को स्पष्ट रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों को चुनी गई समस्या के भिन्न-भिन्न तथ्यों की समझ होनी चाहिए। इन तथ्यों का आपसी संबंध और प्रभाव जो भी सर्वेक्षण करना है वो उस परिभाषित की गई समस्या से साफ दिखना चाहिए।

**3. साधन या औज़ार का चुनाव या विकास (Selection or development of tool)**–समस्या के चुनाव और पारिभाषित करने के बाद/सर्वेक्षण को योजनाबद्ध करना बहुत आवश्यक है। इसके लिए सबसे पहली जरूरत साधन या प्रश्नावली के चुनाव की होती है। यह औज़ार आंकड़े इकट्ठे करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इसका प्रयोग संबंधित व्यक्ति जो कि समस्या के साथ जुड़े होते हैं उनसे उत्तर लेने के लिए की जाती है। प्रश्न साधारण सरल और संबंधित होने चाहिए।

**4. प्रतिरूप का चुनाव (Selection of the sample)**–साधन या औजार निश्चित करने के बाद विद्यार्थियों को उसके प्रतिरूप का चुनाव करना चाहिए। जिनसे वो सूचनाएँ एकत्र कर सकें। ठीक जानकारी की प्राप्ति के लिए प्रतिरूप को प्रेरित करना चाहिए। समस्या के हल के लिए सारी जनसंख्या से तथ्य एकत्रित करने मुश्किल हो जाते हैं इसके लिए जनसंख्या का एक प्रतिरूप चुन लिया जाता है जो कि जनसंख्या की पैहरवी करता है।

**5. तथ्य और आंकड़ें एकत्रित करना (Collection of facts and figures)**–विद्यार्थी तथ्य और आंकड़ें एकत्र करने के लिए चुने गए प्रतिरूपों को प्रश्नावली बांटते हैं। इसके लिए वो चुनी गई जगहों पर जाते हैं। समस्या के साथ संबंधित जानकारी एकत्र करने के लिए भिन्न-भिन्न पुस्तकों और सहायक पुस्तकों की भी मदद लेनी चाहिए। विद्यार्थी एक-दूसरे और अध्यापकों के विचारों को भी शामिल करते हैं।

**6. आंकड़ों का विश्लेषण और व्याख्या (Analysis and interpretation of data)**–इस पड़ाव में पहुंच कर विद्यार्थी एकत्र किए आंकड़ों का विश्लेषण करते हैं। इसके लिए जो भी आंकड़ें या जानकारी अयोग्य या असंबंधित होती है उसको छोड़ दिया जाता है। आंकड़ों को क्रमबद्ध रूप में संगठित किया जाता है। विद्यार्थी प्राप्त किए गए आंकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन भी करते हैं। विद्यार्थी इसके लिए अध्यापकों की सहायता लेते हैं और इकट्ठे किए गए आंकड़ों पर उपयुक्त टैस्ट लगा कर उनका तर्कपूर्ण विश्लेषण और व्याख्या की जाती है।

**7. नतीजे निकालना (Conclusions)**–एकत्र किए गए आंकड़ों और तथ्यों का विश्लेषण और व्याख्या के बाद विद्यार्थी नतीजे निकालते हैं और साधारण सिद्धान्त बनाने के लिए अध्यापक उनको उत्साहित करते हैं। निकाले गए नतीजों को पहले से ही प्रचलित तथ्यों के साथ तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद ही सही परिणामों को स्वीकारा जाता है।

**8. मूल्यांकन (Evaluation)**–सर्वेक्षण से प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन करना बहुत जरूरी होता है। समस्या का सर्वेक्षण करने के उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हुई है यह

देखना जरूरी होता है। मूल्यांकन शिक्षण प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। मूल्यांकन के अलावा बनाए गए सिद्धान्तों को वास्तविक जीवन पर लागू करना भी इस विधि का मुख्य पड़ाव है।

**9. रिपोर्ट लिखना (Reporting)**—सर्वेक्षण के दौरान भिन्न-भिन्न कठिनाइयों, समस्याओं, रुकावटों आदि के बारे में रिपोर्ट तैयार करनी चाहिए। अध्यापक का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह देखें कि रिपोर्ट अपने आप में पूरी होनी चाहिए। सर्वेक्षण का कोई भी पड़ाव लिखे बिना नहीं रहना चाहिए। सही ढंग के साथ लिखी गई रिपोर्ट भविष्य में किए जाने वाले सर्वेक्षण का मार्गदर्शन करता है।

## 3. सर्वेक्षण की उदाहरणें
## (Examples of Survey)

**अर्थशास्त्र के कई सिद्धान्तों के साथ-साथ कई प्रकरण जैसे–**

1. बढ़ती कीमत का मांग पर प्रभाव।
2. परिवार नियोजन का भारतीय जनसंख्या पर प्रभाव।
3. पंचवर्षीय योजनाएं।
4. विश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव आदि।

प्रत्येक प्रकरण को कुछ भागों में बांट कर विद्यार्थियों के समूह को सर्वेक्षण करने के लिए दिया जाता है। अध्यापक के समय-समय पर विद्यार्थियों का मार्ग दर्शन करना चाहिए।

विद्यार्थी अध्यापक के मार्गदर्शन पर सर्वेक्षण के विभिन्न पड़ावों में से गुज़रते हैं जो ऊपर लिखित हैं–

## 4. सर्वेक्षण के लाभ
## (Merits of Survey Method)

सर्वेक्षण विधि के लाभ निम्नलिखित हैं–

**1. अर्थपूर्ण और वास्तविक ज्ञान (Meaningful and real learning)**—सर्वेक्षण विधि द्वारा प्राप्त किया ज्ञान अर्थपूर्ण और वास्तविक होता है। क्योंकि विद्यार्थी वास्तविक स्थितियों का अध्ययन करके ज्ञान की प्राप्ति करते हैं। यह विधि स्कूल के जीवन को समाज के साथ जोड़ती है। विद्यार्थी विभिन्न लोगों के पास जाकर आंकड़ें इकट्ठे करते हैं। इस प्रकार जब वो स्कूल छोड़कर समाज में जाते हैं उसको अपनापन महसूस होता है। क्योंकि वह समाज को भली-भाँति जानते हैं।

**2. शिक्षा के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित (Based on psychological laws of learning)**—सर्वेक्षण विधि प्रोजैक्ट विधि की तरह ही शिक्षा के मनोवैज्ञानिक नियमों जैसे कि "जान से अनजान", "विशेष से साधारण" की तरफ आधारित है। विद्यार्थी इस विधि में तथ्य और आंकड़ें इकट्ठे करके साधारण नियमों का निर्माण करते हैं। वह इकट्ठे किए गए आंकड़ों का आलोचनात्मक विश्लेषण और व्याख्या भी करते हैं। सारा काम



विद्यार्थी रुचि अनुसार करते हैं जिसके साथ उनके वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। इस प्रकार यह विधि शिक्षा के मनोवैज्ञानिक नियमों पर सही है।

**3. बौद्धिक विकास (Intellectual development)**—सर्वेक्षण विधि के साथ बच्चों का बौद्धिक विकास होता है। विद्यार्थियों में आत्म-चिन्तन, तर्कशीलता, दलीलबाजी आदि शक्तियों का विकास होता है। उनकी सोच-शक्ति बढ़ती है। विद्यार्थी समाज में जाकर प्रतिरूपों का सामना करते हैं। उनके बातचीत करने के अंदाज और स्वतन्त्र प्रश्नावली आदि गुणों का विकास होता है। विद्यार्थी एकत्र किए गए आंकड़ों का आलोचनात्मक अध्ययन करना भी सीखते हैं। इस प्रकार उनमें खोज करने की शक्ति का विकास होता है।

**4. चिरस्थायी ज्ञान की प्राप्ति (Permanent knowledge)**—इस विधि के द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान चिरस्थायी और प्रभावशाली होता है। विद्यार्थी क्रियाशील रहते हैं और वह निरन्तर किसी न किसी काम में लगे रहते हैं। वह सर्वेक्षण के लिए समस्या का चुनाव, योजनाबंदी, साधनों का विकास, आंकड़े एकत्रित करना आदि कई प्रकार की क्रियाएं करते हैं। इस प्रकार हाथ से किए गए काम से प्राप्त ज्ञान चिरस्थायी बनता है।

**5. सामाजिक गुणों का विकास (Development of social skills)**—सर्वेक्षण विधि के द्वारा बच्चों में बहुत सारे सामाजिक गुणों जैसे–मेल-मिलाप, सहनशीलता, जिम्मेवारी संभालना और भाईचारे आदि का विकास होता है। वो आंकड़े इकट्ठे करते हैं। समाज में रह रहे लोगों को मिलते हैं और जिम्मेवारी समझते हैं। इस प्रकार उनमें अच्छे नागरिक के गुण पैदा होते हैं। वह अपने कर्त्तव्य और फर्ज देश और समाज के प्रति निभाते हैं।

**6. सह-संबंधों पर आधारित (Based on co-relation)**—सर्वेक्षण-विधि में सह-संबंध को भी स्थान दिया गया है। अर्थशास्त्र के प्रकरणों का सर्वेक्षण करते हुए विद्यार्थी दूसरे विषयों के बारे में भी ज्ञान प्राप्त करते हैं। उनको सामाजिक रीति-रिवाजों, भौगोलिक हालातों, ऐतिहासिक, गणित और आंकड़ें विज्ञान के बारे में भी ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार अर्थशास्त्र का दूसरे विषयों के साथ सह-संबंध स्थापित होता है।

**7. उद्देश्यों पर आधारित (Based on objectives)**—सर्वेक्षण विधि अर्थशास्त्र अध्यापक के उद्देश्यों पर आधारित है। कई उद्देश्य जैसे कि अच्छे नागरिक बनना, बौद्धिक विकास, आर्थिक समस्याओं का ज्ञान, व्यापक दृष्टिकोण का विकास, समझदार उपभोगी बनना, आर्थिक चेतनता पैदा करना आदि की प्राप्ति की जाती है।

**8. कौशलों का विकास (Development of skills)**—सर्वेक्षण विधि के द्वारा विद्यार्थियों में कई आवश्यक कौशलों का विकास होता है। वह प्रश्नावली बनाते हैं। सूचियां तैयार करते हैं। आंकड़ें इकट्ठे करके विश्लेषण और व्याख्या करते हैं। इस प्रकार उनमें आत्म-अध्ययन की आदत का भी विकास होता है।

## 5. सर्वेक्षण विधि की सीमाएँ (Limitations of Survey Method)

**1. बेतरतीब और अल्पकालीन अधिगम (Haphazard and incidental learning)**—सर्वेक्षण विधि के द्वारा लगातार ज्ञान प्रदान नहीं किया जाता है। इसमें कई बार क्रम भंग हो जाता है। जिससे कारण बेतरतीब ज्ञान प्रदान होता है। अर्थशास्त्र में ज्ञान का क्रमबद्ध होना बहुत जरूरी है। अधूरा ज्ञान मनुष्य का बौद्धिक विकास नहीं करता। बल्कि विद्यार्थी को शंका में डाल देता है।

**प्रो. गॉडफ्रे थॉमसन (Prof. Godfrey Thomson) के अनुसार**, "घटनाक्रम आधारित ज्ञान चाहे महत्वपूर्ण होता है परन्तु यह काफी नहीं होता।"

("Incidental learning, though most importantis not enough.")

**2. प्रत्येक के लिए लाभकारी नहीं (No suitable for all)**—यह विधि प्रत्येक मानसिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए लाभकारी नहीं है। इस विधि के द्वारा जिम्मेदार बच्चों से ही जिम्मेदारी निभाने का डर और पिछड़े बच्चों के पीछे ही रह जाने का डर होता है। यह विधि शर्मीले और कमजोर बच्चों के लिए अनुपयुक्त है। भिन्न-भिन्न स्तर के बच्चों को एक अनुरूप काम बांट देने से काम में अधिक सफलता की उम्मीद नहीं लगाई जा सकती है।

**3. टाईम-टेबल ( समय-सारणी ) का अव्यवस्थित होना (Upsetting the time-table)**—सर्वेक्षण विधि के साथ स्कूल के टाईम-टेबल के अनुसार काम करना मुश्किल होता है। इसके साथ सारा टाईम-टेबल अनियमित हो जाता है। निर्धारित टाईम-टेबल के साथ चलना मुश्किल हो जाता है क्योंकि यह बहुत धीमी विधि है। एक साल में केवल एक या दो योजनाएँ ही पूर्ण होती हैं। स्कूलों में टाईम-टेबल सर्वेक्षण विधि को ध्यान में रखते हुए नहीं बनाया जा सकता। इस प्रकार इस विधि को वास्तविक रूप देने में काफी कठिनाई आती है।

**4. अध्यापकों पर दबाव और काम का बोझ (Strains and overload of teachers)**—सर्वेक्षण-विधि का अध्यापकों पर काफी दबाव और काम का बोझ रहता है। अध्यापकों को विद्यार्थियों की योग्यताओं, रुचियों, योग्यता के अनुसार योजना को चुनना, क्रमबद्ध करने और वास्तविक रूप देने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त विधि का मूल्यांकन और रिकॉर्ड रखने का भी उन पर भार पड़ता है।

**5. कुशल अध्यापकों की कमी (Lack of competent teachers)**—सर्वेक्षण-विधि की सफलता के लिए कुशल और सूझवान अध्यापकों की जरूरत होती है। सर्वेक्षण विधि के लिए योग्य अध्यापक जो कि अर्थशास्त्र विषय को दूसरे विषयों के साथ संबंधित कर सकें उनकी जरूरत होती है। ऐसे निपुण अध्यापकों की अक्सर कमी होती है। इस प्रकार यह अध्यापक विद्यार्थियों के सर्वेक्षण के दौरान मार्गदर्शन करने में असमर्थ होते हैं।



**6. खर्चीली विधि (Expensive method)**—सर्वेक्षण विधि खर्चीली विधि है। इसमें सहायक सामग्री के साथ भरपूर प्रयोगशाला और लाइब्रेरी की भी जरूरत पड़ती है। इस विधि के दौरान विद्यार्थियों की एक जगह से दूसरी जगह भी जाना पड़ता है। जिसके साथ अध्यापकों और विद्यार्थियों का पैसा के साथ-साथ समय भी व्यर्थ जाता है।

**7. बनावटी सह-संबंध (Artificial Co-relation)**—सर्वेक्षण विधि अर्थशास्त्र का दूसरे विषयों के साथ सह-संबंध पर भी जोर देती है। इस विधि के दौरान कई बार अध्यापक बिना किसी मंतव्य के दूसरे संकल्पों के इस विषय के साथ जोड़ने की कोशिश करते हैं। जिनका कि इससे कोई संबंध नहीं होता। अध्यापक उत्साहित होकर सर्वेक्षण को हद से अधिक खींचने का यत्न करते हैं। यह सह-संबंध बनावटी होता है।

**8. संबंधित पाठ्य-पुस्तकों की कमी (Lack of suitable text-book)**—सर्वेक्षण विधि प्रकरण के साथ जानकारी प्राप्त करने के लिए भिन्न-भिन्न पुस्तकों और संबंधित पुस्तकों की जरूरत पर ध्यान या जोर दिया जाता है। अच्छी पुस्तकों की कमी होने के कारण अध्यापकों पर भार बढ़ जाता है। उनकी और अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए इधर-उधर जाना पड़ता है। इस प्रकार संबंधित पाठ्य-पुस्तकों की कमी के कारण सर्वेक्षण विधि अपनाने में कठिनाई अनुभव होती है।

**9. संतुलित शिक्षा ( अधिगम ) संभव नहीं (Balance learning not posible)**—सर्वेक्षण-विधि संतुलित शिक्षा की गारंटी नहीं देती। कई विद्यार्थी अपने आप अपनी जिम्मेदारी समझ कर काम करना पसंद करते हैं। यह विद्यार्थी योग्य और कुशल होते हैं। इस विधि में इन विद्यार्थियों के द्वारा सारा समय दबदबा बना लेने का डर रहता है। इस प्रकार कई विद्यार्थी कामचोर भी होते हैं। वह अपना समय बर्बाद ही करते रहते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी से भिन्न-भिन्न क्रियाओं में उत्साह और कुशलता की उम्मीद भी नहीं की जा सकती।

उपरोक्त चर्चा से यह परिणाम निकाला जा सकता है कि इस विधि की कुछ सीमाएँ हैं। पर अगर आधुनिक धारणाओं को माना जाए तो यह सीमाएँ दूर भी की जा सकती हैं। सर्वेक्षण विधि व्यवहारिक और सैद्धान्तिक प्रकरणों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उत्तम विधि है। अध्यापक को विद्यार्थियों की रुचि और योग्यताओं के साथ ही सर्वेक्षण का चुनाव करना चाहिए। अध्यापक को मार्गदर्शन बनना चाहिए। अध्यापक को सर्वेक्षण लोकतान्त्रिक ढंग से निभाने की कोशिश करनी चाहिए। ताकि बहुमूल्य गुणों, योग्यताओं, कौशलों का विकास किया जा सके।

इस प्रकार सर्वेक्षण विधि की अपनी सीमाएँ हैं। सर्वेक्षण विधि की सीमाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। एक कुशल अध्यापक इन सीमाओं को अपनी निपुणता के साथ दूर कर सकता है। सर्वेक्षण विधि विद्यार्थियों को व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त करती है। जिसकी वो अपने रोजाना जीवन में प्रयोग में ला सकते हैं। और अपने भविष्य को उज्जवल बना सकते हैं।

## क्षेत्र भ्रमण
## (Field Visit)

अर्थशास्त्र अध्यापक केवल पाठ्य-पुस्तक या अनुदेशन सामग्री की सहायता से ही विषय वस्तु की जानकारी को स्पष्ट नहीं कर सकते। अर्थशास्त्र जैसा कि सभी जानते हैं कि अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित है और इसकी वास्तविक जानकारी के लिए कभी-कभी निरीक्षण भी आवश्यक होता है। इसके लिए क्षेत्र भ्रमण का आयोजन करना पड़ता है। क्षेत्र भ्रमण के लिए पूर्वयोजना बनायी जानी आवश्यक है। योजनाबद्ध निरीक्षण द्वारा विद्यार्थी प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करते हैं, जिससे अस्पष्ट अवधारणाएं स्पष्ट हो जाती हैं। औद्योगिक तथा व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सम्बन्धित संग्रहालयों, बैंकों की कार्यप्रणाली, विभिन्न उद्योग धन्धे, कारखाने, औद्योगिक संगठनों आदि के भ्रमण का आयोजन किया जा सकता है। ये यात्राएं प्राय: रुचिकर तथा सफल होती हैं। इनके माध्यम से विद्यार्थी वास्तविकता में सम्पर्क स्थापित करते हैं। वे लघु तथा कुटीर उद्योगों व बड़े पैमाने के उद्योगों में अन्तर करना सीख जाते हैं। वे स्कूली जीवन तथा बाह्य संसार में सह-सम्बन्ध स्थापित करते हैं। ये विद्यार्थियों की निरीक्षण शक्ति व कल्पना शक्ति का विकास करने में सहायक होते हैं। ये बाल्यकाल से परिपक्वता स्तर तक अधिगम के प्रत्येक स्तर पर विद्यार्थियों को मूल्यवान अनुभव प्रदान करते हैं। भ्रमण की योजना बनाते समय अध्यापक को स्कूल के सम्पूर्ण कार्यक्रम का ध्यान रखना चाहिए। अत: क्षेत्र भ्रमण की सहायता से विद्यार्थी वास्तविक अनुभव प्राप्त करते हैं।

## क्षेत्रीय दौरे/यात्राएं
## (Field Visit/Trips)

### क्षेत्र भ्रमण या पर्यटन का अर्थ एवं उनके भिन्न-भिन्न नाम

वास्तव में जब अध्यापक अपने छात्रों के समूह को किसी शिक्षण सम्बन्धी विशेष अध्ययन के लिए किसी अन्य स्थान पर ले जाता है ताकि छात्र स्वयं उसका अध्ययन निरीक्षण कर सके तो उनको भौगोलिक यात्राएं कहकर पुकारा जाता है। ये यात्राएं पैदल चलकर, बस रेलगाड़ी तथा अन्य परिवहन के साधनों द्वारा की जाती है। दूसरे रूप में भौगोलिक यात्राओं से तात्पर्य उन शिक्षण क्रियाओं से होता है जो कि कक्षा शिक्षण में न करके उनका अध्ययन बाहर उनके प्राकृतिक वातावरण एवं स्थान पर जाकर ही अध्यापक द्वारा कराया जाता है। इससे छात्रों में भूगोल सम्बन्धी ज्ञान को अधिक विस्तृत करना होता है। इन्हें ही भौगोलिक यात्राएं कहते हैं।

क्षेत्र पर्यटन को निम्नलिखित भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है–

–क्षेत्र भ्रमण (Field Excursion)

–क्षेत्रीय पर्यटन (Field Trips)

–स्कूल पर्यटन (School Journeys)

–स्कूल भ्रमण (School Picnic)



**क्षेत्र पर्यटन के प्रकार (Kinds of Field Trips)**–क्षेत्र पर्यटन को उनकी ...स्थान, समय आदि की दृष्टि से विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया गया है, वह इस प्रकार है–

**1. अति अल्पकालीन पर्यटन**–प्राथमिक कक्षाओं छात्रों द्वारा इस प्रकार की भौगोलिक यात्राएं की जाती हैं। इसमें छात्रों को सामाजिक विज्ञान के घंटे में स्कूल से बाहर ले जाकर भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक आदि तथ्यों का वास्तविक अवलोकन एवं निरीक्षण कराया जाता है। इससे छात्र स्वत: ज्ञान कर लेता है। जैसे-नदियों, नहरों, फसलों, यातायात के साधनों आदि से अवगत कराना। यह भ्रमण एक या दो घंटे का होता है।

**2. अल्पकालीन पर्यटन भ्रमण**–इस प्रकार की यात्राओं का समय एक या दो घंटे न होकर एक पूरा दिन होता है। ये यात्राएं उच्च प्राथमिक तथा जूनियर हाई स्कूल कक्षाओं के छात्राओं द्वारा की जाती है। इसमें यह ध्यान रखा जाता है कि जिन-जिन स्थानों का निरीक्षण एवं अध्ययन करना होता है वह कार्य केवल एक दिन के समय में सम्पन्न किया जा सके। उदाहरण के रूप में बाजारों का निरीक्षण, रेलवे स्टेशन, जल विद्युत गृह, धार्मिक स्थल, वृक्षारोपण आदि का स्थल अध्ययन छात्रों को कराया जाता है।

**3. साप्ताहिक पर्यटन**–इस प्रकार की यात्राओं द्वारा हाई स्कूल के छात्रों को विभिन्न स्थलों, भू-रचनाओं, पर्वतों, घाटियों, आदि का अवलोकन कराया जाता है। इसमें अधिकतर एक या दो ही सप्ताह का समय लगता है। इस प्रकार के भ्रमण की पूर्व योजना तैयारी की जाती है ताकि उसी के अनुरूप प्रत्येक दिन भ्रमण करके अध्ययन किया जा सके।

**4. मासिक पर्यटन**–इस प्रकार के यात्राएं उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों द्वारा की जाती है। इसके लिए एक महीने की यात्रा का भ्रमण सम्बन्धी विवरण तैयार किया जाता है। उसी के अनुरूप यात्रा की जाती है साथ ही साथ उन स्थानों, स्थलों, नगरों आदि सम्बन्धी, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं भौगोलिक विकास का अध्ययन किया जाता है तथा उनके परिवर्तन सम्बन्धी विवरण का उल्लेख किया जाता है। उदाहरणत: दक्षिणी भारत के सूती कपड़े के कारखानों का अध्ययन, उत्तरी भारत में चीनी कारखानों का निरीक्षण, विभिन्न फसलों का अध्ययन, झील एवं घाटियों का निरीक्षण, कोयले एवं सोने की खानों निरीक्षण, घने जंगलों आदि का अध्ययन कराया जाता है।

### "क्षेत्र भ्रमण पर्यटन का शिक्षण में महत्त्व"
### (Importance from the Point of View of Teaching)

पर्यटन का शिक्षण की दृष्टि से भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा छात्रों को स्वत: ज्ञान प्राप्त होता है। जिनको छात्र अच्छी प्रकार से समझ लेते हैं। इसलिए आधुनिक युग में विद्यालयों में भ्रमण, विभिन्न यात्राएं आदि आयोजित की जाती हैं। इस प्रकार पर्यटन से होने वाले लाभ निम्नलिखित हैं–

1. छात्रों में सामूहिक रूप से उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है।

2. स्वतः ज्ञान प्राप्त होने से उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है।

3. इसके द्वारा छात्रों में विभिन्न प्रकार के गुणों का विकास होता है जैसे–प्रेम, सहयोग, सहानुभूति, सहकारिता आदि।

4. पर्यटन के द्वारा शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार का विकास समन्वित रूप से होता है।

5. पर्यटन द्वारा एक दूसरे से सम्पर्क में आने पर छात्रों की झिझक, शर्मीलापन आदि अवगुणों में सुधार आता है।

6. पर्यटन यात्राएं मनोरंजन का एक अच्छा साधन है तथा साथ ही भौगोलिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक सम्बन्धी विभिन्न ज्ञान के पहलुओं के ज्ञान में अभिवृद्धि होती है।

7. छात्र चिन्तन व तर्कशक्ति के विकास में सहायक है।

8. निरीक्षण शक्ति व वस्तुओं की समीक्षा सम्बन्धी गुणों का विकास सम्भव है।

9. छात्रों को उत्तम प्रकार का वातावरण व प्रकृति की छटा में भ्रमण करने के अवसर मिलते हैं।

10. काल्पनिक दृश्यों व विषयों सम्बन्धी विचारों को पर्यटन द्वारा स्वयं निरीक्षण व, दर्शन द्वारा वास्तविकता प्रदान की जाती है।

11. पर्यटन द्वारा वास्तविक रूप में ज्ञान प्राप्त होता है। जैसे–पर्वत, ढाल, झरनें, घाटियां, तेज़ ढाल आदि का देखने पर ही अधिक ज्ञान प्राप्त होता है।

12. पर्यटन द्वारा आवागमन के साधन, उद्योगों के स्थायी कारण, खानों उपजों आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है।

13. छात्रों में सामूहिक अनुशासन, संगठन एवं नेतृत्व आदि गुणों का विकास होता है।

14. भ्रमण द्वारा देश की धरातलीय बनावट, जलाश्यों, वनस्पति, जीव जन्तु, मानव जीवन आदि के ज्ञान में अभिवृद्धि होती है।

15. पर्यटन द्वारा ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों की विविधता में एकता की झलक प्रतीत होती है। साथ ही साथ नगरों की बनावट स्थिति, औद्योगिक प्रतिष्ठानों आदि का वास्तविक रूप देखने के अवसर मिलते हैं।

16. पर्यटन द्वारा विभिन्न प्रकार की भाषा, रीति-रिवाज, रहन-सहन की संस्कृति आदि का ज्ञान प्राप्त होता है।

17. UNESCO के अनुसार पर्यटन का महत्त्व वस्तुओं, स्थलों आदि के प्रत्यक्ष निरीक्षण के साथ-साथ उनको स्वस्थ रुचि उत्पन्न कराना भी है।

18. सुसंगठित आयोजित भ्रमण द्वारा छात्रों की योजना बनाने तथा सहयोग रूप से कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास होता है। साथ ही छात्रों को परस्पर निर्भरता का ज्ञान भी प्राप्त होता है।



19. इस प्रकार पर्यटन द्वारा छात्रों में जिज्ञासा का विकास होता है। ताकि छात्र जिस वस्तु, स्थान आदि का अध्ययन कर रहा है वह उसके समीप जाकर उसका प्रत्यक्ष रूप में अवलोकन कर सकें। इसके लिए अनेक विद्यालय क्षेत्र पर्यटन को अपनी समय सारणी का नियमित भाग मानते हैं।

### क्षेत्र भ्रमण स्थल

इस प्रकार के सांस्कृतिक स्थल भ्रमणों में छात्रों को वस्तुओं, स्थानों, स्थलों, पर्वतों, नदियों, झीलों, विद्युत गृहों, कार्यशालाओं आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान होना चाहिए। इनके चुनाव में भी अध्यापक को विशेष सतर्कता से कार्य करना चाहिए। सामान्य रूप से निम्नलिखित सांस्कृतिक स्थलों के भ्रमण पर विशेष बल देना चाहिए–

1. ऋतुओं का परिवर्तन, वायु का चलना, वर्षा, ओस, कोहरा, बादल आदि का बनना एवं पड़ना।

2. कृषि क्षेत्रों की यात्राएं–इसके अन्तर्गत रबी, खरीफ तथा जायद फसलों का खेती में जाकर अध्ययन करना।

3. उद्योगों तथा औद्योगिकरण सम्बन्धी यात्राएं–इसके अन्तर्गत उद्योगों विभिन्न उद्योगों इस्पात, सूती वस्त्र, रेशम, सीमेन्ट, चीनी आदि उद्योगों का निरीक्षण करना।

### अभ्यास के प्रश्न
### (Study Questions)

1. शिक्षण विधि का अर्थ बताते हुए एक अच्छी शिक्षण विधि की विशेषताओं का वर्णन करें।
(Describe the characteristics of a good teaching method while explaining the meaning of the teaching method.)
2. ग्लेजर के बुनियादी अध्ययन मॉडल/अवधारणा प्राप्ति मॉडल का वर्णन करें।
(Describe Glazer's basic study model/Concept Mapping Model.)
3. पूछताछ प्रशिक्षण प्रतिमान का वर्णन करें। पूछताछ प्रशिक्षण मॉडल के लिए शिक्षकों के प्रशिक्षण के बारे में बताओ। इस मॉडल की सीमाएं भी बताएं।
(Describe the Inquiry Training Model. Tell about the training of teachers for the Inquiry Training Model. Also state the limitations of this model.)
4. अग्रिम ऑर्गनाइज़र मॉडल के बारे में विस्तार से वर्णन करें।
(Describe in detail about Advance Organizer Model.)
5. योजना विधि का वर्णन करें। इस विधि में कौन सी अवस्थाएं अथवा सोपान शामिल हैं? इस विधि के सिद्धांतों का वर्णन करें।

(Describe the Project Method. What are the stages or steps involved in this method ? Describe the principles of this method.)

6. अर्थशास्त्र के विषय में योजना विधि की उपयोगिता के बारे में लिखें। योजना विधि के गुणों और दोषों या सीमाओं का भी वर्णन करें।

(Write about utility of Project Method in the subject of Economics. Also describe the merits, demerits or limitations of this method.)

7. नाटकीकरण क्या है ? नाटकीकरण की सफलता के लिए जरूरी शर्तों का वर्णन करें। नाटकीकरण के गुण लिखें।

(What is dramatization ? Describe the necessary conditions for the success of dramatization. Write the merits of dramatization.)

8. सर्वेक्षण विधि का अर्थ और इसकी विशेषताओं का वर्णन करें। सर्वेक्षण विधि में कौन से विभिन्न पड़ाव शामिल हैं ?

(Describe the meaning of the Survey Method and its characteristics. What are the various steps involved in the Survey Method ?)

9. सर्वेक्षण के कुछ उदाहरण दें। सर्वेक्षण विधि के गुणों और सीमाओं का वर्णन करें।

(Give some examples of the survey. Describe the merits and limitations of the Survey Method.)

10. क्षेत्र भ्रमण क्या है ? क्षेत्र भ्रमण के अन्य विभिन्न नाम क्या हैं ? शिक्षण की दृष्टि से क्षेत्र-भ्रमण के महत्व का वर्णन करें। क्षेत्र भ्रमण के कुछ स्थल लिखें।

(What is Field Visit ? What are the other different names of Field Visit? Describe the importance of Field Visit from the point of teaching. Write some places of Field Visit.)

* * *

# 2
## CHAPTER

# पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के अर्थ और महत्त्व, अर्थशास्त्र क्लब-अर्थ, महत्त्व और संगठन

## (Meaning & Importance of Co-curricular activities, Economics Club-Meaning, Importance and Organization)

### पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ

### (Co-curricular Activities)

प्राचीनकाल में विद्यालय शिक्षा का मुख्य उद्देश्य 3 R's (Reading, Writing, Arithmatic) अर्थात् पढ़ना, लिखना तथा हिसाब-किताब का ज्ञान प्राप्त करना हुआ करता था। जो क्रिया पाठ्य-से सम्बन्धित नहीं होती थी उसे अतिरिक्त (Extra) क्रिया की संज्ञा दी जाती थी। उन क्रियाओं में भाग लेना छात्रों की इच्छा पर निर्भर करता था तथा क्रिया की सफलता या असफलता पर भी कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। इस प्रकार की क्रियाएँ प्राय: स्कूल समय के पश्चात् सुविधानुसार आयोजित की जाती थी। इन क्रियाओं को पाठ्य-अतिरिक्त क्रियाएँ (Extra-Curricular Activities) कहा जाता था।

शिक्षा में अभूतपूर्व परिवर्तनों, अनुसंधानों व आधुनिक तकनीक के कारण शिक्षा का अर्थ ही बदल गया है। आज शिक्षा का मूल उद्देश्य छात्र का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा 3R's तक सीमित नहीं रह गई है। आजकल स्कूल में जो भी क्रिया होती है वह सब कुछ स्कूल क्रियाओं के अन्तर्गत आती है। इनमें से किसी भी क्रिया को अतिरिक्त क्रिया नहीं कहा जाता। अतिरिक्त क्रियाओं (Extra Activities) का स्थान सहगामी क्रियाओं ने ले लिया है।

आधुनिक अवधारणा के अनुसार यह अतरिक्त पाठ्य-क्रियाएँ न होकर पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ (Co-curricular Activities) हैं जिन्हें पाठ्यक्रम के एक अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया गया है और इनका आयोजन अतिरिक्त समय में न करके विद्यालय की समय-तालिका के अन्तर्गत ही किया जाना चाहिए। इन क्रियाओं के सम्बन्ध में विभिन्न विचारकों द्वारा दिये गये विचार इस प्रकार हैं-

**1. माध्यमिक शिक्षा आयोग** के अनुसार, "स्वच्छ, आनन्दप्रद तथा सुव्यवस्थित स्कूल भवन मिल जाने के पश्चात् हम चाहेंगे कि स्कूल में विविध प्रकार की संवृद्ध क्रियाओं का आयोजन हो जो विद्यार्थियों की विकास सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा कर सके। उसमें मनोरंजक कार्यों (Hobbies), क्रियाओं (Occupations) तथा योजनाओं (Projects) की व्यवस्था करनी होगी जो बच्चों को प्रभावित करें और उनकी विभिन्न रुचियों को विकसित करें।"

(According to **Secondary Education Commission,** "Given a clean, pleasant and well maintained school building, we would like the school to see if it can provide a richly varied pattern of activities to cater to the development of hobbies, occupations and projects that will appeal to and draw out the powers of children of varying temperaments and aptitudes.")

**माध्यमिक शिक्षा आयोग** ने पुनः इस सम्बन्ध में कहा है। ये स्कूल क्रियाओं का वैसे ही अभिन्न अंग हैं जैसे पाठ्यक्रम क्रियाएँ। इसलिए उनके उचित गठन के लिए भी उसी सावधानी तथा पूर्व विचार की आवश्यकता है। ये क्रियाएँ स्कूल की स्थिति, उसके संसाधनों तथा स्टॉफ और छात्रों की रुचि के अनुसार अलग-अलग होंगी। यदि इनका उचित रूप से संचालन किया जाये तो महत्त्वपूर्ण रुचियों और योग्यताओं के विकास में सहायक सिद्ध हो सकती हैं।

(According to **Secondary Education Commission,** They are as integral part of the activities of a school as its curricular work and their proper organization needs just as much care and fore thought. Such activities will naturally vary within limits, from school to school depending upon its location, its resources and the interests and aptitudes of the staff and the student. If they are properly conducted, they can help in the development of very valuable aptitudes and qualities.)

**2. रॉस** के अनुसार, "शिक्षा प्रक्रिया की धारणा जो बच्चों के प्रत्यक्ष अनुभवों या प्रत्यक्ष जीवनयापन द्वारा सीखने में विश्वास करती है, स्कूल को एक छोटा समाज समझने की धारणा जिसमें बच्चे सामाजिक प्रक्रियाओं में वास्तविक रूप से भाग लेकर सभ्य जीवन व्यतीत करना सीखते हैं–इन आदर्शों की प्राप्ति हेतु विद्यार्थियों की स्वैच्छिक क्रियाओं का मार्गदर्शन किया जाना चाहिए।"

"According to **Ross,** The concept of educational process as the accomplishment of learning through direct living, the conception of the school as miniature community, an embryonic society, in which pupils learn to live the civilized life as today by actual participation in social process—



these are ideals to the realization of which it is increasingly recognized, the voluntary activities of pupils may be guided."

**3. सुल्तान महीयुद्दीन** के अनुसार, "इन क्रियाओं को अब अतिरिक्त नहीं माना जाता, बल्कि ये स्कूल कार्यक्रम का अभिन्न अंग हैं। आधुनिक शिक्षा में पाठ्य-क्रियाओं तथा पाठ्य अतिरिक्त क्रियाओं के अन्तर को समाप्त किया जा रहा है और विद्यार्थियों के सभी अनुभवों–बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक, भावात्मक तथा शारीरिक को समन्वित करना स्कूल के सतत् प्रयासों का लक्ष्य है, तभी स्कूल विद्यार्थियों के लिए वास्तविक एवं संजीव संसार बन सकता है।"

"According to **Sultan Mahyl-ud-din,** "These activities are no longer looked upon as mere 'extras' but as an integral part of the school programme. The distinction between curricular and extra curricular has been gradually disappearing in modern education practice, and co-ordination and integration of all the experiences of the pupil—intellectual, social, moral emotioanl and physical has become the object of persistent efforts of the school that aims to be a real, living, little world for the pupils."

## पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के उद्देश्य
## (Objectives of Co-curricular Activities)

एल्सवर्थ टामकिन्स ने पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के उद्देश्यों को तीन वर्गों में विभाजित किया है–

**1. व्यक्तिगत उद्देश्य**

1. अवकाश के समय का रचनात्मक उपयोग करना।
2. व्यक्तित्व का विकास करना।
3. व्यक्तित्व की समृद्धि करना।
4. व्यक्तिगत उत्तरदायित्व एवं पहल करने की क्षमता का विकास करना।
5. आत्म मूल्यांकन के अवसर की उपलब्धि बताना।
6. सभा के संचालन एवं उसमें भार ग्रहण का प्रशिक्षण देना।

**2. सामाजिक उद्देश्य**

1. मानसिक एवं शारीरिक मनोरंजन करना।
2. दूसरों के साथ मिलकर कार्य करने का अभ्यास करना।
3. प्रजातन्त्रात्मक उत्तरदायित्व का विकास करना।
4. सुन्दर मानवीय सम्बन्धों का अभ्यास करना।
5. समूह प्रक्रियाओं का अवबोध कराना।

6. उत्तम शिक्षक छात्र सम्बन्धों का विकास करना।

7. सामाजिक सम्पर्कों में वृद्धि करना।

**3. नागरिक एवं नैतिक उद्देश्य**

1. छात्रों के मध्य धर्म, आर्थिक स्थिति, जाति, योग्यता के विभेदीकरण रहित सुन्दर सम्बन्धों की स्थापना करना।

2. राष्ट्रीय आदर्शों के अनुरूप भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की भावना को दृढ़ करना।

3. शिक्षार्थियों में विद्यालय के प्रति रुचि एवं प्रेम विकसित करने में सहायता प्रदान करना।

4. पाठ्यक्रम की विविधता एवं समृद्धि में सहायता देना।

## पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के संगठन के सिद्धान्त
## (Principles for the Organization of Co-curricular Activities)

**चुनाव का सिद्धान्त (Principle of Selection)**—पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का चुनाव सावधानी से किया जाना चाहिए। इन क्रियाओं का चयन करते समय निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिए-

1. प्रत्येक क्रिया से बालक की विभिन्न रुचियों व योग्यताओं का विकास होना चाहिए।

2. बालक को अपनी रुचि की क्रियाएँ चुनने की स्वतन्त्रता दी जाए।

3. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का चयन शिक्षा प्रक्रिया के साधन के रूप में किया जाए, साध्य के रूप में नहीं।

4. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का चयन विद्यालय व विद्यार्थियों की विशिए आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाए।

5. विभिन्न प्रकार की क्रियाओं में पूर्ण सन्तुलन होना चाहिए अन्यथा प्रभावहीन ढंग से आयोजन इन्हें प्रभावहीन ही बना देता है।

6. विभिन्न प्रकार की क्रियाओं का आयोजन किया जाए।

7. सभी विद्यार्थियों को भाग लेने के अवसर प्रदान किए जाएँ।

8. मितव्ययी क्रियाओं का चुनाव किया जाना चाहिए।

9. क्रियाएँ सीमित हों, अत्यधिक ना हो जिनसे सभी पर अत्यधिक बोझ हो जाए।

10. शिक्षात्मक दृष्टिकोण से सम्बद्ध क्रियाओं को ही प्राथमिकता दी जाए।

**प्रेरणा प्रदान करने का सिद्धान्त (Principle of Providing Motivation)**- समस्त बालकों को पाठ्य-सहगामी क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए तथा प्रत्येक विद्यार्थी को किसी न किसी क्रिया में भाग लेना चाहिए। विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने हेतु विद्यालय में आयोजित की जाने वाली क्रियाओं की सूची देकर अपनी



रुचि की क्रियाएँ चुनने के लिए प्रेरित करना चाहिए। संगठन व संचालन जब इन क्रियाओं का किया जाए तब भी छात्रों को इनमें सहायता हेतु प्रेरित करना चाहिए ताकि वे अधिक से अधिक भाग लेने को प्रेरित हो सकें। विद्यार्थियों को किसी भी प्रकार से विवश नहीं किया जाना चाहिए कि वे किसी दबाव में आकर इन क्रियाओं में भाग लें बल्कि लोकतान्त्रिक अवसर बनाने चाहिए।

**उचित प्रचार का सिद्धान्त (Principle of Due Publicity)**—इन क्रियाओं का प्रचार उचित व विधिवत् किया जाना चाहिए। जब भी इन क्रियाओं का आयोजन किया जाए, समुदाय को इसके बारे में विधिवत् सूचित किया जाए।

**व्यवस्थित समय व स्थान का सिद्धान्त (Principle of Providing Time & Place)**—विद्यालय की समय सारणी में इन क्रियाओं को पूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए अन्यथा इनका महत्त्व समाप्त होने लगता है। पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के लिए भी कालांश की व्यवस्था होनी चाहिए। **मुहियुद्दीन** के अनुसार, "हमारे स्कूलों में नियमित टाइम टेबिल में इन क्रियाओं को सम्मिलित करने से सभी विद्यार्थियों को सामाजिक अनुभव में भाग लेने तथा नागरिकता की व्यावहारिक कलाओं में महत्त्वपूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त करने का ही अवसर प्राप्त नहीं होगा बल्कि पाठ्य-क्रियाओं के स्तर तक इन क्रियाओं का दर्जा भी बढ़ जाएगा।" बहुत-सी प्रान्तीय सरकारों ने विद्यालयी समय सारिणी में 'क्रिया कालांश' की व्यवस्था की है।

**रिकर्ड का सिद्धान्त (Principle of Maintaining Records)**—प्रत्येक संगठन द्वारा विभिन्न क्रियाओं के रिकार्ड में प्रत्येक क्रिया की प्रकृति, विद्यार्थियों के भाग लेने, कार्यक्रम का मूल्यांकन, विधिवत् संचालन आदि का उल्लेख होना चाहिए।

**मार्गदर्शन एवं परामर्श का सिद्धान्त (Principle of Guidance and Advice)**— उचित पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के चुनाव तथा गठन के लिए बालकों को उचित मार्गदर्शन व परामर्श दिया जाना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस सम्बन्ध में कहा है कि "प्रत्येक क्रिया में विद्यार्थियों को अपने पाँव पर खड़े होने और इन क्रियाओं को अपने उपक्रम से विकसित करने के लिए उत्साहित किया जाए, अध्यापकों को उनकी सहायता एवं मार्गदर्शन के लिए उनके पास ही रहना चाहिए ताकि उनकी शिक्षात्मक सम्भावनाओं का पूरा लाभ उठाया जा सके और विद्यार्थियों को एक या अधिक क्रियाओं में भाग लेने को निश्चित बनाया जा सके।" इसके लिए परामर्शदाता का व्यवहार सहानुभूति पूर्ण होना चाहिए तथा वह चातुर्यपूर्ण व्यक्ति होना चाहिए। परामर्शदाता उत्साही व समर्पित व्यक्ति होना चाहिए तथा उसे विशिष्ट ज्ञान एवं कौशल प्राप्त होना चाहिए।

## पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के प्रकार
## (Types of Co-curricular Activities)

यह गतिविधियाँ या क्रियाएँ अनेक प्रकार की होती हैं। अब हम इन क्रियाओं का वर्णन करेंगे-

**1. शिल्प-सम्बन्धी क्रियाएँ (Craft Activities)**

(i) बुनना और कातना

(ii) सिलाई-कढाई

(iii) मिट्टी के खिलौने

(iv) साबुन बनाना

(v) टोकरी बनाना

(vi) चमड़े का काम

(vii) कार्डबोर्ड का काम

(viii) जिल्दें बाँधना।

**2. नागरिकता-प्रशिक्षण क्रियाएँ (Civic Training Activities)**

(i) विद्यार्थी-सहकारी स्टोर का गठन

(ii) विद्यार्थी परिषद् का गठन

(iii) सहकारी बैंक का गठन

(iv) नागरिक संस्थाओं, जैसे-नगरपालिका, डाकखाना, ग्राम-पंचायत, जिला परिषद्, विधानसभा, उच्च न्यायालय आदिकी यात्रा

(v) राष्ट्रीय एवं धार्मिक उत्सव मनाना

(vi) स्कूल समारोह जैसे वार्षिक पारितोषिक वितरण समारोह, विदाई-समारोह आदि मनाना।

**3. शारीरिक विकास के लिए क्रियाएँ (Activities for Physical Development)**

(i) खेल-अन्दर व बाहर खेले जाने वाले

(ii) दौड़ आदि क्रीड़ाएँ

(iii) सामूहिक-व्यायाम

(iv) कुश्तियाँ

(v) तैराकी

(vi) योग

(vii) नौका चलाना

**4. सामुदायिक क्रियाएँ (Community Activities)**

(i) समूह-प्रार्थना

(ii) स्काउटिंग

(iii) गर्ल-गाइड



(iv) रैड-क्रॉस

(v) एन.एस.एस.

(vi) ग्राम सर्वेक्षण

(vii) विशिष्ट अवसरों, जैसे मेले आदि पर समाज-सेवा

**5. शैक्षणिक क्रियाएँ (Academic Activities)**

(i) स्कूल पत्रिका

(ii) दीवार-पत्रिका

(iii) तर्क-वितर्क एवं भाषण प्रतियोगिताएँ

(iv) कविता-पाठ

(v) लेखन प्रतियोगिताएँ (निबन्ध, कहानी आदि।)

(vi) साहित्य-सभा

(vii) पुस्तकालय-गठन

(viii) नाटक

(ix) गोष्ठी

(x) विस्तार भाषण

**6. भ्रमण-सम्बन्धी क्रियाएँ (Excursion Activities)**

(i) पिकनिक

(ii) यात्राएँ

(iii) ऐतिहासिक स्थानों की यात्रा

(iv) चिड़ियाघर, संग्रहालय, प्रदर्शनी आदि देखना

**7. अवकाश काल की क्रियाएँ (Leisure Time Activities)**

(i) टिकटें एकत्रित करना

(ii) सिक्के एकत्रित करना

(iii) पत्थर एकत्रित करना

(iv) फोटोग्राफी

(v) एलबम बनाना

(vi) पत्ते, चित्र आदि एकत्रित करना

**8. सौन्दर्यात्मक एवं सांस्कृतिक विकास सम्बन्धी क्रियाएँ (Activities for Aesthetic and Cultural Development)**

(i) संगीत और नृत्य

(ii) चित्र कला

(iii) फैन्सी ड्रैस

(iv) विविधतापूर्ण कार्यक्रम

(v) लोक-गीत

(vi) प्रदर्शनी

(vii) सांस्कृतिक उत्सव मनाना

(viii) स्कूल को सजाना

## कुछ महत्त्वपूर्ण पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ
## (Some Important Co-curricular Activities)

**1. भाषण व आशु भाषण**–भाषण व आशु भाषण का इन क्रियाओं में प्रमुख स्थान है। भाषण में पूर्व में ही विषय वक्ता को ज्ञात होता है तथा पूर्व निश्चित तैयारी से वह अपनी अभिव्यक्ति देता है। आशु भाषण में तत्काल विचार, अभिव्यक्ति का विषय दिया जाता है और विद्यार्थी 5-7 मिनट की अवधि में उस विषय पर अपने विचार रखता है। इससे विषय के ज्ञान के साथ-साथ अभिव्यक्ति क्षमता का विकास भी किया जाता है। बालक की लज्जाशील प्रवृत्ति दूर होती है तथा सशक्त व साहस के साथ बालक अपने विचारों को प्रस्तुत करता है।

**2. कविता पाठ**–कविता पाठ कार्यक्रम तथा प्रतियोगिता दोनों ही रूपों में आयोजित किया जा सकता है। स्वरचित व अन्य रचित कविता दोनों का ही वाचन कराया जा सकता है। इसमें कविता के प्रस्तुतीकरण को विशेष महत्त्व दिया जाता है।

**3. वाद-विवाद**–वाद-विवाद को कक्षा-स्तर, विद्यालयी स्तर या अन्य उच्च स्तर पर आयोजित किया जा सकता है। इसमें किसी पूर्ण घोषित या प्रतियोगिता स्थल पर ही घोषित विषय पर प्रतियोगी को पक्ष अथवा विपक्ष में बोलने की स्वतन्त्रता दी जाती है। प्रत्येक वक्ता चाहे वह पक्ष में बोल रहा हो या विपक्ष में, तर्क सहित अपने विचारों की व्याख्या करता है। इससे छात्रों में समस्या समाधान शक्ति का विकास होता है तथा छात्र अपने विचारों को तर्कपूर्ण व व्यविस्थित ढंग से रखना सीख जाते हैं।

**4. कहानी व निबन्ध लेखन**–निबन्ध व कहानी को अपने विचारों की प्रस्तुति का सशक्त माध्यम माना जाता है। इनके माध्यम से बालक अपनी लिखित अभिव्यक्ति विकसित करते हैं, क्योंकि यह देखा गया है कि जिनकी मौखिक अभिव्यक्ति सशक्त नहीं होती उनकी कल्पना व चिन्तन शक्ति उच्च कोटि की होती है। अत: किसी भी विषय पर निबन्ध व कहानी लेखन प्रतियोगिता का आयोजन कराया जा सकता है।

**5. साक्षरता अभियान व समाज सेवा क्लब**–समाज सेवा एक रचनात्मक कार्य है। समाज में फैली बुराइयों को जानना तथा उन्हें दूर करने का प्रयास करना भी एक समाज सेवा है। निरक्षरों को साक्षर बनाने हेतु अभियान चलाना चाहिए तथा जहाँ भी कच्ची बस्तियों या गाँवों में निरक्षर लोग हैं उन्हें साक्षर बनाने का प्रयास भी करना चाहिए साथ ही समाज



सेवा क्लब की स्थापना की जा सकती है तथा किसी भी प्राकृतिक आपदा, जैसे-बाढ़ग्रस्त क्षेत्र में, अकालग्रस्त क्षेत्र में, भूकम्प पीड़ित क्षेत्र आदि में इन क्लबों के माध्यम से पीड़ितों की सहायता की जा सकती है इससे बालकों में परोपकार व नि: स्वार्थ सेवा का बाव जागृत होगा।

**6. सहकारी समिति व विद्यार्थी बैंक**–विद्यार्थियों को कुशल अध्यापकों के मार्गदर्शन में कुछ व्यावसायिक कार्य, जैसे-सहकारी समिति व विद्यार्थी बैंक चलाने का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जा सकता है। सहकारी समिति के माध्यम से बालकों को उचित मूल्य पर पुस्तकें व स्टेशनरी आदि उपलब्ध कराई जा सकती है। बैंक के माध्यम से छात्र बैंकिंग का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करके बचत करना सीखते हैं। इन क्रियाओं से बालकों में आपसी सहयोग व उत्तरदायित्व की भावना का विकास किया जा सकता है।

**7. एन.एस.एस. व श्रमदान**–एन.एस.एस. राष्ट्रीय स्तर की एक सामाजिक संस्था है जो समाज सेवा का कार्य करती है। इसके माध्यम से समाज सेवा द्वारा सफाई, अछूतोद्धार, स्वास्थ्य रक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, स्त्रियों विशेषत: ग्रामीण व अशिक्षित स्त्रियों को विभिन्न हस्त कार्यों में दक्ष करना आदि कार्य किए जा सकते हैं। अंग्रेजों द्वारा भारतीयों के मन में श्रमदान के प्रति जो नकारात्मक भावना भर दी गई थी उसे दूर करने हेतु बालकों द्वारा समय-समय पर श्रमदान कराना चाहिए। इसमें विद्यालय प्रांगण की सफाई, गाँव में सड़क कार्य में सहायता, गड्ढों की सफाई आदि कार्य कराये जा सकते हैं, इससे बालक के मन में श्रम के प्रति निष्ठा की भावना पैदा होती है।

**8. नाटक, नृत्य नाटिका**–नाटक में अभिनय व संवाद होता है जबकि नृत्य नाटिका में संवाद के साथ गीतों का भी समावेश रहता है। बालकों की इससे लज्जाशील प्रवृत्ति दूर होती है तथा वे अपनी कला का उचित प्रदर्शन कर पाते हैं, साथ ही विभिन्न नाटकों के माध्यम से उन्हें अलग-अलग संस्कृतियों का ज्ञान दिया जा सकता है।

**9. विचित्र वेशभूषा**–विचित्र वेशभूषा का अर्थ है कि सामान्य से अलग हटकर कोई भी वेश धारण करना, जो विचित्र या पृथक् नजर आये। इसके अन्तर्गत प्रतियोगी भिन्न-भिन्न वेशभूषा धारण कर या वैसी ही वेशभूषा से उस पात्र की भूमिका का निर्वाह करते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य उस पात्र विशेष की विशेषता को प्रदर्शित करना होता है।

**10. बालसभा**–प्रत्येक विद्यालय में हर शनिवार को बालसभा का आयोजन किया जाता है। बालसभा में बालक अपनी आन्तरिक रुचियों को जागृत कर उनका प्रदर्शन करता है। बालक को बालसभा के माध्यम से आत्माभिव्यक्ति के अवसर मिलते हैं तथा बालक भी अपनी रुचियों का विकास करता है।

**11. शैक्षिक भ्रमण**–बालकों के ज्ञान को बहुमुखी बनाने तथा व्यावहारिक अनुभव प्रदान करने के लिए छोटी-छोटी यात्राएँ आयोजित की जा सकती हैं। शैक्षिक भ्रमण हेतु ऐतिहासिक स्थलों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, शैक्षिक संस्थाओं को चुन सकते हैं। शैक्षिक भ्रमण से बालकों को प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा स्थायी ज्ञानार्जन में सहायता मिलती है।

**12. खेल**–विद्यालयों में आवश्यकतानुसार खेलों की व्यवस्था आवश्यक है। इससे शारीरिक अंगों को परिपक्वता प्राप्त होती है, शरीर बलिष्ठ बनता है तथा मनोरंजन भी होता है। बालक में साहस, आत्मनियन्त्रण, सामूहिकता, नेतृत्व आदि भावनाओं का विकास होता है। अत: विद्यालय में सुविधानुसार आउटडोर व इनडोर खेलों का आयोजन कराया जा सकता है।

**13. एन.सी.सी. व बालचर**–छात्रों में एकता और अनुशासन के लक्ष्य को ध्यान में रखकर एन.सी.सी. की स्थापना की गई है। अत: प्रत्येक विद्यालय को आवश्यकतानुसार इसका लाभ उठाना चाहिए। इसके द्वारा भावी नागरिकों का निर्माण किया जाता है। बालचर की स्थापना का मुख्य उद्देश्य चरित्र निर्माण व भाईचारा सिखाना है। इसके द्वारा बालकों में शारीरिक श्रम, समाज सेवा, उत्तरदायित्व, सतर्कता, सद्नागरिकता जैसे गुणों का विकास किया जाता है।

**14. योगासन**–योग शरीर एवं मन को स्वस्थ तथा प्रसन्न रखने की एक महत्त्वपूर्ण विधि है। इसके करने से शरीर स्वस्थ व निरोग रहता है तथा कार्य करने की अतिरिक्त शक्ति प्राप्त होती है और कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। बालकों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर ही आसन का चयन करना चाहिए। सभी अंगों के समन्वित विकास हेतु योगासन कार्यक्रम संचालित किया जाना चाहिए।

**15. सामूहिक व्यायाम (P.T.)**–यह खेलकूद की प्रवृत्ति से पृथक् स्थान रखती है। सभी बालक खेलकूद में भाग नहीं ले पाते और ना ही विद्यालय सबके लिए सुविधाएँ उपलब्ध करा पाता है। ऐसे में कक्षागत प्रवृत्ति के रूप में पी.टी. की व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे सभी बालकों को शारीरिक विकास के समान अवसर मिल सकें। विभिन्न उत्सवों के अवसर पर प्रदर्शन भी आयोजित किए जा सकते हैं।

**16. विद्यालय पत्रिका**–विद्यालय स्तर पर एक पत्रिका का प्रकाशन किया जाना चाहिए। इसके प्रकाशन में अध्यापक व छात्र दोनों को ही सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा अध्यापक की अध्यक्षता में एक सम्पादक मण्डल बनाकर छात्रों के सहयोग से कार्य को पूर्ण करना चाहिए। छात्रों को लेख लिखने हेतु अधिक से अधिक प्रेरित किया जाना चाहिए। इससे छात्रों की अभिव्यक्ति क्षमता बढ़ती है तथा ज्ञानवृद्धि सामग्री का संग्रह भी होता है।

**17. प्रश्नोत्तरी**–यह किसी भी विषयवस्तु की जानकारी देने का सबसे सशक्त माध्यम है। इसके माध्यम से खेल-खेल में बालक जानकारी भी प्राप्त कर लेते हैं तथा उनकी विषयगत तैयारी भी हो जाती है। यह क्रिया कम समय में, कम खर्च में विषय की पूर्ण जानकारी प्रदान करती है। समूह बनाकर कार्य करने से समूह भावना को विकसित किया जाता है।

**18. प्रिय व्यापार**–उन क्रियाकलापों को कहते हैं जिन्हें अवकाश के समय के उपयोग हेतु छात्र किया करते हैं। इसमें छात्र समय के सदुपयोग के साथ सृजनात्मक कार्य भी कर सकते हैं जो कभी-कभी जीविकोपार्जन में भी बदल जाते हैं। जैसे–डाक टिकट



संग्रह, विभिन्न प्रकार के सिक्कों का संग्रह, कार्टून या चित्र आदि का संग्रह, रेडियो/टी.वी. की मरम्मत, फोटोग्राफी, चॉक बनाना, स्याही बनाना, साबुन बनाना आदि।

**19. पिकनिक व वन विहार**–इसका आयोजन मुख्यत: मनोरंजन हेतु किया जाता है। इसमें किसी भी प्राकृतिक स्थल को चुन लिया जाता है जो प्रात: से लेकर सायं तक का कार्यक्रम होता है। इसमें बालक स्वयं सीखने को प्रेरित होते हैं तथा उनमें वातावरण को जानकर निरीक्षण शक्ति का विकास होता है।

अत: पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का आयोजन अध्यापक, समन्वयक, प्रधानाध्यापक तथा छात्रों द्वारा समन्वित रूप से किया जाना चाहिए तभी इनका आयोजन सफल हो सकता है।

## पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का महत्त्व

## (Importance of Co-curricular Activities)

पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के महत्त्व को निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट किया जा सकता है–

**1. अवकाश के समय का सदुपयोग करने में सहायक**–पाठ्य-सहगामी क्रियाओं से बालक अपनी व्यक्तिगत रुचियों को विकसित कर लेता है तथा इनका उपयोग वह अवकाश के क्षणों में करता है।

**2. मानसिक स्वास्थ्य का विकास करने में सहायक**–पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ छात्रों की भावनाओं के उदात्तीकरण में सहायता देती हैं जिससे बालक के मानसिक स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। वास्तव में अच्छी क्रियाएँ अच्छे मानसिक स्वास्थ्य का सशक्त माध्यम हैं।

**3. शैक्षणिक विकास करने में सहायक**–इन क्रियाओं के अन्तर्गत कुछ क्रियाएँ ऐसी भी होती हैं जो शैक्षिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होती हैं, जैसे–वाद-विवाद, भाषण, निबन्ध आदि। इसके द्वारा छात्र के भाषा ज्ञान में अभिवृद्धि होती है।

**4. मनोरंजन की दृष्टि से सहायक**–पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ बालकों की रुचियों के अनुकूल संचालित की जाती हैं अत: इनके द्वारा छात्रों का मनोरंजन होता है। इसमें अनुशासन होते हुए भी कक्षा-कक्ष के समान डर नहीं होता तथा कक्षा की थकान को मिटाकर ये प्रसन्नता व ताजगी प्रदान करती है।

**5. सौन्दर्यात्मक विकास करने में सहायक**–शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य बालकों में सौन्दर्यात्मक मूल्यों का विकास करना है। पाठ्य-सहगामी क्रियाओं द्वारा बालकों में सौन्दर्यानुभूति का विकास किया जाता है। सौन्दर्यात्मक रुचियों का विकास छात्रों को व्यवस्था बनाये रखने को प्रेरित करता है और छात्रों के व्यक्तित्व पर इसका प्रभाव सकारात्मक पड़ता है।

**6. व्यक्तित्व का सर्वांगीण एवं सन्तुलित विकास**–पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ बालक का सर्वांगीण विकास करने में सहायक होती हैं। चूँकि शिक्षा बालक के व्यक्तित्व का

सर्वांगीण विकास करने में सहायक है अत: बालक का पूर्ण विकास करने हेतु इन क्रियाओं की भी आवश्यकता होती है जिससे बालक का सांवेगिक, नैतिक, सामाजिक व बौद्धिक विकास हो सके।

**7. मूल प्रवृत्तियों के शोधन में सहायक**—प्रत्येक बालक कुछ मूल प्रवृत्तियों के साथ जन्म लेता है और जैसे-जैसे बालक का विकास होता जाता है, ये मूल प्रवृत्तियाँ भी विकसित होती जाती हैं। यदि इन मूल प्रवृत्तियों को सही स्थान पर काम में लिया जाए तो ये लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं अन्यथा ये प्राकृतिक रूप से समाज के लिए हानिकारक हो सकती हैं। अत: इन मूल प्रवृत्तियों का शोधन पाठ्य-सहगामी क्रियाओं से आसानी से किया जा सकता है।

**8. सैद्धान्तिक के साथ व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने में सहायक**—जिस ज्ञान को हम छात्रों को पुस्तकों के माध्यम से प्रदान करते हैं, उसका व्यावहारिक रूप उन्हें इन क्रियाओं के माध्यम से प्राप्त हो जाता है। भ्रमण, पिकनिक, समाज, व्यावहारिक सेवा शिविर आदि के माध्यम से बालक को व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है।

**9. अनुशासन बनाए रखने में सहायक**—इन क्रियाओं के माध्यम से अनुशासनहीनता की समस्या को समाप्त किया जा सकता है। बालकों को यदि रचनात्मक कार्यों में लगा दिया जाएगा तो वे स्वत: ही अनुशासन में रहेंगे। मनोवैज्ञानिकों का यह मानना है कि बालकों में कुछ अतिशय शक्ति होती है और यदि इस अतिशय शक्ति को सृजनात्मक कार्यों में लगा दिया जाए तो बालक स्वत: ही अनुशासनहीनता नहीं कर पायेगा।

**10. नैतिक गुणों का विकास करने में सहायक**—इन क्रियाओं द्वारा बालकों से सहयोग, धैर्य, सहानुभूति, आज्ञापालन, सत्यता आदि नैतिक गुणों का विकास सहज रूप में किया जा सकता है। ये गुण बालक के व्यक्तित्व का विकास कर उनमें जीवन मूल्यों का विकास करते हैं।

**11. प्रजातान्त्रिक गुणों का विकास करने में सहायक**—माध्यमिक स्तर का शिक्षण बालक का सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस समय अध्यापक उसमें सुनागरिकता के गुणों का विकास करता है। ये गुण बालक में इन क्रियाओं के माध्यम से विकसित किए जा सकते हैं। नेतृत्व, दलीय भिन्नता, उत्तरदायित्व की भावना आदि गुणों से भावी नागरिक बनने के सभी गुणों का विकास हो सकता है।

## अर्थशास्त्र क्लब का अर्थ

## (Meaning of Economics Club)

अर्थशास्त्र क्लब एक छात्र संगठन है जिसका उद्देश्य अर्थशास्त्र के ज्ञान को बढ़ावा देना, कक्षाओं से परे अर्थशास्त्र में रुचि को प्रोत्साहित करना और छात्रों को आर्थिक मुद्दों पर चर्चा करने के लिए मंच तैयार करना है। अर्थशास्त्र क्लब कई गतिविधियों, घटनाओं और परियोजनाओं के माध्यम से वर्तमान आर्थिक मुद्दों से जुड़ा रहता है। अर्थशास्त्र क्लब,



अर्थशास्त्रीय विषयों से संबंधित सम्मोहक फिल्मों का आयोजन करता है और किसी समाचार पत्रिका को क्लब के सदस्यों के लिए प्रतिनिधित्व करता है जो आर्थिक मुद्दों से संबंधित लेख प्रस्तुत करने के उत्सुक हैं।

अर्थशास्त्र क्लब का उद्देश्य छात्रों को आर्थिक और व्यावसायिक मुद्दों की अपनी समझ को आगे बढ़ाने और आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करना है और वे आर्थिक तौर पर दुनिया से कैसे संबंधित हैं। इस लक्ष्य को बहस और सार्वजनिक कार्यक्रमों के माध्यम से पूरा किया जाता है। अर्थशास्त्र क्लब देश की बड़ी कंपनियों और छात्रों के बीच एक सामाजिक वातावरण है।

## अर्थशास्त्र क्लब के उद्देश्य

## (Objectives of Economics Club)

1. अर्थशास्त्र विभाग में छात्रों और अध्यापकों के बीच के रिश्ते को मजबूत करना।

2. अर्थशास्त्र क्लब विद्यालय के भीतर और बाहर के संबंधित अधिकारियों के साथ सहयोग और आर्थिक ज्ञान के आदान-प्रदान को बढ़ावा देना चाहता है।

3. अर्थशास्त्र विभाग में छात्रों के बीच आपसी घनिष्ठ संबंधों का निर्माण तांकि वे आपस में चर्चा करके हर आर्थिक विषय की बारीकी को समझ सकें।

4. विद्यालय में शिक्षा प्राप्ति के दौरान अर्थशास्त्र विभाग में नए छात्रों को मार्गदर्शन प्रदान करना और उनके सवालों का जवाब देना और उनकी समस्याओं का समाधान करना और उन्हें महत्वपूर्ण नियमों, कानूनों और विनियमों को प्रभावी तरीके से समझाना।

5. अर्थशास्त्र विभाग को कैसे विकसित किया जाए, इसके लिए सभी छात्रों के सुझाव और विचार प्राप्त करना और उत्तम विचारों को लागू करना।

6. विश्वविद्यालय की गतिविधियों और सेमिनारों में देश की आर्थिक समस्याओं पर चर्चा करना और उनका हल ढूंढना।

7. छात्रों को अध्ययन के सही तरीके से अधिकतम अंक प्राप्त करने के दौरान आने वाली समस्याओं का सामना करने में उनकी मदद करना।

8. भविष्य की अर्थव्यवस्थाओं पर प्रकाश डालना और युवाओं की आर्थिक ज्ञान की क्षमताओं का विस्तार करने के लिए अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में विशेषज्ञों से संपर्क स्थापित करना।

9. अर्थशास्त्रियों और अर्थव्यवस्था में रुचि रखने वाले छात्रों के बीच इंटरनेट पर सम्बन्ध विकसित करवाना।

10. अर्थशास्त्र विभाग के अध्यापकों और छात्रों के बीच इंटरनेट पर सम्बन्ध स्थापित करना जिससे कि अध्यापक छात्रों के प्रश्नों के उत्तर देने और उनकी समस्याओं को सुलझाने में इंटरनेट पर ही उनकी मदद कर सकें।

## अर्थशास्त्र क्लब का महत्व
## (Importance of Economics Club)

- अर्थशास्त्र के महत्व और आधुनिक दुनिया में इसकी भूमिका के बारे में सदस्यों को सूचित करना।
- छात्रों को कक्षा के बाहर अर्थशास्त्र समझाने के लिए सहपाठियों और विशेषज्ञों से बातचीत करने के लिए अवसर प्रदान करना।
- अर्थशास्त्र उन्मुख गतिविधियों में भाग लेने के लिए छात्रों को अवसर प्रदान करना।
- पाठ्यपुस्तक के बाहर और असली दुनिया के अभ्यास में वाणिज्य और व्यापार के अंदरूनी कामकाज की गहरी समझ को प्रोत्साहित करना।
- पारस्परिक आर्थिक संबंधों, सहिष्णुता और व्यापार को बढ़ावा देना।
- अर्थशास्त्र से संबंधित व्यावसायों में प्रवेश के लिए छात्र की इच्छा में सुधार करना।
- एक आत्म-प्रेरित शिक्षण विकसित करने की इच्छा के लिए छात्रों को आंतरिक पुरस्कार प्रदान करना।

## अर्थशास्त्र क्लब का संगठन
## (Organization of Economics Club)

अर्थशास्त्र क्लब की कार्यकारी समिति में निम्नलिखित अधिकारियों को शामिल किया जाएगा–

1. अध्यक्ष 2. उपाध्यक्ष
3. सचिव 4. कोषाध्यक्ष
5. कॉलेज के अर्थशास्त्र विभाग के मुखिया और एक सलाहकार
6. छात्र प्रतिनिधि

**चुनाव**–अर्थशास्त्र क्लब के अधिकारियों के लिए चुनाव हर सेमेस्टर में आयोजित किया जाएगा।

**अधिकारियों के कर्त्तव्य**–

**1. अध्यक्ष**–अर्थशास्त्र क्लब की सभा बुलाए और सभा की अध्यक्षता करें। अध्यक्ष क्लब की भलाई के लिए उचित समय पर कोई असाधारण निर्णय करने का अधिकार रखता है।

**2. उपाध्यक्ष**–उपाध्यक्ष क्लब कर्त्तव्यों को अधिक कुशलतापूर्वक निभाने में अध्यक्ष की सहायता करें।

**3. सचिव**–अर्थशास्त्र क्लब की बैठकों का रिकॉर्ड और रखरखाव करें और कार्यवाही की प्रतियां प्रिंट में या सभा के सदस्यों को ई-मेल के माध्यम से भेजे। अर्थशास्त्र क्लब पत्राचार तैयार करें और जारी करें। अध्यक्ष को क्लब कर्त्तव्यों को अधिक कुशलतापूर्वक



निभाने में सहायता करें। सभी सदस्यों की एक मौजूदा ई-मेल सूची बनाए रखें। पूरे कैंपस में अन्य लोगों के साथ चर्चा करके उन्हें अर्थशास्त्र क्लब में सदस्यता लेने को प्रोत्साहित करें। क्लब की गतिविधियों की रिपोर्ट करें।

**4. कोषाध्यक्ष**–अर्थशास्त्र क्लब के वित्तीय रिकॉर्ड रखें। अर्थशास्त्र क्लब में कार्यकारी समिति द्वारा अनुमोदित वार्षिक बजट प्रस्तुत करें। अध्यक्ष को क्लब कर्त्तव्यों को अधिक कुशलतापूर्वक निभाने में सहायता करें।

**5. कॉलेज के अर्थशास्त्र विभाग के मुखिया और एक सलाहकार**–अर्थशास्त्र क्लब को और अधिक कुशल बनाने के लिए विभिन्न तरीकों पर सदस्यों को सहायता और सलाह दें। सभी क्लब बैठकों और सभाओं में उपस्थित रहें। सीखने के अनुभव को प्रत्यक्ष करें।

**बैठकों का आयोजन**–नियमित बैठकों का आयोजन एक महीने में कम से कम एक बार किया जाएगा। बैठकें सभी छात्रों के लिए खुली होंगी, लेकिन गैर-सदस्य केवल अध्यक्ष की अनुमति से चर्चा में प्रवेश करेगें। अगली मीटिंग की तारीख प्रत्येक बैठक में घोषित की जाएगी।

## अभ्यास के प्रश्न
## (Study Questions)

1. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का अर्थ और परिभाषाओं का वर्णन करें। इन पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के उद्देश्यों की भी व्याख्या करें।
   (Describe the meaning and definitions of Co-curricular activities. Also explain the purpose of these Co-curricular activities.)
2. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के संगठन के सिद्धांतों का वर्णन करें। पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के प्रकारों का भी वर्णन करें।
   (Describe the principles of organization of Co-curricular activities. Also describe the types of Co-curricular activities.)
3. कुछ महत्वपूर्ण पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का वर्णन करें।
   (Describe some important Co-curricular activities.)
4. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के महत्त्व का वर्णन करें।
   (Describe the importance of Co-curricular activities.)
5. अर्थशास्त्र क्लब के अर्थ और उद्देश्यों का वर्णन करें।
   (Describe the meaning and objectives of Economics Club.)
6. अर्थशास्त्र क्लब के महत्त्व और संगठन पर प्रकाश डालें।
   (Highlight on the Importance and Organization of Economics Club.)

* * *

# 3
CHAPTER

# अर्थशास्त्र में मूल्यांकन का अर्थ, महत्त्व और प्रकार
## (Meaning, Importance and Types of Evaluation in Economics)

परीक्षा प्रणाली किसी न किसी रूप में प्राचीन काल से ही चली आ रही है। आरम्भ में परीक्षा का स्वरूप केवल मौखिक ही था। व्यक्ति की योग्यता की जांच मौखिक रूप से प्रश्न करके की जाती थी। प्राचीन काल में श्रेष्ठता निर्धारित करने के लिए विद्वानों में परस्पर शास्त्रार्थ हुआ करते थे। भारत की भान्ति यूरोप में शास्त्रार्थ प्रणाली (Discussion Method) का प्रचलन था। यूरोप में भारत से पहले लिखित परीक्षा का प्रचलन हुआ था। इंग्लैंड में 1902 ई० में केम्ब्रिज में लिखित परीक्षा आरम्भ हुई थी और अमेरिका में 1845 ई. में बोस्टन में लिखित परीक्षा आरम्भ हुई थी। परन्तु भारत में लिखित परीक्षा कब से प्रारम्भ हुई इसके बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। इतना अवश्य कहा जा सकता जा सकता है परीक्षा का जो वर्तमान रूप हम देख रहे हैं यह ब्रिटिश काल में प्रारम्भ हुआ था।

### मूल्यांकन का अर्थ
### (Meaning of Evaluation)

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र की प्रगति एवं सीमा के ज्ञान के हेतु मूल्यांकन की आवश्यकता है। इसके अभाव में हमारे समस्त कार्यों का कोई महत्त्व नहीं होता। मूल्यांकन के द्वारा हमारी सफलताओं, असफलताओं का निर्णय, कठिनाइयों आदि का निर्धारण किया जाता है। शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन का बहुत अधिक महत्त्व है। मूल्यांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक, शिक्षक, शैक्षणिक क्रियाओं आदि की पारस्परिक निर्भरता एवं उनकी उपयोगिता की जांच की जाती है। **डायरेक्टर ऑफ एक्सटेन्सन प्रोग्राम फॉर सैकण्डरी एजूकेशन** (Directorate of Extension Programmes for Secondary Education) के शब्दों में, "मूल्यांकन का अर्थ केवल माप से नहीं है, क्योंकि माप केवल अंकों में मानी जाती है। इसका अर्थ व्यापक एवं विकसित रूप में लिखा जाता है जो कि एक निरन्तर चलने वाल प्रक्रिया है। यह शिक्षा के समस्त कार्य से अविच्छिन्न रूप में सम्बन्धित है और इसका ध्येय





केवल बालक की निष्पत्ति की माप न करके निर्देश की उन्नति करना है।" (Evaluation signifies a wider,more comprehensive and continuous process of assessing student progress. It is integrated with the whole task of education and its purpose is to improval Instruction and not merely to measure its achievement. In its highest sense evaluation brings out the factors that are inherent in student growth such as proper attitudes and habits, manipulative skills, appreciations and understanding.)

**ई. बी. वैस्ले** (E.B. Wesley) के अनुसार, "मूल्यांकन एक समावेशित धारणा है जो इच्छित परिणामों के गुण, महत्त्व तथा प्रभावशीलता का निर्धारण करने के लिए समस्त प्रकार के प्रयासों एवं साधनों की ओर संकेत करती है। यह वस्तुनिष्ठ प्रमाण तथा आत्मनिष्ठ परीक्षण का सम्मिश्रण है। यह सम्पूर्ण तथा अन्तिम अनुमान है। यह नीतियों के रूप में परिवर्तनों एवं भावी कार्य के लिए महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है।" (Evaluation is an inclusive concept which indicates all kinds of efforts and all kinds of means to ascertain the quality, value and effectiveness of desered outcomes. It is compound of objective evidence and subjective observation. It is the total and final estimate. It is valuable and indispensable to modifications of policies and further action.)

**टॉगरसन तथा एडम्स** (Torgerson and Adams) का मत है, "मूल्यांकन करना किसी वस्तु या प्रक्रिया के महत्त्व को निर्धारित करना है। इस प्रकार शैक्षिक मूल्यांकन शिक्षण-प्रक्रिया या सीखने युक्त अनुभव के औचित्य की मात्रा पर निर्णय प्रदान करना है।" (To evaluate is to ascertain the value of some process or thing. Thus educational evaluation is the passing judgement on the degree of worthwhileness of some teaching process or learning experience.)

**जे. डबल्यू. राइटस्टोन** (J.W.Wrightstone) के शब्दों में, "मूल्यांकन सापेक्षित रूप से एक नवीन पद है। जिसको परम्परागत जांचों एवं परीक्षाओं की अपेक्षा मानव की अधिक व्यापक धारणा को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त किया गया है.... मापन में विषय वस्तु या विशेष कौशलों एवं योग्यताओं की उपलब्धि के एकाकी पक्षों पर अधिक बल दिया जाता है जबकि मूल्यांकन में व्यक्तित्व सम्बन्धी परिवर्तनों एवं शैक्षिक कार्यक्रम के व्यापक उद्देश्य पर बल दिया जाता है।" (Evaluation is a relatively new technical introduced to designate a more comprehensive concept of measurement than is applied in conventional tests and examinations... The emphasis in measurement is upon single aspect of subject-matter achievement or specific skill and abilities. The emphasis in evaluation is upon broad personality change and major objectives of an educational programme. This includes not only sub-

ject matter achievement but also attitudes, interests, ideals, ways of thinking, work-habits and personal and social adaptability.)

मूल्यांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा शिक्षण के मूल्यों तथा उद्देश्यों के मध्य तुलना की जाती है। मूल्यांकन वह पद्धति है जिसके द्वारा हम पूर्व निर्धारित उद्देश्यों, तथा लक्ष्यों की प्राप्ति की मात्रा को निर्धारित करते हैं। मूल्यांकन के द्वारा अर्जित मूल्यों की जांच पूर्व निर्धारित उद्देश्यों तथा प्राप्त मूल्यों के अभाव में वास्तविक मूल्यांकन नहीं हो सकता। ऐसा मूल्यांकन निर्धारित उद्देश्यों तथा प्राप्त मूल्यों से स्थापित नहीं किया जाता। शिक्षण के द्वारा पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप मूल्यों की प्राप्ति होती है। इन अर्जित मूल्यों को ज्ञात करने के लिए मूल्यांकन किया जाता है। इसलिए उद्देश्य तथा शिक्षण पद्धतियां मूल्यांकन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखती हैं। इस त्रिकोणात्मक सम्बन्धबद्धता को इस त्रिकोण द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं।

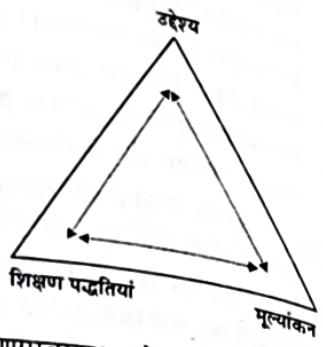


## मूल्यांकन का महत्त्व
## (Importance of Evaluation)

शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है। बालक का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव होता है जब बालक सीखे हुए ज्ञान को व्यावहारिक रूप से जीवन में प्रयोग करे। वर्तमान समय में जो परीक्षाएं ली जाती हैं वे केवल उनके सीखे हुए नहीं पता नहीं चलता कि बच्चा उस ज्ञान का सदुपयोग कर पाता है या नहीं। परन्तु ये परीक्षाएं मूल्यांकन का ही एक अंग हैं।

मूल्यांकन ही वह कसौटी है जिससे यह पता चलता है कि शिक्षक ने शिक्षण सफलतापूर्वक किया है और छात्र-छात्राओं ने शिक्षक द्वारा पढ़ाई हुई विषय-वस्तु को अच्छी तरह ग्रहण किया है। इन बातों की जांच करने के लिए मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्त्व हैं। निम्नलिखित बातों को जानने के लिए मूल्यांकन आवश्यक हैं-

**1. मूल्यांकन द्वारा शिक्षण विधियों में सुधार (Reform in Teaching Method)**—अध्यापक अनेक शिक्षण विधियों की सहायता से शिक्षण करता है परन्तु कौन सी शिक्षण विधि उपयोगी है-इसका ज्ञान तभी होता है जब उसे परीक्षा की कसौटी पर कसा जाता है। परीक्षा के द्वारा अध्यापक को अपनी कमियों का पता चलता है इस प्रकार परीक्षण एवं मूल्यांकन अध्यापक को शिक्षण विधि में सुधार करने के लिए प्रेरित करता है।

**2. पाठ्यक्रम में आवश्यक परिवर्तन में सहायक (Helps in Necessary change in Curriculum)**—पाठ्यक्रम के द्वारा ही शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जाता है। परीक्षण एवं मूल्यांकन द्वारा पता चलता है कि पाठ्यक्रम शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में



कितना सफल है। मूल्यांकन के द्वारा ही यह निर्णय किया जाता है कि पाठ्यक्रम में कितना उद्देश्यपूर्ण है और कितना व्यर्थ है, कितने पाठ्यक्रम में सुधार की आवश्यकता है।

**3. विद्यार्थियों की उपलब्धियों को जांचने में सहायक (Helps in evaluating the achievement of the Students)**—स्कूलों में प्रत्येक वर्ष वार्षिक परीक्षा का आयोजन करके परीक्षण एवं मूल्यांकन से यह निर्णय किया जाता है कि कौन-सा विद्यार्थी किस स्तर के योग्य है। उत्तीर्ण विद्यार्थियों में से कौन-सा विद्यार्थी दूसरों से अधिक योग्य है। अत: विद्यार्थियों की उपलब्धियों की जांच करने के लिए मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्त्व है।

**4. विद्यार्थियों की प्रगति में सहायक (Helps in Progress of the Students)**—मूल्यांकन के द्वारा विद्यार्थियों को अपनी कमजोरियों का पता चलता है। कमजोरियों का पता चलने पर विद्यार्थी उन्हें दूर करने का प्रयास करते हैं और अध्यापक भी विद्यार्थियों की कमियों व कमजोरियों को दूर करके उन्हें प्रगति के मार्ग पर अग्रसर करता है। इस प्रकार मूल्यांकन विद्यार्थियों की प्रगति में सहायक होता है।

**5. विद्यार्थियों की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने में सहायक (Helps in paying Individual Attention)**—सभी विद्यार्थी एक ही स्तर के नहीं होते कुछ तीव्र बुद्धि के, कुछ औसत और कुछ कमजोर होते हैं। विद्यार्थियों की रुचियां, योग्यताएं एवं क्षमताएं भी भिन्न-भिन्न होती हैं। अत: सभी विद्यार्थियों का एक ही प्रकार से शिक्षण नहीं किया जा सकता। प्रत्येक विद्यार्थी की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना आवश्यक है। व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने के लिए यह जानना आवश्यक होता है कि कौन-सा विद्यार्थी किस स्तर का है, किस विद्यार्थी में कौन सी योग्यता एवं कमजोरी है ? यह जानकारी परीक्षण एवं मूल्यांकन के द्वारा ही अध्यापक को पता चलती है और तभी वह व्यक्तिगत रूप से विद्यार्थियों पर ध्यान दे पाता है।

**6. विद्यार्थियों के लिए प्रेरक (It motivates Students)**—जैसे ही परीक्षाएं निकट आती हैं विद्यार्थी पढ़ने में रुचि लेने लगते हैं। कक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए वे परिश्रम करते हैं। इस प्रकार मूल्यांकन एवं परीक्षा विद्यार्थियों में पढ़ने की रुचि उत्पन्न करती है।

**7. विद्यार्थियों को योग्यतानुसार विषय चुनने में सहायक (Helps in selection of the subjects according to Ability)**—आजकल विभिन्न प्रकार के कोर्स चल रहे हैं पर विद्यार्थी अपनी योग्यता एवं रुचि के अनुसार विषय का चयन करता है। इसी के आधार पर यह निश्चय किया जा सकता है कि वे जीवन में कौन-सा व्यवसाय कुशलतापूर्वक कर सकते हैं, परन्तु विद्यार्थियों को उनकी योग्यताओं एवं रुचियों का ज्ञान कैसे हो ? इसके लिए परीक्षण एवं मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। मैट्रिक की परीक्षा के परिणाम के बाद ही विद्यार्थी तय करता है कि उसे कौन-सा कोर्स लेना चाहिए। जिस विद्यार्थी के विज्ञान में

अच्छे अंक होते हैं वह विज्ञान के विषय लेता है। इस प्रकार मूल्यांकन एवं परीक्षण ही विद्यार्थी को विषय-चुनने में सहायक होता है।

**8. शिक्षा उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक (Helps in obtaining the objectives of Education)**–शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यवार्थियों का सर्वोतन्मुख विकास करना है। इनके अतिरिक्त प्रत्येक विषय के कुछ विशिष्ट उद्देश्य होते हैं जो मुख्य उद्देश्य की प्रगति में मदद करते हैं। अध्यापक एवं उद्देश्यों को ध्यान में रख कर ही शिक्षण करता है। परीक्षण एवं मूल्यांकन से ही पता चलता है कि शिक्षक शिक्षण द्वारा कहां तक उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल हुआ है ? अत: परीक्षण एवं मूल्यांकन शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होते हैं।

**9. रिकार्ड रखने में सहायक (Helps in keeping Record)**–विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास के लिए नियमित रिकार्ड रखना आवश्यक होता है। इन नियमित रिकार्डों से विद्यार्थियों के प्रगति पत्र तैयार किये जाते हैं। जिनसे अभिभावकों को अपने बच्चों की प्रगति के बारे में पता चलता है। परीक्षा में हुए मूल्यांकन के आधार पर विद्यार्थियों की प्रगति का रिकार्ड रखा जाता है।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि मूल्यांकन का बहुत महत्त्व है। अर्थशास्त्र शिक्षण में बालक की निष्पत्तियों का ज्ञान करने और लक्ष्यों की प्राप्ति का पता लगाने के लिए परीक्षण एवं मूल्यांकन का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

## अर्थशास्त्र मूल्यांकन की पद्धति
## (Evaluation Devices of Economics)

अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यों का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न पद्धतियों का उपयोग किया जा सकता है। वे पद्धतियां निम्नलिखित हैं–

1. लिखित परीक्षा (Written Examination)
2. मौखिक परीक्षा (Oral Examination)
3. निरीक्षण विधि (Observation Technique)
4. रिकार्ड (Record)

### 1. लिखित परीक्षा
### (Written Examination)

लिखित परीक्षा में बालकों को निश्चित समय में कुछ प्रश्नों के उत्तर लिखने पड़ते हैं। इसमें विद्यार्थियों को कागज, पैन या पैंसिल का प्रयोग करना पड़ता है। लिखित परीक्षा के दो रूप हैं–

1. निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type Test)
2. वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objective Type Test)



**1. निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type Test)**–आजकल शिक्षण संस्थाओं में निबन्धात्मक परीक्षा का प्रयोग व्यापक रूप से होता है। पाठ्यवस्तु में कुछ प्रश्न चुन कर छात्रों को दे दिये जाते हैं, जिनके उत्तर में छात्र निश्चित समय के अन्तर निबन्ध लिखते हैं। निबन्धात्मक परीक्षा द्वारा प्रमुख रूप से छात्रों की स्मरण शक्ति तथा संगठन क्षमता की जांच की जाती है।

#### निबन्धात्मक परीक्षा के गुण
#### (Merits of Essay-Type Test)

निबन्धात्मक परीक्षा पद्धति में बहुत सी कमियां हैं इसलिए आजकल इस पद्धति की आलोचना की जाती है। परन्तु इसमें बहुत सी अच्छाइयां भी हैं। वे निम्नलिखित हैं–

1. निबन्धात्मक परीक्षा के प्रश्न अध्यापक द्वारा सुगमता से तैयार किये जा सकते हैं।

2. निबन्धात्मक प्रश्नों के उत्तर देते समय छात्र स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकता है। निबन्धात्मक परीक्षा के अतिरिक्त विचारों को स्वतन्त्रतापूर्वक अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता अन्य किसी परीक्षा प्रणाली में नहीं होती है।

3. यह पद्धति छात्रों की स्मरणशीलता तथा संगठन शक्ति की जांच करने के लिए बहुत उपयोगी है।

4. निबन्धात्मक परीक्षा से छात्रों को लेखन शक्ति के विकास का अवसर प्राप्त होता है।

5. इसके द्वारा विस्तृत पाठ्यक्रम की परीक्षा सुगमतापूर्वक ले सकते हैं।

6. यह पद्धति छात्रों की भाषा पर अधिकार प्राप्त कराने में सहायता करती है।

#### निबन्धात्मक परीक्षा के दोष
#### (Demerits of Essay-Type Test)

निबन्धात्मक परीक्षा में बहुत-सी कमियां एवं त्रुटियां हैं जिसके कारण इस पद्धति की आलोचना की जाती है। वे दोष निम्नलिखित हैं–

1. निबन्धात्मक परीक्षा छात्रों को बिना समझे ही रटने के लिए बाध्य करती है। छात्र केवल प्रमुख प्रश्नों को रटने का प्रयत्न करते हैं तथा पाठ्य-वस्तु के जो तथ्य महत्त्वपूर्ण नहीं है उन्हें छोड़ देते हैं। अत: रटने की केवल प्रधानता देने के कारण यह परीक्षा प्रणाली पूर्णत: अमनोवैज्ञानिक है।

2. इसमें भाषा तत्त्व प्रधान होता है। जिन छात्रों का भाषा पर अच्छा अधिकार होता है जिसके माध्यम से वह अपने विचारों को प्रभावोत्पादक ढंग से प्रकट कर देते हैं उन्हें अच्छे अंक प्राप्त हो जाते हैं। परन्तु जो छात्र विषय-वस्तु से भली-भान्ति परिचित हैं लेकिन भाषा पर अधिकार न होने के कारण उसे भली प्रकार से अभिव्यक्त नहीं कर पाते, वे अच्छे अंक प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

3. प्रश्नों के उत्तर में लिखे जाने वाले निबन्धों में छात्रों को सही अंक प्रदान करना कठिन है। क्योंकि अंक देते समय परीक्षक स्वयं की रुचि तथा स्वभाव उत्तर लिखने वाले छात्र की अभिव्यक्त करने की शैली तथा उसके लेखादि से प्रभावित होता है।

4. निबन्धात्मक परीक्षा का परिणाम विश्वसनीय नहीं होता क्योंकि परीक्षक निबन्ध के आधार पर जो मूल्यांकन करता है उसमें एकरूपता नहीं होती। एक ही निबन्ध को विभिन्न परीक्षकों द्वारा जांचने पर पृथक्-पृथक् अंक प्रदान किये जाते हैं।

5. इसके द्वारा छात्रों की वास्तविक योग्यता का पता लगाना कठिन होता है क्योंकि छात्र सम्पूर्ण पाठ्य-वस्तु का ज्ञान किये बिना ही कुछ गिने चुने प्रश्नों के आधार पर ही जो परीक्षा में आये होते हैं अच्छे अंक प्राप्त कर सकता है। परन्तु एक छात्र जिसे परीक्षा में आये हुए प्रश्नों को छोड़कर अन्य समस्त विषय-वस्तु का ज्ञान होता है, अनुत्तीर्ण हो जाता है। अत: निबन्धात्मक परीक्षा द्वारा छात्रों की वास्तविक योग्यता की जांच नहीं होती।

6. निबन्धात्मक परीक्षा में संयोग का हाथ होने से छात्रों में आत्मविश्वास की कमी पाई जाती है और वे भाग्यवादी बन जाते हैं।

7. निबन्धात्मक परीक्षा छात्रों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती है। इसमें छात्र वर्ष भर तो पढ़ते नहीं और परीक्षा में 20-25 दिन पूर्व दिन-रात पढ़ते हैं इससे उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

8. यह परीक्षा अवैध है। इसमें यथार्थता की जांच नहीं होती।

9. इन परीक्षाओं में छात्र-छात्राओं का उद्देश्य मात्र परीक्षा में उत्तीर्ण होना ही रह गया है, न कि ज्ञानार्जन करना।

10. इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने के लिए छात्र परीक्षा भवन में अनैतिक तथा अनुचित साधनों को प्रयोग करते हैं जिससे छात्रों में अनुशासनहीनता का जन्म होता है।

### निबन्धात्मक परीक्षा के दोषों को दूर करने के सुझाव
### (Suggestions for removing defects of Essay type Test)

अर्थशास्त्र में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करने के लिए निबन्धात्मक परीक्षा का सर्वथा परित्याग नहीं किया जा सकता क्योंकि निबन्ध के माध्यम से ही हम विभिन्न राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं पर छात्रों की व्यक्तिगत धारणाओं एवं दृष्टिकोणों से परिचित हो सकते हैं। केवल तथ्यों के ज्ञान से ही काम नहीं चलता है अपितु एक सफल सामाजिक प्राणी होने के लिए इन तथ्यों को प्रभावोत्पादक ढंग से स्पष्ट करने की क्षमता भी होनी चाहिए। अत: इस दृष्टि से सामाजिक अध्ययन की परीक्षा में भाषा के महत्त्व को भी पूर्णत: पृथक् नहीं किया जा सकता। अत: निबन्धात्मक परीक्षा के दोषों को दूर कर दिया जाए तो बहुत कुछ यह प्रणाली छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इस प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिए निम्नलिखित सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं-

1. जहां तक सम्भव हो सके निबन्धात्मक परीक्षा से विषय रूपी तथ्य को दूर कर दिया जाये।



2. प्रश्नों के स्वरूप को बदला जाए। प्रश्न ऐसे न हों जो बालकों को रटने के लिए उत्साहित करें। प्रश्न बालकों के समक्ष कोई समस्या उत्पन्न करते हो, जिनका हल बालकों की विचार शक्ति तथा बौद्धिक क्षमता को प्रकट करते हों।

3. बालकों के मूल्यांकन का आधार एकमात्र निबन्धात्मक परीक्षा ही न हो। निबन्धात्मक परीक्षा के साथ अन्य विधि से भी छात्रों की जांच की जाए। एक या दो प्रकारों का उत्तर ही निबन्ध के रूप में लिखा जाए।

4. उत्तर पुस्तक पर छात्रों का नाम नहीं होना चाहिए क्योंकि नाम न होने पर ही परीक्षक का मूल्यांकन निष्पक्ष हो सकता है।

5. प्रश्न ऐसा ही जिसका उत्तर स्पष्ट तथा निश्चित हो, जिसमें कि छात्रों के उत्तर में एकरूपता आ सके।

निबन्धात्मक परीक्षा के दोषों को वस्तुनिष्ठ परीक्षा से कम किया जा सकता है क्योंकि वस्तुनिष्ठ परीक्षा इसकी अपेक्षा विश्वसनीय, वैद्य, मितव्ययी तथा उपयोगी होती है। इसमें अंक प्रदान करने में सरलता रहती है।

**2. वस्तुनिष्ठ जांच (Objectives Type Tests)**—वस्तुनिष्ठ जांच मूल्यांकन की नवीन विधि है। इसमें उन सभी दोषों व कमियों को दूर करने का प्रयत्न किया गया है जिनके कारण लिखित परीक्षा की आलोचना की जाती है। यह लिखित परीक्षा की तुलना में अधिक विस्तृत तथा निश्चित होती है। इसमें भाषा को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता। इस परीक्षा पद्धति में मिलने वाली विभिन्न अच्छाइयों के कारण निरन्तर इसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। इसके द्वारा बालक की अभिरुचि और बुद्धि का मापन किया जाता है। इनके द्वारा अधिकाधिक विषय वस्तु के ज्ञान की जांच हो जाती है। यदि बालक ने किसी प्रश्न का उत्तर ठीक दिया है तो उसे पूर्ण अंक प्राप्त होंगे। इस प्रकार इनके द्वारा अंकन की विविधता को समाप्त कर दिया जाता है। अर्थशास्त्र में इसका उपयोग निबन्धात्मक परीक्षा से अधिक उपयुक्त है।

### वस्तुनिष्ठ परीक्षा के गुण
### (Merits of Objective Tests)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा के निम्नलिखित गुण हैं-

1. वस्तुनिष्ठ जांच से हम छात्रों की विस्तृत जांच कर सकते हैं क्योंकि इसमें प्रश्नों की संख्या केवल दस अथवा पांच तक सीमित नहीं होती अपितु कितने ही प्रश्न रखे जा सकते हैं। उनका विभाजन इस प्रकार किया जाता है। अत: परीक्षा में सफल होने के लिए छात्र को सम्पूर्ण विषय-वस्तु का ज्ञान होना आवश्यक होता है।

2. इस विधि से की जाने वाली जांच अधिक विश्वसनीय होती है क्योंकि लिखित परीक्षा की तरह इसके प्रश्नों का मूल्यांकन करते समय परीक्षक को कोई बाह्य तत्त्व प्रभावित नहीं करता। अत: परीक्षक द्वारा किया जाने वाला मूल्यांकन निष्पक्ष एवं सही होता है।

3. वस्तु रूपी जांच द्वारा छात्रों के वास्तविक ज्ञान का पता लगाना आसान होता है क्योंकि उसके प्रश्न सम्पूर्ण विषय-वस्तु पर आधारित होते हैं। अत: उनके उत्तर से यह स्पष्ट पता चल जाता है कि छात्र को विषय-वस्तु का कितना ज्ञान है।

4. वस्तुनिष्ठ परीक्षा के प्रश्नों के उत्तरों के अंक प्रदान करने में आसानी रहती है क्योंकि प्रश्नों के उत्तर निश्चित होते हैं। कितने ही परीक्षकों द्वारा उन पर अंक प्रदान किए गए सभी अंकों में समानता होगी। साथ ही परीक्षकों को प्रश्न जांचने में अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता।

5. निबन्धात्मक परीक्षा की तरह इसके भाषा का अधिक प्रभाव नहीं होता। अत: जिस छात्र को विषय-वस्तु का ज्ञान पूरा है परन्तु उसका भाषा पर विशेष अधिकार नहीं है उसे भाषा के कारण कोई नुक्सान नहीं होता। इसलिए सामाजिक अध्ययन के विभिन्न तथ्यों की जांच के लिए यह बहुत ही उपयोगी विधि है।

## वस्तुनिष्ठ परीक्षा के दोष
## (Demerits of Objective Tests)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रणाली में कुछ दोष भी हैं जो निम्नलिखित हैं-

1. इस प्रकार के टेस्टों का निर्माण आसानी से सम्भव नहीं है। जब तक अध्यापक को इनके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं है तब तक वह इनको नहीं बना सकता।

2. इस प्रकार की परीक्षा में छात्र बिना सोचे-समझे ही प्रश्नों के उत्तर देते हैं और वह कभी सही भी हो जाते हैं जिससे विद्यार्थी भाग्यवादी बन जाते हैं।

3. इन परीक्षाओं में भाषा को कम महत्त्व दिया जाता है इसलिए छात्रों में विचारों का विकास नहीं किया जा सकता।

## वस्तुनिष्ठ परीक्षा के प्रकार
## (Kinds of Objective Tests)

वस्तुनिष्ठ परीक्षा को दो भागों में बांटा जा सकता है-

**1. मानकीकृत परीक्षण (Standardized Test)**—मानकीकृत परीक्षण विशेषज्ञों द्वारा तैयार किये जाते हैं जो विश्वसनीय एवं उपयोगी होते हैं। इन्हें देने की एक विशेष पद्धति के अतिरिक्त इनकी एक जांच कुंजी भी होती है। मानकीकृत जांच चार प्रकार की होती है-

1. निष्पत्ति परीक्षण (Achievement Test)
2. नैदानिक परीक्षण (Diagnostic Test)
3. बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)
4. अभिरुचि एवं व्यक्तिगत जांच (Apptitude and personality Test)

**2. अध्यापक निर्मित परीक्षण (Non-standardized Test)**—इस प्रकार के परीक्षण अध्यापक द्वारा तैयार किये जाते हैं जो अधिक विश्वसनीय नहीं होते।



## वस्तुनिष्ठ परीक्षा के विभिन्न रूप
## (Various Forms of Objective Test)

वस्तुनिष्ठ जांच प्रश्नों के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं-

**1. स्मरण प्रश्न (Recall Test)**—प्रश्न छात्र की स्मरण शक्ति पर आधारित होते हैं। किसी तथ्य के सम्बन्ध में छात्रों के ज्ञान को जानने के लिए सीधे प्रश्न किए जाते हैं जिसका छात्र स्मरण करके उत्तर देते हैं। उदाहरणार्थ-

1. भारत वर्ष का प्रमुख व्यवसाय क्या है ?
2. भारत में सबसे अधिक गेहूं किस प्रदेश में उत्पन्न किया जाता है ?
3. भारत की जनसंख्या कितनी है ?
4. किस राज्य में सबसे अधिक जनसंख्या है ?

**2. रिक्त स्थानों की पूर्ति के प्रश्न (Completion Test)**—इस प्रकार के प्रश्नों के वाक्यों में कोई शब्द या वाक्यांश छोड़ दिया जाता है जिसे छात्रों को पूरा करना होता है। ये प्रश्न भी स्मरण शक्ति पर आधारित होते हैं। इस प्रकार के प्रश्न छोटी कक्षाओं के लिए अधिक उपयुक्त हैं। जैसे-

1. भारत में सदाबहार वन ... क्षेत्र में पाए जाते हैं।
2. कोलकाता की जनसंख्या ... है।
3. भारत में चाय का उत्पादन ... प्रदेशों में किया जाता है।
4. हरियाणा में पानीपत ... प्रसिद्ध है।

**3. सत्यासत्य पहचानने के प्रश्न (Ture-False Test)**—छात्रों से सही तथा कुछ गलत प्रश्न किए जाते हैं। जिनका उत्तर छात्र 'हां' या 'नहीं' या सही (√) और गलत (×) का चिन्ह लगाकर देते हैं। यदि प्रश्न सही होता है तो हां अथवा (√) सही का चिन्ह तथा गलत प्रश्न पर नहीं या गलत (×) का चिन्ह लगाते हैं। जैसे-

(अ) निम्न बातें सत्य हैं या असत्य ? यदि सत्य हो तो हां और असत्य हो तो नहीं लिख दें-

1. अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। ( )
2. श्रम नाशवान होता है। ( )
3. इच्छाएं सीमित होती हैं। ( )
4. अर्थशास्त्र मनुष्य की सामाजिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। ( )

(ब) निम्न कथन सत्य है असत्य। यदि सत्य है तो कोष्ठक में (√) का और गलत है तो कोष्ठक में (×) का निशान लगा दें।

1. श्रम गतिशील होता है। ( )
2. आगमन रीति में विशिष्ट से सामान्य की ओर ले जाते हैं। ( )

3. काली भूमि में दीर्घकाल तक नमी रहती है। ( )

4. भूमि उत्पादन का सक्रिय उपादान है। ( )

**4. विविध से एक के चुनाव के प्रश्न (Multiple Chocie)**–इन प्रश्नों में कई सम्भावित उत्तर दिए जाते हैं जिनमें से छात्रों को निर्देश के अनुसार सर्वोत्तम अथवा सही उत्तर का चुनाव करना चाहिए। बालकों की तर्क शक्ति के मूल्यांकन के लिए यह अन्य प्रकार के प्रश्नों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है। उदाहरण के लिए–

1. गन्ने की उपज के लिए ...जलवायु की आवश्यकता होती है।

(अ) गर्म जलवायु (ब) शुष्क एवं ठण्डी ज़लवायु

(स) सम जलवायु

2. भिलाई का कारखाना किस प्रदेश में स्थापित किया गया है ?

(अ) उत्तर प्रदेश (ब) राजस्थान

(स) मध्य प्रदेश (द) उड़ीसा

3. हरियाणा में कौन-सा जिला साईकिल निर्माण के लिए प्रसिद्ध है ?

(अ) पानीपत (ब) करनाल

(स) अम्बाला (द) सोनीपत

**5. वर्गीकरण के प्रश्न (Classification Test)**–वर्गीकरण के प्रश्नों द्वारा छात्रों की स्मरण एवं पहचान शक्तियों की जांच की जाती है। इसमें कई शब्द एक ही प्रकार के दिए जाते हैं। परन्तु एक शब्द कुछ भिन्न होता है। अत: उस वर्ग में से भिन्न शब्द को पहचानकर छात्रों को उसे रेखांकित करना होता है। उदाहरण के लिए–

1. लोहा, कोयला, तांबा, फल, सोना।

2. बैंक, डाकघर, सहकारी सीमित, खेत।

प्रश्न 1 में 'फल' शब्द को रेखांकित करना चाहिए क्योंकि वह खनिज पदार्थ नहीं है। इसी प्रकार द्वितीय प्रश्न में 'खेत' के नीचे रेखांकित करेंगे वह उस वर्ग का शब्द नहीं है।

**6. क्रम निर्धारण के प्रश्न (Sequence Test)**–क्रम निर्धारण के प्रश्नों में विभिन्न महत्त्वपूर्ण तथ्यों का स्थान, आकार, प्रकार तथा कालक्रम के अनुसार निर्धारित करना पड़ता है। इस प्रकार के प्रश्न इतिहास की जांच के लिए बहुत उपयोगी है। जैसे–

1. उत्पादन की दृष्टि से निम्न शब्दों को क्रम से लिखिए–

(अ) जड़, (ब) शाखाएं, (स) फल, (द) तना।

2. आवश्यकताओं को क्रम से लिखिए–

(अ) मूलभूत आवश्यकता, (ब) इच्छा, (स) विलासयुक्त आवश्यकता, (द) आरामदेय आवश्यकता।



**7. जोड़ मिलाने वाले प्रश्न (Matching Test)**–जोड़ मिलाने वाले प्रश्नों को दो पंक्तियों में दिए गए असम्बद्ध तथ्यों को पारस्परिक सम्बन्ध के अनुसार मिलाना पड़ता है। जोड़ मिलाने वाले अभ्यास द्वारा विशेषत: कौन, क्या, कब और कहां इत्यादि प्रकार की परिस्थितियां हैं अथवा योग्यताओं को पहचानने और नामकरण की जांच की जाती है। जैसे–

| | |
|---|---|
| 1. फिरोजाबाद | कैंचियां |
| 2. आगरा | साड़ियां |
| 3. बनारस | चूड़ियां |
| 4. मेरठ | कच्चे लोहे की खानें |
| 5. जगाधरी | पेपर मिल |
| 6. रानीगंज | दाल मोठ, पेठा |

### 2. मौखिक जांच
### (Oral Tests)

विभिन्न महान् व्यक्तियों, राजनीतिक, सामाजिक विचार धाराओं एवं विभिन्न सामाजिक समस्याओं तथा जीवन से सम्बन्धित विचार धाराओं एवं विभिन्न सामाजिक समस्याओं तथा जीवन से सम्बन्धित अन्य बातों के प्रति छात्रों के दृष्टिकोण को जानने के लिए मौखिक परीक्षा अधिक उपयुक्त है। विभिन्न समस्याओं से सम्बन्धित छात्रों से मौखिक प्रश्न किए जाते हैं। प्रश्नों के उत्तर से प्रश्नकर्त्ता को छात्रों के दृष्टिकोण तथा विषय-वस्तु का उन्हें कितना ज्ञान है एवं उनमें किन-किन सामाजिक गुणों का समावेश हुआ है आदि बातों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मौखिक परीक्षा द्वारा छात्रों के दृष्टिकोण को भली-भान्ति जानने के लिए प्रश्न ऐसे किये जाते हैं जिनके उत्तर से उनका दृष्टिकोण भली प्रकार व्यक्त होता है। साथ ही परीक्षा स्थल का वातावरण प्रेम तथा सहानुभूति पूर्ण हो। जिसमें छात्र नि: संकोच एवं स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों को प्रकट कर सकें जिसमें कि उसके दृष्टिकोण के सम्बन्ध में सही निर्माण किया जा सके।

### 3. निरीक्षण
### (Observation)

निरीक्षण द्वारा भी छात्रों की रुचि, सामाजिक कुशलताओं, सहयोग सहानुभूति आदि विभिन्न गुणों की जांच की जा सकती है। छात्रों द्वारा की जाने वाली विभिन्न क्रियाओं के निरीक्षण से उनके सम्बन्ध में विविध बातों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। किन-किन कार्यों तथा खेलों में रुचि रखते हैं ? किस प्रकार एक-दूसरे को सहयोग प्रदान करते हैं ? आदि बातों की जांच छात्रों के विभिन्न कार्यों का निरीक्षण करके की जा सकती है।

### 4. रिकार्ड
### (Record)

इससे अभिप्राय बालक के जीवन की किसी विशिष्ट घटना या परिस्थिति का वर्णन करने से है। बालक के व्यवहार की ऐसी महत्त्वपूर्ण बातें, जो किसी विशिष्ट समय के समय एकत्रित की गई हो बालक के व्यवहार से सम्बन्धित ऐसी महत्त्वपूर्ण घटनाओं का सही-सही रिकार्ड रखा जाए तथा घटना की तिथि, समय तथा स्थिति आदि का भी इसमें उल्लेख होना चाहिए। किसी विशेष अवधि की समाप्ति पर अध्यापक इनकी सहायता से बालकों की अभिवृत्तियों तथा रुचियों का पता लगा सकता है।

## एक अच्छी परीक्षा के गुण
## (Qualities of a good Test)

परीक्षा या प्रश्न-पत्र तो मल्यांकन का केवल एकमात्र साधन है। परन्तु हम किसी भी एक साधन द्वारा छात्र-छात्राओं के लिये एक से अधिक साधन अपनाना आवश्यक है। इसलिये मूल्यांकन के साधनों का प्रयोग करते समय निम्न दो बातों को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिये–

1. मूल्यांकन के लिये केवल एक ही साधन को न अपनाया जाये अर्थात् मौखिक और लिखित या व्यावहारिक और सैद्धान्तिक या आन्तरिक और बाहरी दोनों ही प्रकार की परीक्षाओं को उचित स्थान दिया जाये।

2. छात्र-छात्राओं के केवल एक ही अंक के मापन के आधार पर मूल्यांकन न किया जाये अर्थात् छात्र-छात्राओं की बुद्धि, रुचि व्यक्तित्व आदि का भी परीक्षण किया जाये।

**अच्छी परीक्षा के गुण**–उपरोक्त सभी बातें होते हुए भी यदि परीक्षा विश्वसनीय, वैध और वस्तुनिष्ठ नहीं है तो भी छात्र-छात्राओं का वास्तविक मूल्यांकन सम्भव नहीं है। इसलिये अच्छी परीक्षा में निम्न गुणों का होना आवश्यक है–

**1. विश्वसनीयता (Reliability)**–जिस परीक्षा या प्रश्न-पत्र के द्वारा किया गया मापन विचलित नहीं होता, वह परीक्षा विश्वसनीय होती है। यदि परीक्षा विश्वसनीय होगी तो उसके द्वारा किया गया मूल्यांकन चाहे वह किन्हीं भी परिस्थितियों में किया जाये, सदैव एक जैसा रहेगा, उदाहरण के लिये यदि किसी विद्यार्थी को किसी परीक्षा में 10 में से 6 अंक प्राप्त हुए हैं तो चाहे जिन परिस्थितियों में उसका परीक्षण किया जाये, उस परीक्षण या प्रश्न में उसे हमेशा 6 अंक मिलने चाहिये।

**2. वैधता (Validity)**–परीक्षा द्वारा यदि अपेक्षित लक्ष्य का ही मापन होता है तो उसे हम वैद्य (Valid) कहते हैं। उदाहरण के लिये छात्र-छात्राओं के कौशल को मापने के लिये ली गई परीक्षा द्वारा कौशल की ही नाप होनी चाहिये न कि मनोवृत्ति की। दूसरे, जो परीक्षा जिस स्तर के छात्र-छात्राओं के परीक्षण के लिये बनाई गई हो तो उसके द्वारा यदि उसी स्तर के छात्र-छात्राओं का परीक्षण किया जा सके और अन्य स्तर के छात्र-छात्राओं का नहीं तो भी परीक्षा वैध कहलायेगी।

**3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)**–ऐसी परीक्षा में परीक्षक की व्यक्तिगत राय या मान्यताओं का कोई स्थान नहीं होता। वस्तुनिष्ठ परीक्षा का यह गुण होता है कि इसमें



पक्षपात का कोई स्थान नहीं होता। उदाहरण के लिये, यदि किसी छात्र की ली गई परीक्षा की उत्तर पुस्तिका को भिन्न-भिन्न परीक्षक भिन्न परिस्थितियों में देखें और सभी स्थितियों में प्राप्तांक समान रहें वह परीक्षा वस्तुनिष्ठ कहलाती है। यदि प्राप्तांकों में भिन्नता हुई तो वह परीक्षा वस्तुनिष्ठ न होकर व्यक्तिनिष्ठ कहलायेगी। एक अच्छी परीक्षा में वस्तुनिष्ठता गुण का होना अत्यन्त आवश्यक है।

**4. व्यापकता (Comprehensiveness)**–समय की निर्धारित अवधि में जो परीक्षा जितने अधिक तत्त्वों का परीक्षण कर सकती है वह उतनी ही व्यापक होती है। एक अच्छी परीक्षा द्वारा पूर्व निर्धारित उद्देश्यों में से अधिक से अधिक उद्देश्यों का परीक्षण होना चाहिये। उदाहरण के लिए छात्र-छात्राओं के ज्ञान, रुचि, मनोवृत्ति, व्यवहार आदि को अनेक बातों की शिक्षा देते हैं। जो परीक्षा इन सिखाई हुई बातों में से जितनी अधिक बातों का परीक्षण कर सकती है वह उतनी ही अधिक व्यापक कही जायेगी। इस प्रकार की परीक्षा पाठ्यक्रम के एक सीमित भाग पर आधारित न होकर उसके अधिक-से-अधिक भाग पर आधारित होती है।

**5. विभेदकारिता (Discrimination)**–व्यक्तिगत भेदों के आधार पर छात्र-छात्राओं की योग्यता, क्षमता, कुशलता आदि सभी अलग-अलग होती हैं। परन्तु परीक्षण एक कक्षा के सभी छात्र-छात्राओं का एक साथ किया जाता है। इस दृष्टि से जो परीक्षा एक ही कक्षा में पढ़ने वाले विभिन्न स्तर के छात्र-छात्राओं का परीक्षण कर सकती है वह विभेदकारी होती है। इस बात को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि विभेदकारी परीक्षा अच्छे और कमजोर छात्र-छात्राओं में भेद स्थापित करने में समर्थ होती है।

**6. व्यावहारिकता (Practicability)**–एक अच्छी परीक्षा में उपयोगिता का गुण होना चाहिये अर्थात् जिस उद्देश्य के लिये परीक्षा ली जाए उस उद्देश्य की पूर्ति करे। उदाहरण के लिये परीक्षा के परिणामों के आधार पर छात्र-छात्राओं का मार्ग दर्शन किया जा सके।

**7. उपयोगिता (Utility)**–अच्छे प्रश्न-पत्र या परीक्षा को सुगमता से प्रयोग में लाया जा सकता है। इसके लिये परीक्षा के नियम, निर्देश और भाषा ऐसी सरल और बोधगम्य होनी चाहिये कि छात्र-छात्राएं उसे आसानी से समझ सकें और प्रयोग में ला सकें। परीक्षा लेने के लिये किसी विशेषज्ञ की आवश्यकता न पड़े।

## इकाई परीक्षण तैयार करना
## (Preparation of Unit Test)

वास्तव में इकाई परीक्षण को तैयार करना सीखने की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। हम जैसे पढ़ाने या शिक्षण की दृष्टि से पाठ योजना तैयार करते हैं उसी प्रकार योजनाबद्ध ढंग से इकाई परीक्षण की तैयारी की जाती है। इस परीक्षण की योजना के अन्तर्गत निम्न बातों को सम्मिलित किया जाता है–

1. प्रतिदिन कितना पढ़ा जाए और कैसे पढ़ा जाए ?
2. किस प्रकार की दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का प्रयोग किया जाए।
3. छात्र-छात्राओं द्वारा किस प्रकार की गतिविधियों को करवाया जाएगा।
4. शिक्षक द्वारा किन-किन गतिविधियों को किया जाएगा।

5. अधिगम (सीखने) का परीक्षण किस प्रकार किया जाएगा।

इसकी योजना क्रमबद्ध रूप से लिखित होती है ताकि शिक्षक उसके अनुसार कार्य कर सके। दैनिक पाठ योजना के जोड़ को ही इकाई का नाम दिया जाता है। प्रत्येक इकाई में ज्ञान, अनुभव और क्रियाओं को शामिल किया जाता है। पाठ के पढ़ाने के बाद शिक्षक छात्र-छात्राओं के सीखने (अधिगम) का मूल्यांकन इकाई परीक्षण की सहयता से करता है जैसे कि इकाई को पूरा होने के बाद शिक्षक छात्रों के अर्जित ज्ञान की परीक्षा लेता है और इस परीक्षा को ही इकाई परीक्षण कहा जाता है।

शिक्षक हमेशा छात्र-छात्राओं के सीखने में सहायक रहता है। इस प्रकार के इकाई परीक्षण से छात्र-छात्राओं को ही लाभ नहीं पहुंचता बल्कि शिक्षक भी अपने कार्य का मूल्यांकन कर सकता है और कमियों को दूर करने में सफल होता है। वास्तव में इकाई परीक्षण का निर्माण इकाई से सम्बन्धित सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का मूल्यांकन करने हेतु किया जाता है।

**इकाई परीक्षण के लक्ष्य (Objective of Unit Test)**–इकाई परीक्षण की तैयारी कई लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु की जाती है जो निम्न है–

1. इस इकाई परीक्षण के माध्यम से यह ज्ञात किया जा सकता है कि क्या छात्र-छात्राएं सीखने के कौशलों से भली-भान्ति परिचित हैं या नहीं।

2. छात्र-छात्राओं ने किस सीमा तक अनुदेशन के लक्ष्यों की प्राप्ति कर ली है।

3. छात्र-छात्राओं की सीखने के अन्तर्गत आई कठिनाइयों के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

4. छात्र-छात्राओं की उपलब्धि के आधार पर ग्रेड दिये जा सकते हैं।

5. निम्न ग्रेड प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं की ओर विशेष ध्यान देकर उनको आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

6. शिक्षक को अपने कार्य का मूल्यांकन करने के साथ अपने शिक्षण में सुधार लाने का अवसर भी प्राप्त होता है।

एक इकाई परीक्षण का निर्माण करने हेतु निम्न पदों का अनुसरण करना होता है–

**1. उद्देश्यों का निश्चित करना (Determination of Objectives)–**

1. सर्वप्रथम और अनिवार्य बात यह होती है कि इकाई परीक्षण के माध्यम से विषय के शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।

2. अर्थशास्त्र शिक्षण के कुछ मुख्य उद्देश्य जो प्रो. ब्लूम द्वारा निर्धारित किये गये हैं– ज्ञान, बोध, प्रोग और कौशल की प्राप्ति हो। ज्ञान का निम्न स्तर की उपलब्धि के अन्तर्गत लिया जाता है और बोध और ज्ञान के प्रयोग को उच्च स्तर की उपलब्धि माना जाता है।

3. इन सभी उद्देश्यों की अभिव्यक्ति व्यवहार परिवर्तन में प्रदर्शित हो।

**2. नमूना तैयार करना (Preparation of Design)**–इकाई परीक्षण का दूसरा पद है इसका नमूना तैयार करना। नमूने के अन्तर्गत विशेषतया निम्न बातों पर बल दिया जाता है–



1. अनुदेशनात्मक उद्देश्य।
2. प्रश्नों के प्रकार और रूप।
3. कोर्स विषय-वस्तु की इकाई और उप-इकाई।
4. कठिनाई का स्तर।

उपरोक्त के अतिरिक्त ये यह भी इंगित करता है कि इकाई परीक्षण में प्रश्नों में विकल्प हों और उनका किस प्रकार का स्वरूप हो। इकाई परीक्षण का नमूना वास्तव में एक साधन है जो कि विभिन्न व्यक्तियों और बोर्ड के निर्णयों को प्रतिबिम्ब करता है। इसे सदैव साधन ही मानना चाहिए और साध्य मानने की भूल कदापि भी नहीं करनी चाहिए। इसमें हमेशा परिवर्तन की प्रवृत्ति बनी रहनी चाहिए।

## अभ्यास के प्रश्न

## (Study Questions)

1. मूल्यांकन के अर्थ तथा महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
   (Discuss the meaning and importance of Evaluation.)
2. अर्थशास्त्र में उपयुक्त मूल्यांकन हेतु वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रयोग किया गया है। इससे आप कहां तक सहमत हैं? उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
   ('The use of objective test in Economics is made for better evaluation.' How far do you agree with this statement. Discuss giving suitable examples.)
3. अर्थशास्त्र की निबन्धात्मक परीक्षा के क्या दोष हैं ? इन दोषों को आप वस्तुनिष्ठ परीक्षा द्वारा कैसे कम कर सकते हैं ?
   (What are the defects of essay type examination of Economics ? How can you minimise these defects with the use of objectives tests.)
4. मूल्यांकन की विभिन्न तकनीकों का वर्णन करो। इनमें से कौन सी तकनीक सबसे अच्छी है और क्यों ?
   (Discuss the various techniques of evaluation. Which is he best and why ?)
5. एक अच्छी परीक्षा की विभिन्न विशेषताएं क्या हैं ?
   (What are the characteristics of a good test.)
6. वस्तुनिष्ठ परीक्षा के कितने प्रकार है ?
   (What are the types of objective test ? Give two examples of each type of objective test.)

* * *

# 4
CHAPTER

# सतत् और व्यापक मूल्यांकन : अर्थ, महत्व और प्रक्रिया
## (Continuous and Comprehensiveness Evaluation : Meaning, Importance & Process)

### सतत् निरन्तर व्यापक मूल्यांकन
### (Continuous Comprehensiveness Evaluation)

निरन्तर व्यापक मूल्यांकन सबसे अधिक प्रभावशाली और प्रचलित मूल्यांकन पद्धति है। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है कि यह मूल्यांकन कार्यक्रम निरन्तर होने के साथ व्यापक भी है अर्थात् इसे सत्र में पूरे समय प्रयोग किया जाता है यह शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के हर पक्ष को शामिल करता है।

कोई भी मूल्यांकन पद्धति तभी सही परिणाम दे सकती है जब इसमें निरन्तरता और व्यापकता के गुण हों। निरन्तर व्यापक मूल्यांकन पद्धति में विद्यार्थियों का लगाकार मूल्यांकन किया जाता है–प्रतिदिन प्रति सप्ताह, प्रतिमाह, छमाही परीक्षा और वार्षिक और इस तरह के मूल्यांकन के परिणाम से यह निष्कर्ष प्राप्त करने में मान्यता दी जाती है कि विद्यार्थियों ने कितनी प्रगति की है, शिक्षण अधिगम की प्रभाविकता, अध्यापक की निपुणता क्या है। निरन्तरता के साथ-साथ इसमें व्यापकता के गुण भी पाये जाते हैं। इस मूल्यांकन पद्धति में विद्यार्थी के विद्यालय से सम्बन्धित व ग़ैर-सम्बन्धित पक्षों का मूल्यांकन किया जाता है, मूल्यांकन कार्यक्रम में इन सब से प्राप्त परिणाम को उचित मान्यता दी जाती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NPE) के सुझावानुसार निरन्तर व्यापक मूल्यांकन में निम्नलिखित पक्ष होने चाहिए–

**(A) विद्यालयी पक्ष (Scholastic Aspects)**

**1. विद्यालयी पक्ष में निम्नलिखित क्षेत्र शामिल किए जा सकते हैं–**

(i) ज्ञान (Knowledge)

(ii) समझ (Understanding)





(iii) प्रयोग (Application)

(iv) कौशल (Skill)

**2. मूल्यांकन की तकनीकें (Techniques of Evaluation)**

(i) मौखिक परीक्षा (Oral Examination)

(ii) लिखित परीक्षा (Written Examination)

(iii) प्रायोगिक परीक्षा (Practical Examination)

**3. मूल्यांकन के तरीके (Tools of Evaluation)**

(i) प्रश्न पत्र (Question paper)

(ii) यूनिट टैस्ट (Unit Test)

(iii) प्रोजैक्ट परियोजना (Projects)

(iv) गृहकार्य (Home Work)

(v) सर्वेक्षण (Survey)

(vi) कार्यनिरुपण/निर्विष्ट कार्य (Assignment)

**4. मूल्यांकन की अवधि व समय (Periodicity of Evaluation)**

1. पूरे सत्र के दौरान

**5. मूल्यांकन का प्रसार (Coverage of Evaluation)**

सभी छात्र (All Students)

**(B) ग़ैर-विद्यालयीपक्ष (Non-Scholastic Aspects)**

**1. शामिल क्षेत्र**

(i) भार अथवा आयु के सम्बन्ध में ऊँचाई

(ii) आयु अथवा ऊँचाई की तुलना में भार

(iii) छाती का विस्तार

(iv) दृष्टि

**2. मूल्यांकन की तकनीकें (Techniques of Evaluation)**

(i) अध्यापक द्वारा अवलोकन

(ii) डॉक्टरी जाँच

**3. मूल्यांकन के तरीके (Tools of Evaluation)**

(i) ऊँचाई चार्ट

(ii) भार चार्ट

(iii) भारतोलक मशीन

(iv) मापक पट्टी

**4. मूल्यांकन की समयावधि (Periodicity of Evaluation)**

(i) पूरे सत्र/वर्ष में दो या तीन बार

**5. मूल्यांकन का प्रसार (Coverage of Evaluation)**

**(II) व्यक्तिगत और सामाजिक गुण (Personal & Social Qualities)**

**1. सामिल क्षेत्र ( शामिल क्षेत्र )**

(i) नियमितता

(ii) अनुशासन

(iii) सफाई/स्वच्छता

(iv) सामाजिक सेवा की भावना

(v) नेतृत्व के गुण

(vi) बुद्धिमता

(vii) रूझान/अभिरुचि

**2. मूल्यांकन की तकनीकें**

अवलोकन

**3. मूल्यांकन के तरीके**

रेटिंग स्केल

**4. मूल्यांकन की समयावधि**

पूरे सत्र

**5. मूल्यांकन में शामिल**

सभी छात्र

**(III) रुचियां (Interests)**

**1. शामिल क्षेत्र**

**(i) सांस्कृतिक रुचियाँ**

–नृत्य

–संगीत

–नाटककला

**(ii) साहित्यिक रुचियाँ (Literacy Interest)**

–सृजनात्मक लेखन

–वाद-विवाद

–कविता पाठ



**(iii) कलात्मक रुचियाँ (Artistics Interest)**

–ड्राईंग तथा पेंटिंग

–मूर्तिकला

–मिट्टी के खिलौने बनाने की कला

–रंगोली

**(iv) वैज्ञानिक रुचियाँ (Scientific Interest)**

–प्रयोग

–वैज्ञानिक आलेख

–खोज

–नवीनीकरण आविष्कार

–विज्ञान क्लब क्रियाएँ

**2. मूल्यांकन की तकनीकें (Techniques of Evaluation)**

(i) अवलोकन

(ii) मानकीकृत परीक्षण

(iii) रूचि सूची

**3. मूल्यांकन (Tools of Evaluation)**

(i) रेटिंग स्केल

(ii) स्कूल रिकार्ड

(iii) दैनिक डायरी

**4. मूल्यांकन की समयाविधि (Periodicity of Evaluation)**

–एक सत्र में कम से कम दो बार

**5. मूल्यांकन में शामिल–**

केवल वही छात्र जो किसी विशेष क्षेत्र में रूचि रखते हैं।

**(IV) अभिवृत्ति क्षेत्र–**

1. शामिल क्षेत्र–

(i) स्कूल कार्यक्रम के प्रति अभिवृत्ति/दृष्टिकोण

(ii) स्कूल-साथियों के प्रति अभिरूचि/दृष्टिकोण

(iii) स्कूल सम्पत्ति के प्रति अभिरूचि/दृष्टिकोण

(iv) शिक्षकों के प्रति दृष्टिकोण

(v) समुदाय के प्रति दृष्टिकोण

2. मूल्यांकन की तकनीकें (Techniques of Evaluation)
रेटिंग स्केल

3. मूल्यांकन के तरीके (Tools of Evaluation)
रेटिंग स्केल

4. मूल्यांकन की समयावधि (Periodicity of Evaluation)
–पूरे सत्र के दौरान

**(V) मूल्य (Value)**

(i) ईमानदारी

(ii) साहस

2. मूल्यांकन की तकनीकें (Techniques of Evaluation)
–अवलोकन

3. मूल्यांकन के तरीके (Tools of Evaluation)
–रेटिंग स्केल

4. मूल्यांकन की समयावधि (Periodicity of Evaluation)
–पूरे सत्र के दौरान

5. मूल्यांकन में शामिल
सभी विद्यार्थी

## निरन्तर तथा व्यापक मूल्यांकन के लाभ/गुण/कार्य
## (Advantage/Merits/Functions of Continuous and Comprehensive Evaluation)

निरन्तर तथा व्यापक मूल्यांकन पद्धति में निम्नलिखित गुण हैं–

**1. शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की वास्तविक तस्वीर (Realistic Picture of Teaching-Learning Process)**–निरन्तर-व्यापक मूल्यांकन के माध्यम से शिक्षकों, अभिभावकों, छात्रों तथा स्कूल-प्रबन्धकों को शिक्षा-अधिगम प्रक्रिया तथा शैक्षिक कार्यक्रमों की वास्तविकता जानने में सहायता प्राप्त होती है।

**2. विद्यार्थियों में आत्मविश्वास का विकास (Development of confidence in students)**–निरन्तर-व्यापक मूल्यांकन में छात्रों का मूल्यांकन व परीक्षण निरन्तर व नियमित होता है। इस कारण उन्हें कोई भय या बेचैनी महसूस नहीं होती। इसका परिणाम उनमें आत्म विश्वास पैदा करता है।

**3. विद्यार्थियों के कार्य-भार में कमी (Reduction in the Work-load of students)**–एक साधारण मूल्यांकन में रट कर याद करने पर बल दिया जाता है। निरन्तर मूल्यांकन में छात्रों की प्रगति का मूल्यांकन साप्ताहिक व मासिक होता है इसलिए उनके कार्यभार में कमी होती है, उन्हें सभी पाठों को हर समय तथा बार-बार याद करने की आवश्यकता नहीं पड़ती।



**4. विद्यार्थियों तथा शिक्षकों में वार्तालाप (Interaction between students and teachers)**–निरन्तर मूल्यांकन छात्रों तथा विद्यार्थियों को परस्पर बातचीत के बहुत से अवसर प्रदान करता है यदि एक अध्यापक किसी छात्र को व्यापक रूप से जानना चाहता है तो उसे उस छात्र को नज़दीक से देखना पड़ेगा।

**5. छात्रों में पढ़ाई की अच्छी आदतों का विकास (Promotion of good study-habit among students)**–एक छात्र तब तक निरन्तर मूल्यांकन में सफल नहीं हो सकता जब तक वह लगातार व पूरे प्रशिक्षण के साथ तैयारी नहीं करता। अत: निरन्तर मूल्यांकन अच्छी पढ़ाई की आदतों का विकास करता है।

**6. वार्तालाप की सम्भावना (Scope for Discussion)**–निरन्तर मूल्यांकन में शिक्षकों को विद्यार्थी के बारे में पूर्ण रूप से जानने के लिए मदद मिलती है जो वार्तालाप के द्वारा ही सम्भव है।

**7. विषय, कोर्स तथा कैरियर चुनाव में सहायक (Helpful in the choice of subjects, courses and career)**–निरन्तर व व्यापक मूल्यांकन द्वारा छात्रों को अपनी रूचियों, अभिरूचियों, अभिकृतियों और बुद्धिस्तर का ज्ञान प्राप्त होता है और यह सूचना उन्हें विषय, कोर्स तथा कैरियर के चुनाव में मदद करती है।

**8. छात्रों को अपनी कमियों तथा शक्तियों की पहचान (Knowledge about the strength and weakness of students)**–मूल्यांकन उपागम के द्वारा छात्रों को अपनी कमजोरियों और शक्तियों की पहचान होती है जिन्हें जानकर वे अपनी कमियों को दूर करने तथा अपनी शक्ति को बढ़ाने का प्रयास कर सकते हैं।

**9. शिक्षण विधियों तथा पृष्ठ भूमि के चुनाव में सहायक (Helpful in Selecting Teaching Methods and Strategies)**–यह मूल्यांकन अध्यापकों के लिए भी सहायक है इस तरह यह एक अध्यापक को सही प्रथा प्रभावशाली शिक्षण विधियों के चुनाव में सहायता करता है।

**10. प्रेरणा में सहायक (Helpful in Motivation)**–निरन्तर मूल्यांकन छात्रों में प्रेरणा देने में सहायक होता है जब भी छात्रों को व्यवहार और परिणाम अनुकूल होता है तो उन्हें उत्साहित व प्रेरित किया जाता है।

**11. छात्रों के व्यावहारिक परिवर्तनों को पहचानने में सहायक (Helpful in Indentifying Behavioural Changes in Students)**–छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को केवल निरन्तर मूल्यांकन द्वारा ही जाना जा सकता है। परीक्षा व परीक्षण द्वारा यह सम्भव नहीं।

**12. छात्रों की समस्याओं तथा कठिनाइयों से निपटने के सुझाव (Suggestions for Teaching Difficulties and Problems of the students)**–निरन्तर व व्यापक

मूल्यांकन न केवल छात्रों की समस्याओं और कठिनाइयों को पहचानने में सहायक है बल्कि इनसे निपटने में सुझाव भी प्रदान करता है।

**13. वास्तविक अधिगम का विकास (Promotion of Reading Learning)**–निरन्तर अधिगम समय-समय पर छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन का अनुमान लगाता है अत: यह वास्तविक अधिगम को विकसित करता है।

**14. शिक्षा के लक्ष्यों तथा उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक (Helpful in realizing the Aims and Objectives of Education)**–यह शिक्षा के वास्तविक उद्देश्यों को प्राप्त करने में छात्रों की सहायता करता है।

### निरन्तर-व्यापक मूल्यांकन के अवगुण/सीमाएँ/हानियाँ (Demerits/Limitations/Disadvantages of Continuous Comprehensive Evaluation)

यद्यपि निरन्तर-व्यापक मूल्यांकन-अन्य मूल्यांकन पद्धतियों की अपेक्षा अधिक लाभकारी है फिर भी इसकी कुछ सीमाएं और दोष हैं जो इस प्रकार हैं–

**1. शिक्षक द्वारा पक्षपात की सम्भावना (Biasness of the Part of Teacher)**–इस पद्धति की मुख्य सीमा यह है कि यह अध्यापक में पक्षपात की भावना को बढ़ाता है कभी-कभी अध्यापक कुछ छात्रों को अच्छा प्रदर्शित न करने पर भी अधिक अंक प्रदान करता है। कुछ छात्रों को अच्छे प्रदर्शन के बावजूद कम अंक दिये जाते हैं क्योंकि इन छात्रों के अध्यापक के साथ अच्छे सम्बन्ध नहीं होते।

**2. व्यक्तिगत उपागम (Subjective Approach)**–इस पद्धति में एक दोष यह भी है कि कभी-कभी अध्यापक के विचार, चिन्तन दर्शन तथा पूर्व-अनुभवों का मूल्यांकन के परिणामों पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

**3. समय की बर्बादी (Time Consuming)**–यह मूल्यांकन पद्धति समय की बर्बादी करती है क्योंकि यह वर्ष/सत्र भर चलती है इसलिए इसके लिए पूरे सत्र/वर्ष के समय की आवश्यकता पड़ती है।

**4. खर्चीली (Costly)**–वर्ष भर चलते रहने के कारण इसमें बहुत से कागज़ी, ग़ैर-कागज़ी वस्तुओं तथा यन्त्रों का प्रयोग होता है इसलिए इसमें खर्च अधिक आता है।

**5. भीड़भाड़ वाली कक्षाओं के लिए उपयुक्त नहीं (Not Appreciate for Crowded Classes)**–इस पद्धति को भीड़-भाड़ वाली कक्षाओं के लिए इसका प्रयोग करना व्यर्थ है क्योंकि ऐसी कक्षाओं में अध्यापक के लिए प्रत्येक छात्र को जानने व मूल्यांकन करने के लिए अधिक समय लगता है।

**6. अधि शक्ति व प्रयत्न की आवश्यकता (Needs more energy and efforts)**–इस मूल्यांकन पद्धति में अधिक शक्ति व प्रयत्न की आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि अध्यापक को सभी पक्षों-विद्यालीया और ग़ैर-विद्यालीया स्थितियों का मूल्यांकन करना होता है।



**7. छात्रों में असुरक्षा की भावना का विकास (Insecurity among Students)**–इस पद्धति से छात्रों में असुरक्षा की भावना बढ़ती है क्योंकि व्यक्तित्व के बहुत से पक्षों का मूल्यांकन किया जाता है इसलिए सभी छात्र संशकित रहते हैं कि किस पक्ष पर अधिक ध्यान दिया जाए।

**8. शुद्ध वातावरण की आवश्यकता (Needs Congenial Environment)**–निरन्तर मूल्यांकन को विपरीत परिस्थितियों में लागू करना कठिन है इसके लिए सही वातावरण का होना ज़रूरी है।

**9. छात्र की पृष्ठ भूमि का ज्ञान आवश्यक है (Knowledge of Background of Students is Needed)**–इस पद्धति की सफलता के लिए छात्रों की पृष्ठभूमि जैसे उसकी रूचियों, अभिरूचियों, बुद्धि, आदतों, व्यक्तित्व इत्यादि का ज्ञान होना ज़रूरी है।

**10. लागू करने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता (Needs Training for proper Implementation)**–इस मूल्यांकन पद्धति को लागू करने के लिए उचित प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है।

### अभ्यास के प्रश्न (Study Questions)

1. निरंतर और व्यापक मूल्यांकन के अर्थ, महत्त्व और प्रक्रिया पर प्रकाश डालें। (Highlight on the meaning, importance and process of Continuous and Comprehensive Evaluation.)
2. निरंतर और व्यापक मूल्यांकन के लाभों, गुणों और कार्यों का वर्णन करें। (Describe the advantages, merits and functions of Continuous and Comprehensive Evaluation.)
3. निरंतर और व्यापक मूल्यांकन के अवगुणों, सीमाओं और हानियों का वर्णन करें। (Describe the demerits, limitations and disadvantages of Continuous and Comprehensive Evaluation.)

* * *

# 5
CHAPTER

# उपलब्धि परीक्षा का निर्माण-अवधारणा और कदम
## (Construction of Achievement Test-Concept and Steps)

### उत्तम परीक्षण की कसौटियां
### (Criteria of a Good Test)

**1. वैधता (Validity)**—किसी परीक्षण की वैधता उसकी वह मात्रा है, जिस मात्रा तक वह उस वस्तु को मापता है, जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है। परीक्षण की वैधता हमें यह बताती है कि क्या परीक्षण हमारे उद्देश्य के लिए सही वस्तु को मापता है। कोई भी परीक्षण 100 प्रतिशत पूर्ण नहीं होता। अत: यदि कोई परीक्षण उच्च मात्रा में वही मापता है, जिसे मापने के लिए उसका निर्माण किया गया है तो वह वैध परीक्षण है।

**थोर्नडाइक** के अनुसार, "कोई भी मापन विधि उस सीमा तक वैध है, जिस सीमा तक वह उस कार्य के किसी सफल मापन से सह-सम्बन्धित है, जिसके सम्बन्ध में पूर्व-कथन, करने के लिए उसका निर्माण किया गया है।"

**क्रौनबैक** के शब्दों में, "किसी परीक्षण की वैधता उसकी वह सीमा है, जिस सीमा तक वह, वही मापता है, जिसके लिए कि उसका निर्माण किया गया है।"

परीक्षणों को जांचने का एक सम्भव उपाय यह है कि कक्षा के समस्त परीक्षणों को सीढ़ियों पर फैंक दें तथा हर सीढ़ी के लिए एक अंक निश्चित कर दें। हर परीक्षण पर उतने अंक दें, जितने अंक वाली सीढ़ी पर परीक्षण गिरा है। इस प्रकार हमें एक सामान्य सम्भाव्यता वक्र प्राप्त होगा, परन्तु यह विधि अवैध और अविश्वसनीय है।

यदि निबन्धात्मक उत्तरों को, शब्दों की संख्या के आधार पर अंक दिये जाएं तो प्राप्त परिणाम 100 प्रतिशत विश्वसनीय होगा, लेकिन वैध नहीं।

वैधता एक ऐसी आधारशिला है, जिस पर परीक्षण का पूरा भवन टिका हुआ है। परीक्षण की वैधता को प्राप्त करने के दो उपाय हो सकते हैं–1. तार्किक वैधता तथा 2. आनुभाविक वैधता।





**1. तार्किक वैधता (Logical Validity)**—यह ज्ञात करने के लिए परीक्षण क्या मापता है, हम तार्किक विश्लेषण करते हैं। तर्क विचारों की संगति पर निर्भर करता है तार्किक वैधता ज्ञात करने के दो उपाय हैं–

**(i) निगमनात्मक वैधता (Deductive Validity)**—निगमन, सामान्य से विशेष निर्णय की ओर होता है। जब हमें निगमनात्मक वैधता प्राप्त करनी होती है जो हम यह जानने की चेष्टा करते हैं कि क्या परीक्षण, मापित विशेषता की परिभाषा से मेल खाता है या नहीं। इसके लिए विशेषताओं को वस्तुनिष्ठ रूप से परिभाषित करना होता है। उदाहरणार्थ, कक्षा सात के शाब्दिक ज्ञान परीक्षण के लिए ज्ञान और शाब्दिक दोनों शब्दों को भली प्रकार परिभाषित करना होगा।

ज्ञान–परिभाषा देने की क्षमता,

शब्द–सातवीं कक्षा की पुस्तक में सामान्य रूप से प्रयुक्त शब्द।

वह परीक्षण वैध है जो अमुक विशेषता को मापता है।

इस परीक्षण ने अमुक विशेषता को मापा है।

अत: यह परीक्षण वैध है।

**(ii) आगमनात्मक वैधता (Inductive Validity)**—इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने के लिए हम विशेष से सामान्य की ओर बढ़ते हैं। इसमें हम परीक्षण के आधार पर विशेषता को नाम देकर परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं अर्थात् यह देखने की परीक्षण कोई विशेष आयाम का माप करता है या नहीं। हम यह देखते हैं कि परीक्षण के द्वारा कौन से आयाम को मापा जाता है।

**तार्किक वैधता में परीक्षार्थी के फलांकों को प्रभावित करने वाले घटक**

**(i) ज्ञान के किसी क्षेत्र में प्रवीणता (Efficiency in the area of Knowledge)**—बहुत से परीक्षणों में प्रदत्तों को प्रभावित करने के अनुपयुक्त घटक सम्मिलित कर दिये जाते हैं। उदाहरणार्थ जल सेना द्वारा प्रयोग किया जाने वाला सापेक्षिक गति परीक्षण। नाव चलाने का अनुभव, रेखागणितीय गणना से अधिक सहायक होता है। इस प्रकार कुछ परीक्षणों की वैधता उस क्षेत्र विशेष में प्रवीणता के कारण प्रभावित होती है।

**(ii) सांस्कृतिक घटक (Cultural Factors)**—कुछ परीक्षणों की वैधता सांस्कृतिक घटकों के कारण भी प्रभावित होती है, जैसे–वैश्लर के मकान निर्माण परीक्षण में।

**(iii) अनुक्रिया विन्यास (Purpose Set)**—मानसिक विन्यास एक ऐसी आदत है, जिसके कारण एक व्यक्ति को विभिन्न अवसरों पर एक ही परीक्षण में भिन्न अंक प्राप्त होते हैं। बहुत से विद्यार्थी संशय की अवस्था में 'सत्य', 'असत्य' प्रकार के परीक्षण पर 'असत्य' की अपेक्षा 'सत्य' में उत्तर देते हैं। इस आदत को रोका जा सकता है। यदि यह कह दिया जाए कि हर गल्त उत्तर के लिए, एक सही उत्तर भी निरस्त कर दिया जाएगा।

**2. अनुभाविक या सांख्यिकीय वैधता (Empirical or Statistical Validity)**—परीक्षण की आनुवांशिक वैधता ज्ञात करने के लिए हमें परीक्षण को किसी अच्छी

कसौटी से सह-सम्बन्ध करना चाहिए। सह-सम्बन्ध गुणांक का आकार यह बता देगा कि परीक्षण कसौटी का पूर्व-कथन कितनी सफलता के साथ करता है। इस कसौटी में निम्न गुण होने चाहिए-

**(i) सम्बद्धता (Relevance)**—एक कसौटी तब ही सम्बन्धित होती है, जब कसौटी पर फलांकों का निर्धारण उन्हीं अवयवों से होता है, जिनसे कृत्य में सफलता का निर्धारण हो। कोई विशेष कसौटी सम्बन्ध है या नहीं, इसका कोई अनुभवजन्य प्रमाण नहीं है। हां, निष्पत्ति परीक्षण में हम अध्यापकों के निर्णय से अवश्य जान जाते हैं कि परीक्षण की विषय-वस्तु वही है या नहीं जो होनी चाहिए थी।

**(ii) पक्षपात का न होना (Freedom from Bias)**—इसका यह अर्थ है कि मापन से प्रत्येक परीक्षार्थी को अच्छे फलांक प्राप्त करने का अवसर मिलना चाहिए। पक्षपातपूर्ण मापन यह है-कुछ विषय क्षेत्र का अन्य की अपेक्षा अधिक सम्पन्न होना, फैक्टरी के कर्मचारियों की कार्य परिस्थिति में अन्तर, विभिन्न स्कूलों की एक ही कक्षा में पढ़ाने वाले अध्यापकों की अध्यापन योग्यता में अन्तर।

**(iii) विश्वसनीयता (Reliability)**—कसौटी के विश्वसनीय होने का अर्थ है कि इसके फलांकों में पुर्नपरीक्षण पर अर्द्ध-विच्छेदन से अन्तर न पड़े। बार-बार प्रशासित करने पर जो परिणाम आयें, उनमें संगति हो।

**(iv) उपलब्धता (Availability)**—कसौटी का प्राप्य एवं सुविधाजनक होना भी व्यावहारिक दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक परीक्षार्थी की कसौटी फलांक प्राप्त करने में कितना समय लगेगा और उसमें कितना मूल्य आएगा, इन पर भी ध्यान देना पड़ता है। कसौटी का चुनाव करते समय व्यावहारिक सीमा पर विचार करना भी आवश्यक है।

**2. विश्वसनीयता (Reliability)**—कोई भी मापन विधि उस सीमा तक विश्वसनीय होती है, जिस सीमा तक वह बार-बार प्रयोग करने पर भी एक से परिणाम प्रदान करे। एक से परिणामों से तात्पर्य यह है कि किसी व्यक्ति को उस परीक्षण पर करीब-करीब वही अंक प्राप्त हों जो प्रथम बार हुए थे या समूह में उसका स्थान वही बना रहे जो प्रथम प्रयास में परीक्षण द्वारा इंगित किया गया था।

विश्वसनीयता किसी परीक्षण श्रृंखला पर व्यक्ति के प्राप्तांकों की संगति है।

परीक्षण की विश्वसनीयता हमें यह बताती है कि किस सीमा तक फलांकों की वैयक्तिक विभिन्नता को मापन की अनायास त्रुटि के कारण उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। विश्वसनीयता हमें यह भी बताती है कि किस सीमा तक शीलगुणों की वास्तविक भिन्नता को इन वैयक्तिक भिन्नताओं का कारण ठहराया जा सकता है। तकनीकी भाषा में हम यह कह सकते हैं कि परीक्षण विश्वसनीयता का हर माप हमें यह बताता है कि परीक्षण प्राप्तांकों के कुल प्रकरण का कौन-सा अनुपात त्रुटि प्रसरण है।

**3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)**—वस्तुनिष्ठता विज्ञान का एक मुख्य लक्ष्य है। वस्तुनिष्ठता का अर्थ है, पारस्परिक सहमति। पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ परीक्षण वह है जिस पर निष्पादन को देखकर कोई भी निर्णायक एक ही निर्णय पर पहुंचे। कोई व्यक्ति यदि किसी



परीक्षण पर समान अंक प्राप्त करता है, चाहे उसका परीक्षक कोई भी हो, तो परीक्षण वस्तुनिष्ठ है। वस्तुनिष्ठ परीक्षण प्राप्त करने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए-

1. परीक्षण को व्यवहार के समान आयाम पर ही ध्यान देना चाहिए।
2. प्रत्यावाहन की त्रुटि को दूर करने के लिए निरीक्षणों को लिख लेना चाहिए।
3. परीक्षणों की जांच एक ही नियम है या विधि द्वारा करनी चाहिए।
4. परीक्षार्थी को नियन्त्रित परीक्षण परिस्थिति में रखना चाहिए।
5. परीक्षण के पदों या पूर्ण परीक्षणों का कठिनाई स्तर सभी के लिए एक ही होना चाहिए।

**4. विभेदीकरण (Discrimination)**—एक परीक्षण तभी विभेदकारी होता है, जब वह निष्पत्ति में अन्तर का पता लगा सके और सुयोग्य एवं अयोग्य छात्रों में भेद कर सके। परीक्षण पद जब भली-भांति विद्यार्थियों में विभेद करता है तभी उनका निष्पत्ति या अंकों के आधार पर पदक्रम सम्भव है। इसके लिए तीन बातें आवश्यक हैं-

प्रथम, जब परीक्षण प्रशासित किए जाए तो फलांकों का प्रसार क्षेत्र विस्तृत होना चाहिए, क्योंकि इससे प्रत्येक विषय में निम्नतम से लेकर उच्चतम फलांक दिये जा सकेंगे। द्वितीय, परीक्षण में कठिनाई के सभी स्तरों के प्रश्न-पद सम्मिलित होने चाहिए। कुछ प्रश्न-पद ऐसे हों, जिनका उत्तर सभी विद्यार्थी आसानी से दे सकें एवं कुछ प्रश्न-पद ऐसे हों कि केवल योग्य विद्यार्थी ही उनका उत्तर दे सकें। तृतीय, प्रत्येक पद इस प्रकार का हो कि अधिकांश योग्य विद्यार्थी उसका उत्तर दे सकें और अधिकांशतः अयोग्य या कम योग्य विद्यार्थी उनको उत्तर न दे सकें। कुछ पद ऐसे भी होते हैं कि अयोग्य या कम योग्य विद्यार्थी तो उनका उत्तर देते हैं पर सुयोग्य विद्यार्थी उन्हें हल नहीं कर पाते। ऐसे पदों की विभेदकारी सामर्थ्य नकारात्मक होती है। अतः उन्हें परीक्षण में समन्वित न करना ही श्रेयस्कर होगा।

**5. प्रमापीकरण (Standardization)**—ऐसा परीक्षण जिसमें परीक्षण विधि, यन्त्र और फलांकन विधि निश्चित होते हैं, प्रमापीकृत परीक्षण होता है। यदि विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्राप्त प्रदत्तों की तुलना करनी है तो आवश्यक है कि परीक्षण के प्रशासन की विधि सभी व्यक्तियों के लिए एक जैसी होनी चाहिए। परीक्षण परिस्थितियों के समान होने के लिए यह आवश्यक है कि परीक्षण निर्माता प्रशासन के विस्तृत निर्देश प्रदान करें। निर्देशों के समय, प्रयोग की जाने वाली सामग्री, प्रयोज्य को दिए जाने वाले निर्णय तथा अन्य समस्त आवश्यकताओं का उल्लेख होना चाहिए।

**6. मानक (Norms)**—प्रमाणीकरण का एक अन्य आवश्यक पक्ष मानकों का निर्धारण करना है। बिना मानकों के परीक्षण प्राप्तांक की व्याख्या नहीं की जा सकती। मानक वह अंक होते हैं जो प्रतिनिधि प्रयोज्यों से प्राप्त किए जाते हैं। इनके द्वारा एक व्यक्ति की दूसरे से तुलना की जा सकती है। मानक द्वारा समग्र को परिभाषित करने का कार्य भी किया जाता है।

मानव वैयक्तिक भिन्नताओं को जानने के लिए भी अनिवार्य होते हैं। मानकों का सबसे अधिक महत्त्व निर्देशन और चिकित्सा के क्षेत्र में है। मानकों को औसतांक, मानक विचलन शतांक, अंक तथा मानक अंक द्वारा दर्शाया जाता है।

मानक प्राय: दो प्रकार के होते हैं–

**1. आयु मानक (Age Norms)**–इन मानकों का निश्चय, परीक्षण को व्यक्तियों के विशाल समूह पर प्रशासित कर प्राप्त किया जाता है। उदाहरणार्थ, 10, 40 और 15 वर्ष के लोगों पर परीक्षण को प्रशासित कर, हर समूह के प्राप्तांकों का औसताक ज्ञात कर लेते हैं। तब पदों को उस आयु विशेष के वर्ग में रख देते हैं, जिस आयु के व्यक्ति उक्त अनुपात में पद को हल कर लेते हैं।

**2. श्रेणी मानक (Grade Norms)**–हर श्रेणी के बालकों के मध्यांक की गणना कर श्रेणी मानक की गणना की जाती है।

मानकों की उत्तमता निम्न बातों पर निर्भर करती है–

(i) जिस न्यादर्श पर मानकों का निर्धारण किया जाए वह काफी बड़ा होना चाहिए।

(ii) न्यादर्श, समग्र का सच्चा प्रतिनिधि होना चाहिए अर्थात् न्यादर्श में वे सभी विशेषताएं होनी चाहिए जो समग्र में हों।

(iii) आदर्श समूह में उसी प्रकार के व्यक्ति होने चाहिए, जिस प्रकार के व्यक्तियों के व्यवहार की तुलना करनी हो।

**7. पद (Items)**–वह पद जिस पर अच्छे विद्यार्थी, बुरे विद्यार्थियों से अच्छे अंक प्राप्त करते हैं, एक अच्छा पद होता है। जबकि वह पद जो किसी प्रकार की भिन्नता नहीं दर्शाता अर्थात् जिस पर कमजोर विद्यार्थी अधिक सफल होते हैं, अपर्याप्त पद होता है। किसी भी पद का परीक्षण पद सह-सम्बन्ध निम्न कारणों से कम होता है–

1. यह उतना सरल होता है कि इसे हर व्यक्ति हल कर लेता है या इतना कठिन होता है इसे कोई भी हल नहीं कर पाता।

2. यह अस्पष्ट या बहुअर्थी होता है।

3. जो कुछ परीक्षण मापता है, यह पद उससे भिन्न कुछ और मापता है अर्थात् इसकी आन्तरिक संगति बहुत कम होती है।

**8. व्यापकता (Comprehensiveness)**–व्यापकताका अर्थ है, किसी परीक्षण में पाठ्यक्रम में सम्मिलित तथ्यों में से अधिक-से-अधिक का समावेश। परीक्षण परीक्षार्थी के व्यवहार का केवल आंशिक न्यादर्श न हो। जितना अधिक कोई परीक्षण पाठ्यक्रम एवं उनके विभिन्न अंशों एवं क्षेत्रों से सम्बन्धित होगा, उतना ही वह व्यापक भी होगा। किसी सांख्यिकीय सूत्र के आधार पर हम व्यापकता का अनुमान नहीं लगा सकते। परीक्षण की व्यापकता के बारे में निर्णय करना स्वयं निर्माता की सूझ-बूझ कुशाग्र बुद्धि एवं उसकी परीक्षण की क्षमता पर निर्भर है।

तथ्यों का कितना भाग लिया जाए कि परीक्षण व्यापक हो सके, यह एक महत्वपूर्ण विषय है. यह न्यादर्श, समग्र का कितना अंश है, इसका निर्णय परीक्षण रचयिता परीक्षण के उद्देश्यों एवं प्रशासन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर करेगा। हां, परीक्षण इतना व्यापक हो कि वह वैध हो सके।



## मूल्यांकन विधियां

## (Evaluation Techniques)

परीक्षण अध्ययन में पढ़ने-पढ़ाने से सम्बन्धित जो भी कार्यक्रम विद्यालयों में सम्पन्न किए जाएं उन्हें इस विषय के शिक्षण उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही तय किया जाता है। इन निर्धारण उद्देश्यों की पूर्ति निश्चित समय में किस सीमा तक हुई है, यह बात बालकों की उपलब्धि अथवा उनके व्यवहार में आए परिवर्तनों के माध्यम से ही जानी चाहिए। इसलिए मूल्यांकन की विभिन्न विधियों तथा तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। मूल्यांकन द्वारा ज्ञान के तीनों पक्षों-तुलनात्मक, क्रियात्मक एवं भावात्मक में आये परिवर्तनों को जाना जाता है। अत: सामाजिक अध्ययन में मूल्यांकन के लिए निम्न तीन विभिन्न क्षेत्रों के ज्ञान अथवा व्यवहार में परिवर्तन का मूल्यांकन किया जाता है–

**I. ज्ञान सूचनाओं तथा आवश्यकताओं का मूल्यांकन–**

**1. मौखिक जांच**–पर्यावरण अध्ययन के मूल्यांकन कार्यक्रम में मौखिक जांच का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अधिकांश बालक मौखिक रूप से भली-भान्ति अभिव्यक्त नहीं कर पाते हैं। इसका मुख्य कारण है कि बालकों के पूर्व ज्ञान परीक्षण के लिए विषय से सम्बन्धित मौखिक प्रश्न नहीं पूछे जाते। अध्यापक विशिष्ट विचार को विकसित करने तथा नवीन नियम निर्धारित करने के लिए भी प्रश्न पूछे जाने चाहिए। ऐसे प्रश्नों से बालक सावधान तो रहते हैं, अपितु इससे उनकी मानसिक क्रिया को भी प्रेरणा प्राप्त होती है। अध्यापक भी इस प्रकार के प्रश्नों से यह जान सकता है कि बालक पाठ को भली-भान्ति समझ रहा है या नहीं। वास्तव में मौखिक प्रश्न तभी अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं, जब उन्हें मूल्यांकन का एक आवश्यक अंग बनाया जाए। बालक में भाषण देने की क्षमता, विचार व्यक्त करने की क्षमता का विकास इत्यादि मौखिक प्रश्न विधि द्वारा अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। अत: यह आवश्यक बन जाता है कि बालक कक्षा में जो भी प्रकरण पढ़े, उससे सम्बन्धित कुछ प्रश्न उनसे मौखिक रूप से पूछे जाएं और उन्हें निर्धारित समय में उन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

**2. निबन्धात्मक परीक्षा जांच**–निबन्धात्मक परीक्षा भी मूल्यांकन के लिए प्रयोग की जाने वाली विधि है। किसी विषय में बालकों के ज्ञान की जांच के लिए निबन्धात्मक प्रश्न भी पूछे जाते हैं जिसके अन्तर्गत उन्हें कुछ विचारात्मक प्रश्नों के उत्तर देने होते हैं। पर्यावरण अध्ययन, जैसे-विस्तृत विषयों में इस प्रकार के प्रश्नों का बड़ा महत्त्व है। निबन्धात्मक प्रश्न तैयार करना और बालकों को देना, दोनों ही सरल कार्य हैं। इनमें बालकों को आत्माभिव्यक्ति के अधिकाधिक अवसर प्राप्त होते हैं। इस प्रकार की परीक्षा के तर्कमूर्ण चिन्तन, व्याख्या व निर्णय-शक्ति आदि समय बालक किसी प्रकरण समस्या के बारे में सभी पहलुओं से विचार कर सकते हैं और इसी प्रकार वास्तविक बौद्धिक विकास होता है। किसी सामाजिक, राजनैतिक या आर्थिक मामलों में बालकों के विचार जानने के लिए निबन्धात्मक प्रश्न पूछे जा सकते हैं।

अत: सामाजिक अध्ययन शिक्षा को निबन्धात्मक परीक्षा पद्धति के लाभों का अध्ययन

करना चाहिए और यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि जांच कार्यक्रम के अन्तर्गत इसका प्रयोग कहां और किस प्रकार सर्वोत्तम ढंग से किया जा सकता है। कभी-कभी अध्यापक को चाहिए कि वह स्वयं को बालक समझ कर इस प्रकार के प्रश्नों को आदर्श उत्तर भी तैयार करें ताकि बालकों को पता चले कि इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर ठीक ढंग से कैसे दिए जाएं। लेकिन कई बार निबन्धात्मक उत्तरों की जांच में त्रुटि के कारण कठिनाई आ जाती है। इसी कारण निबन्धात्मक परीक्षा के साथ वस्तुनिष्ठ जांच का भी प्रयोग किया जाने लगा है। छोटी कक्षाओं में विशेष कर प्राथमिक कक्षाओं में निबन्धात्मक जांच अधिक प्रभावी नहीं रहती है।

**3. बालकों के दैनिक कार्य की जांच**—अब यह बात भली प्रकार अनुभव की जाने लगी है कि केवल वार्षिक परीक्षा परिणाम के आधार पर ही किसी बालक को अगली कक्षाओं में नहीं चढ़ाया जाना चाहिए। अपितु इसका आधार सतत् मूल्यांकन होना चाहिए, जो बालक का प्रतिदिन किया जाता है। अध्यापक को बालकों की प्रगति की जांच सारे इसी के आधार पर करनी चाहिए। दैनिक जांच निम्न प्रकार से हो सकती है–

1. बालक द्वारा अध्यापक के सामने कक्षा में किया गया कार्य, जैसे–लिखित कार्य, विचार-विमर्श, वाद-विवाद तथा मौखिक प्रश्नों के उत्तर देना आदि।

2. बालकों द्वारा घर पर किया गया कार्य जैसे–गृह कार्य, चित्रात्मक सामग्री बनाना, पाठ या इकाई का सारांश लिखना आदि।

3. बालकों द्वारा स्वाध्याय।

4. बालकों द्वारा प्रयोगशाला या सामाजिक अध्ययन कक्ष में तैयार किए गए मॉडल, वस्तुएं तथा अन्य कार्य।

**4. वस्तुनिष्ठ जांच**—इस प्रकार के परीक्षण सर्वाधिक नवीन जांच विधियों के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार के टैस्टों से बालकों को छोटे-छोटे उत्तर देने होते हैं, ताकि जांच कार्य ठीक ढंग से किया जा राके और परिणाम पर प्रत्येक की रुचियां तथा अरुचियों का कोई प्रभाव न पड़े। प्राय: दो प्रकार के वस्तुनिष्ठ परीक्षण प्रयोग में लाए जाते हैं–

1. प्रमापीकृत टैस्ट
2. अध्यापक निर्मित टैस्ट

प्रमापीकृत परीक्षण या टैस्ट चार प्रकार के होते हैं–

**1. निष्पत्ति परीक्षण (Achievement Test)**—किसी भी स्कूल विशेष में शिक्षण से प्राप्त ज्ञान की जांच के लिए इस प्रकार के टैस्टों को प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के टैस्टों का निर्माण करते समय किसी विशिष्ट क्षेत्र की जांच का ध्यान रखा जाता है। अत: उस वेग में बालकों द्वारा अध्ययन की गई सामग्री का अधिकाधिक भाग इसके अन्तर्गत आ जाना चाहिए। अत: यह वांछनीय हो जाता है कि स्कूलों की अधिकांश वार्षिक परीक्षाएं निष्पति परीक्षण की होती हैं। इनमें बालकों को अगली कक्षा में चढ़ाने तथा अंक प्रदान करने का बड़ा अच्छा आधार प्राप्त हो जाता है। निष्पति परीक्षण के लिए निम्न प्रकार के प्रश्नों का निर्माण किया जाता है–



(i) साधारण प्रश्न, जिनमें बालकों को स्वयं उत्तर देने पड़ते हैं।
(ii) सामान्य स्मृति या प्रश्नोत्तरी वाले प्रश्न।
(iii) रिक्त स्थानों की पूर्ति वाले प्रश्न।
(iv) सत्य, असत्य या हां-नहीं वाले प्रश्न।
(v) अनेक उत्तरों में से सही का चुनाव।
(vi) तुलनात्मक प्रश्न
(vii) समय-ज्ञान सम्बन्धी प्रश्न।
(viii) युगलीकरण प्रश्न।

**2. नैदानिक परीक्षण (Diagnostic Test)**—इस प्रकार के टैस्टों का प्रयोग यह जानने के लिए किया जाता है कि बालक आशानुकूल प्रगति कर रहा है अथवा नहीं। इस प्रकार के परीक्षण से बालकों की कठिनाइयों, त्रुटियों आदि का पता लगाया जाता है। यदि बालक आशानुकूल प्रगति नहीं कर रहा है तो नैदानिक परीक्षण से इसका कारण भी पता लग सकता है। नैदानिक परीक्षण तथा निष्पत्ति परीक्षण में बहुत अन्तर नहीं होता। अन्तर केवल इतना होता है कि नैदानिक परीक्षण में कुछ परिणाम की अपेक्षा एक बात पर अधिक बल दिया जाता है। अध्यापक नैदानिक परीक्षण का प्रयोग मूल्यांकन के लिए तथा बालकों की त्रुटियों, कठिनाइयों, कमजोरियों आदि को ढूंढने के लिए करते हैं। त्रुटियों और कमजोरियों का पता लगने के पश्चात् उनके निदान का प्रयास किया जाता है। पर परीक्षण एक प्रकार से सुधार हेतु परीक्षण कहा जाता है। बालक के अधिगम स्तर तथा अधिगम प्रक्रिया की गति देने के लिए यह परीक्षण लाभदायक है।

**3. बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)**—इस प्रकार के परीक्षणों में प्रयोग बालकों की सीखने, सोचने तथा तर्क करने की क्षमता का पता लगाने के लिए किया जाता है। इनका प्रयोग भी व्यक्तिगत या सामूहिक दोनों ही रूपों में किया जा सकता है। किन्तु सामूहिक की अपेक्षा व्यक्तिगत टैस्ट के परिणाम हमेशा अधिक सही तथा विश्वसनीय होते हैं। इस प्रकार के टैस्टों का सम्बन्ध जांच के सारे क्षेत्र से होता है न कि केवल विषय सम्बन्धित। अत: यह कोई प्रश्न ही नहीं है कि बुद्धि परीक्षा के लिए कौन-सा परीक्षण प्रयोग करें।

**4. अभिरुचि परीक्षण (AptitudeTest)**—इस प्रकार के टैस्टों का प्रयोग मनुष्य या बालक के स्वभाव तथा चरित्र सम्बन्धी बातों को जानने के लिए किया जाता है। इस प्रकार के टैस्टों का प्रयोग प्राय: रुचि, सूची तथा आनुपातिक स्तर के रूप में किया जाता है। अत: ये भी मात्रा पर अधिक बल न देकर स्तर पर अधिक बल देता है। किन्तु व्यक्ति की अवस्था में, अभी निरीक्षण तथा व्यवस्था का सही-सही अर्थ निकालने तथा उसका अन्तर्गत निरपेक्ष तथा पूर्वाग्रह मुक्त होकर मूल्यांकन करने की दिशा में, कार्य करना शेष है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक ही कक्षा तथा आयु के बालकों की पारस्परिक तुलना तथा उनकी अच्छाइयों और बुराइयों को ढूंढने में मानकीकृत परीक्षण बड़े उपयोगी सिद्ध होते हैं। किन्तु भारत में अधिकांश विद्यालय इस प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग नहीं करते, क्योंकि

मानकीकृत परीक्षण भारतीय परिस्थितियों में अनुकूल नहीं होते। इस प्रकार के परीक्षण उन्नत देशों में उपलब्ध हैं। यही कारण है कि हम अपने स्कूलों में प्राय: नई किस्म के अनौपचारिक टैस्टों का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार के टैस्टों को अध्यापक स्वयं अपनी परिस्थितियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार बनाते हैं। इस प्रकार के नई किस्म के टैस्टों को अध्यापक निर्मित परीक्षण कहते हैं।

**II. कौशलों को जांच या मूल्यांकन**–ज्ञान तथा सूचनाओं के मूल्यांकन के साथ-साथ बालकों द्वारा अर्जित विभिन्न कौशलों की जांच भी आवश्यक है। जैसा कि हम पहले से ही जानते हैं कि अनुसंधान, रचना संगीत, उत्पादन, कला प्रोजैक्ट कार्य आदि क्रियाकलापों से सामाजिक अध्ययन हो तथा बालकों की विभिन्नता कौशलों में निपुणता की जांच भी की जाए। इस प्रकार के परीक्षण में निम्नलिखित बातें आती हैं–

1. बालक द्वारा सामाजिक अध्ययन कक्ष में किए गए दैनिक कार्यों का मूल्यांकन।
2. निश्चित समय में पूरे किए गए किसी कार्य का मूल्यांकन तथा सम्पूर्ण कार्य में उसकी तुलना।
3. कार्य करने के ढंग का मूल्यांकन।
4. वास्तविक मूल्यांकन के समय बालकों के योगदान का मूल्यांकन।

**III. अभिवृत्तियों, रुचियों तथा गुणों का मूल्यांकन**–सामाजिक अध्ययन शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य बालकों में उचित अभिवृत्तियों, रुचियों तथा गुणों का विकास करना भी है। इसलिए यह जानने के लिए कि हम अपने उद्देश्य में कहां तक सफल हुए, इनका भी मूल्यांकन आवश्यक बन जाता है। इसके लिए कई प्रकार के साधन व पद्धतियां प्रयोग में लाई जाती हैं। जिन द्वारा हम बालकों की अभिवृत्ति, रुचि व गुणों का परीक्षण कर सकते हैं।

**1. निरीक्षण (Observation)**–निरीक्षण से अभिप्राय है–किसी विशिष्ट लक्ष्य को ध्यान में रखकर किसी के कार्यों आदि को देखना। यह पद्धति बालक के विकास तथा उनकी रुचियों का अनुमान लगाने की अद्यतम पद्धतियों में से एक है। बालकों को वास्तविक कक्षा कार्यों में व्यस्त देखकर उनकी रुचियों, भावनाओं, अभिवृत्तियों तथा व्यवहार की मोटी-मोटी बातों को भली प्रकार पता लगाया जा सकता है। इससे अध्यापक को यह भी पता चलेगा कि बालक दूसरों की भावनाओं तथा दूसरों की रुचियों का कितना आदर करते हैं–कक्षा में किस हद तक अनुशासन का पालन करते हैं, कक्षा की विभिन्न क्रियाओं में कितना भाग लेते हैं, अपने उत्तरदायित्व का पालन किस सीमा तक करते हैं। इन सबके लिए यह आवश्यक है कि अध्यापक हर बालक की निरीक्षण की गई बातों का नियमित रिकार्ड रखे। इस प्रकार के रिकार्ड से बालकों की प्रगति का अनुमान लगाने और इसके बारे में उनके माता-पिता को सूचित करने में बड़ी सहायता मिलती है। किन्तु यह पद्धति पूर्ण रूप से सापेक्ष है। हमें इसकी विश्वसनीयता तथा उपयोगिता में वृद्धि करने के लिए कई बार निरीक्षण करना चाहिए तथा यह निरीक्षण एक ही समय में कई निरीक्षकों द्वारा भी किया जा सकता है।

**2. सम्मेलन (Conference)**–व्यक्तिगत रूप से बालकों की कठिनाइयों व समस्याओं को जानने के लिए तथा उनकी रुचियों व भावनाओं का पता लगाने के लिए अध्यापकों तथा



विद्यार्थियों के सम्मेलन की बड़ी आवश्यकता है। किन्तु यदि ऐसे सम्मेलनों के अवसर पर केवल अध्यापक ही नहीं, छात्रों को भी बोलने के अवसर दिए जाने चाहिए। इस प्रकार के सम्मेलन साप्ताहिक तता मासिक हो सकते हैं। इन सभी सम्मेलनों का रिकार्ड रखा जाए, जो बालक के वार्षिक मूल्यांकन में सहायक हो सकता है। इस प्रकार के सम्मेलनों का उद्देश्य मात्र मनोरंजन न होकर ज्ञानात्मक भी होना चाहिए।

**3. घटना-वृत्त (Ancedotal Records)**–इससे अभिप्राय: बालक के जीवन में किसी विशिष्ट घटना या परिस्थिति का वर्णन करने से है। बालक के व्यवहार में ऐसी महत्त्वपूर्ण बातें जो किसी विशिष्ट समय के बीच एकत्रित हो गई है, बालक के व्यवहार परिवर्तन या प्रगति पर प्रकाश डाल सकती है। वास्तव में यह भी निरीक्षण की गई बातों का रिकार्ड रखने का ही एक ढंग है। बालकों के व्यवहार से सम्बन्धित ऐसी महत्त्वपूर्ण घटनाओं का सही-सही रिकार्ड रखा जाए तथा घटना की तिथि, समय तथा स्थिति आदि का भी इसमें उल्लेख होना चाहिए। किसी विशेष अवधि की समाप्ति पर जो इस प्रकार की काफी घटनाएं या बातें एकत्रित हो जाएं तो अध्यापक इनकी सहायता से बालकों की अभिवृत्तियों व व्यवहार की प्रगति का अनुमान लगा सकता है।

**4. डायरियां (Diaries)**–सम्पूर्ण कार्य, घटनाओं तथा क्रियाओं का रिकार्ड रखने के लिए डायरियां आदि बड़ी महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं। इन्हें शिक्षा की सतत् प्रगति का रिकार्ड रखने के लिए प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के साधनों से बालकों को किसी शैक्षणिक परिस्थिति या इकाई के अन्तर्गत किए गए अपने कार्य का ब्यौरा मिलता है और इसलिए बालकों की प्रगति की जांच हेतु ये बड़े उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

**5. नमूने (Samples)**–सामाजिक अध्ययन के कार्य के नमूनों के अन्तर्गत रिपोर्ट, कहानी, कक्षा में लिया गया टैस्ट, व्याख्या, लिखित तथा बनाई गई सामग्री ही आती है। इनमें नक्शे का काम तथा बालकों द्वारा बनाई चित्रात्मक सामग्री भी आ सकती है। बालकों के होते हुए शब्दों या वाक्यों का रिकार्ड रखने के लिए टेप-रिकार्डर का प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार के नमूनों से बालकों के आदान-प्रदान, सहयोग, व्यक्तिगत या सामूहिक कार्यों में कार्य करने की कुशलता का पता चलता है।

**6. रुचि-सूची (Interest Inventories)**–बालकों की व्यक्तिगत रुचियों तथा अभिरुचियों को जानने, उनको सन्तुष्ट करने वाली शैक्षणिक बातों का पता लगाने तथा उनकी रुचि की क्रियाएं खोजने के लिए इस प्रकार की रुचि-सूची बड़ी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। अधिकांश अवस्थाओं से अध्यापकों द्वारा तैयार किए गए प्रत्यक्ष प्रश्नों द्वारा भी बालकों के जीवन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण बातों का पता चल जाता है। बालकों को इनका उत्तर 'हां' या 'नहीं' में देना होता है।

**7. समाजमिति (Socio-Metric)**–इसका प्रयोग सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन तथा सामाजिक सम्बन्धों के विकास का पता लगाने के लिए किया जाता है। बालकों के सामाजिक सम्बन्ध बड़ी जल्दी-जल्दी बदलते हैं। बालक ज्यों-ज्यों बड़े होते जाएंगे, अपनी अवस्था के बालकों से उनकी मित्रता अधिक स्थायी होती जाएगी। समाजमिति एक ऐसी

तकनीकी पद्धति है, जिसके द्वारा सारी कक्षा के सन्दर्भ में किसी बालक को लोकप्रियता, महत्ता तथा सामाजिकता आदि का पता लगाया जा सकता है।

**8. मानकीकृत वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objectives standardized Test)**—बालकों के स्वभाव तथा चरित्र सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण बातों का पता लगाने के लिए इस प्रकार के टैस्टों का बड़ा महत्त्व है। इनमें संख्या के स्थान पर योग्यता पर अधिक बल दिया जाता है। ऐसे टैस्ट प्राय: निरीक्षण तथा व्याख्या पर आधारित होते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रकार के साधन भी बहुत कम उपलब्ध होते हैं, किन्तु इस क्षेत्र का विस्तार हो रहा है और अधिकांश टैस्ट इस प्रकार के परीक्षण द्वारा ही किये जाते हैं।

**9. संचयी वृत्त (Cumulative Records)**—इस प्रकार के रिकार्डों से बालकों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में किये गये दैनिक, मासिक तथा वार्षिक कार्यों का पता चलता है। इनसे बालकों के जीवन सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं तथा भौतिक, सामाजिक, बौद्धिक तथा भावनात्मक विशेषताओं का पता चल जाता है। वास्तव में इस प्रकार के रिकार्ड बालक के व्यक्तित्व के विकास का एक सम्पूर्ण चित्र होते हैं। अत: बालकों की रुचियों, अभिवृत्तियों तथा गुणों और चरित्र सम्बन्धी विशेषताओं को जानने तथा विभिन्न विषयों तथा क्रियाओं में उनकी उपलब्धि जानने के लिए इस प्रकार के रिकार्ड बड़े उपयोगी सिद्ध होते हैं। इनसे बालकों को भी अपना स्वयं मूल्यांकन करने तथा कमियों को पूरा करने व अपनी आयु के विद्यार्थियों से अपनी तुलना करने की प्रेरणा मिलती है।

मूल्यांकन कार्यक्रम द्वारा हम बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। सामाजिक अध्ययन शिक्षण का मुख्य उद्देश्य बालकों की अन्तर्निहित योग्यताओं तथा क्षमताओं का पता लगाकर उनके चरम विकास द्वारा योग्य नागरिक उत्पन्न करना है। अत: आवश्यक हो जाता है कि मूल्यांकन का एक ऐसा विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया जाए जो पर्यावरण या सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों की उपलब्धि में सहायक हो सके। मूल्यांकन की पूरी प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के टैस्ट तथा अन्य प्रकार के साधनों व विधियों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के कार्यक्रम से बालक के ज्ञान की जांच ही नहीं होती। संक्षेप में कहा जा सकता है कि मूल्यांकन इस प्रकार का होना चाहिए जिस द्वारा अध्यापक प्रक्रिया को प्रभावी तथा सुधारात्मक बनाता है।

PT. SITA RAM SHASTRI B.Ed. TRAINING COLLEGE
LIBRARY
Acc. No. 4223

## अभ्यास के प्रश्न
## (Study Questions)

1. उत्तम परीक्षण की कसौटियों का वर्णन करें।
   (Describe the criteria of a good test.)
2. मूल्यांकन की विभिन्न विधियों का वर्णन करें।
   (Describe the various evaluation techniques.)

* * *